श्री अम्बा गुरु शोध संस्थान, उदयपुर (राज.)

श्री आगम प्रकाशन एवं साहित्य प्रकाशन समिति

उदयपुर-अहमदाबाद

द्वारा प्रकाशित साहित्य

आगम ग्रन्थ	लेखक
श्री अन्तकृद्दशाङ्ग सूत्रम्	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
श्री अन्तकृद्दशाङ्ग सूत्र	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
श्री उपासक दसाङ्ग सूत्रम्	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
श्री विपाक सूत्रम्	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
श्री नन्दी सूत्रम्	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
श्री उत्तराध्ययन सूत्रम्	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'

आगम साहित्य	लेखक
भक्ति कुमुद	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
स्वर्णिम पद् चिन्ह	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
विचार विचि	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
आवर्त्त	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
कुमुद प्रवचन कुमुदी	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
काव्य कुमुद	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
काव्य रश्मि	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
कुमुद काव्यांकुर	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
मानस के राजहंस	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
श्रुत स्तोत्रस्विनी	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
स्वरूप चिंतन	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
पद्य पुष्प	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
चिंतनामृत	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
देहरी के दीप	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
शाश्वत स्वर	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
संगीत कुमुद	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
चिंतन अनुचिंतन	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
अंतर्यात्रा	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
कुमुद काव्यामृत	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
अंतः अभ्युदय	श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्यमुनिजी म. 'कुमुद'
जैन तत्त्व दर्शन (खण्ड-1) (थोकड़ा श्री भगवती सूत्र)	श्री विमल कुमार जी नवलखा
जैन तत्त्व दर्शन (खण्ड-2) (थोकड़ा श्री प्रज्ञापना एवं विविध सुत्तागमो से)	श्री विमल कुमार जी नवलखा

मुद्रक : स्वदेशी ऑफसेट, उदयपुर मो. : 09784845675

जैन तत्त्व दर्शन

खण्ड 2

श्री प्रज्ञापना सूत्र एवं विविध सुत्तागमों से

जैन तत्त्व दर्शन

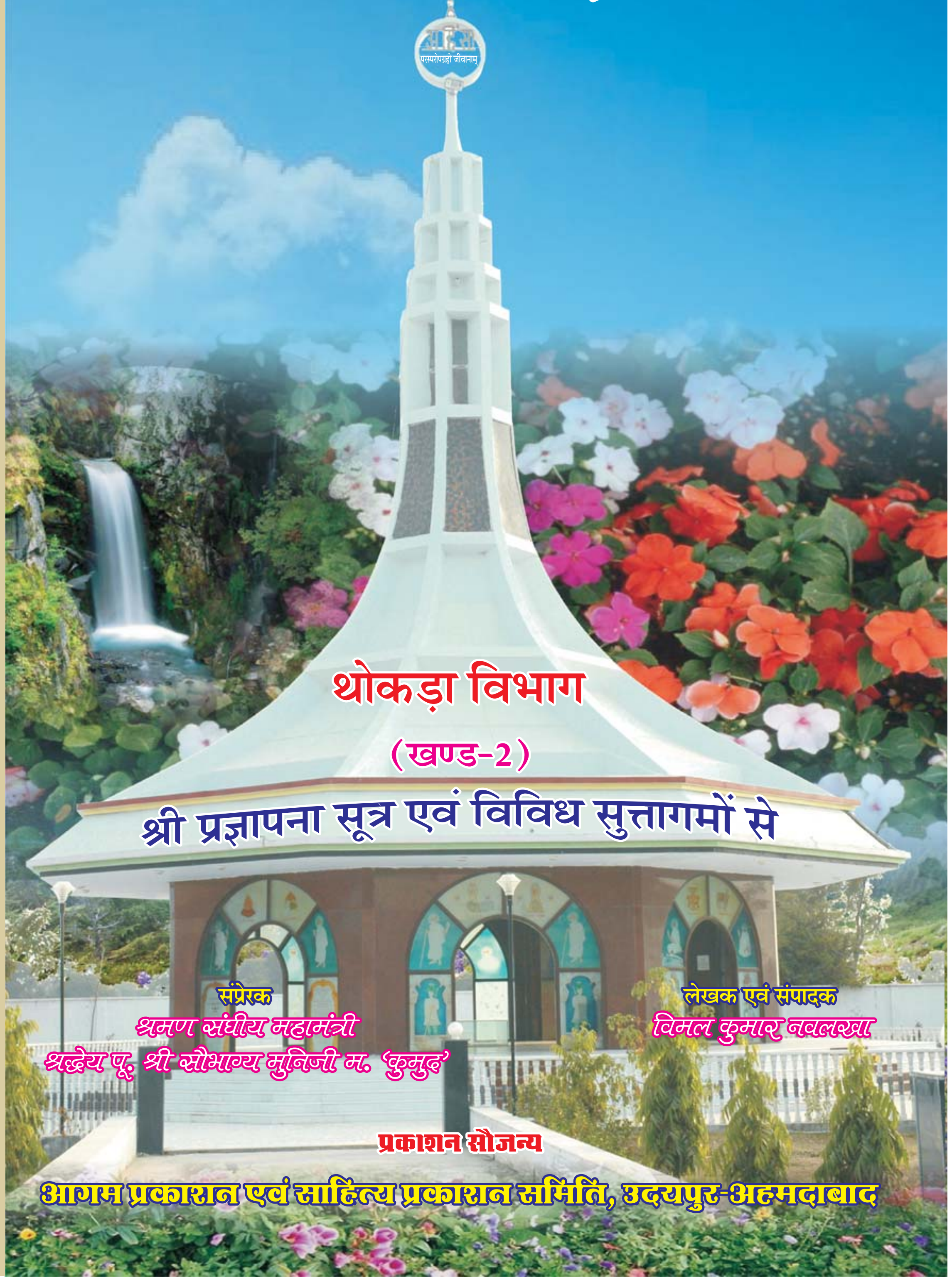

थोकड़ा विभाग

(खण्ड-2)

श्री प्रज्ञापना सूत्र एवं विविध सुत्तागमों से

संप्रेरक
श्रमण संघीय महामंत्री
श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्य मुनिजी म. 'कुमुद'

लेखक एवं संपादक
विमल कुमार नवलखा

प्रकाशन सौजन्य
आगम प्रकाशन एवं साहित्य प्रकाशन समिति, उदयपुर-अहमदाबाद

जैन तत्त्व दर्शन

थोकड़ा विभाग

(खण्ड-2)

श्री प्रज्ञापना सूत्र एवं विविध सुत्तागमों से

संप्रेरक

श्रमण संघीय महामंत्री

श्रद्धेय पू. श्री सौभाग्य मुनिजी म. 'कुमुद'

लेखक एवं संपादक

विमल कुमार नवलखा

प्रकाशन सौजन्य

आगम प्रकाशन एवं साहित्य प्रकाशन समिति

उदयपुर- अहमदाबाद

प्रकाशक

श्री अम्बा गुरु शोध संस्थान, उदयपुर

卐

पुस्तक - जैन तत्त्व दर्शन
(थोकड़ा विभाग खण्ड-2)
श्री प्रज्ञापना सूत्र एवं विविध सुत्तागमों से

संप्रेरक - श्रद्धेय पूज्य श्री सौभाग्य मुनिजी म. 'कुमुद'

लेखक - विमल कुमार नवलखा

प्रकाशक - श्री अम्बा गुरु शोध संस्थान, उदयपुर

सौजन्य - आगम प्रकाशन एवं साहित्य प्रकाशन समिति
उदयपुर-अहमदाबाद
श्री अम्बा गुरू शोध संस्थान उदयपुर

पुस्तक प्राप्ति स्थान - 1. आगम प्रकाशन समिति अहमदाबाद, फोन

2. श्री अम्बा गुरू शोध संस्थान, उदयपुर, फोन

3. विमल कुमार नवलखा, पीपोदरा ता. मांगरोल, जि. सूरत (गुज.)

फोन. 02621-234884 मो. 09426883605

प्रथमावृत्ति - 1000

मूल्य - ₹ 50.00 (अर्द्ध मूल्य)

मुद्रक - स्वदेशी ऑफसेट
3/17, उमराव की हवेली, श्रीनाथ मार्ग, खेरादीवाड़ा
उदयपुर (राज.)-313001
E-mail : swadeshioffset@gmail.com
Ph. : 0294-2417204, Mo. : 09784845675

लेखक के उद्‌गार...✍

संसार में धर्म के समान अन्य कोई वस्तु श्रेष्ठ एवं उपकारक नहीं है। धर्म ही प्राणी मात्र को विपत्ति के समय में सहायता देने वाला तथा पतन के गर्त्त से बचाने वाला है। सच तो यह है कि सांसारिक पदार्थ यहाँ तक कि जीव के साथ रहने वाला शरीर भी आयु कर्म की समाप्ति होने पर यहीं रह जाता है, केवल धर्म ही जीव के साथ परलोक में जाता है, धर्म ही जीव को सुख एवं शांति प्रदान करता है।

धर्म अमृतमय रसपान है, जो इस दुनियाँ को अशांति और असंतोष की व्याधि से मुक्त कर सकता है। अतएव धर्म के व्यापक और सर्वतोमुखी प्रचार-प्रसार की आवश्यकता है।

जैन धर्म के मूलभूत सिद्धांतों के प्रचार-प्रसार से संपूर्ण विश्व में सुख-शांति का संचार हो सकता है। जैन धर्म के मूलभूत तत्त्व इतने उदार एवं व्यापक है जो विश्व स्तरीय समस्याओं का व्यावहारिक समाधान करने की क्षमता रखते हैं। भगवान महावीर के मौलिक सिद्धांतों के प्रचार-प्रसार की आवश्यकता और अनुकूल अवसर आज पहले से कहीं अधिक रूप से उपस्थित है। आज जैन समाज पर यह गुरुत्तर दायित्व है कि वह अपने चरम तीर्थंकर आराध्य महाप्रभु के अनमोल उपदेशों को विविध एवं विधिवत् रूप से विश्व के कोने-कोने में फैलाये, यही भक्ति का सच्चा परिचय है।

आज का युग विज्ञान का युग है, हमारे जैन आगमों में वैज्ञानिक तत्त्व कूट-कूट कर भरे हैं। एक-एक पद में हजारों हजार अर्थ, उनमें अनन्त-अनन्त वैज्ञानिक रहस्य छुपे हुए है, उन्हें पढ़कर, उनका चिंतन मनन कर विश्व को हम बहुत कुछ प्रदान कर सकते हैं, अथवा विश्व इन आगमों से बहुत कुछ प्राप्त कर सकता है। मक्खन प्राप्त करने वाला हितेक्षुक दही का बिलौना करता है। मधुर इक्षु रस को चाहने वाला गन्ने को पीलता है। चंदन की सुगंध प्राप्त करने वाला उसे घिसता है, मोती का इच्छुक महासागर का मंथन करता है। इसी प्रकार सारभूत तत्वों को प्राप्त करने वाला अथाह परिश्रम करके आगम मंथन करता है।

गहन, सारभूत, रहस्यमय तत्वों से भरे वीतराग महाप्रभु की वाणी रूप आगम ग्रंथों के सारभूत तत्वों की प्राप्ति करने हेतु हमारे महामहिम पूर्वाचार्यों ने आगमों की अनुप्रेक्षा कर, अथाग परिश्रम कर थोकड़ों के रूप में समाज के समक्ष प्रस्तुत किया। ये थोकड़े जैनागमों के सारभूत हैं। ये आगम का रसायन है, आगमों का अर्क और आगमों की कुंजी है।

मेरे मानस में हमेशा कुछ कर दिखाने की अभिलाषा रही है। मनुष्य शरीर ही मुक्ति का निमित्त है, इसके बिना मोक्ष संभव ही नहीं है। अत्यंत प्रबल पुण्योदय से इस भव की प्राप्ति हुई है, इसे पाने के लिए देव भी लालायित रहते हैं। मनुष्य भव में ही विशिष्ट विवेक प्राप्त होता है। बुद्धि का प्रकर्ष होता है। ऐसे जीवन को प्राप्त कर भी यदि कुछ विशेष नहीं किया, धर्म आरोहण नहीं किया, आत्म कल्याण की साधना नहीं की तो यह भव प्राप्त करना ही निरर्थक हो जावेगा। मात्र विषय भोग में या मात्र सांसारिक उलझनों में पड़कर या फँसकर, आसक्त होकर यों ही वृथा जीवन बर्बाद कर देने से तो गाँठ की पूँजी भी जायेगी और भारी ऋणी भी बन जाना होगा। ऐसे महान् दुर्लभ मनुष्य भव की प्राप्ति पुनः न जाने कब होगी। अतः मेरा चिंतन हमेशा धर्म का रसपान करने में ही ओतप्रोत रहने में निमग्न रहता है।

इस बार मैंने जैनागमों के थोकड़ों को कुछ नया रूप देकर लिखा है, इनमें जगह-जगह चार्ट और समीकरण दिये हैं, जिन्हें सहज रूप से चिंतन मनन किये जा सकते हैं। विश्वविद्यालयों में अध्ययनरत स्नातक एवं अनुस्नातक (ग्रेजुएट, पोस्ट ग्रेजुएट) विद्यार्थियों को जहाँ जैन साहित्य और दर्शन के विषय पढ़ाये जाते है, वहाँ उन विद्यार्थियों को अत्यंत सरल रूप से समझने में बहुत ही उपयोगी सिद्ध होंगे। मुमुक्षुगण जिन्हें बोल थोकड़ों का ज्ञान है अथवा सीखना चाहते है, उन्हें तो अत्यंत सरल लगेंगे। कुल मिलाकर संपूर्ण समाज के लिए यह कृत्ति वरदान सिद्ध हो ऐसी मेरी मनोकामना रही है।

जैन तत्त्व दर्शन थोकड़ा विभाग के दो ग्रंथ बनाये है। एक प्रथम भाग में श्री भगवतीसूत्र के थोकड़ों पर दिग्दर्शन किया है, और दूसरे भाग में श्री प्रज्ञापनासूत्र एवं अन्य आगमों जैसे जीवाजीवाभिगम, उत्तराध्ययन,

नंदी, समवायांग, ठाणांग, अनुयोगद्वार आदि कई आगमों के विविध थोकड़ों का समायोजन किया है।

मेरा मनोबल बढ़ाने में मेरी दो बहिन साध्वीश्री शीलप्रभाजी साध्वीश्री सत्यप्रभाजी महासती वर्यायों का अतुलनीय योगदान रहा, जिन्हें स्वयं को कई आगम कंठस्थ है, चार्ट आदि देने की उनकी भावना समाहित है।

मेवाड़ संघ शिरोमणी पूज्य प्रवर्तक स्व. गुरुदेव श्री अम्बालाल जी महाराज सा. का आशीर्वाद तो मुझ पर बाल्यावस्था से ही रहा है, यह उन्हीं के आज्ञा निर्देशों का परिणाम है, आज जो भी हूँ यह गुरु भगवन्तों के आशीर्वाद स्वरूप हूँ। मेरे लेखन कार्य और शैली को मेवाड़ संघ कुलभूषण, श्रमणसंघीय महामंत्री, परम श्रद्धेय पूज्य श्री सौभाग्य मुनिजी महाराज "कुमुद" ने देखा और श्री अम्बा गुरु शोध संस्थान के द्वारा प्रकाशित कराने का विचार व्यक्त किया। यह क्षण मेरे लिए कितना सुखद था, इसकी कल्पना शब्दों द्वारा अवतरित नहीं की जा सकती। बस एक अनमोल क्षण था, आत्म रमण का क्षण था, भावनात्मक क्षण था।

मेरा मूल उद्देश्य ज्ञान का अर्जन उपार्जन और प्रचार-प्रसार रहा है। इससे पूर्व भी मैंने समस्त जैनागमों का हिन्दी सारांश लिखने का संयोजन किया है। अभी कुछ दिनों पूर्व मैंने पर्वराज पर्यूषण में प्रवचनादि के लिए एक पुस्तक "अन्तर्मन के मोती" लिखी जो प्रकाशित होकर समाज को लाभान्वित कर रही है। बस यही ध्येय है कि इसी प्रकार जिनशासन की सेवा में लगा रहूँ और ज्ञान, विवेक, बुद्धि का समायोजन कर संपूर्ण जैन समाज की सेवा करता रहूँ।

अरिहन्त भगवंतों की अविनय आशातना हुई हो तो क्षमाप्रार्थी हूँ। सुज्ञ पाठक वृंद से सानुरोध निवेदन है कि यह पुस्तक आगम एवं कई ग्रंथों से समायोजन कर लिखी गई है, फिर भी जानते-अजानते, दृष्टि अथवा लिपि दोष से त्रुटियाँ रह गई हो तो विशाल हृदय से क्षमा करें !

पीपोदरा

ता. 1.2.2011

लेखक

विमल कुमार नवलखा

(जगपुरा वाला)

लेखक परिचय

प्रस्तुत **'जैन तत्त्व दर्शन'** थोकड़ा विभाग (खण्ड-2) **श्री प्रज्ञापना सूत्र एवं विविध सुत्तागमों से** पुस्तक के रचनाकर तत्त्वचिन्तक आगमों के अध्येता श्री विमल कुमारजी नवलखा का जन्म वि.सं. २०११ के कार्तिक सुदी ५ ज्ञान पंचमी दि. १-११-१९५४ को भीलवाड़ा जिलान्तर्गत आसीन्द तहसील के जगपुरा ग्राम में हुआ।

पुण्योदय से आप आचार्य श्री गणेशीलालजी म.सा. एवं मेवाड़ संघ शिरोमणि पू. प्रवर्तक श्रद्धेय श्री अम्बालालजी म.सा. के सम्पर्क में आये। गुरुदेवों के शुभाशीर्वाद से अपनी प्रामाणिकता के बल पर व्यावसायिक क्षेत्र में प्रतिष्ठित होकर परिवार व समाज की सेवा में अग्रसर बनें। आपकी धार्मिक-भावना एवं श्रुत-सेवा की रूचि प्रबल से प्रबलत्तर होती गई। सन् १९७५ में आप श्री स्वाध्यायी संघ, गुलाबपुरा के सक्रिय एवं कर्मठ सदस्य बनें तथा पूरे भारतवर्ष में प्रत्येक राज्य के प्रमुख नगरों में पधारकर पर्युषण पर्वाराधनार्थ सेवाएं प्रदान की। जैन-समाज के लिए अति उपयोगी जैनागमों के हिन्दी सारांश जैन-धर्म-दर्शन के लिए अप्रतिम देन है। आपकी इस श्रुत-सेवा से सम्पूर्ण जैन समाज गौरवान्वित हुआ है।

आपकी दो बहिनें श्रद्धेया शीलप्रभाजी म.सा. एवं श्रद्धेया सत्यप्रभाजी म.सा. आचार्य श्री विजयराजजी म.सा. के सानिध्य में संयम-साधना में निरंतर अग्रसर है।

प्रस्तावना

भारत की उर्वरा भूमि में कईं रत्नों ने जन्म लिया है। यहां के प्रत्येक कण-कण में आध्यात्मिक संगीत प्रवाहमान है, प्रत्येक अणु में तत्त्व दर्शन का मधुर रस हृदय को आप्लावित करता है। यहां तीर्थंकर भगवन्तों ने जन्म लिया, जिनके प्रशस्त और निर्मल चिंतन ने जीव एवं जगत को, आत्मा तथा परमात्मा को, धर्म और दर्शन को समझने का विमल और विशुद्ध दृष्टिकोण प्रदान किया।

तीर्थंकर महाप्रभु सूर्य की भांति तेजस्वी होते है, ''**आइच्चेस्सु अहियं पयासयरा**'', वे अपनी ज्ञान रश्मियों से विश्व को आलोकित करते हैं। चंद्र की भांति सौम्य होते हैं। मानवता के प्रथम प्रस्थापक होते हैं। तीर्थंकर साक्षात दृष्टा, ज्ञाता एवं आत्म निर्भर होते हैं। केवल ज्ञान दर्शन उत्पन्न होने पर उपदेश देते हैं, और उनका उपदेश सत्य पर आधारित होता है, परम्परावादिता पर आधारित नहीं होता।

द्रव्याथिक नय से चिंतन किया जाय तो आगम का कोई कर्त्ता नहीं है, यह ध्रुव सत्य है, आगम नित्य और शाश्वत है। पर्यायार्थिक नय से विचार करने से आगम अनित्य है, कर्त्ता अवश्य होता है। वास्तव में तात्विक दृष्टि से आगम अर्थ, सूत्र और तदुभय रूप है। अर्थ की अपेक्षा नित्य, सूत्रापेक्षा से अनित्य होने से शास्त्र के कर्त्ता सिद्ध होते हैं। शास्त्र कर्त्ता का शास्त्र प्ररूपणा से दो प्रयोजन होते है। प्राणियों पर अनुग्रह करना यह अनंतर प्रयोजन है, और परम्पर प्रयोजन है, मोक्ष प्राप्ति।

प्रस्तुत पुस्तक में थोकड़ों को संकलन किया है। इसके पूर्व प्रथम खंड में भगवती सूत्र के 208 थोकड़ों का विविध रूप से संकलन किया था, उसमें चार्ट आदि देकर सुगम बनाने का प्रयास किया था। इस पुस्तक में ''**श्री प्रज्ञापना सूत्र**'' के थोकड़ों का संकलन किया है, और साथ ही साथ अन्य आगम ग्रंथों से विपुल मात्रा में 51 थोकड़ों का भी संकलन कर पुस्तक को अति उपयोगी एवं भव्य बनाने का पूरा प्रयास करने का श्रम किया है।

श्री प्रज्ञापना सूत्र में जीव और अजीव का गहराई से निरूपण किया है। प्रज्ञा शब्द को शब्द कोष में बुद्धि कहा है, यह बुद्धि का पर्यायवाची माना है, और एकार्थक भी माना है। गहराई से चिन्तन करने से यह सूर्य प्रकाश सम स्पष्ट सिद्ध होता है कि इन दोनों की एकार्थकता मात्र स्थूल दृष्टि से है, कोशकार जिन्हें पर्यायवाची कहते है, वे वस्तुतः पर्यायवाची नहीं होते। समभिरूढ़ नय से कोई शब्द पर्यायवाची नहीं है। प्रत्येक शब्द का पृथक, स्वतंत्र अर्थ होता है। प्रज्ञा शब्द का भी अपना विशिष्ट अर्थ है। बुद्धि शब्द स्थूल, भौतिक जगत से जुड़ा शब्दार्थ है। परन्तु प्रज्ञा बुद्धि से ऊपर उठा विशिष्ट शब्द है। बाह्य ज्ञान के अर्थ में बुद्धि प्रयुक्त हुआ है, अंतरंग जगत की (आत्मीय तत्त्व) बुद्धि प्रज्ञा है। प्रज्ञा अतीन्द्रिय जगत का ज्ञान है। आंतरिक चेतना का आलोक है। ''**प्रज्ञा**'' किसी ग्रंथ अध्ययन से प्राप्त नहीं होती, यह तो संयम और साधना से उपलब्ध होती है। प्रज्ञा दो भागों- इन्द्रिय संबद्ध इन्द्रियातीत रूप से प्रतिपादित की जाती है। गुरू आदि के उपदेशों से निरपेक्ष ज्ञान की हेतुभूत चैतन्य शक्ति प्रज्ञा है, और ज्ञान उसका कार्य है। चेतना का शास्त्र निरपेक्ष विकास प्रज्ञा है। प्रज्ञा शास्त्रीय ज्ञान से उपलब्ध नहीं होती, आंतरिक विकास से उपलब्ध होती है। प्रज्ञा इन्द्रियों द्वारा प्राप्त विवेक बुद्धि से परे का ज्ञान है। जितना संयम का विकास होता है, उतनी ही प्रज्ञा निर्मल होती है। **विशिष्ट ज्ञान प्रज्ञा है।**

प्रज्ञापना सूत्र की विषय वस्तु- प्रज्ञापना सूत्र की विषय वस्तु बहुत गहन और दुरुह है। भंगजाल इतना जटिल है के पाठक को अत्यंत सावधान और प्रज्ञामय रहना होता है। असावधानी से सत्य और तथ्य की पकड़ हाथ से निकल जाती है। इसे 36 पदों में विभक्त किया है। जीव अजीव आदि सात तत्वों के निरूपण के साथ भव्य संयोजन किया है। जीव, अजीव (1, 3, 5, 10 और 13 पद में) आश्रव (पद 16 और 22 में) बंध पद 23 में और संवर निर्जरा मोक्ष को पद 36 में। शेष पदों में भी किसी न किसी तत्त्व का निरूपण है। द्रव्य का समावेश प्रथम पद में, क्षेत्र का द्वितीय पद में, काल का चौथे पद में और भाव को शेष पदों में समाविष्ट किया है। यहां विषयों का निरूपण पहले लक्षण बनाकर नहीं, विभाग उप विभाग से बताया है। जैनागमों में जीव और कर्म दो विषय मुख्य हैं। यहां जीव को केंद्र में रखकर उसके अनेक विषयों की जैसे- जीव के प्रकार, जीव कहां-कहां रहते हैं? आयुष्य कितना? मर कर कहां जाते हैं? कहां कहां से किन किन गतियों, योनियों में आते हैं? उनकी इंद्रियां कितनी? वेद कितने? ज्ञान कितने? कर्म कौन कौनसे बंधते हैं? इनकी प्ररूपणा, ''**प्रज्ञापना**'' की है।

प्रज्ञापना के 36 पद-

1. प्रथम पद ''**प्रज्ञापना**'' है अजीव एवं जीव का निरूपण
2. दूसरे पद में वास स्थान स्वस्थान, प्रासंगिक वास स्थान का वर्णन

3. तीसरा अल्प बहुत्व पद 27 द्वारों से अल्प बहुत्व

4. जीवों की स्थिति का वर्णन

5. पांचवा पर्याय पद में 24 दंडकों की तथा अजीव पर्याय की विचारणा

6. छठे व्युत्क्रांति पद उपपात, उद्वर्त्तन, आठ आकर्ष आदि।

7 सातवें उच्छवास पद में श्वासोच्छवास ग्रहण करने छोड़ने संबंधी।

8 संज्ञा पद में 10 संज्ञाओं का 24 दंडक में निरूपण है।

9 नवमें योनि पद में शीत, उष्ण, शीतोष्ण एवं भिन्न भिन्न योनियों संबंधी।

10 दसवां चरम अचरम पद 6 विकल्प 24 दंडकों के गत्यादि से द्रव्यों का लोकालोक वर्णन।

11 भाषा पद में तत्संबंधी विचारणा 16 प्रकार के वचनोल्लेख।

12 शरीर पद में पांच शरीरापेक्षा 24 दंडक, बद्ध मुक्त आदि वर्णन।

13 परिणाम पद जीव के गति आदि 10 परिणाम, अजीव के 10 परिणाम आदि।

14 कषाय पद में चार कषाय उत्पत्ति भेद, चयापचय आदि वर्णन।

15 इन्द्रिय पद पांच इंद्रियों के 24 द्वार, इन्द्रियोपचयादि 12 द्वारों से वर्णन है।

16 प्रयोग पद- सत्य मनःप्रयोगादि 15 प्रयोगों का 24 दंडक से वर्णन।

17 लेश्या पद- 6 उद्देशक कृष्णादि 6 लेश्या के विविध प्रश्नोत्तर है।

18 कायस्थिति पद- स्थिति पद, भव स्थिति, काय स्थिति पर विचार है।

19 सम्यक्त्व पद- 24 दंडक जीवों की तीन दृष्टियों से विचार है।

20 अन्तक्रिया पद- 24 दंडक पर विचार है, अन्त क्रिया तो मनुष्य ही कर सकते है।

21 अवगाहना संस्थान पद- शरीर के संस्थान, प्रमाण पुद्गलादि प्ररूपणा।

22 क्रिया पद- पांच क्रियाओं कायिकी आदि का संसारी जीवों पर कथन।

23 कर्म प्रकृति पद- ज्ञानावरणीयादि 8 कर्म, बंध, उत्तर प्रकृतियों के बंधादि।

24 कर्म बंध पद- ज्ञानावरणीयादि किस कर्म बंध में कितनी प्रकृतियां बांधे यह वर्णन।

25 कर्म वेद पद- 8 कर्म वेदन पर विचार किया गया है।

26 कर्म वेद बंध पद- ज्ञानावरणीयादि के वेदन समय कितनी कर्म प्रकृतियां बांधता है।

27 कर्म वेद पद- ज्ञानावरणीयादि के वेदन समय कितनी प्रकृतियों का वेदन करता है।

28 आहार पद- सचित्ताहारी, लोमाहारी, आदि 13 द्वारों से वर्णन है।

29 उपयोग पद- दो प्रकार बताकर किस जीव में कितने उपयोग पाते हैं।

30 पश्यता पद- साकार, अनाकार पश्यता पर विचार है।

31 संज्ञा पद- संज्ञी, असंज्ञी, नो संज्ञी की अपेक्षा विचार।

32 संयत पद- संयत, असंयत, संयता संयत से वर्णन।

33 अवधि पद- संस्थान, अवधि, प्रतिपाती अप्रतिपाती पर विचार।

34 प्रविचारणा (परिचारणा) पद, कायस्पर्श, रूप, शब्द मन संबंधित विचारणा।

35 वेदना पद- शीतादि, साताअसाता, निदा अनिदा वेदनाओं की अपेक्षा से विचार।

36 समुद्घात पद- सात समुद्घातों पर जीवों की विचारणा की गई है।

इस प्रकार प्रज्ञापना सूत्र के 36 पदों के विभिन्न प्रश्नोत्तर पर से थोकड़ों का संकलन विषय वर्णन स्वरूप किया गया है। इनमें प्रश्न करके नहीं परन्तु विषय नाम देकर विभिन्न पहलुओं से तथा चार्ट आदि के माध्यम से विषय गत वस्तु को सरल रूप से समझाने का प्रयास किया है।

इसके बाद अन्य आगम शास्त्रों में से भी कुछ थोकड़ों का विविध रूप से संकलन किया है। आचारांग, सूत्रकृतांग, ठाणांग, समवायांग, ज्ञाता धर्मकथा आदि अंग सूत्रों तथा ओपपातिक, राजप्रश्नीय, जीवाभिगम, चंद्र सूर्य प्रज्ञप्ति उपांग, उत्तराध्ययन, दशवैकालिक, नंदी सूत्र और अनुयोग द्वार आदि प्रमुख शास्त्रों से 51 थोकड़ों का संकलन किया है।

जैन धर्म का प्रचार प्रसार हो, भव्य प्राणियों में जानकारी बढ़े, उत्सुकता बने तथा बढ़े, इसी प्रमुख उद्देश्य से थोकड़ों का संकलन किया है। इनमें विविध जगह चार्ट आदि देकर इन गूढ़ विषयों को और सरल करने का अत्युत्तम प्रयास किया है।

पाठकगण इसे पढ़कर उनमें सुरुचि उत्पन्न हो और गूढ़ार्थ को सरल रूप से समझ कर ज्ञान खजाना बढ़ाते रहें। यही मनोकामना रही है। पाठक वृन्द से अनुरोध है, अशुद्धियां सुधारकर मुझे अनुगृहीत करें।

पीपोदरा — **विमल कुमार नवलखा**

सूरत — (जगपुरा वाला)

प्रारम्भिका

श्रमण संघीय महामंत्री श्री सौभाग्यमुनि 'कुमुद'

आज जबकि तीर्थंकर, गणधर, केवली, १४ पूर्वधारी अतिशय ज्ञानी सत् पुरुष उपलब्ध नहीं है, तो तत्त्व निर्णय लाभ केवल शास्त्रों से मिल सकता है। शास्त्र ही हमारे पारलौकिक ज्ञान के मूल स्त्रोत हैं।

मौलिक प्ररूपणा अतिशय ज्ञानियों की होती है। यों तो हजारों साधु साध्वीजी आज उपलब्ध है, किन्तु वे छद्मस्थ हैं और तत्त्व निर्णय का अन्तिम अधिकार उन्हे नहीं है। वे केवल ज्ञानियों की वाणि की व्याख्या करते हैं, अतः जैन मुनियों के प्रवचन को व्याख्यान कहते हैं। प्रवचन करने का अधिकार अतिशय ज्ञान संपन्न वीतराग देव को ही है।

वीतराग देवों की वाणि शास्त्र के रूप में आज विद्यमान हैं। तत्त्व निर्णय का अंतिम समाधान शास्त्रों से ही मिल सकता है। वहां जो निर्णय है वह त्रिकाल सत्य है क्योंकि वह वाणि वीतरागियों की है। पूर्वधारी महापुरूष वीतराग वाणि का विश्लेषण पूर्ण निष्पक्षता से कर सकते हैं, अतः वे भी आप्त पुरूष हैं, उनकी वाणि भी वीतराग वाणि के ही अनुरूप होती है। अतः नितांत प्रामाणिक है।

आखें न हो तो चारों तरफ अंधकार ही अंधकार है, और आंखें हो और बाहर कोई प्रकाश (सूर्य, चन्द, दीपक, लाइट) न हो तो भी अंधकार ही रहता है। वस्तु ठीक ठीक दिखाई नहीं देती।

*प्रत्येक वस्तु को देखने के लिए दो प्रकाश चाहिए, एक अपनी आंख का और दूसरा बाहर चन्द्र सूर्यादि का। ऐसे ही अध्यात्म के क्षेत्र में भी वस्तु-स्वरूप का ज्ञान करने के लिए दो प्रकाश चाहिए। **पहला** साधक की जिज्ञासा। जिज्ञासा यह आंतरिक प्रकाश है यह चेतना से ही जगता है अतः प्रकाश स्वरूप हैं। **दूसरा** बाहर का प्रकाश "शास्त्र"। एक व्यक्ति बहुत जिज्ञासु भी हो किन्तु उसे शास्त्र उपलब्ध ना हो और साधक की जिज्ञासा ही न हो, वह वस्तु स्वरूप समझने के लिए रूचिशील ही न हों तो उसे भी शास्त्र के ज्ञान प्रकाश से कुछ नहीं मिलेगा। यह स्थिति स्व आंख के अभाव जैसी है। वस्तु स्वरूप का ज्ञान करने की जिज्ञासा होनी चाहिए, यह उपादान कारण है। शास्त्र सहायक कारण (निमित्त) बनकर साधक की बुद्धि को तत्त्व ज्ञान से परिपूर्ण कर देते हैं।*

शास्त्र- वीतराग विज्ञान प्रकाशक है। इनसे यह तत्त्व बोध मिलता है कि त्रिभुवन में जो कभी नहीं जान पाया वह ज्ञान केवलियों की वाणि शास्त्र ज्ञान से जाना जा सकता है। यह भरत क्षेत्र का सौभाग्य रहा है कि अतिशय ज्ञानियों का अभाव होते हुए भी उनकी वाणि का कतिपय अंश अभी उपलब्ध है। जो अंश अभी उपलब्ध है उससे आत्म कल्याण कारक वीतराग मार्ग का तत्त्व बोध तो उपलब्ध हो ही जाता है।

यह सौभाग्य की बात है, इस दुःषम काल में भी अनेक आत्मज्ञानी साधु-साध्वीजी शास्त्रीय तत्त्व ज्ञान का संवहन करते हुए स्व- पर कल्याण में प्रवृत्त है।

आज के भौतिकता प्रधान इस विषय विकार की प्रबल छाया में व्यतीत होते हुए पंचम आरेक ने यद्यपि अनेक आध्यात्मिक मूल्यों को खंडित कर दिया है, किन्तु सत्पुरुषों और विदुषी साध्वियों का एक वर्ग ऐसा भी है जो उन आध्यात्मिक मूल्यों के संरक्षण में संलग्न है।

आज इस कठिन समय में जो जो भी और जहां जहां भी, जिस- जिस से भी परम पुरूषार्थ हो रहा है। रत्न त्रय की आराधना का जो भी क्रम चल रहा है, उसके मौलिक आधार शास्त्र ही है अतः अपना कर्त्तव्य है कि शास्त्र और शास्त्र ज्ञान को न केवल सुरक्षित रखें, अपितु उसे विविध रूप में जनता को प्रस्तुत करके आम व्यक्ति की जिज्ञासा जाग्रत करें। उन्हें तत्त्वज्ञान की तरफ बढ़ायें।

इसी दृष्टि को रखकर शास्त्रों का संदोहन कर संक्षिप्त में थोक संग्रह का कार्य जैन समाज में सदियों से होता चला आया है।

स्तोक ज्ञान की एक विशेषता है कि शास्त्रों के निरुपित तथ्यों को श्रेणिबद्ध करके इस तरह प्रस्तुत किया जाता है कि जिज्ञासुओं को थोड़े में अधिक ज्ञान मिले और उसकी जिज्ञासा का विकास होता रहे।

इसी दृष्टि से एक चिंतन चल रहा था, उसी दौरान विमलजी नवलखा मिले ये स्तोक ज्ञान के अच्छे अभ्यासी हैं। उन्हें संप्रेरित कर इस दिशा में कार्य करने का कहा।

*हर्ष की बात है कि उन्होंने कुछ ही समय में भगवती सूत्र, प्रज्ञापना सूत्र एवं अन्य आगमों का संदोहन करके तथा पूर्व प्रचलित स्तोक ज्ञान का उपयोग करके **"जैन तत्त्व दर्शन"** के दो भाग प्रस्तुत किये।*

दोनों भाग तत्त्व ज्ञान और श्रम की मैं सराहना करता हूं, साथ ही आगम प्रकाशन समिति साहित्य प्रकाशन समिति को भी साधुवाद देता हूं जिन्होंने ये प्रकाशन उपलब्ध कराये।

जिन्होंने अर्थदान देकर जनता को प्रकारान्तर ज्ञान दान दिया है, वे दानी भी प्रशंसनीय है।

सौभाग्य मुनि 'कुमुद'
श्रमण संघीय महामंत्री
नवी मुंबई- 09/06/2011

अनुक्रमणिका

प्रज्ञापना सूत्र

क्र.सं.	नाम थोकड़ा	सूत्र संख्या	पृष्ठ सं.
1	आर्य का थोकड़ा	प्रज्ञा. पद 1	1
2	उपपात, समुद्घात, स्वस्थान	प्रज्ञा. पद 2	4
3	दिशाणुवाय	प्रज्ञा. पद 3	6
4	गति, इन्द्रिय, काया की 58 अल्प बहुत्व	प्रज्ञा. पद 3	9
5	102 बोल का बांसठिया	प्रज्ञा. पद 3	13
6	जीवादि 6 बोलों की अल्प बहुत्व	प्रज्ञा. पद 3	17
7	खेत्ताणुवाय (क्षेत्रानुपात)	प्रज्ञा. पद 3	18
8	256 राशि का ढ़िगला	प्रज्ञा. पद 3	26
9	पुद्गलों की द्रव्य क्षेत्र काल भाव से 69 अल्प बहुत्व	प्रज्ञा. पद 3	28
10	अठाणु बोल का बांसठिया	प्रज्ञा. पद 3	30
11	स्थिति द्वार	प्रज्ञा. पद 4	43
12	जीव पर्याय का थोकड़ा	प्रज्ञा. पद 5	46
13	अजीव पर्याय का थोकड़ा	प्रज्ञा. पद 5	54
14	विरह द्वार	प्रज्ञा. पद 6	60
15	सान्तर निरंतर	प्रज्ञा. पद 6	61
16	उत्पत्ति, उद्वर्त्तन, च्यवन	प्रज्ञा. पद 6	61
17	गति आगति	प्रज्ञा. पद 6	63
18	आयुष्य बंध	प्रज्ञा. पद 6	64
19	श्वासोच्छवास	प्रज्ञा. पद 7	66
20	संज्ञा	प्रज्ञा. पद 8	67
21	योनि का थोकड़ा	प्रज्ञा. पद 9	69
22	चरम पद	प्रज्ञा. पद 10	70
23	भाषा पद	प्रज्ञा. पद 11	76
24	बद्ध मुक्त शरीर	प्रज्ञा. पद 12	81
25	जीव परिणाम पद	प्रज्ञा. पद 13	87
26	अजीव परिणाम	प्रज्ञा. पद 13	87
27	कषाय पद	प्रज्ञा. पद 14	88
28	इन्द्रिय पद 5 भाव इन्द्रिय	प्रज्ञा. पद 15	89
29	आठ द्रव्येन्द्रिय	प्रज्ञा. पद 15	91
30	पांच भाव इन्द्रिय	प्रज्ञा. पद 15	96
31	भवितात्मा अणगार संबंधित प्रश्न	प्रज्ञा. पद 15	98
32	प्रयोग पद	प्रज्ञा. पद 16	99
33	पांच गति	प्रज्ञा. पद 16	102
34	लेश्या के 1242 अलावा	प्रज्ञा. पद 17, उ. 1	104
35	लेश्या की अल्प बहुत्व	प्रज्ञा. पद 17 उ. 2	106
36	लेश्या	पद 17 उ. 3	110
37	लेश्या परिणाम (द्वार)	पद 17 उ. 4	111
38	लेश्या परिणाम	पद 17 उ. 5	115
39	लेश्या (अलावा)	पद 17 उ. 6	115
40	काय स्थिति	प्रज्ञा. पद 18	116
41	दृष्टि	प्रज्ञा. पद 19	123
42	अन्तक्रिया	प्रज्ञा. पद 20	123
43	पदवी	प्रज्ञा. पद 20	128
44	सीझना द्वार	प्रज्ञा. पद 20	130
45	सिद्धों का 33 बोल का अल्प बहुत्व	प्रज्ञा. पद 20	134
46	पांच शरीर	प्रज्ञा. पद 21	135
47	मारणान्तिक समुद्घात	प्रज्ञा. पद 21	139
48	क्रिया पद	प्रज्ञा. पद 22	140
49	आठ कर्म भोगने के 93 कारण	प्रज्ञा. पद 23, उद्दे. 1	154
50	कर्म प्रकृत्तियों की स्थिति आबाधकाल	प्रज्ञा. पद 23, उद्दे. 2	159
51	1 कर्म बांधते बांधना	प्रज्ञा. पद 24	163
52	2 कर्म बांधते वेदना	प्रज्ञा. पद 25	166
53	3 कर्म वेदते बांधे	प्रज्ञा. पद 26	167
54	4 कर्म वेदते हुए वेदना	प्रज्ञा. पद 27	170
55	आहार	प्रज्ञा. पद 28, उ. 1	172
56	आहार	प्रज्ञा. पद 28, उ. 2	175
57	उपयोग	प्रज्ञा. पद 29	180

क्र.सं.	नाम थोकड़ा	सूत्र संख्या	पृष्ठ सं.
58	पश्यता पद	प्रज्ञा. पद 30	180
59	संज्ञी पद	प्रज्ञा. पद 31	181
60	संयती पद	प्रज्ञा. पद 32	182
61	अवधि पद	प्रज्ञा. पद 33	183
62	परिचारणा पद	प्रज्ञा. पद 34	184
63	वेदना	प्रज्ञा. पद 35	187
64	सात समुद्घात	प्रज्ञा. पद 36	188
65	कषाय समुद्घात	प्रज्ञा. पद 36	195
66	छद्मस्थ समुद्घात	प्रज्ञा. पद 36	196
67	केवली समुद्घात	प्रज्ञा. पद 36	198
	विविध सुत्तागम स्तोक संग्रह		
1	श्री नवतत्व		201
2	पच्चीस बोल		208
3	जीव घड़ा		213
4	563 जीवों की 563 मार्गणाएं		219
5	बल का अल्प बहुत्व		241
6	धर्म सम्मुख होने के कारण		243
7	मार्गानुसारी के 35 बोल		244
8	मोक्ष के 23 बोल		244
9	परम कल्याण के 40 बोल		245
10	14 रज्जू लोक		246
11	दो करोड़ 91 लाख शरीर		247
12	दो करोड़ इन्द्रिय		248
13	व्यवहार समकित के 67 बोल		248
14	सम्यक्त्व के 12 द्वार		250
15	सिद्ध सुख के 11 दृष्टांत		251
16	84 लाख जीव योनियों का थोकड़ा		251
17	32 आगम पर 10 द्वार		253
18	14 पूर्व का यंत्र		255
19	आहार के 106 दोष		255
20	10 प्रकार के पच्चक्खाण	ठाणांग 10 ठाणा	258
21	चौभंगी पच्चास	ठाणांग 4 ठाणा	258

क्र.सं.	नाम थोकड़ा	सूत्र संख्या	पृष्ठ सं.
22	ध्यान चार	ठाणांग 4, उववाई	262
23	अस्वाध्याय (असज्झाय)	ठाणांग 4,10 निशीथ उ. 19	263
24	तेंतीस बोल	समवा. उत्तरा. 31	264
25	गुण स्थान (जीव स्थानक)	समवायांग 14	265
26	तीर्थंकर के 34 अतिशय	समवायांग 34	274
27	तीर्थंकर नाम के 20 कारण	श्री ज्ञाता अ. 8	275
28	ब्रह्मचर्य की 32 उपमा	प्रश्न व्या. अ. 9	275
29	बारह प्रकार के तप	3 ववाई सूत्र	275
30	लघु दंडक	जीवाभिगम प्र.प.	279
31	चार प्रकार के देव	जीवाभिगम सूत्र	291
32	लवण समुद्र	जीवा. प्रति. 3	297
33	अढ़ाई द्वीप क्षेत्र	जीवा. प्रति. 3	298
34	असंख्य द्वीप समुद्र	जीवा. प्रति. 3	300
35	निगोद	जीवा. प्रति. 5	301
36	छह आरे का वर्णन	जम्बू द्वीप प्रज्ञप्ति	302
37	खंडा जोयण	जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति	304
38	नक्षत्र परिचय	जम्बू. वक्ष 7	309
39	अष्ट प्रवचन	उत्तरा. अ. 4	310
40	लेश्या 6	उत्तरा. अ. 34	311
41	तेंतीस बोल	उत्तरा. 31 एवं आवश्यक सूत्र	314
42	साधु समाचारी	उत्तरा. अ. 26	317
43	दिन रात की घड़ियों का यंत्र	उत्तरा. अ. 26	317
44	दिन प्रहर देखने की रीति	उत्तरा. अ. 26	317
45	रात्रि प्रहर देखने की रीति	उत्तरा. अ. 26	318
46	सम्यक् पराक्रम के 73 बोल	उत्तरा 29	319
47	बावन अनाचार	दशवै. अ. 3	319
48	पांच ज्ञान	नंदी सूत्र, भगवती सूत्र	320
49	श्रोता अधिकार	नंदी सूत्र	327
50	संख्यादि 21 बोल (डाला पाला)	अनुयोग द्वार प्रमाण पद	328
51	प्रमाण-नय	अनुयोग द्वार	330

जैन तत्त्व दर्शन

(थोकड़ा विभाग खण्ड-2)

श्री प्रज्ञापना सूत्र

1. आर्य का थोकड़ा (प्रज्ञापना प्रथम पद)- आर्य के 2 भेद हैं 1. ऋद्धि प्राप्त 2. अऋद्धि प्राप्त

1. ऋद्धि प्राप्त के 6 भेद- तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव, चारण (जंघा चारण, विद्या चारण), विद्याधर

2. अऋद्धि प्राप्त के 9 भेद- क्षेत्र, जाति, कुल, कर्म, शिल्प, भाषा, ज्ञान, दर्शन, चारित्र आर्य-

1. क्षेत्र आर्य- भरत क्षेत्र में 32 हजार देश हैं, इनमें से साढ़े पच्चीस आर्य देश हैं, शेष इकतीस हजार नौ सो साढ़े चहोत्तर देश अनार्य है। साढे पच्चीस आर्य देशों में रहने वाले क्षेत्र आर्य कहलाते हैं। इनके नाम और राजधानियां इस प्रकार है- मगध देश (राजगृही) 2 अंगदेश (चम्पानगरी) 3 बंगदेश (ताम्रलिप्ति) 4 कलिंगदेश (कंचनपुर नगर) 5 काशी (वाराणसी) 6 कौशल देश (साकेतपुर) 7 कुरुक्षेत्र (गजपुर नगर) 8 कुशावर्त्त देश (सोरिकपुर नगर) 9 पंचालदेश (कंपिलपुर) 10 जंगलदेश (अहिच्छत्रा) 11 सौरठ देश (द्वारिका) 12 विदेह देश (मिथिला) 13 कच्छ देश (कौशांबी) 14 शांडिल्य देश (नंदीपुर नगर) 15 मलय देश (भद्दिलपुर) 16 वत्सदेश (विराटपुर) 17 वरूण देश (अच्छापुरी नगरी) 18 दशार्ण देश (मृत्तिकावती नगरी) 19 चेदि देश (शौक्तिकावती नगरी) 20 सिंधु सौवीर देश (वीतभय नगर) 21 शूरसेन देश (मथुरानगरी) 22 भंगदेश (अपापा) (पावापुरी) 23 पुरिवर्त देश (मासा पुरी नगरी) 24 कुणाल देश (श्रावस्ती) 25 लाढ़ देश (कोटि वर्ष नगर) 25½ आधा कैकय देश (श्वेताम्बिका नगरी)। इन आर्य देशों में तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव आदि का जन्म होता है।

2. जाति आर्य- जिन मनुष्यों की मातृवंश परंपरा श्रेष्ठ और सज्जन प्रशंसनीय हो, वे जाति आर्य, ये 6 हैं- 1. अम्बष्ठ, 2. कलिंद, 3. विदेह, 4. वेदग, 5. हरित 6. चुंचुण।

3. कुल आर्य- जिनकी पितृ वंश परंपरा श्रेष्ठ एवं सज्जन समर्पित हो, ये कुल आर्य 6 प्रकार के हैं- 1. उग्रकुल, 2. भोगकुल, 3. राजन्य कुल, 4. इक्ष्वाकुकुल 5. कौरव कुल 6. ज्ञातकुल।

4. कर्म आर्य- सज्जन पुरुषों के योग्य अहिंसा प्रधान आजीविका से जीवन चलावे जैसे- कपड़े का, सूत का, कपास का, किराणे का, सोने चांदी जवाहरात का, मिट्टी के बर्तन, वाहन आदि का व्यापार।

5. शिल्प आर्य- अहिंसा प्रधान शिल्प हैं अनेक, जैसे- दर्जी, लुहार, सुथार, जुलाहा, ठठारा, चित्रकार, लेखक, कुंभकार आदि विविध शिल्प वाले।

6. भाषा आर्य- सज्जनों के योग्य आदर सूचक भाषा का प्रयोग करे, अर्द्ध मागधी भाषा बोले, लेखन में ब्राह्मी लिपि का प्रयोग करे, वे भाषा आर्य हैं।

7. ज्ञान आर्य- मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यव ज्ञान, केवल ज्ञान इन पांच में से कोई भी ज्ञान का धारक ज्ञान आर्य है।

8. दर्शन आर्य- सम्यग् दर्शन युक्त मनुष्य दर्शन आर्य है 1. सराग दर्शन 2. वीतराग दर्शन ये दो दर्शन आर्य चौथे से दसवें गुण स्थान वाले सराग और ग्यारह से चौदहवें गुण-स्थान वाले वीतराग दर्शन आर्य हैं।

सराग दर्शन आर्य- 10 भेद हैं- **1. निसर्ग रूचि-** अन्य के उपदेशों के बिना स्वयमेव, जाति-स्मरण ज्ञान से, जिन भाषित जीवादि तत्वों पर भगवान ने फरमाया वह सत्य है, अन्यथा नहीं, श्रद्धा होना।

2. उपदेश रूचि- केवली अथवा छद्मस्थादि गुरू भगवंतों का उपदेश श्रवण कर श्रद्धा करना।

3. आज्ञा रूचि- जिनेश्वर की आज्ञा मेरे लिए तत्त्व रूप है, न कि तर्क, इस प्रकार आज्ञा रूचि वाला, जिनाज्ञा को प्रधानता देता है और जिनाज्ञा ही उसकी श्रद्धा का आधार होता है।

4. सूत्र रूचि- आचारांग आदि अंग प्रविष्ट तथा आवश्यक, दशवैकालिक आदि अंग बाह्य सूत्र के वांचना से धर्म श्रद्धा होना। सम्यक्त्व प्राप्त करना, सूत्र रूचि है।

5. बीज रूचि- पानी में तेल बिन्दु की तरह क्षयोपशम विशेष से एक पद के अध्ययन से धर्मश्रद्धा।

6. अभिगम रूचि- श्रुत ज्ञान, आगमों, प्रकीर्णकों के अध्ययन, भावार्थ सहित अध्ययन कर श्रद्धा प्राप्त करना।

7. विस्तार रूचि- प्रमाण, नयों द्वारा सर्व द्रव्यों की सर्व पर्यायों को जानकर श्रद्धा प्राप्त करना।

8. क्रिया रूचि- ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, विनय, समिति, गुप्ति आदि का पालन करते धर्म श्रद्धा प्राप्त करना।

9. संक्षेप रूचि- मिथ्यादृष्टि नहीं हो, प्रवचन में अकुशल हो, अन्य दर्शनों का ज्ञान नहीं हो, और जैनागमों का भी संक्षिप्त ज्ञान हो, ऐसे व्यक्ति की जिन प्रणीत तत्वों में सामान्य रूप से श्रद्धा होना।

10. धर्म रूचि- जिन प्ररुपित छः द्रव्य, नवतत्व, श्रुत और चारित्र धर्म पर श्रद्धा हो, यह धर्मरूचि। सराग दर्शनार्य में ये 10 रूचि होती है या 10 प्रकार की रूचि से अभ्यास से सम्यग्दर्शन होता है।

सम्यक्त्व के 8 आचार- 1. **निःशंकित**- जिन प्रवचनों में शंका न रखना। **2. निष्कांक्षित**- पर दर्शन की आकांक्षा नहीं करना **3. निर्विचिकित्सा**- धर्मक्रिया के फल में संदेह नहीं रखना। **4. अमूढ़ दृष्टि**- बाल तपस्या के विद्या और तप के चमत्कार से मोहित होकर श्रद्धा से विचलित नहीं होना। **5. उपबृंहण (उववूह)**- स्वधर्मी के गुणों की प्रशंसा कर उनकी वृद्धि करना। **6. स्थिरीकरण**- धर्म से डिगते को धर्म में स्थिर करे **7. वात्सल्य**- स्वधर्मियों के प्रति वात्सल्य रखकर उपकार करना। **8. प्रभावना**- किसी भी प्रकार से धर्मकथा आदि उपायों से जिन शासन के प्रभाव की प्रसिद्धि करना।

वीतराग दर्शन आर्य- दो भेद है- 1. उपशांत कषाय 2. क्षीणकषाय वीतराग दर्शन आर्य। 11वाँ गुण स्थान उपशांत कषाय वीतराग का। क्षीणकषाय के 2 भेद- 1. छद्मस्थ क्षीण कषाय वीतराग यह 12वां गुणस्थानवर्ती मनुष्य इसके दो भेद स्वयंबुद्ध छद्मस्थ और बुद्ध बोधित। 2. केवली क्षीण कषाय वीतराग- 13वां 14वां गुणस्थानवर्ती, इनके दो भेद- 1. सयोगी केवली 2. अयोगी केवली क्षीण कषाय। इन दोनों के प्रथम-अप्रथम अथवा चरम-अचरम समय से दो-दो भेद होते हैं।

9. चारित्र आर्य- सम्यग् चारित्र का पालन करने वाला चारित्र आर्य कहलाता है, दो भेद है- सराग चारित्रार्य, वीतराग चारित्रार्य। सराग चारित्रार्य- सूक्ष्म (चारित्रार्य) सम्पराय, स्थूलकषाय- बादर संपराय चारित्र छठे से नवमां गुण स्थान। सूक्ष्म सम्पराय के प्रथम समय अप्रथम समय और चरम समय अचरम समय और संक्लिश्यमान यानि उपशम श्रेणी से उतरते तथा चढ़ते जीवों का चारित्र। बादर सम्पराय के भी तीन भेद- प्रथम अप्रथम, चरम अचरम तथा प्रतिपाती (उपशम श्रेणीगत) एवं अप्रतिपाती (क्षपक श्रेणीगत) चारित्र। वीतराग चारित्रार्य के उपशांतकषाय और क्षीणकषाय ये दो भेद। क्षीण

कषाय के दो भेद- छद्मस्थ क्षीणकषाय (12वां गुण स्थान तक) केवली क्षीण कषाय (13वां 14वां गुणस्थानवर्ती) केवली क्षीण कषाय के 2 भेद- सयोगी, अयोगी। दूसरी तरह से चारित्रार्य के 5 भेद- 1. सामायिक चारित्रार्य 2. छेदोपस्थापनीय चारित्र आर्य 3. परिहार विशुद्धि चारित्रार्य 4. सूक्ष्मसम्पराय चारित्रार्य 5. यथाख्यात चारित्रार्य

2. उपपात, समुद्घात तथा स्वस्थान (प्रज्ञापना पद 2)- उपपात- जीव एक भव पूर्ण करके नये जन्म धारण करने हेतु गति करता है, उस दरमियान जितने आकाश प्रदेश को स्पर्शता है, वह उपपात। **समुद्घात**- वेदनादि समुद्घात के समय विशेष स्पंदन होने से विस्तृत होकर जितने आकाश प्रदेशों की स्पर्शना करे वह समुद्घात है। यहां अधिक क्षेत्र में व्यापक होने वाली मारणान्तिक और केवली समुद्घात का ही बहुलता से वर्णन किया है।

स्वस्थान- जन्म से मृत्युपर्यन्त जिस स्थान में रहता है वह स्वस्थान है।

1. पांच सूक्ष्म स्थावर के अपर्याप्त और पर्याप्त का उपपात, समुद्घात, स्वस्थान संपूर्ण लोक में है।

2. अपर्याप्त बादर वायुकाय का स्वस्थान लोक के बहुत असंख्यातवें भाग में है। शेष चार बादर स्थावर के अपर्याप्त का (तेउकाय छोड़कर) उपपात और समुद्घात सारे लोक में है, स्वस्थान (अपर्याप्त बादर वायुकाय के सिवाय तीन का) लोक के असंख्यातवें भाग में हैं।

3. अपर्याप्त बादर तेउकाय का उपपात दो ऊर्ध्व कपाटों के मध्य में मनुष्य क्षेत्र (ढ़ाई द्वीप) की सीध में चारों दिशाओं में 45 लाख योजन लम्बाई चौड़ाई और ऊंची नीची में लोकान्त तक अढ़ाई द्वीप के बाहर लम्बाई चौड़ाई लोकान्त तक जाड़ाई (मोटाई) 1800 योजन की है। पूरे तिरछे लोक की ऊंचाई सब दिशाओं में लोकान्त तक नहीं होने से ये कपाट कहे जाते हैं। न सोते न खड़े होने को ऊर्ध्व कपाट कहते हैं। पूर्व पश्चिम दिशा का एक, उत्तर दक्षिण दिशा का एक ये दो ऊर्ध्व कपाट हैं। बीच का अढ़ाई द्वीप का ऊपर नीचे लोकान्त तक खड़ा भूंगला जैसे आकार का है। इस प्रकार दोनों कपाटों में तथा दोनों कपाटों में रहे तिर्यक लोक में है। समुद्घात सारे लोक में है। स्वस्थान लोक के असंख्यातवे भाग यानि मनुष्य लोक में है।

4. पर्याप्त बादर तेउकाय का उपपात और समुद्घात लोक के असंख्यातवें भाग में है और स्वस्थान मनुष्य लोक में है। अढ़ाई द्वीप में 15 कर्मभूमि ही इनका स्वस्थान है, इसमें भी छठे आरे और युगलिक काल में भरत ऐरवत में बादर अग्नि नहीं होती,

महाविदेह में हमेशा होती है। लवण समुद्र में बड़वानल होने से होती है, अन्य समुद्रों में नहीं होती। अत्यन्त रूक्ष और अत्यन्त स्निग्ध काल में अग्नि जीव उत्पन्न नहीं होते। इसलिए निर्व्याघात अपेक्षा से पांच महाविदेह क्षेत्र में तथा व्याघात अपेक्षा से 10 कर्मभूमि में बादर अग्नि होती है।

5. पर्याप्त बादर वायुकाय का उपपात, समुद्घात और स्वस्थान लोक के बहुत से असंख्यातवें भाग में है।

6. पर्याप्त बादर वनस्पतिकाय का उपपात, समुद्घात सारे लोक में है, स्वस्थान लोक के असंख्यातवें भाग में।

7. पर्याप्त बादर पृथ्वीकाय, पर्याप्त बादर अप्काय, और शेष 19 दंडकों के पर्याप्त अपर्याप्त जीवों का उपपात, समुद्घात और स्वस्थान लोक के असंख्यातवें भाग में है। विशेष यह कि मनुष्य केवली समुद्घात की अपेक्षा सारे लोक में है।

सब जीवों के तीन स्थान-

जीव	**स्वस्थान**	**उपपात स्थान**	**समुद्घात स्थान**
पांच स्थावर सूक्ष्म पर्य. अपर्या.	सर्वलोक	सर्वलोक	सर्वलोक
बादर पृथ्वीकाय पर्याप्ता	अधोलोक-7 नरक पृथ्वी,नरकावास, भवन, नगर, तिर्च्छालोक- पर्वत क्षेत्र द्वीप जगति आदि ऊर्ध्व- देवलोक विमानादि लोक का असंख्यातवां भाग	लोक का असं. भाग	लोक का असंख्यातवां भाग
बादर पृथ्वीकाय अपर्याप्ता	अधोलोक-7 नरक पृथ्वी,नरकावास, भवन, नगर, तिर्च्छालोक- पर्वत क्षेत्र द्वीप जगति आदि ऊर्ध्व- देवलोक विमानादि लोक का असंख्यातवां भाग	सर्वलोक	सर्वलोक
बादर अप्काय का पर्याप्ता	अधो.- घनोदधि, घनोदधि वलय, पाताल कलश, भवनों की बावड़ियादि। तिरछा- नदी, कुवां तालाबादि समुद्र, ऊर्ध्व- 12 देव. तक की बावड़ियादि। लोक का सं. भाग	लोक का असंख्यातवां भाग	लोक का असं. भाग
बादर अप्काय का अपर्याप्ता	अधो.- घनोदधि, घनोदधि वलय, पाताल कलश, भवनों की बावड़ियादि तिरछा- नदी, कुवां तालबादि समुद्र, ऊर्ध्व- 12 देव. तक की बावड़ियादि लोक का सं. भाग	सर्वलोक	सर्वलोक
बादर अग्निकाय का पर्याप्ता	**निर्व्याघात**-5 महाविदेह क्षेत्र **व्याघात**-10 कर्मभूमि लोक का असं. भाग	लोक का असं. भाग	लोक का असं. भाग
बादर अग्निकाय का अपर्याप्ता	**निर्व्याघात-5** महाविदेह क्षेत्र **व्याघात-10** कर्मभूमि लोक का असं. भाग	दो ऊर्ध्वकपाट तिर्छालोक तट	सर्वलोक
बादर वायुकाय का पर्याप्ता	लोक का असं. भाग घनवात, तनुवात, घनवात वलय, तनुवात वलय, लोक में सर्व पोलाण वाले भाग	लोक के बहुत असं. भाग	लोक का बहुत असं. भाग
बादर वायुकाय का अपर्याप्ता	लोक का बहुत असं. भाग	सर्वलोक	सर्वलोक
बादर वनस्पतिकाय का पर्याप्ता	अप्काय जैसे स्थान	सर्वलोक	सर्वलोक
बादर वन.काय का अपर्याप्ता	लोक का असंख्यातवां भाग	सर्वलोक	सर्वलोक
विकलेन्द्रिय और ति.पंचे. का पर्याप्ता अपर्याप्ता	अधोलोकिक ग्राम, कुंवा आदि। तिरछा लोक- जलस्थान, द्वीप, समुद्रादि। ऊर्ध्व- मेरू की बावड़ियादि लोक का असं. भाग	लोक का असंख्यातवां भाग	लोक का असं. भाग
मनुष्य का पर्या. अपर्याप्त	मध्य लोक के ढ़ाई द्वीप क्षेत्र में, लोक का असंख्यातवां भाग	लोक का असंख्यातवां भाग	सर्वलोक (केवली समुद्घात आसरी)
नैरयिकों का पर्य. अपर्याप्ता	अधोलोक 7 नरक के 84 लाख नरकावास, लोक का असंख्यातवां भाग	लोक का असंख्यातवां भाग	लोक का असं. भाग
10 भवनपतिके पर्या. अपर्या.	अधो. प्रथम नरक के 10 अंतरों में 7 करोड़ 72 लाख भवनों में लोक का असं. भाग	लोक का असंख्यातवां भाग	लोक का असं. भाग
16 व्यं. देव के पर्याप्त अपर्याप्ता	तिर्च्छा रत्नप्रभा के ऊपर के 1000 यो. में से बीच के 800 यो. के पोलाण में असंख्याता नगरावास, लोक का असं. भाग	लोक का असंख्यातवां भाग	लोक का असं. भाग
ज्योतिषी देव का पर्या. अपर्या.	तिर्च्छे लोक में समभूमि से 790 से 900 यो. ऊपर तक के बीच में 110 यो. में, तिरछा असंख्याता योजन में असंख्य विमान, लोक का असंख्यातवां भाग	लोक का असंख्यातवां भाग	लोक का असं. भाग
वैमानिक देव. पर्या. अपर्या.	ऊर्ध्वलोक 84 97 023 विमानों में लोक का असंख्यातवां भाग	लोक का असंख्यातवां भाग	लोक का असं. भाग
सिद्ध भगवान	लोकाग्र- 333 धनुष 32 अंगुल जाड़ाई वाले 45 लाख योजन लम्बा चौड़ा सिद्ध क्षेत्र में	-	-

3. दिशाणुवाय (पन्नवणा तीसरा पद)- प्रज्ञापक दिशा के 18 भेद- 1. पूर्व 2. पश्चिम 3. उत्तर 4. दक्षिण 5. ईशानकोण 6. नैऋत्य कोण 7. आग्नेय कोण 8. वायव्य कोण (8 से 16) इन दिशाओं के अन्तर 17. विमला (ऊंची) 18. तमा (नीची दिशा)।

भाव दिशा के 18 भेद- 1. पृथ्वीकाय 2. अप्काय 3. तेउकाय 4. वायुकाय 5. अग्रबीज 6. मूल बीज 7. पर्व बीज 8. स्कंध बीज 9. द्वीन्द्रिय 10. त्रीन्द्रिय 11. चउरिन्द्रिय 12. तिर्यंच पंचेन्द्रिय 13 कर्मभूमि 14. अकर्मभूमि 15. अन्तरद्वीप 16. सम्मुर्च्छिम मनुष्य 17. नारकी 18. देवता।

1. समुच्चय जीव वनस्पतिकाय, अप्काय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चउरिन्द्रिय और तिर्यंचपंचेन्द्रिय- ये 7 बोलों के जीव- सबसे थोड़े पश्चिम दिशा में, क्योंकि पश्चिम दिशा में लवण समुद्र में 12 हजार योजन का गौतम द्वीप है, इसलिए अप्काय के जीव कम है, इस कारण उक्त 7 बोलों के जीव कम है। पूर्व दिशा में विशेषाधिक है, वहां गौतम द्वीप नहीं है। दक्षिण में विशेषाधिक है, दक्षिण में चन्द्र सूर्य के द्वीप नहीं है, अतः अप्काय जीव ज्यादा है, इसीलिए सात बोलों के जीव भी ज्यादा है। उत्तर दिशा में इनकी अपेक्षा विशेषाधिक है, क्योंकि असंख्याता द्वीप समुद्र जाने पर अरूण वर द्वीप में मान

सरोवर झील है, वह संख्यात क्रोड़ा क्रोड़ी योजन लंबी चौड़ी है, इसलिए अप्काय अधिक है, सातों बोलों के जीव भी विशेषाधिक है।

2. **पृथ्वीकाय के जीव-** दक्षिण दिशा में सबसे थोड़े है इस दिशा में 4 करोड़ 6 लाख भवनपतियों के भवन है, तथा नरकावास भी ज्यादा है, पोलार अधिक है अतः पृथ्वीकाय कम है। उत्तर दिशा में विशेषाधिक है, क्योंकि इधर 3 करोड़ 66 लाख भवन है, नरका वास भी कम है, पोलार कम है, पृथ्वीकाय अधिक है। पूर्व में इनसे विशेषाधिक है, इधर पृथ्वी अधिक कठोर है। पश्चिम में विशेषाधिक है, वहां गौतम द्वीप है जो पृथ्वी रूप है।

3 **वायुकाय और व्यंतर जाति के देव-** सबसे कम पूर्व दिशा में है, पृथ्वी कठोर है वायुकाय थोड़ी है व्यंतर भी कम हैं। पश्चिम में विशेषाधिक है, सलिलावती और वप्रा विजय एक हजार योजन गहरी और तिर्च्छी है जिसमें वायुकाय भी अधिक और व्यंतर देव भी अधिक है। इनसे उत्तर में विशेषाधिक है वहां भवनपतियों के भवन और नरकावास होने से पोलार अधिक है, इससे वायुकाय अधिक है और व्यंतर भी ज्यादा है। उनका स्वस्थान है। इसकी अपेक्षा दक्षिण में विशेष अधिक है, यहां भवनपतियों के भवन ज्यादा हैं, नरकावास भी ज्यादा है इस कारण पोलार अधिक है। अतः वायुकाय भी अधिक है और व्यंतरों के नगर भी अधिक है, यहां कृष्णपक्षी जीव ज्यादा उत्पन्न होते हैं। (जिनका संसार अर्द्धपुद्गल परावर्तन से अधिक हों वे कृष्णपक्षी कहलाते हैं।)

4. **मनुष्य, मनुष्य स्त्री, बादर तेउकाय और सिद्ध भगवान-** दक्षिण और उत्तर दिशा में सबसे थोड़े हैं, क्योंकि भरत और ऐरवत क्षेत्र छोटे हैं, उनमें मनुष्य थोड़े हैं, इनके वास थोड़े हैं, बादर तेउकाय थोड़ी है और वहां से थोड़े जीव सिद्ध होते हैं। इसकी अपेक्षा पूर्व दिशा में संख्यात गुणा है, वहां पूर्व महाविदेह क्षेत्र बड़ा है, मनुष्य, मनुष्यों के वास, बादर तेउकाय अधिक है, वहां जीव भी बहुत सिद्ध होते हैं इनकी अपेक्षा पश्चिम दिशा में विशेषाधिक है। पश्चिम महाविदेह में सलिलावती, वप्राविजय है 1000 योजन तिर्च्छी गहरी है, वहां मनुष्य, मनुष्यों के वास, बादर तेउकाय अधिक है, वहां से बहुत जीव सिद्ध होते हैं।

5. **भवनपति देव और देवियां-** पूर्व पश्चिम में सबसे थोड़े हैं, वहां भवन नहीं है, केवल आते जाते रहते हैं। इनकी अपेक्षा उत्तर दिशा में असंख्यात गुणा ज्यादा है। 3 करोड़ 66 लाख भवन है। इनकी अपेक्षा दक्षिण दिशा में असंख्यात गुणा बताये हैं, वहां 4 करोड़ 6 लाख भवन बताये हैं। कृष्ण पक्षी अधिक है।

6. **ज्योतिषी देव-** सबसे थोड़े पूर्व पश्चिम में क्योंकि विमान दूर-दूर है, दोनों दिशाओं के इनके द्वीप भी बगीचे जैसे हैं। इनकी अपेक्षा दक्षिण में ज्यादा है, वहां विमान अधिक हैं, कृष्णपक्षी भी अधिक हैं। विमान पास पास है। उत्तर दिशा में विशेषाधिक है, यहां विमान पास पास है, तथा अरूण वर द्वीप में मान सरोवर झील है, संख्याता क्रोड़ाक्रोडी योजन लम्बी चौड़ी होने से, रत्नों की पाल होने से बहुत से ज्योतिषी देव स्नान, मंजन, कौतुक क्रीड़ा के लिए आते हैं, उन्हें देख वहां के तिर्यंच जीवों का जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न होता है वे करणी कर निदान करते हैं, यहां ज्योतिषीयों में उत्पन्न होते हैं। इसलिए विशेषाधिक है।

7. **पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे देवलोक के देवता-** सबसे थोड़े पूर्व पश्चिम दिशा में है, इनके दो तरह के विमान आवलिका प्रविष्ट (पंक्तिबद्ध) और पुष्पावकीर्ण (अव्यवस्थित यानि बिना श्रेणीबद्ध रूप से) होते हैं। इनमें से आवलिका प्रविष्ट चारों दिशा में समान है, पुष्पावकीर्ण पूर्व पश्चिम में कम है, उत्तर दिशा में असंख्यात गुणा है, इनकी अपेक्षा दक्षिण में विशेषाधिक है, दक्षिण में कृष्णपक्षी भी ज्यादा होते हैं।

8. **पांचवे, छठे, सातवें, आठवें देवलोक** में पूर्व पश्चिम उत्तर दिशा में सबसे कम देवता, वहां पुष्पावकीर्ण विमान कम है, इसलिए तीन दिशाओं में कम है, दक्षिण में पुष्पावकीर्ण विमान ज्यादा है इस अपेक्षा से यहां असंख्यात गुणा ज्यादा है। कृष्ण पक्षी तिर्यंच योनि के जीव भी बहुत होते हैं। आवलिका प्रविष्ट चारों दिशा में तुल्य है।

9. नवमें देवलोक से सर्वार्थ सिद्ध विमान तक के देवता चारों दिशाओं में तुल्य है।

10. सातों नारकी के नेरिये सबसे थोड़े पूर्व, पश्चिम, उत्तर दिशा में है, दक्षिण दिशा में असंख्यात गुणा है।

11. **नैरयिकों का अल्प बहुत्व-** सबसे थोड़े सातवीं नारकी के नैरयिक पूर्व पश्चिम उत्तर में, इनकी अपेक्षा दक्षिण में असंख्यात गुणा है, इस दिशा में कृष्ण पाक्षिक जीव भी बहुत उत्पन्न होते हैं। सातवीं के दक्षिण की अपेक्षा छठी के पूर्व पश्चिम उत्तर दिशा में असंख्यात गुणे है, उनकी अपेक्षा छठी नारकी के दक्षिण दिशा के असंख्यात गुणा है। सबसे उत्कृष्ट पाप करने वाले संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य सातवीं नरक में उत्पन्न होते हैं, जो थोड़े हैं। उनसे हीन, हीनतर (कुछ) छठी पांचवी आदि नारकियों में उत्पन्न होते हैं, जो उत्तरोत्तर अधिक हैं, इसलिए सातवीं से छठी नरक में (सातवी की दक्षिण दिशा से छठी के पूर्व उत्तर पश्चिम में) असंख्यात गुणा अधिक बताया है। इनकी अपेक्षा

छठी नरक के दक्षिण में असंख्यात गुणा है। इसी तरह इसी कारण से पांचवी चौथी तीसरी, दूसरी और पहली नरक में भी पूर्व पश्चिम उत्तर दिशा में पूर्ववर्ती नरक के दक्षिण दिशा की अपेक्षा असंख्यात गुणा तथा उनके दक्षिण के उनसे असंख्यात गुणा अधिक अधिक कहना।

12. सबसे थोड़े सातवीं नरक के नैरयिक उनसे छठी नरक के नैरयिक असंख्य गुणे, यावत् इसी प्रकार आगे आगे कहते हुए पहली नरक के नैरयिक असंख्यात गुणे कहने हैं।

दिशा से जीवों का अल्प बहुत्व-

क्र.	जीव	पूर्व	पश्चिम	उत्तर	दक्षिण
1	जीव	2 विशेषाधिक	1 अल्प (सबसे थोड़ा)	4 विशेषाधिक	3 विशेषाधिक
2	पृथ्वीकाय	3 विशेषाधिक	4 विशेषाधिक	2 विशेषाधिक	1 अल्प
3	अप्काय	2 विशेषाधिक	1 अल्प	2 विशेषाधिक	3 विशेषाधिक
4	तेउकाय	2 संख्यात गुणा	3 विशेषाधिक	1 अल्प	1 अल्प
5	वायुकाय	1 अल्प	2 विशेषाधिक	3 विशेषाधिक	4 विशेषाधिक
6	वनस्पतिकाय	2 विशेषाधिक	1 अल्प	4 विशेषाधिक	3 विशेषाधिक
7	विकलेन्द्रिय	2 विशेषाधिक	1 अल्प	4 विशेषाधिक	3 विशेषाधिक
8	सातोंनारकी	1 अल्प	1 अल्प	1 अल्प	2 असं.गुणा
9	तिर्यचपंचेन्द्रिय	2 विशेषाधिक	1 अल्प	4 विशेषाधिक	3 विशेषाधिक
10	मनुष्य	2 संख्यात गुणा	3 विशेषाधिक	1 अल्प	1 अल्प
11	भवनपति	1 अल्प	1 अल्प	2असं. गुणा	3 असं. गुणा
12	वाण व्यंतर	1 अल्प	2 विशेषाधिक	3 विशेषाधिक	4 विशेषाधिक
13	ज्योतिषी	1 अल्प	1 अल्प	4 विशेषाधिक	3 विशेषाधिक
14	1 से 4 देवलोक	1 अल्प	1 अल्प	2 असं. गुणा	3 विशेषाधिक
15	5 से 8 देवलोक	1 अल्प	1 अल्प	1 अल्प	2 असं. गुणा
16	शेष देवलोक	तुल्य	तुल्य	तुल्य	तुल्य

4. गति इन्द्रिय और काया की 58 अल्प बहुत्व (पन्नवणा पद 3)- गति की 2, इन्द्रिय की 10, काया की 46 है।

1. गति की दो अल्प बहुत्व- 1. पांच गति की अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़े मनुष्य 2. नैरयिक असंख्यात गुणा 3. देव असंख्यात गुणा 4. सिद्ध अनंत गुणा 5. तिर्यंच अनंत गुणा।

गति की आठ अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़ी मनुष्य स्त्रियां 2. मनुष्य असंख्यात गुणा 3. नैरयिक असंख्यात गुणा 4. तिर्यंच स्त्रियां असंख्यात गुणी 5. देवता असंख्यात गुणा 6. देवियां असंख्यात गुणी 7. सिद्ध भगवान् अनंत गुणा 8. तिर्यंच अनंत गुणा।

2. इन्द्रिय की 10 अल्प बहुत्व- 1. सइन्द्रिय पांच इन्द्रिय और अनिन्द्रिय का अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़े पंचेन्द्रिय 2. चउरिन्द्रिय विशेषाधिक 3. त्रीन्द्रिय विशेषाधिक 4. द्वीन्द्रिय विशेषाधिक 5. अनिन्द्रिय अनन्त गुणा 6. एकेन्द्रिय अनन्त गुणा 7. सइन्द्रिय विशेषाधिक।

2. सइन्द्रिय और पांचों इन्द्रियों के अपर्याप्त की अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़े पंचेन्द्रिय के अपर्याप्त 2. चउरिन्द्रिय के अपर्याप्त विशेषाधिक 3. त्रिन्द्रिय के अपर्याप्त विशेषाधिक 4. द्वीन्द्रिय के अपर्याप्त विशेषाधिक 5. एकेन्द्रिय के अपर्याप्त अनंत गुणा 6. सइन्द्रिय के अपर्याप्त विशेषाधिक।

3. उपरोक्त 6 बोलों के पर्याप्त की अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़े चउरिन्द्रिय के पर्याप्त 2. पंचेन्द्रिय के विशेषाधिक 3. द्वीन्द्रिय के विशेषाधिक 4. त्रीन्द्रिय के विशेषाधिक 5. एकेन्द्रिय के अनंत गुणा 6. सइन्द्रिय के पर्याप्त विशेषाधिक।

4. सबसे थोड़े सइन्द्रिय के अपर्याप्त उससे सइन्द्रिय के पर्याप्त असंख्यात गुणा।

5. एकेन्द्रिय- सबसे थोड़े एकेन्द्रिय के अपर्याप्त उससे एकेन्द्रिय के पर्याप्त असंख्यात गुणा।

6. द्वीन्द्रिय- सबसे थोड़े द्वीन्द्रिय के पर्याप्त उससे अपर्याप्त असंख्यात गुणा।

7. त्रीन्द्रिय- सबसे थोड़े त्रीन्द्रिय के पर्याप्त उससे अपर्याप्त असंख्यात गुणा।

8. चतुरिन्द्रिय- पर्याप्त सबसे थोड़े, उससे अपर्याप्त असंख्यात गुणा।

9. पंचेन्द्रिय- सबसे थोड़े पर्याप्त, उससे अपर्याप्त असंख्यात गुणा।

10. सइन्द्रिय और पांच इन्द्रियों 6 बोल की अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़े चउरिन्द्रिय के पर्याप्त 2. पंचेन्द्रिय के पर्याप्त विशेषाधिक 3. द्वीन्द्रिय के पर्याप्त विशेषाधिक 4. त्रीन्द्रिय के पर्याप्त विशेषाधिक 5. पंचेन्द्रिय के अपर्याप्त असंख्यात गुणा 6. चउरिन्द्रिय अपर्याप्त विशेषाधिक 7. त्रीन्द्रिय अपर्याप्त विशेषाधिक 8 द्वीन्द्रिय के अपर्याप्त विशेषाधिक 9. एकेन्द्रिय के अपर्याप्त अनंत गुणा 10. सइन्द्रिय अपर्याप्त विशेषाधिक 11. एकेन्द्रिय के पर्याप्त संख्यात गुणा 12. सइन्द्रिय के पर्याप्त विशेषाधिक 13. समुच्चय सइन्द्रिय विशेषाधिक।

3. काया की 46 अल्प बहुत्व- त्रसस्थावर की 11, सूक्ष्म की 11, बादर की 13, सूक्ष्म बादर की 11 ये 46

1 त्रसस्थावर की 11 अल्प बहुत्व-

1. सकाय, पृथ्वी आदि 6 काय और अकायिक :- इन आठों की अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़े त्रस काय 2. तेजस् काय असंख्यात गुणा 3. पृथ्वीकाय विशेषाधिक 4. अप्काय विशेषाधिक 5. वायुकाय विशेषाधिक 6. अकायिक अनंत गुणा 7. वनस्पतिकाय अनंत गुणा 8. सकायिक विशेषाधिक

सकाय और 6 काय की अपर्याप्त की अल्प बहुत्व- 1. सबसे अल्प त्रसकाय के अपर्याप्त 2. तेजस्काय के अपर्याप्त असंख्यात गुणा 3. पृथ्वीकाय के विशेषाधिक 4. अप्काय के विशेषाधिक 5. वायुकाय के विशेषाधिक 6. वनस्पतिकाय के अपर्याप्त अनंत गुणा 7. सकायिक के अपर्याप्त विशेषाधिक

3. सकायिक और 6 काय के पर्याप्त का अल्प बहुत्व- अपर्याप्ता की तरह ही पर्याप्त का भी कथन है।

4. सकाय- सबसे थोड़े सकाय के अपर्याप्त उससे पर्याप्त संख्यात गुणा

5. पृथ्वीकाय- अपर्याप्ता सबसे थोड़े, पर्याप्ता संख्यात गुणा।

6-7-8-9. अपकाय, तैजस्काय, वायुकाय, वनस्पतिकाय के प्रत्येक काय के अपर्याप्ता अल्प, पर्याप्ता संख्यात गुणा

10. त्रसकाय के पर्याप्ता अल्प, अपर्याप्ता असंख्यात गुणा।

11. सकाय और 6 काय के पर्याप्ता अपर्याप्ता

अल्प बहुत्व	सकायिक	पृथ्वी कायिक	अप्कायिक	तेउकायिक	वायुकायिक	वनस्पति कायिक	त्रस कायिक
पर्याप्ता	14 विशेषाधिक	8 विशेषाधिक	9 विशेषाधिक	7 संख्यात गुणा	10 विशेषाधिक	13 संख्यात गुणा	1 अल्प
अपर्याप्ता	12 विशेषाधिक 15 विशेषाधिक	4 विशेषाधिक	5 विशेषाधिक	3 असंख्यात गुणा	6 विशेषाधिक	11 अनंत गुणा	2 असं. गुणा

2. सूक्ष्म की 11 अल्प बहुत्व

	अल्प बहुत्व	समु. सूक्ष्म	सूक्ष्म पृथ्वी	सूक्ष्म अपकाय	सूक्ष्म तेउकाय	सूक्ष्म वायुकाय	सूक्ष्म वनस्पति	सूक्ष्म निगोद
1	समुच्चय	7 विशेषा.	2 विशेषा.	3 विशेषा.	1 अल्प	4 विशेषा.	6 अनंत गुणा	5 असंख्यात
2	7 का अपर्या.	7 विशेषा.	2 विशे.	3 विशेषा.	1 अल्प	4 विशेषा.	6 अनंत गुणा	5 असंख्यात
3	पर्याप्ता	7 विशेषा.	2 विशे.	3 विशेषा.	1 अल्प	4 विशेषा.	6 अनंत गुणा	5 असंख्यात
4 से 10 4 से 10	अपर्याप्त पर्याप्ता	1 अल्प 2 संख्यात.	1 अल्प 2 संख्यात.	1 अल्प 2 संख्यात.	1 अल्प 2 संख्यात.	1 अल्प 2 संख्यात.	1 अल्प 2 संख्यात.	1 अल्प 2 संख्यात.
11 11	अपर्याप्ता पर्याप्ता	12 विशेषा. 14 विशेषा. 15 विशेषा.	2 विशेषा. 6 विशेषा.	3 विशेषा. 7 विशेषा.	1 अल्प 5 संख्यात.	4 विशेषा. 8 विशेषा.	11 अनंत गुणा 13 संख्यात.	9 असंख्यात. 10 संख्यात.

3. बादर की 13 अल्प बहुत्व- समुच्चय बादर, बादर पृथ्वीकाय, बादर अप्काय, बादर तेउकाय, बादर वायुकाय, बादर वनस्पतिकाय, प्रत्येक शरीर बादर वनस्पतिकाय, बादर निगोद और बादर त्रसकाय के अल्प बहुत्व का 13 प्रकार से अधिकार बताया है:-

	अल्प बहुत्व	समु. बादर	बा. पृथ्वी.	बा.अ.प्का.	बा. तेउ.	बा. वायु.	बा.वन.	बा.प्र.वन.	बा.निगोद	बा.त्रस.
1	समुच्चय	9 विशेषा.	5 असं.	6 असंख्य	2 असं.	7 असं.	8 अनंत	3 असं.	4 असं.	1 अल्प
2	9 की अपर्या.	9 विशेषा.	5 असं.	6 असंख्य	2 असं.	7 असं.	8 अनंत	3 असं.	4 असं.	1 अल्प
3	9 की पर्याप्त	9 विशेषा.	5 असं.	6 असंख्य	1 अल्प	7 असं.	8 अनंत	3 असं.	4 असंख्य	2 असं.
4 से 12	अपर्याप्त	2 असंख्य	2 असं.	2 असंख्य	2 असं.	2 असं.	2 असं.	2 असं.	2 असं.	2 असं.
4 से 12	पर्याप्त	1 अल्प	1 अल्प	1 अल्प	1 अल्प	1 अल्प	1 अल्प	1 अल्प	1 अल्प	1 अल्प
13	अपर्याप्त	18 विशेषा.	12 असं.	13 असंख्य	9 असं.	14 असं.	17 असं.	10 असं.	11 असं.	3 असं.
13	पर्याप्त	16 विशेषा. 19 विशेषा.	6 असं.	7 असंख्य	1 अल्प	8 असं.	15 अनंत	4 असं.	5 असं.	2 असं.

4. सूक्ष्म बादर की सम्मिलित 11-11 अल्प बहुत्व-

1.	अल्प बहुत्व	समुच्चय	पृथ्वीकाय	अपकाय	तेउकाय	वायुकाय	वनस्पति.	प्र.श.वन.	निगोद	त्रसकाय
	सूक्ष्म	16 विशेषा.	9 विशेषा.	10 विशेष.	8 असं.	11 विशेषा.	15 असं.	-	12 असं.	-
	बादर	14 विशेषा.	5 असं.	6 असं.	2 असं.	7 असं.	13 अनंत	3 असं.	4 असं.	1 अल्प
2.	16 की अप. उपरोक्त अनुसार समझें									
3.	16 की पर्याप्त बादर तेजस्काय सबसे अल्प पर्याप्त और बादर त्रसकाय के पर्याप्त 2 असंख्यात गुणा, शेष वर्णन 3 से 16 बोल की तरह ही है।									
4 से 10.	अल्प बहुत्व	सू. अपर्याप्ता	सूक्ष्म पर्याप्ता	बा. अपर्याप्ता	बादर पर्याप्ता					
4.	समुच्चय	3 असंख्य	4 संख्याता	2 असंख्य	1 अल्प					
5.	पृथ्वीकाय	3 असंख्य	4 संख्याता	2 असंख्य	1 अल्प					
6.	अप्काय	3 असंख्य	4 संख्याता	2 असंख्य	1 अल्प					
7.	तैजस्काय	3 असंख्य	4 संख्याता	2 असंख्य	1 अल्प					
8.	वायुकाय	3 असंख्य	4 संख्याता	2 असंख्य	1 अल्प					
9.	वनस्पतिकाय	3 असंख्य	4 संख्याता	2 असंख्य	1 अल्प					
10.	निगोद	3 असंख्य	4 संख्याता	2 असंख्य	1 अल्प					

11.पहली अल्प बहुत्व के 16 तथा समुच्चय सूक्ष्म, बादर के 34 बोलों की अल्प बहुत्व-

अल्प बहुत्व	समुच्चय	पृथ्वीकाय	अप्काय	तेउकाय	वायुकाय	वनस्पति.	प्र.श.वन.	निगोद	त्रसकाय
सूक्ष्म अपर्या.	31 विशेषा.	16 विशेषा.	17 विशेषा.	15 असं.	18 विशेषा.	30 असं.	-	23 असं.	-
सूक्ष्म पर्या.	33 विशेषा.	20 विशेषा.	21 विशेषा.	19 सं.	22 विशेषा.	32 सं.	-	24 सं.	-
बादर अपर्या.	28 विशेषा.	12 असं.	13 असं.	9 असं.	14 असं.	17 असं.	10 असंख्य	11 असं.	3 असं.
बादर पर्याप्ता	26 विशेषा.	6 असं.	7 असं.	1 अल्प	8 असं.	25 अनंत	4 असंख्य	5 असं.	2 असं.
बादर	29 विशेषा.	-	-	-	-	-	-	-	-
सूक्ष्म	34 विशेषा.	-	-	-	-	-	-	-	-

5. 102 बोल का बासठिया पन्नवणा पद 3- इस पद में 22 द्वारों से 102 बोलों का वर्णन 62 प्रकार से वर्गीकृत किया है- समुच्चय जीव में जीव के 14, गुणस्थान 14, योग 15 उपयोग 12 लेश्या 6, अल्पबहुत्व ये कुल 62 प्रकार वर्गीकरण हुए। इन पर 102 बोल का 22 द्वारों से वर्णन है-

22 द्वार इस प्रकार- 1. जीव 2. गति 3. इन्द्रिय 4. काय 5. योग 6. वेद 7. कषाय 8. लेश्या 9. दृष्टि 10. सम्यक्त्व 11. ज्ञान 12. दर्शन 13. संयम 14. उपयोग 15. आहारक 16. भाषक 17. परित्त 18. पर्याप्त 19. सूक्ष्म 20. संज्ञी 21. भव्य 22.चरम ये 22 द्वार हुए। इनमें किसमें कितने बोल पाते है यह स्पष्टीकरण है-

मार्गणा	जीव	गुण स्थान	योग	उपयोग	लेश्या	98 में से बोल	अल्प बहुत्व
1 जीव द्वार							
1 समुच्चय जीवों में	14	14	15	12	6	98	6 विशेषा.
2 नरक में	3	4	11	9	3	31	2 असंख्य
3 तिर्यंच में	14	5	13	9	6	91	5 अनंत
4 मनुष्य में	3	14	15	12	6	1	1 अल्प
5 देव में	3	4	11	9	6	41	3 असंख्य
6 सिद्ध में	0	0	0	2	0	76	4 अनंत
2. गतिद्वार							
1 नरक गति में	3	4	11	9	3	31	3 असंख्य
2 तिर्यंचगति में	14	5	13	9	6	91	8 अनंत
3 तिर्यंचणी में	2	5	13	9	6	38	4 असंख्य
4 मनुष्य गति में	3	14	15	12	6	1 और24	2 असंख्य
5 मनुष्यणी में	2	14	13	12	6	2	1 अल्प
6 देवगति में	3	4	11	9	6	40	5 असंख्य
7 देवी में	2	4	11	9	4	41	6 संख्यात
8 सिद्धगति में	0	0	0	2	0	76	7 अनंत
3. इन्द्रिय द्वार							
1 सइन्द्रिय में	14	12	15	10	6	95	7 विशेषा.
2 एकेन्द्रिय में	4	1	5	3	4	90	6 अनंत
3 बेइन्द्रिय	2	2	4	5	3	50 से 52	4 विशेषा.
4 तेइन्द्रिय	2	2	4	5	3	50 से 52	3 विशेषा.
5 चतुरिन्द्रिय में	2	2	4	6	3	50 से 52	2 विशेषा.
6 पंचेन्द्रिय में	4	12	15	10	6	49	1 अल्प
7 अनिन्द्रिय में	1	2	7	2	1	76	5 अनंत

4. कायद्वार							
1 सकाया में	14	14	15	12	6	97	8 विशेषा.
2 पृथ्वीकाय में	4	1	3	3	4	69	3 विशेषा.
3 अप्काय में	4	1	3	3	4	70	4 विशेषा.
4 तेऊकाय में	4	1	3	3	3	68	2 असंख्य
5 वायुकाय में	4	1	5	3	3	71	5 विशेषा.
6 वनस्पतिकाय में	4	1	3	3	4	89	7 अनंत
7 त्रसकाय में	10	14	15	12	6	52	1 अल्प
8 अकाय में	0	0	0	2	0	76	6 अनंत
5. योगद्वार							
1 सयोगी में	14	13	15	12	6	96	5 विशेषा.
2 मनयोगी में	1	13	14	12	6	41 या 44	1 अल्प
3 वचनयोगी में	5	13	14	12	6	47	2 असंख्य
4 काययोगी में	14	13	15	12	6	90	4 अनंत
5 अयोगी में	1	1	0	2	0	76	3 अनंत
6. वेद द्वार							
1 सवेदी में	14	9	15	10	6	93-94	5 विशेषा.
2 पुरुष वेद में	2	9	15	10	6	40	1 अल्प
3 स्त्रीवेद में	2	9	13	10	6		2 संख्यात
4 नपुंसक वेद में	14	9	15	10	6		4 अनंत
5 अवेदी में	1	6	11	9	1		3 अनंत
7. कषाय द्वार							
1 सकषायी में	14	10	15	10	6	94	6 विशेषा.
2 क्रोधकषाय में	14	9	15	10	6		3 विशेषा.
3 मान कषाय में	14	9	15	10	6	88	2 अनंत
4 माया कषाय में	14	9	15	10	6		4 विशेषा.
5 लोभ कषाय में	14	10	15	10	6		5 विशेषा.
6 अकषायी में	1	4	11	9	1	76	1 अल्प
8. लेश्या द्वार							
1 सलेशी में	14	13	15	12	6	96	8 विशेषा.
2 कृष्णलेशी में	14	6	15	10	1		7 विशेषा.
3 नील लेशी में	14	6	15	10	1	94	6 विशेष.
4 कापोत लेशी में	14	6	15	10	1	88	5 अनंत
5 तेजो लेशी में	3	7	15	10	1	41/44	3 संख्यात
6 पद्मलेशी में	2	7	15	10	1		2 संख्यात

7 शुक्ल लेशी में	2	13	15	12	1	37/44	1 अल्प
8 अलेशी में	1	1	0	2	0	76	4 अनंत
9. दृष्टि द्वार							
1 सम्यग्दृष्टि में	6	12	15	9	6	76	2 अनंत
2 मिथ्यादृष्टि में	14	1	13	6	6	92	3 अनंत
3 मिश्रदृष्टि में	1	1	10	6	6	44	1 अल्प
10. सम्यक्त्व द्वार							
1 सास्वादन सम्य. में	6	1	13	6	6		1 अल्प
2 क्षयोपशम सम्य. में	2	4	15	7	6		3 असंख्य
3 वेदक सम्यक्त्व में	2	4	15	7	6		4 विशेषा.
4 उपशम सम्य. में	2	8	13	7	6		2 संख्यात.
5 क्षायिक सम्य. में	2	11	15	9	6		5 अनंत
11. ज्ञान द्वार							
1 सज्ञानी में	6	12	15	9	6		6 विशेषा.
2 मति-श्रुतज्ञानी में	6	10	15	7	6	52	तुल्य 3 विशेषा.
3 अवधि ज्ञानी में	2	10	15	7	6	41/44	2 असंख्य
4 मनःपर्यवज्ञानी में	1	7	14	7	6	1और 2	1 अल्प
5 केवल ज्ञानी में	1	2	7	2	1	76	5 अनंत
6 मति-श्रुत अज्ञानी में	14	2	13	6	6	92	7 अनंत (तुल्य)
7 विभंग ज्ञानी में	2	2	13	6	6	41/44	4 असंख्यात
12. दर्शन द्वार							
1 चक्षु दर्शन में	6	12	14	10	6	45	2 असंख्य
2 अचक्षु दर्शन में	14	12	15	10	6		4 अनंत
3 अवधि दर्शन में	2	12	15	10	6	41	1 अल्प
4 केवल दर्शन में	1	2	7	2	1	76	3 अनंत
13 संयम द्वार							
1 समुच्चय संयती में	1	9	15	9	6	1 और 2	6 संख्यात
2 सामायिक संयत में	1	4	14	7	6		5 संख्यात
3 छेदोप स्थापनीय सं. में	1	4	14	7	6		4 संख्यात
4 परिहार विशुद्ध संयत में	1	2	9	7	3		2 संख्यात
5 सूक्ष्म संपराय संयत में	1	1	9	4	1		1 अल्प
6 यथाख्यात संयत में	1	4	11	9	1		3 संख्यात
7 संयता संयत में	1	1	12	6	6	37	7 असंख्यात
8 असंयत में	14	4	13	9	6	93	9 अनंत
9 नो संयत नो असं. नो संयता संयत में	0	0	0	2	0	76	8 अनंत

14 उपयोग द्वार							
1 साकार उपयोग में	14	14	15	12	6		2 संख्यात
2 अनाकार उपयोग में	14	13	15	12	6		1 अल्प
15 आहारक द्वार							
1 आहारक में	14	13	14	12	6	85	2 असंख्य
2 अनाहारक में	8	5	1	10	6	83	1 अल्प
16 भाषक द्वार							
1 भाषक में	5	13	14	12	6	76+90	1 अल्प
2 अभाषक में	10	5	5	11	6	47	2 अनंत
17 परित्त द्वार							
1 परित्त में	14	14	15	12	6	63	1 अल्प
2 अपरित्त में	14	1	13	6	6	88	3 अनंत
3 नो परित्त नो अपरित्त में	0	0	0	2	0	76	2 अनंत
18 पर्याप्त द्वार							
1 पर्याप्त में	7	14	15	12	6	85	3 संख्यात
2 अपर्याप्त में	7	3	5	9	6	83	2 अनंत
3 नो पर्याप्त नो अपर्याप्त में	0	0	0	2	0	76	1 अल्प
19 सूक्ष्म द्वार							
1 सूक्ष्म में	2	1	3	3	3	86	3 असंख्य
2 बादर में	12	14	15	12	6	81	2 अनंत
3 नो सूक्ष्म नो बादर में	0	0	0	2	0	76	1 अल्प
20 संज्ञी द्वार							
1 संज्ञी में	2	12	15	10	6	41/44	1 अल्प
2 संज्ञी में	12	2	6	6	4	90	3 अनंत
3 नो संज्ञी नो असंज्ञी में	1	2	7	2	1	76	2 अनंत
21 भव्य द्वार							
1 भव्य में	14	14	15	12	6	87	3 अनंत
2 अभव्य में	14	1	13	6	6	74	1 अल्प
3 नो भव्य नो अभव्य में	0	0	0	2	0	76	2 अनंत गुण
22 चरम द्वार							
1 चरम में	14	14	15	12	6		2 अनंत गुण
2 अचरम में	14	1	13	8	6	74/76	1 अल्प

अस्तिकाय की द्रव्य, प्रदेश व शामिल की अल्प बहुत्व-

अस्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा- 1. धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय

द्रव्य रूप से एक परस्पर तुल्य सबसे अल्प है। 2. जीवास्तिकाय द्रव्य रूप से अनंत गुणा 3. पुद्‌गलास्तिकाय द्रव्य रूप से अनंत गुणा है। 4. काल द्रव्य रूप से अनंत गुणा है।

प्रदेश की अपेक्षा- 1. धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय प्रदेश की अपेक्षा परस्पर तुल्य सबसे कम। 2. जीवास्तिकाय प्रदेश की अपेक्षा अनंत गुण 3. पुदगलास्तिकाय प्रदेश की अपेक्षा अनंत गुणा 4. काल अप्रदेश रूप से अनंत गुणा 5. आकाशास्तिकाय प्रदेश रूप से अनंत गुणा।

अस्तिकाय द्रव्यों में प्रत्येक की द्रव्य व प्रदेश की अपेक्षा अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़ा एक धर्मास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा 2. प्रदेश की अपेक्षा असंख्यात गुणा 2. सबसे थोड़ा एक अधर्मास्तिकाय द्रव्यापेक्षा 2. प्रदेश की अपेक्षा असंख्यात गुणा। 3. सबसे थोड़ा एक आकाशास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा 2. प्रदेश की अपेक्षा अनंत गुणा। 4. सबसे थोड़े जीवास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा 2. वे ही प्रदेश की अपेक्षा असंख्यात गुणा प्रत्येक जीव में लोकाकाश के बराबर प्रदेश होते हैं। 5. सबसे थोड़े पुद्‌गलास्तिकाय द्रव्य की अपेक्ष वे ही 2. प्रदेश की अपेक्षा असंख्यात गुणा। काल के प्रदेश नहीं होते, अतः अल्प बहुत संभव नहीं।

द्रव्य प्रदेश की अपेक्षा अस्तिकाय द्रव्यों की शामिल अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़े धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय द्रव्य से परस्पर तुल्य 2. धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय प्रदेश की अपेक्षा असंख्यात गुणा 3. जीवास्तिकाय द्रव्य रूप से अनंत गुण 4. वे ही प्रदेश रूप से असंख्यात गुणा। 5. पुदगलास्तिकाय द्रव्य रूप से अनंत गुण 6. वे ही प्रदेश रूप से असंख्य गुण। 7. काल द्रव्य और अप्रदेश रूप से अनंत गुण 8. आकाशास्तिकाय प्रदेश से अनंत गुण।

अल्प बहुत्व	धर्मास्तिकाय	अधर्मास्तिकाय	आकाशास्तिकाय	जीवास्तिकाय	पुद्‌गलास्तिकाय	काल
द्रव्य रूप से अस्तिकाय	1 अल्प	1 अल्प	1 अल्प	2 अनंत गुण	3 अनंत गुण	4 अनंत गुण
प्रदेश रूप से अस्तिकाय	1 अल्प	1 अल्प	5 अनंत	2 अनंत गुण	3 अनंत गुण	4 अप्रदेशी
एक द्रव्य और प्रदेश से	1/असंख्य	1/असंख्य	1/अनंत	थोड़े/असंख्य	थोड़े/असंख्य	अप्रदेशी
द्रव्य/प्रदेश शामिल	1/2 असंख्य	1/2 असंख्य	1/8 अनंत	3 अनंत/4असं.	5 अनंत/6असं.	7 द्रव्य से अप्रदेशी अनंत

6. जीवादि 6 बोलों की अल्प बहुत्व (पन्नावणा पद 3) - जीव, पुद्‌गल, काल (अद्धासमय), सर्व द्रव्य, सर्व प्रदेश, सर्व पर्यव की अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़े जीव 2. पुद्‌गल अनंत गुणा 3. काल अनन्त गुणा 4. सर्वद्रव्य विशेषाधिक 5. सर्व प्रदेश अनंत गुण 6. सर्व पर्याय अनन्त गुणा।

7. खेत्ताणुवाय (क्षेत्रानुपात) (पन्नवणा पद 3)- तीन लोक के 6 भेद करके कौन कहां रहता है? इस अपेक्षा से अल्प बहुत्व बताई है। ये 6 भेद इस प्रकार है-

1. ऊर्ध्व लोक- (ज्योतिषी देवों के ऊपरी सतह से ऊपर) 12 देवलोक, 3 किल्विषी, 9 लोकांतिक 9 ग्रैवेयक, 5 अणुत्तर विमान ये 38 देव के पर्याप्ता अपर्याप्ता 76 तथा मेरू की बावड़ियों में 46 (तेऊकाय बादर के पर्याप्त अपर्याप्त छोड़कर) तिर्यंच ये कुल 122 जीव रहते हैं।

2. अधोलोक- [मेरू की सम भूमि से 900 योजन (यानि तिर्च्छा लोक के) नीचे से] नारकी के 14 भेद। भवनपति के 10, परमाधामी के 15, इन दोनों के पर्याप्ता अपर्याप्ता 50 ये देव के भेद, एवं सलिलावती वप्रा विजयों में मनुष्यों के 3 भेद (पर्याप्ता, अपर्याप्ता, सम्मुर्च्छिम) और तिर्यंच के 48 भेद ये सब कुल 14+50+3+48=115 भेद के जीव हैं।

3. तिर्च्छा लोक- 1800 योजन में मनुष्य के 303, तिर्यंच के 48, देव के 72 (16 व्यंतर, 10 जृंभक, 10 ज्योतिषी, इन तीनों के पर्याप्ता अपर्याप्ता 72) ये कुल 423 जीवों के भेद है।

4. ऊर्ध्वलोक-तिर्यक्‌लोक- ज्योतिषी के ऊपरी तल का 1 प्रदेशी प्रतर और ऊर्ध्वलोक के नीचे का एक प्रदेशी प्रतर इनके बीच का ऊर्ध्वलोक तिर्यक् लोक है। यहां देव गमनागमन के समय तथा जीवच्यव कर ऊर्ध्वलोक या तिर्यग्लोक में आने जाने के समय (वाटे वहता) स्पर्शते हैं।

5. अधोलोक तिर्यक्‌लोक- अधोलोक के ऊपरी सतह का ऊपरी प्रतर और तिर्यक् लोक का नीचे का अन्तिम प्रतर का मध्य भाग अधोलोक तिर्यक् लोक कहलाता है। यहां भी जीव गमनागमन और वाटे वहता स्पर्श करते हुए जाते आते हैं।

6. त्रिलोक- देव, देवी या मरणांतिक समुद्घात करते समय एक साथ स्पर्श करते हैं। इन 6 भागों में 24 दंडक के जीव कहां न्यूनाधिक है वह इस प्रकार- **अल्प बहुत्व**

1. 20 बोल जीव- समुच्चय एकेन्द्रिय और पांच स्थावर ये 6 समुच्चय इनके 6 पर्याप्ता, 6 अपर्याप्ता ये 18 तथा समुच्चय जीव और समुच्चय तिर्यंच ये 20 बोल। इनका अल्प बहुत्व इस प्रकार-

1. सबसे थोड़े ऊर्ध्वलोक तिर्यक लोक में- यहां ऊर्ध्व से तिर्यक और तिर्यक से ऊर्ध्वलोक में उत्पन्न होने वाले तथा इन प्रतरों में रहने वाले ही गिने हैं, अतः सबसे कम है।

2. अधोलोक तिर्यक्लोक में विशेषाधिक- यहां क्षेत्र अधिक हैं (ऊर्ध्व से अधोलोक ज्यादा है) और ऊर्ध्वलोक की अपेक्षा अधोलोक में जीव ज्यादा उत्पन्न होते हैं, इसलिए विशेषाधिक है।

3. उनसे तिर्यग् लोक में असंख्यात गुणा- असंख्यात गुणा क्षेत्र होने से कहा है।

4. त्रिलोक में असंख्यात गुणा- विग्रह गति से मारणान्तिक समुद्घात की अपेक्षा गिने हैं।

5. ऊर्ध्वलोक में असंख्यात गुणा- उपपात क्षेत्र अधिक होने से असंख्यात गुणा है।

6. अधोलोक में विशेषाधिक- ऊर्ध्वलोक से अधोलोक का विस्तार अधिक है, अतः विशेषाधिक है।

2. 3 बोल नारकी के- समुच्चय नारकी इनके पर्याप्ता और अपर्याप्ता 1. सबसे थोड़े त्रिलोक में मेरू पर्वत, अंजन गिरी, दधिमुख पर्वत आदि पर रही बावड़ियों में मत्स्य वगैरह नरकायु बांधकर मारणान्तिक समुद्घात कर जाते तीनों लोकों का स्पर्श करते हैं, जो सबसे कम है।

2. अधोलोक तिर्यक् लोक में असंख्यात गुणा- तिरछे लोक के असंख्याता द्वीप समुद्रों में तिर्यंच पंचेन्द्रिय जीव नारकी में उत्पन्न होते हुए अधोलोक तिर्यक् लोक के दोनों प्रतरों का स्पर्श करते हैं, यह मेरू आदि के क्षेत्रों की अपेक्षा असंख्यात गुणा है। अतः असंख्यात गुणा है।

3. अधोलोक में असंख्यात गुणा है- यहां नारकी का स्वस्थान है।

3. 3 बोल तिर्यंचणी, समुच्चयदेव, समुच्चयदेवी- 1. सबसे थोड़े ऊर्ध्व लोक में- मेरू, अंजन गिरी आदि बावड़ियों में तिर्यंच स्त्रियां है जो थोड़ी है, तथा ऊर्ध्वलोक में देव देवी भी थोड़े हैं।

2. ऊर्ध्वलोक तिर्यक् लोक में असंख्यात गुणा- ऊर्ध्वलोक से तिर्यक् लोक में तिर्यँच स्त्री रूप उत्पन्न होने वाले देव-देवी तथा एकेन्द्रियादि और तिर्यग् लोक से ऊर्ध्व लोक में उत्पन्न होने वाली तिर्यंच स्त्रियां भी दोनों प्रतरों का स्पर्श करते हैं। ज्योतिषीयों के समीप होने से उनके स्वस्थान है, व्यंतर ज्योतिषी ऊर्ध्वलोक में जाते आते हैं अतः स्पर्श करते है, तिर्यक् लोक से सौधर्मकल्पादि तथा एकेन्द्रियादि में उत्पन्न होने वाले जीव भी स्पर्श करते हैं।

3. त्रिलोक में संख्यात गुणा- अधोलोक से भवनपति, व्यंतर और अन्य जीव भी ऊर्ध्वलोक में तिर्यंच स्त्री रूप से तथा ऊर्ध्वलोक के देव आदि भी अधोलोक में तिर्यंच

स्त्री रूप में उत्पन्न होते हुए मारणान्तिक समुद्घात करते तीनों लोक का स्पर्श करते हैं।

4. अधोलोक तिर्यक् लोक में संख्यात गुणा- अधोलोक से नैरयिकादि तिर्यक् लोक में तिर्यंच स्त्री और तिर्यक् लोक के कई जीव तिर्यंच स्त्री रूप सलिलावती आदि में उत्पन्न होते हुए स्पर्श करते हैं। कई तिर्यंच स्त्रियां इन दोनों प्रतरों में रहती है, ये भवनपति व्यंतरों के समीप होने से स्वस्थान है, भवनपति वैक्रिय समुद्घात करके भी दोनों प्रतरों का स्पर्श करते हैं। तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य भवनपति देवों में उत्पन्न होते हुए भी दोनों प्रतरों का स्पर्श करते हैं।

5. अधोलोक में संख्यात गुणा- ग्राम और समुद्र हजार योजन गहरे है, तिर्यंच स्त्रियां है, वह उनका स्वस्थान है, क्षेत्र भी संख्यात गुणा है, अधोलोक भवनपति का स्वस्थान है।

6. तिर्यग्लोक में संख्यात गुणा- असंख्याता द्वीप हैं, समुद्र हैं, तिर्यंच स्त्रियां बहुत है। व्यंतर, ज्योतिषी का स्वस्थान है। अतः संख्यात गुणा है।

4. 6 बोल मनुष्य, मनुष्यणी (समुच्चय, पर्याप्ता अपर्याप्ता दोनों के)- 1. सबसे थोड़ी त्रिलोक में- ऊर्ध्वलोक से अधोलोक में उत्पन्न होते हुए मारणांतिक और केवली समुद्घात करते समय तीनों लोक का स्पर्श करते हैं। 2. ऊर्ध्वलोक तिर्यक् लोक में- मनुष्य असंख्यात गुणा और मनुष्यणी संख्यात गुणा- ऊर्ध्वलोक से वैमानिक तथा एकेन्द्रियादि मनुष्य में उत्पन्न होते दोनों प्रतर स्पर्शते हैं। विद्याधर भी पर्वत पर जाते है, उनके शुक्र रूधिरादि से बहुत सम्मुर्च्छिम मनुष्य उत्पन्न होते हैं, सम्मुर्च्छिम मनुष्य (पुद्गलों के साथ जाते हैं) वे भी उनका स्पर्श करते हैं। तिर्यक् लोक से ऊर्ध्व लोक में उत्पन्न होने वाले मारणान्तिक समुद्घात करते हुए भी स्पर्श करते हैं। 3. अधोलोक तिर्यक् लोक में संख्यात गुणा- अधोलोक में गांवों में मनुष्य है, तिर्यक् लोक से मनुष्य एवं अन्य काय के जीव इन अधोलोक के गांवों में गर्भज और समुर्च्छिम उत्पन्न होते हे, तो इन दोनों प्रतरों का स्पर्श करते हैं। अधोलोक के गांवों, भवनपति, नरकादि से तिर्यक्लोक में गर्भज और समुर्च्छिम मनुष्य रूप उत्पन्न होने वाले भी स्पर्श करते हैं। नीचे लोकों के गांवों के मनुष्यों का स्वस्थान भी है।

4. ऊर्ध्वलोक में संख्यात गुणा- मेरू पर्वत पर विद्याधर क्रीड़ा निमित्त चारण आदि भी जाते हैं, उनके शुक्र रूधिर आदि से बहुत से सम्मुर्च्छिम मनुष्य उत्पन्न होते हैं।

5. अधोलोक में संख्यात गुणा- सलिलावती वप्रा विजयों में स्वस्थान है।

6. तिर्यक् लोक में संख्यात गुणा- अढ़ाई द्वीप मनुष्य, मनुष्य स्त्रियों का स्वस्थान है। क्षेत्र बड़ा है।

5. 6 बोल भवनपति देव-देवी (समुच्चय, पर्याप्ता, अपर्याप्ता) 1. सबसे थोड़े ऊर्ध्व लोक में देवलोकों में ऊपर मित्रता से, तीर्थंकर जन्मोत्सव पर मेरू पर, या क्रीड़ा निमित्त मेरू पर जाते हैं अंजनगिरि, दधिमुख पर्वत पर भी जाते हैं, अतः थोड़े हैं।
2. ऊर्ध्वलोक तिर्यक्लोक में असंख्यात गुणा- तिर्यक्लोक में रहे भवनपति वैक्रिय समुद्घात कर प्रतरों का स्पर्श करते हैं, मारणान्तिक समुद्घात कर ऊर्ध्व लोक में बादर पृथ्वीकाय में उत्पन्न होते हुए भी तथा वैक्रिय समुद्घात और क्रीड़ा स्थान पर जाते आते स्पर्श करते हैं।
3. त्रिलोक में संख्यात गुणा- ऊर्ध्वलोक के पंचेन्द्रिय तिर्यंच भवनपति में उत्पन्न होते प्रथम समय (उपपात के) में तीनों लोकों का तथा भवनपति मारणान्तिक समुद्घात करते तीन लोक का स्पर्श करते हैं।
4. अधोलोक तिर्यक्लोक में असंख्यात गुणा- तिर्यक् लोक में गमना-गमन करते हुए और तिर्यक् लोक के तिर्यंच और मनुष्य मरकर भवनपति में उत्पन्न होते हुए स्पर्शते हैं।
5. तिर्यक्लोक में असंख्यात गुणा- समवसरण में वंदनादि तथा पंच कल्याणक पर तथा रमणीय स्थानों पर क्रीड़ा निमित्त आते हैं, चिरकाल तक रहते हैं। अतः असंख्यात गुणा है।
6. अधोलोक में असंख्यात गुणा- स्वस्थान है।

6. 6 बोल व्यंतर देव देवी (समुच्चय, पर्याप्ता, अपर्याप्ता)- 1. सबसे थोड़े ऊर्ध्वलोक में- तीर्थंकरों के जन्मोत्सव तथा पंडक वनादि में क्रीड़ा निमित्त जाते हैं।
2. ऊर्ध्वलोक तिर्यक्लोक में असंख्यात गुणा- कई व्यंतर देव देवियों के स्वस्थान के अन्दर हैं, स्थान के नजदीक है, पर्वतों पर आते जाते भी स्पर्श करते हैं। ऊर्ध्वलोक के मच्छ कच्छ आदि मरकर व्यंतर देव देवी रूप उत्पन्न होते हैं।
3. त्रिलोक में संख्यात गुणा- ऊर्ध्वलोक या अधोलोक में गये हुए या उत्पन्न होने वाले अन्त समय में मारणान्तिक समुद्घात कर तीनों लोक का स्पर्श करते हैं।
4. अधोलोक तिर्यक्लोक में असंख्यात गुणा- दोनों प्रतर इनके कई के स्वस्थान भी हैं। नीचे लोक के मच्छ कच्छ आदि तिर्यक् लोक में व्यंतरों में उत्पन्न होते हुए भी स्पर्श करते हैं।
5. अधोलोक में संख्यात गुणा- अधोलोक के गांवों में इनके कई के स्वस्थान है, क्रीड़ा निमित्त भी जाते हैं। तीर्थंकरों के दर्शनार्थ भी जाते हैं।
6. तिर्यक्लोक में संख्यात गुणा- व्यंतर देव देवियों का स्वस्थान है।

7. 6 बोल ज्योतिषी देव-देवी (ऊपरवत)- 1. सबसे थोड़े ऊर्ध्वलोक में- तीर्थंकर जन्मोत्सव पर, तथा क्रीड़ा निमित्त जाते हैं। 2. ऊर्ध्वलोक तियक्लोक में असंख्यात गुणा- जाते, आते स्पर्शते हैं। 3. त्रिलोक में संख्यात गुणा- मारणान्तिक समुद्घात के समय तीन लोक स्पर्श। 4. अधोलोक तिर्यक् लोक में असंख्यात गुणा- समवसरण निमित्त, क्रीड़ा निमित्त तथा अधोलोक से ज्योतिषी में उत्पन्न होने वाले जीव भी स्पर्श करते हैं। 5. अधोलोक में संख्यात गुणा- समवसरण में तथा क्रीड़ा निमित्त भी चिरकाल तक रहते हैं। 6. तिर्यक् लोक में असंख्यात गुणा- यहां उनका स्वस्थान है।

8. 6 बोल वैमानिक देव-देवी (3 देव 3 देवी ऊपरवत)- 1. सबसे थोड़े ऊर्ध्वलोक तिर्यकलोक् में- तिर्यक् लोक के मनुष्य तिर्यंच मरकर वैमानिक देवों में उत्पन्न होते हैं, तथा वैमानिक देव देवी तिर्यक् लोक में गमनागमन करते हैं, दोनों स्थानों पर रहे क्रीड़ा स्थलों पर क्रीड़ा करते हैं, तिर्यक् लोक में रहे वैमानिक देव देवी वैक्रिय और मारणान्तिक समुद्घात करते हुए इन दोनों प्रतरों को स्पर्श करते हैं।
2. त्रिलोक में संख्यात गुणा- ऊर्ध्वलोक से अधोलोक में उत्पन्न होते देव देवी मारणान्तिक समुद्घात से।
3. अधोलोक तिर्यक् लोक में संख्यात गुणा- अधोलोक में तथा दोनों प्रतरों में स्थित समवसरणादि में जाते आते तथा चिरकाल तक रहते हुए स्पर्श करते हैं।
4. अधोलोक में संख्यात गुणा- बहुत से देव देवी अधोलोक के गांवों में समवसरणादि में रहते हैं, कारणवश भवनपति के भवनों में जाते है, इसलिए संख्यात गुणा है।
5. तिर्यक्लोक में संख्यात गुणा- जघन्य 20 उत्कृष्ट 170 तीर्थंकर भगवान के समवसरण में तथा पंच कल्याणक में आते है, रहते हैं। क्रीड़ा स्थनों पर भी रहते हैं। इसलिए संख्यात गुणा है।
6. ऊर्ध्व लोक में असंख्यात गुणा- वैमानिक देवों का स्वस्थान है। देव देवी रहते हैं।

9. 6 बोल तीन विकलेन्द्रिय (पर्याप्ता, अपर्याप्ता)- 1. सबसे थोड़े ऊर्ध्व लोक में- मेरू की बावड़ी में 2. ऊर्ध्वलोक तिर्यक् लोक में असंख्यात गुणा- ऊर्ध्व से तिर्यक् और तिर्यक् से ऊर्ध्व लोक में उत्पन्न होने वाले विकलेन्द्रिय दोनों प्रतर का स्पर्श करते हैं, कई वहां रहते भी हैं दोनों का स्पर्श करते हैं। 3. तीन लोक में असंख्यात गुणा- अधोलोक ऊर्ध्व और ऊर्ध्व से अधोलोक में जो है वे मारणान्तिक समुद्घात कर एकेन्द्रियादि में उत्पन्न होने वाले स्पर्श करते हैं।

4. अधोलोक तिर्यक् लोक में असंख्यात गुणा- अधोलोक से तिर्यक् तथा तिर्यक् से अधोलोक में उत्पन्न होने वाले विकलेन्द्रिय इलिका गति से उत्पन्न होते हैं तथा जो ये जीव एकेन्द्रिय आदि में उत्पन्न होते हैं वे मारणान्तिक समुद्घात कर वर्तमान आयु वेदते हुए उत्पत्ति देश पर्यंत आत्म प्रदेशों को फैलाकर दोनों प्रतरों का स्पर्श करते हैं।

5. अधोलोक में संख्यात गुणा- उत्पत्ति स्थान बहुत है, नीचे 100 योजन अधोलोक में।

6. तिर्यक् लोक में संख्यात गुणा- यहां द्वीप समुद्र बहुत हैं, उत्पत्ति स्थान भी बहुत हैं।

10. 5 बोल त्रस और पंचेन्द्रिय (समुच्चय त्रस, पर्याप्ता अपर्याप्ता और पंचेन्द्रिय समुच्चय और इसके अपर्याप्ता)- 1. सबसे थोड़े त्रिलोक में- अधोलोक से ऊर्ध्वलोक तथा ऊर्ध्व से अधोलोक में उत्पन्न होने वाले त्रस और पंचेन्द्रिय रूप से वे जीव मारणान्तिक समुद्घात कर तीन लोक स्पर्शते हैं। 2. ऊर्ध्वलोक तिर्यक्लोक में असंख्यात गुणा- ऊर्ध्व से तिर्यक् और तिर्यक् से ऊर्ध्वलोक में उत्पन्न होने वाले जीव तथा ये जीव वैक्रिय और मारणान्तिक समुद्घात करके भी स्पर्श करते हैं।

3. अधोलोक तिर्यक् लोक में संख्यात गुणा- अधोलोक से तिर्यक्लोक और तिर्यक् लोक से अधोलोक में उत्पन्न होने वाले तथा वैक्रिय और मारणान्तिक समुद्घात द्वारा भी स्पर्श करते हैं।

4. ऊर्ध्वलोक में संख्यात गुणा- वैमानिक देवों का स्वस्थान है। मेरू, अंजन गिरि आदि की बावड़ियों में तिर्यंच है, जो संख्यात गुणा है।

5. अधोलोक में संख्यात गुणा- चार पाताल कलश, सलिलावती आदि विजय, समुद्र भी है अतः जीव बहुत है।

6. तिर्यक् लोक में असंख्यात गुणा- यहां तिर्यंच बहुत हैं अतः असंख्यात गुणा है।

11. पंचेन्द्रिय के पर्याप्त 1 बोल- 1. सबसे थोड़े ऊर्ध्वलोक में- प्रायः वैमानिक ही है, अतः कम है। 2. ऊर्ध्वलोक तिर्यक् लोक में असंख्यात गुणा- इन प्रतरों के समीप ज्योतिषी देव हैं। वैमानिक व्यंतर, ज्योतिषी, विद्याधर, चारण मुनि आदि तथा तिर्यंच पंचेन्द्रिय ऊर्ध्व से तिर्यक् और तिर्यक् से ऊर्ध्व लोक में जाते आते समय इन दोनों प्रतरों का स्पर्श करते हैं।

3. त्रिलोक में संख्यात गुणा- अधोलोक में रहे भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक तथा विद्याधर मारणान्तिक समुद्घात कर ऊर्ध्वलोक तक आत्म प्रदेश फैलाते हुए तीन लोक स्पर्श करते हैं।

4. अधोलोक तिर्यक् लोक में संख्यात गुणा- कई व्यंतरों के स्थान के समीप होने से, भवनपति अधोलोक से तिर्यक् लोक में जाते आते, तथा व्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक अधोलोक में समवसरणादि में और क्रीड़ा निमित्त से, तथा समुद्रों में कई तिर्यंच पंचेन्द्रिय अपने स्थान के निकट होने से इन दोनों प्रतरों का स्पर्श करते हैं।

5. अधोलोक में संख्यात गुणा- वहां नरक और भवनपतियों के स्वस्थान है।

6. तिर्यक् लोक में असंख्यात गुणा- तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य, व्यंतर, ज्योतिषी का स्वस्थान है।

	क्षेत्र लोक में जीवों का अल्प बहुत्व	ऊर्ध्वलोक	अधोलोक	तिर्यक्लोक	ऊर्ध्व-तिर्यक् लोक	अधो तिर्यक् लोक	तीन लोक
1	समुच्चय जीव एकेन्द्रिय, जीव, तिर्यंच 18+1+1=20	5 अस.	6 विशेषा.	3 असं.	1 अल्प	2 विशेषा	4 असं.
2	3 बोल नारकी	-	3 असं.	-	-	2 असं.	1 अल्प
3	3 बोल तिर्यंचणी, देव, देवी	1 अल्प	5 सं.	6 सं.	2 असं.	4 सं.	3 सं.
4	6 बोल मनुष्य, मनुष्यणी	4 सं.	5 सं.	6 सं.	2 असं./2सं.स्त्री	3 सं.	1 अल्प
5	6 बोल भवनपति देव, देवी	1 अल्प	6 असं.	5 असं.	2 असं.	4 असं.	3 सं.
6	6 बोल व्यंतर देव, देवी	1 अल्प	5 सं.	6 सं.	2 असं.	4 असं.	3 सं.
7	6 बोल ज्योतिषी देव, देवी	1 अल्प	5 सं.	6 असं.	2 असं.	4 असं.	3 सं.
8	6 बोल वैमानिक देव देवी	6 असं.	4 सं.	5 सं.	1 अल्प	3 सं.	2 सं.
9	6 बोल तीन विकलेन्द्रिय	1 अल्प	5 सं.	6 असं.	2 असं.	4 असं.	3 असं.
10	5 बोल-त्रस 3, पंचेन्द्रिय 2	4 सं.	5 सं.	6 असं.	2 असं.	3 सं.	1 अल्प
11	1 बोल पंचेन्द्रिय पर्याप्ता	1 अल्प	5 सं.	6 असं.	2 असं.	4 सं.	3 सं.

क्षेत्र सम्बन्धी अल्प बहुत्व- पुद्गल और द्रव्य सम्बन्धी क्षेत्र और दिशा की अपेक्षा अल्प बहुत्व-

12. क्षेत्र अपेक्षा पुद्गल द्रव्य रूप से- 1. सबसे थोड़े तीन लोक में- अचित महास्कंध सबसे कम है। 2. ऊर्ध्वलोक तिर्यक्लोक में अनंत गुण- संख्यात, असंख्यात और अनंत प्रदेशी, अनंत स्कंध इन दोनों प्रतरों का स्पर्श करते हैं। 3. अधोलोक तिर्यक्लोक में विशेषाधिक- यद्यपि ऊर्ध्वलोक तिर्यक्लोक की अपेक्षा यहां के प्रतर छोटे है तथापि यहां पुद्गल अधिक हैं क्योंकि दोनों प्रतर समुद्र में आने से बादर निगोदादि से संबंधित कर्मस्कंधादि के पुद्गल वर्गणा बढ़ने से विशेषाधिक हैं।

4. तिर्यक् लोक में असंख्यात गुणा- क्षेत्र असंख्यात गुण होने से असंख्य गुणा है।

5. ऊर्ध्वलोक में असंख्यात गुणा- क्षेत्र असंख्यात गुणा है। 6. अधोलोक में विशेषाधिक क्षेत्र अधिक हैं।

13. दिशा की अपेक्षा पुद्‌गल का अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़े ऊर्ध्व दिशा में- मेरू पर्वत में 8 रूचक प्रदेश हैं, जिनसे 4 प्रदेशी ऊर्ध्व दिशा लोकान्त तक गई है, अतः पुद्‌गल थोड़े हैं। 2. अधोदिशा में विशेषाधिक यह भी 4 प्रदेशी लोकान्त तक गई है, क्षेत्र विशेषाधिक हैं। 3. ईशान कोण और नैऋत्य कोण दिशा में परस्पर तुल्य असंख्यात गुणा-रूचक प्रदेश से निकली मुक्तावली आकार की तिर्यक् लोक, ऊर्ध्व लोक, अधोलोक पर्यंत गई है अतः अधोदिशा की अपेक्षा क्षेत्र और पुदगल भी असंख्यात गुणा है, दोनों का क्षेत्र (दिशाओं का) बराबर होने से तुल्य है। 4. आग्नेय और वायव्य कोण दिशा परस्पर तुल्य विशेषाधिक- यहां सौमनस और गंध मादन पर्वतों पर सात-सात कूट है जबकि ईशान-नैऋत्य कोण के विद्युत्प्रभा और माल्यवान पर 9-9 कूट होने से यहां धूँअर औस आदि के सूक्ष्म पुद्‌गल अधिक हैं। 5. पूर्व दिशा में असंख्यात गुणा- क्षेत्र के कारण पुद्‌गल भी असंख्यात गुणा।

6. पश्चिम दिशा में विशेषाधिक- अधोलोक के गांवों में पोलार अधिक होने से विशेषाधिक हैं।

7. दक्षिण दिशा में विशेषाधिक- भवनपतियों के भवन है, अतः पोलार बहुत है।

8. उत्तर दिशा में विशेषाधिक- संख्याता क्रोड़ा क्रोड़ी योजन की मान सरोवर झील है। इसमें 7 बोल के जीव (समुच्चय जीव, अप्काय, वनस्पतिकाय, तीन विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय) बहुत हैं तैजस कार्मण पुद्‌गल बहुत हैं।

14. क्षेत्र की अपेक्षा द्रव्य का अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़े त्रिलोक में- धर्मास्ति., अधर्मास्ति., आकाशास्ति. और पुद्‌गलास्तिकाय के पुद्‌गल महास्कंध और जीवास्तिकाय में मारणान्तिक समुद्‌घात करने वाले ये जीव तीन लोक का स्पर्श करते हैं अतः कम है।

2. ऊर्ध्वलोक तिर्यक्‌लोक में अनंत गुणा- अनंत पुद्‌गल द्रव्य और अनंत जीव द्रव्य इन प्रतरों का स्पर्श करते हैं।

3. अधोलोक तिर्यक लोक में विशेषाधिक- इससे यह क्षेत्र विशेषाधिक है।

4. ऊर्ध्वलोक में असंख्यात गुणा- क्षेत्र असंख्यात गुणा होने से द्रव्य भी असंख्यात गुणा है।

5. अधोलोक में अनंत गुणा- अधोलोक के गांवों में काल है। परमाणु, संख्यात प्रदेशी, असंख्यात प्रदेशी, अनंत प्रदेशी स्कंध के द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव और पर्याय का काल से

संबंध होने से प्रत्येक परमाणु आदि द्रव्य की अपेक्षा अनन्त काल है, अतः अनन्त गुणा हैं।

6. तिर्यक् लोक में संख्यात गुणा- यहां मनुष्य लोक है, काल है बड़ा क्षेत्र है अतः संख्यात गुणा हैं।

15. दिशा की अपेक्षा द्रव्य का अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़ा अधोदिशा में- वहां काल नहीं होने से कम है। 2. ऊर्ध्व दिशा में अनंत गुणा- मेरू पर्वत का 500 योजन का स्फटिक मय कांड है, जहां चन्द्र सूर्य की प्रभा का प्रवेश होने से काल द्रव्य है, यह प्रत्येक परमाणु आदि द्रव्यों पर अनंत अनंत है। 3. ईशान कोण नैऋत्य कोण में परस्पर तुल्य असंख्यात गुणा- क्षेत्र असंख्यात गुणा है, परस्पर तुल्य है। 4. आग्नेय कोण वायव्य कोण में परस्पर तुल्य विशेषाधिक- पर्वतों पर दो-दो कूट कम होने से धूँअर और आदि के पुद्‌गल बहुत है।

5. पूर्व दिशा में असंख्यात गुणा- क्षेत्र असंख्यात गुणा होने से द्रव्य भी असंख्यात गुणा।

6. पश्चिम दिशा में विशेषाधिक- अधोलोक में गांवों में पोलार होने से विशेषाधिक।

7. दक्षिण दिशा में विशेषाधिक- भवनपतियों के 4,06,00,000 भवन होने से पोलार के कारण।

8. उत्तर दिशा में विशेषाधिक- मान सरोवर झील में 7 बोल के जीव के कार्मण वर्गणा के पुदगल बहुत है।

		क्षेत्र की अपेक्षा	ऊर्ध्वलोक	अधोलोक	तिर्यकलोक	ऊर्ध्व-तिर्यक	अधो तिर्यक	तीन लोक
12	1	पुद्‌गल	5 असं.	6 विशेषा.	4 असं.	2 अनंत.	3 विशेषा.	1 अल्प
14	2	द्रव्य	4 असं.	5 अनंत	6 विशेषा.	2 अनंत	3 विशेषा.	1 अल्प

		दिशा की अपेक्षा	ऊर्ध्वदिशा	अधोदिशा	ईशान नैऋत्य	आग्नेय-वायव्य	पूर्व दिशा	पश्चिम	दक्षिण	उत्तर दिशा
13	1	पुद्‌गल	1 अल्प	2 विशेषा.	3 असं. (तुल्य)	4 विशे. (तुल्य)	5 असं.	6 विशे.	7 विशे.	8 विशेषा.
15	2	द्रव्य	1 अनंत	1 अल्प	3 असं. (तुल्य)	4 विशे. (तुल्य)	5 असं.	6 विशे.	7 विशे.	8 विशेषा.

8. 256 राशि का (ढ़िगला) (पन्नावणा पद 3)- सम्पूर्ण जगत में जीव राशि अनन्तानन्त हैं, परन्तु असत् कल्पना से उनकी 256 राशि मानकर इस थोकड़े में आयु के बंधक अबंधक आदि (बंधक अबंधक, पर्याप्त अपर्याप्त, सुप्त जागृत, समुद्‌घात सहित-रहित, शाता-असाता वेदक, इन्द्रिय-नोइन्द्रिययुक्त, साकार-अनाकारउपयोग) इन 7 का युगल और पृथक् पृथक् यो 14 बोल का सम्मिलित, अल्प बहुत्व बताया है-

(1) आयु के बंधकों की 1 राशि, अबंधकों की 255 (256-1) आयु बंध एक ही बार होता है।

(2) सबसे कम अपर्याप्त यहां लब्धि अपर्याप्त ही गिने (जो अपर्याप्त अवस्था में ही मरे) इनकी राशि 2 और पर्याप्ता की 254 राशि।

(3) सुप्त (सोने की) 4, जागृत की 252

(4) समुद्घात करने की 8 (सात में से कोई भी करते हुए), नहीं करने वालों की 248 राशि

(5) साता वेदनीय की 16 राशि, असाता वेदनीय की 240 राशि।

(6) इन्द्रिय उपयोग वालों की 32 राशि, नोइन्द्रिय (इन्द्रिय और मन रहित) उपयोग वालों की 224 राशि

(7) अनाकार (दर्शन) उपयोग वालों की 64 राशि, साकार (ज्ञान) उपयोग वालों की 192 राशि।

अल्प बहुत (1) सबसे थोड़े आयु के बंधक,अबंधक संख्यातगुणा (2) सबसे थोड़े अपर्याप्त, पर्याप्त संख्यात गुणा (3) सबसे थोड़े सुप्त, जागृत संख्यात गुणा (4) सबसे थोड़े समुद्घात करने वाले, नहीं करने वाले संख्यात गुणा (5) सबसे थोड़े सातावेदनीय वाले, असाता वेदनीय वाले संख्यात गुणा (6) सबसे थोड़े इन्द्रिय उपयोग करने वाले, नो इन्द्रिय उपयोग वाले संख्यात गुणा (7) सबसे थोड़े अनाकार (दर्शन) उपयोग वाले, साकार (ज्ञान) उपयोग वाले संख्यात गुणा।

14 बोलों की सम्मिलित अल्प बहुत्व-(1) सबसे थोड़े आयु के बंधक (2) अपर्याप्त संख्यात गुणा (3) सुप्त संख्यात गुणा (4) समुद्घात करने वाले संख्यात गुणा (5) साता वेदनीय वाले संख्यात गुणा (6) इन्द्रिय उपयोग वाले संख्यात गुणा (7) अनाकार उपयोग वाले संख्यात गुणा (8) साकार उपयोग वाले संख्यात गुणा (9) नो इन्द्रिय उपयोग वाले विशेषाधिक (10) असाता वेदनीय वाले विशेषाधिक (11) समुद्घात न करने वाले विशेषाधिक (12) जागृत विशेषाधिक (13) पर्याप्त विशेषाधिक (14) आयुकर्म के अबंधक विशेषाधिक।

256 राशि का ढिगला का 14 प्रकार से अल्प बहुत्व-

क्र.	जीव का प्रकार	प्रमाण	कल्पना राशि	क्र.	जीव का प्रकार	प्रमाण	कल्पना	कल्पना राशि का योग
1	आयु के बंधक	सबसे कम	1	14	आयु के अबंधक	विशेषाधिक	255	1+255=256
2	अपर्याप्त	संख्यात गुणा	2	13	पर्याप्त	विशेषाधिक	254	2+254=256
3	सुप्त	संख्यात गुणा	4	12	जागृत	विशेषाधिक	252	4+252=256
4	समवहत समुद्.	संख्यात गुणा	8	11	असमवहत असमुद्	विशेषाधिक	248	8+248=256
5	सातावेदक	संख्यात गुणा	16	10	असाता वेदक	विशेषाधिक	240	16+240=256
6	इन्द्रियोपयुक्त	संख्यात गुणा	32	9	नो इन्द्रियोपयुक्त	विशेषाधिक	224	32+224=256
7	अनाकारोपयोगी	संख्यात गुणा	64	8	साकारोपयोगी	संख्यात गुणा	192	64+192=256

9. पुद्गलों की द्रव्य क्षेत्रकाल भाव से 69 अल्पबहुत्व (पन्नवणा पद 3) द्रव्य क्षेत्र काल की तीन-तीन एवं भाव की 60 ये 69 अल्पबहुत्व, द्रव्य क्षेत्र-काल भाव से इस प्रकार-

(1) द्रव्य की तीन अल्प बहुत्व (1) परमाणु पुद्गल, संख्यात प्रदेशी, असंख्यात और अनंत प्रदेशी की द्रव्यापेक्षा-(1) सबसे थोड़े अनंत प्रदेशी स्कंध द्रव्य की अपेक्षा (2) परमाणु पुद्गल अनंत गुणा (3) संख्यात-प्रदेशी स्कंध द्रव्यापेक्षा संख्यात गुणा (4) असंख्यात प्रदेश स्कंध द्रव्यापेक्षा असंख्यात गुणा।

(2) उक्त 4 की प्रदेशापेक्षा-(1) सबसे थोड़े अनंतप्रदेशी स्कंध प्रदेशापेक्षा (2) परमाणु पुद्गल अप्रदेश से अनंतगुणा (3) संख्यात प्रदेशी स्कंध संख्यात गुणा (4) असंख्यात प्रदेशी असंख्यात।

(3) उक्त 4 की द्रव्य एवं प्रदेश से सम्मिलित-(1) सबसे थोड़े अनंतप्रदेशी स्कंध द्रव्यापेक्षा (2) अनंत प्रदेशी स्कंध प्रदेशापेक्षा अनन्तगुणा (3) परमाणु पुद्गल द्रव्य और अप्रदेशापेक्षा अनंत गुणा। (4) संख्यातप्रदेशी द्रव्यापेक्षा संख्यात गुणा (5) ये ही प्रदेशापेक्षा संख्यात गुणा (6) असंख्यात प्रदेशी स्कंध द्रव्यापेक्षा असंख्यात गुणा (7) ये ही प्रदेशापेक्षा असंख्यात गुणा।

(2) क्षेत्र की तीन अल्प बहुत्व-एक प्रदेशावगाढ़, संख्यात, असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गलों की द्रव्य, प्रदेश तथा दोनों की अपेक्षा अल्प बहुत्व (1) सबसे थोड़े एक प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा (2) संख्यात प्रदेशावगाढ़ संख्यात गुणा (3) असंख्यात प्रदेशावगाढ़ असंख्यात गुणा। प्रदेशापेक्षा से-(1) सबसे थोड़े एक प्रदेशावगाढ़ अप्रदेश की अपेक्षा से (2) संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेशापेक्षा से संख्यात गुणा (3)असंख्यात प्रदेशावगाढ़ प्रदेशापेक्षा से असंख्यात गुणा।

(3) द्रव्य-प्रदेश दोनों की शामिल-(1) सबसे थोड़े एक प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्य और अप्रदेश की अपेक्षा (2) संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा संख्यात गुणा (3) ये प्रदेशापेक्षा से संख्यातगुणा (4) असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्यापेक्षा असंख्यात गुणा (4) इनके प्रदेशापेक्षा असंख्यात गुणा।

काल की तीन अल्प बहुत्व-एक समय की स्थिति, संख्यात, असंख्यात समय की स्थिति वाले पुद्गलों की द्रव्य, प्रदेश और द्रव्य प्रदेश की शामिल अल्प बहुत्व-

(1) द्रव्य से- (1) सबसे थोड़े एक समय की स्थिति वाले पुद्गल द्रव्यापेक्षा 2. संख्यात समय के संख्यात गुणा (3) असंख्यात समय की स्थिति वाले द्रव्यापेक्षा असंख्यात गुणा।

(2) प्रदेश से- (1) सबसे थोड़े एक समय की स्थिति वाले अप्रदेश से। (2) संख्यात समय की स्थिति वाले प्रदेशापेक्षा संख्यात गुणा (3) असंख्यात समय स्थिति वाले प्रदेश से असंख्यात गुणा।

(3) शामिल- (1) सबसे थोड़े एक समय की स्थिति वाले द्रव्य और अप्रदेश से (2) संख्यात समय की स्थिति वाले द्रव्य संख्यातगुणा (3) ये प्रदेश से संख्यात गुणा (4) असंख्यात समय स्थिति वाले द्रव्य से असंख्यातगुणा (5) इनके प्रदेशापेक्षा असंख्यात गुणा।

(4) भाव की 60 अल्प बहुत्व-वर्ण, गंध, रस की 36 और आठ स्पर्श की 24 ये 60 अल्पबहुत्व है।

(1) वर्ण गंध रस की 36-द्रव्य प्रदेश और शामिल से एक गुण काले, संख्यात, असंख्यात, अनंत गुण काले से।

(1) द्रव्य से (1) सबसे थोड़े अनंत गुण काले वर्ण के पुद्गल द्रव्य से (2) एक गुण काले वर्ण के पुद्गल अनंतगुणा (3) संख्यात गुण काले वर्ण के पुद्गल संख्यात गुणा (4) असंख्यात के असंख्यात गुणा।

(2) प्रदेश से-(1) सबसे थोड़े अनंत गुण काले वर्ण के पुद्गल प्रदेशापेक्षा (2) एक गुण काले के पुद्गल अप्रदेश से अनंतगुणा (3) संख्यात गुण काले प्रदेश से संख्यात गुणा (4) असंख्यात के असंख्यात गुणा।

3. दोनों की शामिल- 1. सबसे थोड़े अनंत गुण काले वर्ण के पुद्गल द्रव्यापेक्षा

2. अनंत गुण काले वर्ण के पुद्गल प्रदेशापेक्षा अनंतगुणा 3. एक गुण काले के पुद्गल द्रव्य और अप्रदेश से अनंत गुणा 4. संख्यात गुण काले के द्रव्य से संख्यात गुणा 5. इनके प्रदेशापेक्षा संख्यात गुणा 6. असंख्यात गुण काले के पुद्गल द्रव्यापेक्षा असंख्यात गुणा 7. इनके ही प्रदेशापेक्षा असंख्यात गुणा।

उपरोक्त काले वर्ण की ही तरह अन्य 4 वर्ण, 2 गंध, 5 रस की तीन-तीन अल्पबहुत्व ये कुल 36 हुई।

(2) आठ स्पर्श की 24 अल्पबहुत्व-कर्कश स्पर्श के पुद्गलों का द्रव्य, प्रदेश और द्रव्य प्रदेश दोनों से-

(1) द्रव्य से सबसे थोड़े एक गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यापेक्षा (2) संख्यात गुण संख्यात गुणा (3) असंख्यात गुण कर्कश पुद्गल असंख्यात गुणा (4) अनंत गुण कर्कश पुद्गल द्रव्यापेक्षा अनंतगुणा।

(2) प्रदेश से (1) सबसे थोड़े एक गुण कर्कश पुद्गल अप्रदेश से (2) संख्यात गुण प्रदेश से संख्यात गुणा (3) असंख्यात गुण कर्कश असंख्यात गुणा (4) अनंतगुण प्रदेशापेक्षा अनंतगुणा।

(3) दोनों की शामिल-(1) सबसे थोड़े एक गुण कर्कश पुद्गल द्रव्य और अप्रदेश से। (2) संख्यात गुण कर्कश पुद्गल द्रव्य से संख्यात गुणा (3) ये ही प्रदेश से संख्यातगुणा (4) असंख्यात गुण कर्कश द्रव्य से असंख्यात गुणा (5) इनके ही प्रदेश से असंख्यात गुणा (6) अनंत गुण कर्कश पुद्गल द्रव्य से अनंत गुणा (7) इनके प्रदेशापेक्षा से अनंतगुणा।

कर्कश की तरह अन्य 7 स्पर्श की भी तीन-तीन अल्प बहुत्व होती है ये 24 हुई। यों सभी 69 हुई।

10. अठाणु बोल का बासठिया (पन्नवणा पद 3) महादंडक में 98 बोल का अल्प बहुत्व इस प्रकार है-

क्रम	98 बोलों का अल्प बहुत्व	जीव.	गुण स्थान	योग	उपयोग	लेश्या
	(जीव 14, गुण.14,योग 15,उपयोग 12, लेश्या 6 और निज का 1 बोल)	14	14	15	12	6
1	सबसे थोड़े गर्भज मनुष्य	2	14	15	12	6
2	मनुष्यणी संख्यात गुणी	2	14	13	12	6

3	बादर तेउकाय पर्याप्त असंख्यात गुणा	1	1	1	3	3
4	पांच अणुत्तर विमान के देव असंख्य. गुणा	2	1	11	6	1
5	ग्रैवेयक के ऊपर की त्रिक के देव संख्य. गुणा	2	4	11	9	1
6	ग्रैवेयक के मध्यम की त्रिक के देव संख्यात गुणा	2	4	11	9	1
7	ग्रैवेयक के नीचे की त्रिक के देव संख्यात गुणा	2	4	11	9	1
8	12वें देवलोक के देव संख्यात गुणा	2	4	11	9	1
9	11वें देवलोक के देव संख्यात गुणा	2	4	11	9	1
10	10वें देवलोक के देव संख्यात गुणा	2	4	11	9	1
11	9वें देवलोक के देव त्रिक के देव संख्यात गुणा	2	4	11	9	1
12	सातवी नरक के नैरयिक असंख्यात गुणा	2	4	11	9	1
13	छठी नरक के नैरयिक असंख्यात गुणा	2	4	11	9	1
14	आठवें देवलोक के देवअसंख्यात गुणा	2	4	11	9	1
15	सातवें देवलोक के देवअसंख्यात गुणा	2	4	11	9	1
16	पांचवीं नरक के नैरयिक असंख्यात गुणा	2	4	11	9	2
17	छठे देवलोक के देवअसंख्यात गुणा	2	4	11	9	1
18	चौथी नरक के नैरयिक असंख्यात गुणा	2	4	11	9	1
19	पांचवें देवलोक के देवअसंख्यात गुणा	2	4	11	9	1
20	तीसरी नरक के नैरयिक असंख्यात गुणा	2	4	11	9	2
21	चौथे देवलोक के देव असंख्यात गुणा	2	4	11	9	1
22	तीसरे देवलोक के देव असंख्यात गुणा	2	4	11	9	1
23	दूसरी नरक के नैरयिक असंख्यात गुणा	2	4	11	9	1
24	सम्मुर्च्छिम मनुष्य असंख्याम गुणा	1	1	3	4	3
25	दूसरे देवलोक के देव असंख्यात गुणा	2	4	11	9	1
26	दूसरे देवलोक की देवी संख्यात गुणा	2	4	11	9	1
27	पहले देवलोक के देव संख्यात गुणा	2	4	11	9	1
28	पहले देवलोक की देवी संख्यात गुणा	2	4	11	9	1
29	भवनपति देव असंख्यात गुणा	3	4	11	9	1
30	भवनपति देवी संख्यात गुणा	2	4	11	9	1
31	पहली नरक के नैरयिक असंख्यात गुणा	3	4	11	9	1
32	खेचर तिर्यंच पुरुष असंख्यात गुणा	2	5	13	9	6

33	खेचर स्त्री संख्यात गुणी	2	5	13	9	6
34	थलचर पुरुष संख्यात गुणी	2	5	13	9	6
35	थलचर तिर्यंच स्त्री संख्यात गुणी	2	5	13	9	6
36	जलचर पुरुष संख्यात गुणी	2	5	13	9	6
37	जलचर स्त्री संख्यात गुणी	2	5	13	9	6
38	व्यन्तर देव संख्यात गुणी	3	4	11	9	4
39	व्यन्तर देवी संख्यात गुणी	2	4	11	9	4
40	ज्योतिषी देव संख्यात गुणी	2	4	11	9	1
41	ज्योतिषी देवी संख्यात गुणी	4/2	4	11	9	1
42	खेचर नपुंसक (गर्भज) संख्यात गुणा	4/2	5	13	9	6
43	स्थलचर नपुंसक (गर्भज) संख्यात गुणा	4/2	5	13	9	6
44	जलचर नपुंसक (गर्भज) संख्यात गुणा	2	5	13	9	6
45	चौरेन्द्रिय के पर्याप्त संख्यात गुणा	1	1	2	4	3
46	पंचेन्द्रिय के पर्याप्त विशेषाधिक	2	12	14	10	6
47	बेइन्द्रिय के पर्याप्त विशेषाधिक	1	1	2	3	3
48	तेइन्द्रिय के पर्याप्त विशेषाधिक	1	1	2	3	3
49	पंचेन्द्रिय के अपर्याप्त असंख्यात गुणा	2	3	5	9	6
50	चौरेन्द्रिय के अपर्याप्त विशेषाधिक	1	2	3	6	3
51	तेइन्द्रिय के अपर्याप्त विशेषाधिक	1	2	3	5	3
52	बेइन्द्रिय के अपर्याप्त विशेषाधिक	1	2	3	5	3
53	प्र.शरी. बादर वनस्पतिकाय के पर्याप्त असं. गुणा	1	1	1	3	3
54	बादर निगोद के पर्याप्त असंख्यात गुणा	1	1	1	3	3
55	बादर पृथ्वीकाय के पर्याप्त असंख्यात गुणा	1	1	1	3	3
56	बादर अपकाय के पर्याप्त असंख्यात गुणा	1	1	1	3	3
57	बादर वायुकाय के पर्याप्त असंख्यात गुणा	1	1	4	3	3
58	बादर तेउकाय के अपर्याप्ता असंख्यात गुणा	1	1	3	3	3
59	प्रत्येक शरीर बादर वन. के अप. असं. गुणा	1	1	3	3	4
60	बादर निगोद के अपर्याप्त असंख्यात गुणा	1	1	3	3	3
61	बादर पृथ्वीकाय के अपर्याप्त असंख्यात गुणा	1	1	3	3	4
62	बादर अप्काय के अपर्याप्त असंख्यात गुणा	1	1	3	3	4

63	बादर वायुकाय के अपर्याप्त असंख्यात गुणा	1	1	3	3	3
64	सूक्ष्म तेउकाय के अपर्याप्त असंख्यात गुणा	1	1	3	3	3
65	सूक्ष्म पृथ्वीकाय के अपर्याप्त विशेषाधिक	1	1	3	3	3
66	सूक्ष्म अप्काय के अपर्याप्त विशेषाधिक	1	1	3	3	3
67	सूक्ष्म वायुकाय के अपर्याप्त विशेषाधिक	1	1	3	3	3
68	सूक्ष्म तेउकाय के पर्याप्त संख्यात गुण	1	1	1	3	3
69	सूक्ष्म पृथ्वीकाय के पर्याप्त विशेषाधिक	1	1	1	3	3
70	सूक्ष्म अप्काय के पर्याप्त विशेषाधिक	1	1	1	3	3
71	सूक्ष्म वायुकाय के पर्याप्त विशेषाधिक	1	1	1	3	3
72	सूक्ष्म निगोद के अपर्याप्त असंख्यात गुणा	1	1	3	3	3
73	सूक्ष्म निगोद के पर्याप्त संख्यात गुणा	1	1	1	3	3
74	अभव्य जीव अनंत गुणा	14	1	13	6	6
75	प्रतिपतित सम्यग्दृष्टि जीव अनंत गुणा	14	2	13	6	6
76	सिद्ध भगवान अनंत गुणा	0	0	0	2	0
77	बादर वनस्पतिकाय के पर्याप्त अनंत गुणा	1	1	1	3	3
78	बादर के पर्याप्त विशेषाधिक	6	14	15	12	6
79	बादर वनस्पतिकाय के अपर्याप्त असंख्यात गुणा	1	1	3	3	4
80	बादर के अपर्याप्त विशेषाधिक	6	3	5	9	6
81	समुच्चय बादर विशेषाधिक	12	14	15	12	6
82	सूक्ष्म वनस्पतिकाय के अपर्याप्त असंख्यात गुणा	1	1	3	3	3
83	सूक्ष्म के अपर्याप्त विशेषाधिक	1	1	3	3	3
84	सूक्ष्म वनस्पतिकाय पर्याप्त संख्यात गुणा	1	1	1	3	3
85	सूक्ष्म के पर्याप्त विशेषाधिक	1	1	1	3	3
86	समुच्चय सूक्ष्म विशेषाधिक	2	1	3	3	3
87	भव सिद्धिया विशेषाधिक	14	14	15	12	6
88	निगोदिया जीव विशेषाधिक	4	1	3	3	3
89	वनस्पति के जीव विशेषाधिक	4	1	3	3	4
90	एकेन्द्रिय जीव विशेषाधिक	4	1	5	3	4
91	तिर्यंच जीव विशेषाधिक	14	5	13	9	6
92	मिथ्यादृष्टि जीव विशेषाधिक	14	1	13	6	6

93	अव्रती जीव विशेषाधिक	14	4	13	9	6
94	सकषायी जीव विशेषाधिक	14	10	15	10	6
95	छद्मस्थ जीव विशेषाधिक	14	12	15	10	6
96	सयोगी जीव विशेषाधिक	14	13	15	12	6
97	संसारी जीव विशेषाधिक	14	14	15	12	6
98	समुच्चय जीव विशेषाधिक	14	14	15	12	6

विशेष- 1. मनुष्य से मनुष्यणी उत्कृष्ट 27 गुणी 27 अधिक, देव से देवी उत्कृष्ट 32 गुणी 32 अधिक, सन्नी तिर्यंच से तिर्यंचणी 3 गुणी 3 अधिक। 2. भवनपति देव नारकी से कम है, व्यंतर, ज्योतिषी नारकी से अधिक है अतः नरक से देव अधिक है। 3. सन्नी तिर्यंच पुरुष एवं स्त्री से व्यंतर, ज्योतिषी देव अधिक है। किन्तु सन्नी तिर्यंच नपुंसक देवों से अधिक है। देव से समुच्चय सन्नी तिर्यंच अधिक है देव का अन्तिम बोल 41वां एवं स.ति. नपुंसक का अंतिम 44वां बोल है। 4. सम्मुर्च्छिम मनुष्य को छोड़ 44 बोल तक सन्नी के हैं। 45वें से असन्नी है, 46 और 49 मे असन्नी ति.पं. और सन्नी ति. पंचेन्द्रिय दोनों का समावेश है। 5. बादर में अपर्याप्त असंख्यात गुणा और सूक्ष्म में पर्याप्त संख्यात गुणा अधिक होता है। 6. 54,60,72,73 ये 4 बोल निगोद शरीर अपेक्षित है, जीव अपेक्षित नहीं। 88वें में निगोद जीव अपेक्षित है यानि 88 बोलों में 4 शरीर अपेक्षित 84 जीव अपेक्षित है। 7. बादर तेउकाय के पर्याप्त बहुत कम होते हैं, उसका तीसरा अपर्याप्ता का 58वां है। 8. अनन्त का बोल 74 से शुरू होता है यानि 73 बोल तक 72 बोल असंख्य के हैं। अभवी चौथे अनन्ते जितने हैं। पड़िवाई समदृष्टि और सिद्ध पांचवें अनंते जितने, भवी आठवें अनंते और सर्व जीव भी आठवें अनंते में है। 9. 24,95,97 ये बोल अशाश्वत है ये क्रमशः सम्मुर्च्छिम मनुष्य, 12वें गुण स्थान, 14 वें गुण स्थान से संबंधित है। ये दोनों गुण स्थान भी अशाश्वत है। 12वें गुण स्थान में जब कोई नहीं होता तो 95वां और 14वां गुण स्थान में कोई नहीं होता तब 97वां बोल नहीं बनता। संसार में सबसे अल्प मनुष्य कहे हैं, पहला बोल है इसी कारण आगम में मनुष्य भव दुर्लभ कहा गया है। सातवीं नरक में और अणुत्तर विमानों में कम संख्या है, यानि सबसे पुण्यशाली भी कम है, और सबसे पापी भी कम है। इन्द्रियां कम होती है वहां जीव ज्यादा है एकेन्द्रिय सर्वाधिक है। विकास प्राप्त जीव कम होते हैं। 52 बोल तक त्रस जीवों की अल्प बहुत्व है सिर्फ तीसरा बोल स्थावर का है।

53 से 86 तक स्थावरों की अल्प बहुत्व है। 74,75,76 को छोड़कर 38 से 44 तक के बोल संख्यात गुणे है, वे अत्यधिक संख्यात गुणे है। एकाद बोल मिले तो असंख्य बन जाते हैं जैसे तिर्यंचणी 37 से देवी 41 असंख्य गुणी है। देव (40-41) सन्नी तिर्यंच 44वां असंख्य गुणा है।

98 बोलों पर 45 द्वार- 1. गति द्वार- 1. एकान्त नरक गति में 7 बोल (12, 13, 16, 18, 20, 23, 31) 2. एकान्त तिर्यंच गति में 48 बोल (3, 32 से 37, 42 से 45, 47, 48, 50 से 73, 77, 79, 82 से 86, 88 से 91) 3. एकान्त मनुष्य गति में 3 बोल (1, 2, 24) 4. एकान्त देव गति में 24 बोल (4 से 11, 14, 15, 17, 19, 21, 22, 25 से 30, 38 से 41) 5. समुच्चय नरकादि 4 गति मे 15 बोल (46, 49, 74, 75, 78, 80, 81, 87, 92 से 98) 6. सिद्ध गति में 1 बोल- 76

2. इन्द्रिय द्वार- 1. एकेन्द्रिय में 32 बोल- (3, 53 से 73, 77, 79, 82 से 86, 88, 89, 90) 2. बेइन्द्रिय में 2 बोल (47, 52) 3. तेइन्द्रिय में 2 बोल (48, 51) चौरेन्द्रिय में 2 बोल (45, 50) 5. पंचेन्द्रिय में 45 बोल (1, 2, 4 से 44, 46, 49) 6. पांचों इन्द्रिय (सइन्द्रिय) में 14 बोल (74, 75, 78, 80, 81, 87, 91 से 98) 7. अनिन्द्रिय में 1-(76वां)।

3. कायद्वार- 1. पृथ्वीकाय में 4 बोल (55, 61, 65, 69) 2. अप्काय में 4 बोल (56, 62, 66, 70) 3. तेउकाय में 4 बोल (3,58,64,68) 4. वायुकाय में 4 बोल (57,63,67,71) 5. एकांत वनस्पतिकाय में 12 बोल (53, 54, 59, 60, 72, 73, 77, 79, 82, 84, 88, 89) 6. समुच्चय 5 स्थावर में 4 बोल (83, 85, 86, 90) 7. एकांत त्रस में 51 बोल (1,2,4 से 52) 8. समुच्चय 6 काय में (सकाय) 14 बोल (74, 75, 78, 80, 81, 87, 91 से 98) 9. अकाय में 1 बोल (76)।

4. योगद्वार- 1. एकांतकाय योग में 38 बोल (3, 24, 49 से 73, 77, 79, 80, 82 से 86, 88, 89, 90) 2. काय और वचन योग में 3 बोल (45,47,48) 3. तीनों योग में 56 बोल (1,2,4 से 23, 25 से 44, 46, 74, 75, 78, 81, 87, 91 से 98) 4. अयोगी में 1 (76)

5. वेदद्वार- 1. एकांत स्त्री वेद में 9 बोल (2, 26, 28, 30, 33, 35, 37, 39, 41) 2. एकांत पुरुष वेद में 22 बोल (4 से 11, 14, 15, 17, 19, 21, 22, 25, 27, 29, 32, 34, 36, 38, 40) 3. पुरुष वेद और नपुंसक वेद में दोनों में केवल 1

बोल पहला। 4. एकांत नपुंसक वेद में 49 बोल (3, 12, 13, 16, 18, 20, 23, 24, 31, 42, 43, 44, 45, 47, 48, 50 से 73, 77, 79, 82 से 86, 88, 89, 90) 5. तीनों वेद में 16 बोल- (46, 49, 74, 75, 78, 80, 81, 87, 91 से 98)। 6. अवेदी में 1 बोल- 76।

6. कषाय द्वार- 1. चारों कषाय में 97 बोल (1 से 75, 77 से 98) 2. एकांत अकषायी में 1 बोल- 76वां।

7. लेश्या द्वार- 1. कृष्णलेश्या में 2 बोल (12, 13) 2. नील में 1 (18) 3. कापोत में 2 (23, 31) 4. तेजों में 6 (25 से 28, 40, 41) 5. पद्म में 3 बोल (19, 21, 22) 6. शुक्ल में 11 (4 से 11, 14, 15, 17) 7. कृष्ण और नील में 1 (16) 8. नील और कपोत में 1 (20) 9. कृष्ण नील कापोत तीन में 33 बोल (3, 24, 45, 47, 48, 50 से 58, 60, 63 से 73, 77, 82 से 86, 88) 10. कृष्ण, नील, कापोत, तेजो इन 4 में- 10 बोल (29,30,38,39,59,61,62,79,89,90) 11. समुच्चय 6 लेश्याओं में 27 बोल (1,2,32 से 37 42 से 44, 46, 49, 74, 75, 78, 80, 81, 87, 91 से 98) 12. एकांत अलेशी में 1 बोल (76)

8. दृष्टि द्वार- 1. सम्यक् दृष्टि में 2 बोल (4, 76) 2. मिथ्या दृष्टि में 39 बोल (3, 24, 45, 47, 48, 53 से 73, 74, 75, 77, 79, 82 से 86, 88, 89, 90, 92) 3. सम्यग और मिथ्या दोनों में 5 बोल (49, 50, 51, 52, 80) 4. तीनों दृष्टि में 52 बोल (1, 2, 5 से 23, 25 से 44, 46, 78, 81, 87, 91, 93 से 98)

9. ज्ञान द्वार- 1. एकांत मतिश्रुत दोनों में 3 बोल (50 से52) 2. मतिश्रुत अवधि तीन ज्ञान में 44 बोल (4 से 23, 25 से 44, 49, 80, 91, 93) 3. चार ज्ञान में 3 बोल (46, 94, 95) 4. पांचों ज्ञान में 8 बोल (1, 2, 78, 81, 87, 96 से 98) 5. केवल ज्ञान में 1 (76)। 6. मतिश्रुत दोनों अज्ञान में 36 बोल (3, 24, 45, 47, 48, 53 से 73, 77, 79, 82 से 86, 88 से 90) 7. समुच्चय तीनों अज्ञान मे 57 बोल (1,2,5 से 23, 25, से 44, 46, 49, 74, 75, 78, 80, 81, 87, 91 से 98)

10. दर्शन द्वार- 1. अचक्षु दर्शन में 36 बोल (3, 47, 48, 51 से 73, 77, 79, 82 से 86, 88 से 90) 2. चक्षु दर्शन अचक्षु दर्शन दो दर्शन में 3 बोल (24, 45, 50) 3. चक्षु, अचक्षु, अवधि तीन दर्शन में 50 बोल (4 से 23, 25 से 44, 46, 49, 74,

75, 80, 91 से 95) 4. चारों दर्शन में 8 बोल (1, 2, 78, 81, 87, 96, 97, 98) 5. केवल दर्शन में 1 बोल (76)

11. संयति द्वार- 1. संयति, असंयति, संयतासंयति तीन में 11 (1, 2, 46, 78, 81, 87, 94 से 98) 2. असंयत और संयतासंयत में 10 बोल (32 से 37, 42 से 44, 91) 3. असंयति में 76 बोल (3 से 31, 38 से 41, 45, 47 से 75, 77, 79, 80, 82 से 86 से 88 से 90, 92, 93) 4. नोसंयता संयती 1 (76)

12. उपयोग द्वार- 1. एकांत मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान और अचक्षुदर्शन में 34 बोल (3, 47, 48, 53 से 73, 77, 79, 82 से 86, 88 से 90) 2. मति श्रुत अज्ञान चक्षु अचक्षु दर्शन 4 उपयोग में 2 बोल (24,45) 3. मति श्रुत ज्ञान मति श्रुत अज्ञान अचक्षु दर्शन 5 उपयोग में 2 बोल (51,52) 4. दो ज्ञान, दो अज्ञान, 2 दर्शन इन छ में 1 बोल (50)। 5. तीन ज्ञान तीन दर्शन 6 उपयोग में 1 बोल (4) 6. तीन अज्ञान तीन दर्शन 6 उपयोग में 3 बोल (74, 75, 92) 7. तीन ज्ञान, तीन अज्ञान, तीन दर्शन 9 उपयोग में 43 बोल (5 से 23, 25 से 44, 49, 80, 91, 93) 8. 4 ज्ञान, 3 अज्ञान, 3 दर्शन 10 उपयोग में 3 बोल (46, 94, 95) 9. पांच ज्ञान, तीन अज्ञान, 4 दर्शन 12 उपयोग में 8 बोल (1, 2, 78, 81, 87, 96 से 98) 10. केवल ज्ञान केवल दर्शन में 1 बोल (76) 11. समुच्चय साकारोपयोग, अनाकारोपयोग में सभी बोल 98

13. आहारक द्वार- 1. आहारक में 18 बोल (3, 45 से 48, 53 से 57, 68 से 71, 73, 77, 84, 85) 2. अनाहारक में 1 बोल (76) 3. आहारक अनाहारक दोनों में 79 बोल (1 ,2, 4 से 44, 49 से 52, 58 से 67, 72, 74, 75, 78 से 83, 86 से 98)

14. भाषक द्वार- 1. भाषक में 4 बोल (45 से 48) 2. अभाषक में 39 बोल (3,24,49 से 73, 76, 77, 79, 80, 82 से 86, 88 से 90) भाषक अभाषक दोनों में 55 बोल (1,2,4 से 23,25 से 44,74,75,78,81,87,91 से 98)

15. परित्त द्वार- 1. परित्त में 2 (4, 75) 2. अपरित्त में 1 (74) 3. दोनों में 94 बोल (1, 2, 3, 5 से 73, 77 से 98) 4. नो परित्त नो अपरित्त में 1 (76)

16. पर्याप्त द्वार- 1. पर्याप्त में 19 बोल (3, 45 से 48, 53 से 57, 68 से 71, 73, 77, 78, 84, 85) 2. अपर्याप्त में 20 बोल (24, 49 से 52, 58 से 67, 72, 79, 80, 82, 83) 3. दोनों में 58 बोल (1,2,4 से 23, 25 से 44, 74, 75, 81, 86 से 98) 4. नो पर्याप्त नो अपर्याप्त में 1 (76)

17. सूक्ष्म द्वार- 1. सूक्ष्म में 15 बोल (64 से 73, 82 से 86) 2. बादर में 68 बोल (1 से 63, 77 से 81) 3. सूक्ष्म बादर दोनों में 14 बोल (74, 75, 87 से 98) 4. नो सूक्ष्म नो बादर में 1 (76)

18. सन्नी द्वार- 1. सन्नी में 39 बोल (1, 2, 4 से 23, 25 से 29, 30, 32, से 37, 39 से 44) 2. असन्नी में 39 बोल (3, 24, 45, 47, 48, 50 से 73, 77, 79, 82 से 86, 88 से 90) 3. दोनों में 19 (29, 31,38,46,49,74,75,78,80,81,87,91 से 98) नो सन्नी में एक बोल (76)

19. भव्य द्वार- 1. भव्य में 3 बोल (4, 75, 87) 2. अभव्य में 1 (74) 3. दोनों में 93 बोल (1,2,3,5 से 73, 77 से 86, 88 से 98) 3. नो भव्य नो अभव्य मे 1 (76)

20. अस्ति द्वार- 1. जीवास्तिकाय में 94 बोल (1 से 53, 55 से 59, 61 से 71, 74 से 98 निगोद छूटे) 2. पुद्गलास्तिकाय में 4 बोल (54, 60, 72, 73) 3. धर्मास्तिकायादि शेष द्रव्य में कोई बोल नहीं मिलता।

21. चरम द्वार- 1. चरम में 3 बोल (4, 75, 87) 2. अचरम में 2 (74, 76) दोनों में 93 बोल (1,2,3,5 से 73, 77 से 86, 88 से 98)

22. दण्डक द्वार- 1. नारकी में बोल 7(12, 13, 16, 18, 20, 23, 31) 2. भवनपति में 10 दण्डक मे 2 (29, 30) 3. पृथ्वीकाय में 4 बोल (55, 61, 65, 69) 4. अप्काय में 4 (56, 62, 66, 70) तेउकाय मे 7 (3, 58, 64, 68) वायुकाय में 4 (57, 63, 67, 71) 7. वनस्पतिकाय में 12 बोल (53, 54, 59, 60, 72, 73, 77, 79, 82, 84, 88, 89) 8. बेइन्द्रिय में 2 (47, 52) तेइन्द्रिय में 2 (48, 51) चतुरिन्द्रिय में 2 (45, 50) 11. तिर्यंच पंचेन्द्रिय 9 बोल (32 से 37, 42 से 44) 12. मनुष्य में 3 बोल (1, 2, 24) 13. वाण व्यंतर में 2 (38, 39) 14. ज्योतिषी में 2 (40, 41) 15. वैमानिक में 18 बोल (4 से 11, 14, 15, 17, 19, 21, 22, 25 से 28) 16. स्थावर के 5 दंडक में 4 बोल (83, 85, 86, 90) 17. 5 स्थावर 3 विकलेन्द्रिय और तिर्यंच पंचेन्द्रिय इन 9 दंडक में 1 (91) 18. पंचेन्द्रिय के 16 दण्डक में 2 बोल (46, 49) 19. समुच्चय 24 दंडक में 13 (74, 75, 78, 80, 81, 87, 92 से 98) 20. दण्डक रहित सिद्ध में 1 (76)

23. शरीर द्वार- 1. औदारिक मे 66 बोल (1,2,3,24,32 से 37, 42 से 75, 77 से 98) 2. वैक्रिय शरीर मे 60 बोल (1,2,4 से 23, 25 से 44, 46, 49, 57, 74, 75, 78, 80, 81, 87, 90 से 98) (अ) भव प्रत्यय वैक्रिय शरीर में 33 बोल (4 से 23, 25 से 31, 38 से 41, 49, 80) (ब) लब्धि प्रत्ययिक वैक्रिय शरीर में 14 बोल (1, 2, 32 से 37, 42, 43, 44, 57, 90, 91) (स) भव और लब्धि दोनों में 13 बोल (46, 74, 75, 78, 81, 87, 92 से 98) 3. आहारक शरीर में 10 बोल (1, 46, 78, 81, 87, 94 से 98) 4. तैजस कर्मण दो शरीर में 97 बोल (1 से 75, 77 से 98) 4. अशरीरी (सिद्ध) में 1 (76)

24. अवगाहना द्वार- 1. जघन्य अंगुल के असंख्यातवे भाग की अवगाहना में 97 बोल (1 से 75, 77 से 98) 2. उत्कृष्ट एक हजार योजन झाझेरी में 17 बोल (53, 74, 75, 77, 78, 81, 87, 89 से 98) 3. स्व-स्व स्थान की उत्कृष्ट अवगाहना में 80 बोल (1 से 52, 54 से 73, 80, 82 से 86, 88) 4. शरीर प्रदेश नहीं (अशरीरी) जघन्य एक हाथ आठ अंगुल, उत्कृष्ट 333 धनुष 32 अंगुल मे 1 (76)

25. संहनन द्वार- 1. छहों संहनन में 27 बोल (1, 2, 32 से 37, 42, 43, 44, 46, 49, 74, 75, 78, 80, 81, 87, 91 से 98) 2. एकांत छेवट्ट संहनन में 39 बोल (3, 24, 45, 47, 48, 50 से 73, 77, 79, 82 से 86, 88 से 90) 3. समुच्चय छेवट्ट में 66 बोल (1,2,3,24,32 से 37, 42 से 75, 77 से 98) 4. असंहनन में 32 बोल (4 से 23, 25 से 31, 38 से 41, 76)

26. संस्थान द्वार- 1. एकांत समचोरस संस्थान में 24 बोल (4 से 11, 14, 15, 17, 19, 21, 22, 25, 30, 38 से 41) 2. समुच्चय सम चतुरंस में 51 बोल (24 पूर्व के 1, 2, 32 से 37, 42, 43, 44, 46, 49, 74, 75, 78, 80, 81, 87, 89 से 98) 3. न्यग्रोध परिमंडल, सादि, कुब्जक और वामन इन 4 में 27 बोल (1, 2, 32 से 37, 42 से 44, 46, 49, 74, 75, 78, 80, 81, 87, 91 से 98) 4. एकांत हुंडक में 46 बोल (3, 12, 13, 16, 18, 20, 23, 24, 31, 45, 47, 48, 50 से 73, 77, 79, 82 से 86, 88 से 90) 5. समुच्चय हुंडक में 73 बोल (1 से 3, 12, 13, 16, 18, 20, 23, 24, 31 से 37, 42 से 75, 77 से 98) 6. कोई संस्थान नहीं अनित्थंस्थ में 1 बोल (76)

27. संज्ञा द्वार- 1. चारों संज्ञा में 97 बोल (76 छोड़कर) 1 से 75, 77 से 98,

2. नो संज्ञोपयुक्त 1 (76) 3. समुच्चय नो संज्ञोपयुक्त में 12 बोल (1, 2, 46, 76, 78, 81, 87, 94 से 98)

28. समुद्घात द्वार- 1. वेदनीय, कषाय, मारणान्तिक तीन में 97 बोल (1 से 75, 77 से 98) 2. वैक्रिय समुद्घात में 54 बोल (1, 2, 8 से 23, 25 से 44, 46, 57, 74, 75, 78, 81, 87, 90 से 98) 3. तैजस में 45 बोल (1, 2, 8 से 11, 14, 15, 17, 19, 21, 22, 25 से 30, 32 से 44, 46, 74, 75, 78, 81, 87, 91 से 98) 4. आहारक में 10 बोल (1, 46, 78, 81, 87, 94 से 98) 5. केवली समुद्घात में 7 बोल (1, 78, 81, 87, 96 से 98) 6. असमोहया (समुद्घात रहित) 1 (76)

29. पर्याप्ति द्वार- 1. आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छवास 4 पर्याप्ति में 33 बोल (3,24,53 से 73,77,79,82 से 86, 88 से 90) 2. पूर्वोक्त चार और भाषा 5 में 6 बोल (45, 47, 48, 50 से 52) 3. छह पर्याप्ति में 58 बोल (1, 2, से 23, 25 से 44, 46, 49, 74, 75, 78, 80, 81, 87, 91 से 98) 4. नो पर्याप्त नो अपर्याप्त 1 बोल (76)

30. आहार द्वार- 1. 288 प्रकार का जिनमें व्याघात हो तो 3-4-5 दिशा निर्व्याघात 6 दिशा का आहार लेने वाले में 34 बोल (57, 63 से 75, 78, 80 से 98) 2. निर्व्याघात नियमा 6 दिशा का लेवे 63 बोल (1 से 56, 58 से 62, 77, 79) 3. अनाहारक 1 बोल (76)

31. उत्पात द्वार- 1. जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट संख्याता उपजे उसमें 10 बोल (1, 2, 4 से 11) 2. जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट संख्यात, असंख्यात उपजे में 59 (3, 12 से 53, 55 से 59, 61 से 71) 3. इसी प्रकार उत्कृष्ट अनंता उपजे में 28 बोल (54, 60, 72 से 75, 77 से 98) 4. जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट 108 सिद्ध होवे में 1 बोल (76)

32. स्थिति द्वार- 1. जघन्य अन्तर्मुहुर्त की स्थिति में बोल 66 (1,2,3,24, 32 से 37, 42 से 75, 77 से 98) 2. अपने अपने स्थान की जघन्य स्थिति में 97 बोल (76वां छोड़ना) 3. उत्कृष्ट 33 सागरोपम में 15 बोल (4, 12, 46, 74, 75, 78, 81, 87, 92 से 98) 4. अपने अपने स्थान की उत्कृष्ट स्थिति में 97 बोल (76वां बोल कम) 5. सादि-अपर्यवसित भांगा की स्थिति का 1 बोल (76)

33. समोहया असमोहया द्वार- 1. दोनों प्रकार के मरण वाले 97 बोल 2. मरण रहित अमर में 1 (76)

34. च्यवन द्वार- 1. जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट संख्याता च्यवे में 10 बोल (1, 2, 4 से 11) 2. जघन्य 1-2-3 यावत् संख्याता-असंख्याता च्यवे में 59 बोल (उत्पात द्वार के समान) 3. उपरोक्त के साथ अनंता च्यवे में 28 बोल 4. च्यवन रहित में 1 बोल उत्पात द्वार के समान समझे।

35. गति आगति द्वार- 1. एक गति से आवे एक गति में जावे, (मनुष्य) 8 बोल (4 से 11) 2. दो गति से आवे एक गति (तिर्यंच, मनुष्य) में जावे (तिर्यंच) 9 बोल (3, 12, 57, 58, 63, 64, 67, 68, 71) 3. दो गति से आवे दो में जावे (तिर्यंच, मनुष्य) 49 बोल (13 से 31, 38 से 41, 45, 47 से 52, 54, 59 से 62, 65, 66, 69, 70, 72, 73, 79, 80, 82 से 86, 88) प्रकारान्तर से 43 बोल (13 से 31, 38 से 41, 45, 47, 48, 50 से 52, 54, 60, 65, 66, 69, 70, 72, 73, 82 से 86, 88) 4. तीन से आवे (तिर्यंच, मनुष्य देव) और दो (तिर्यंच मनुष्य) में जावे 6 बोल (53, 55, 56, 77, 89, 90) प्रकारान्तर से 10 बोल (53, 55, 56, 59, 61, 62, 77, 79, 89, 90) 5. चार गति से आवे चारों में जावे 18 बोल (32 से 37, 42 से 44, 46, 74, 75, 91 से 96) प्रकारान्तर से 20 बोल (उपरोक्त 18 में 2 बढ़े 49, 80) 6. चार गति से आवे पांच में (सिद्ध में भी) जावे 7 बोल (1, 2, 78, 81, 87, 97, 98) 7. आगति एक (मनुष्य) गति नहीं (सिद्ध) में 1 बोल (76)

36. प्राण द्वार- 1. स्पर्शन, काय बल, श्वासोच्छवास, आयु इन 4 प्राणों में 32 बोल (3, 53 से 73, 77, 79, 82 से 86, 88 से 90) 2. रसन, स्पर्शन, काय, श्वास., आयु इन 5 में 1 बोल (52) 3. रसन, स्पर्शन, काय, श्वासो, आयु वचन इन 6 में 1 बोल (52)4. घ्राण, रसन, स्पर्शन, काय, श्वासो., आयु इन 6 बोलों में 1 बोल (51) 5. घ्राण, रसन, स्पर्शन, वचन, काय, श्वासो., आयु 7 में 1 बोल (48) 6. चक्षु, घ्राण, रसन, स्पर्शन, काय, श्वासो., आयु इन 7 मे 1 बोल (50) 7. चक्षु, घ्राण, रसन, स्पर्शन, वचन, काय, श्वासो., आयु इन 8 मे 1 बोल (45) 8. श्रोत, चक्षु, घ्राण, रसन, स्पर्शन, काय, श्वासो., आयु इन 8 मे 3 बोल (24, 49, 80) 9. श्रोत, चक्षु, घ्राण, रसन, स्पर्शन, मन, वचन, काय, श्वासो., आयु इन 10 में 56 बोल (1, 2, 4 से 23, 25 से 44, 46, 74, 75, 78, 81, 87, 91 से 98) 10. दस प्राण रहित 4 भाव प्राण सहित सिद्ध में 1 बोल (76)

37. योनि द्वार- 1. एकांत शीत योनि में 10 बोल (20, 23, 31, 54, 60, 72, 73, 82, 84, 88) 2. एकांत उष्ण योनि में 6 बोल (3, 12, 13, 58, 64, 68) 3. शीत उष्ण दोनों में 2 बोल (16, 18) 4. शीत, उष्ण और मिश्र तीन में 44 बोल (24, 45 से 53, 55 से 57, 59, 61 से 63, 65 से 67, 69 से 71, 74, 75, 77 से 81, 83, 85, 86, 87, 89 से 98) 5. शीतोष्ण (मिश्र) में 35 बोल (1, 2, 4 से 11, 14, 15, 17,19, 21, 22, 25 से 30, 32 से 44) 6. अयोनि में 1 (76)

38. सचित्तादि योनि द्वार- 1. एकांत सचित्त योनि में 7 बोल (54, 60, 72, 73, 82, 84, 88) 2. अचित्त योनि में 31 बोल (4 से 23, 25 से 31, 38 से 41) 3. सचित्त, अचित्त, मिश्र में 48 बोल (3, 24, 45 से 53, 55 से 59, 61 से 71, 74, 75, 77 से 81, 83, 85, 86, 87, 89 से 98) 4. सचित्ता चित्त (मिश्र योनि) में 11 बोल (1,2,32 से 37,42 से 44) 5. अयोनि में 1 बोल 76वां

39. संवृतादि योनि द्वार- 1. संवृत योनि में 63 बोल (3 से 23, 25 से 31, 38 से 41, 53 से 73, 77, 79, 82 से 86, 88 से 90) 2. विवृत योनि में 7 बोल (24, 45, 47, 48, 50, 51, 52) 3. संवृत विवृत (मिश्र) में 11 बोल (1, 2, 32 से 37, 42 से 44) 4. संवृत, विवृत और संवृतविवृत तीनों में 16 बोल (46, 49, 74, 75, 78, 80, 81, 87, 91 से 98) 5. अयोनि में 1 (76)

40. लोक द्वार- 1. एकांत अधोलोक में 9 बोल (12, 13, 16, 18, 20, 23, 29 से 31) 2. तिर्यक् लोक में 4 बोल (38 से 41) 3. अधोलोक और तिर्यक् दोनों में 5 बोल (1, 2, 3, 24, 58) 4. ऊर्ध्वलोक में 19 बोल (4 से 11, 14, 15, 17, 19, 21, 22, 25 से 28, 76) 5. अधोलोक, तिर्यक्लोक और ऊर्ध्वलोक में 61 बोल (32 से 37, 42 से 57, 59 से 75, 77 से 98)

41. हीयमान, वर्द्धमान, अवस्थित द्वार- 1. तीनों में 94 बोल (1 से 73, 75, 77 से 86, 88 से 97) 2. वर्द्धमान में 1 बोल (76) 3. एकांत अवस्थित में 2 (74, 98) 4. हीयमान, अवस्थित में 1 (87)

42. शाश्वत-अशाश्वत द्वार- 1. शाश्वत में 95 बोल (1 से 23, 25 से 94, 96,98) 2. अशाश्वत में 3 बोल (24, 95, 97)

43. आत्मा-द्वार- 1. द्रव्य, उपयोग, दर्शन तीन आत्मा में 98 सभी 2. कषाय, योग और वीर्यात्मा इन तीन में 97 (76वां छोड़ना) 3. ज्ञानात्मा में 59 बोल (1, 2, 4 से

23, 25 से 44, 46, 49 से 52, 76, 78, 80, 81, 87, 91, 93 से 98) 8. चारित्रात्मा में 11 बोल (1, 2, 46, 78, 81, 87, 94 से 98)

44. जीव संख्या द्वार- 1. संख्यात जीव में 2 बोल (1, 2) 2. असंख्यात जीव में 67 बोल (3 से 53, 55 से 59, 61 से 71) 3. असंख्यात शरीर में (एक शरीर में असंख्याता, अनंता जीव) बोल 4 (54, 60, 72, 73) 4. अनंता जीव में 25 बोल (74 से 98)

45. अल्प बहुत्व संख्या द्वार- 1. सबसे थोड़ा में बोल 1 (पहला) 2. संख्यात गुण में 28 बोल (2, 5 से 11, 26 से 28, 30, 33 से 45, 68, 73, 84) 3. असंख्यात गुण में 35 बोल (3, 4, 12 से 25, 29, 31, 32, 49, 53 से 64, 72, 79, 82) 4. अनंत गुण में 4 बोल (74 से 77) 5. विशेषाधिक में 30 बोल (46 से 48, 50 से 52, 65 से 67, 69 से 71, 78, 80, 81, 83, 85 से 98)

11. स्थिति द्वार (पन्नवणा पद 4)- यहां अधोलोक, तिर्यक् लोक, ऊर्ध्वलोक के 24 दंडक जीवों के सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्त, देव, देवी तथा अन्य भेद प्रभेद करके स्थिति-उम्र का निरूपण किया है। सभी जीवों के अपर्याप्ता की स्थिति जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहुर्त होती है। पर्याप्तों की उत्कृष्ट स्थिति समुच्चय स्थिति से अन्तर्मुहुर्त कम होती है, समुच्चय की और पर्याप्ता की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहुर्त्त होती है किन्तु नारकी और देवता की समुच्चय जघन्य स्थिति 10000 वर्ष होती है, एवं पर्याप्त की स्थिति जघन्य के 10 हजार वर्ष में अन्तर्मुहुर्त कम होती है, जैसे-पहली नारकी की पर्याप्त में जघन्य स्थिति 10 हजार आदि वर्ष में अन्तर्मुहुर्त कम, उत्कृष्ट अन्तर्मुहुर्त कम एक सागरोपम। समुच्चय नारकों की पर्याप्त जघन्य स्थिति अन्तर्मुहुर्त कम 10 हजार वर्ष, उत्कृष्ट अन्तर्मुहुर्त कम 33 सागरोपम। ये तीन-तीन अलावा होने से 8×3=24 हुए।

इसी प्रकार देवता के भी समुच्चय देवता, समुच्चय भवनपति, 10 भवनपति इनकी देवियां इन 24 के भी प्रत्येक के 3-3 अलावा होने से 24×3=72 अलावा हुए।

इसी तरह समुच्चय पृथ्वीकाय और बादर पृथ्वीकाय की जघन्य, उत्कृष्ट स्थिति, तथा इनके अपर्याप्त की जघन्य, उत्कृष्ट स्थिति तथा इनके पर्याप्त की जघन्य उत्कृष्ट स्थिति एवं सूक्ष्म पृथ्वीकाय, इसके अपर्याप्त और पर्याप्त की जघन्य उत्कृष्ट स्थिति ये 9 अलावा हुए, इसी प्रकार पांचों स्थावर के 5×9=45 अलावा हुए।

द्वीन्द्रिय की उसके अपर्याप्त की और पर्याप्त की जघन्य उत्कृष्ट स्थिति ये 3 अलावा हुए यों तीनों विकलेन्द्रिय के 3×3=9 अलावा हुए।

समुच्चय तिर्यंच पंचेन्द्रिय उनके अपर्याप्त और पर्याप्त की जघन्य उत्कृष्ट स्थिति। इसी प्रकार सम्मुर्च्छिम तिर्यंच पंचेन्द्रिय, इनके अपर्याप्त और पर्याप्त की जघन्य उत्कृष्ट स्थिति। गर्भज तिर्यंच पंचेन्द्रिय की भी तीनों स्थिति। इसी तरह समुच्चय जलचर, सम्मुर्च्छिम जलचर, गर्भज जलचर इन सभी की तीन-तीन स्थितियां। इसी तरह चतुष्पद, उरपरिसर्प, भुज परिसर्प, खेचर इन सभी की तीन-तीन स्थितियों के जघन्य उत्कृष्ट से 6×9=54 अलावा हुए।

मनुष्य की गर्भज मनुष्य की तीन-तीन तथा सम्मुर्च्छिम मनुष्य के अपर्याप्ता होने से 7 अलावा हुए। व्यंतर देव-देवी के 3×2=6 अलावा, ज्योतिषी के 12×3=36 अलावा। समुच्चय वैमानिक देव देवी के 2×3=6 अलावा, पहले देवलोक के 4×3=12 दूसरे के भी 12, तीसरे से सर्वार्थ सिद्ध तक 21×3=63 अलावा हुए। यों 24+72+45+9+ 54+7+6+36+6+12+12+63=346 हुए।

24 दंडक के जीवों की स्थिति का वर्णन जघन्य उत्कृष्ट इस प्रकार है-

क्रम.	नाम	जघन्य स्थिति	उत्कृष्ट स्थिति
	1 दंडक - नरक		
1	पहली नरक	10000 वर्ष	1 सागरोपम
2	दूसरी नरक	1 सागरोपम	3 सागरोपम
3	तीसरी नरक	3 सागरोपम	7 सागरोपम
4	चौथी नरक	7 सागरोपम	10 सागरोपम
5	पांचवी नरक	10 सागरोपम	17 सागरोपम
6	छठी नरक	17 सागरोपम	22 सागरोपम
7	सातवी नरक	22 सागरोपम	33 सागरोपम
	13 दंडक - देव		
8	दक्षिण दिशा के असुर कुमार देव	10000 वर्ष	1 सागरोपम
9	दक्षिण दिशा की असुर कुमार देवी	10000 वर्ष	साढ़े तीन पल्य
10	उत्तर दिशा के असुर कुमार देव	10000 वर्ष	1 सागर साधिक
11	उत्तर दिशा की असुर कुमार देवी	10000 वर्ष	साढ़े चार पल्य
12	दक्षिण दिशा के नवनिकाय के देव	10000 वर्ष	डेढ़ पल्य
13	दक्षिण दिशा की नवनिकाय की देवी	10000 वर्ष	पौन पल्य
14	उत्तर दिशा के नवनिकाय के देव	10 हजार वर्ष	देशोन दो पल्य

15	उत्तर दिशा की नवनिकाय की देवी	10 हजार वर्ष	देशोन एक पल्य
16	व्यंतर देव	10 हजार वर्ष	1 पल्य
17	व्यंतर देवी	10 हजार वर्ष	आधा पल्य
18	चन्द्र देव	पाव पल्य	1 पल 1 लाख वर्ष
19	चन्द्र देवी	पाव पल्य	आधा पल 50 हजार वर्ष
20	सूर्य देव	पाव पल्य	1 पल एक हजार वर्ष
21	सूर्य देवी	पाव पल्य	आधा पल 500 वर्ष
22	ग्रह देव	पाव पल्य	1 पल्य
23	ग्रह देवी	पाव पल्य	आधा पल्य
24	नक्षत्र देव	पाव पल्य	आधा पल्य
25	नक्षत्र देवी	पाव पल्य	पाव पल साधिक
26	तारा देव	पल का आठवां भाग	पाव पल्य
27	तारा देवी	पल का आठवां भाग	पल का आठवां भाग झाझेरी
28	पहला देवलोक के देव	1 पल	दो सागर
29	पहला देवलोक की देवी (अपरिग्रहिता)	1 पल	50 पल्य
30	पहला देवलोक की देवी परिग्रहिता	1 पल	7 पल्य
31	दूसरा देवलोक के देव	1 पल्य साधिक	2 सागर साधिक
32	दूसरा देवलोक की देवी अपरिग्रहिता	1 पल्य साधिक	55 पल्य
33	दूसरा देवलोक की देवी परिग्रहिता	1 पल्य साधिक	9 पल्य
34	तीसरा देवलोक देव	2 सागर	7 सागर
35	चौथा देवलोक देव	2 सागर साधिक	7 सागर साधिक
36	पांचवा देवलोक देव	7 सागर	10 सागर
37	छठा देवलोक देव	10 सागर	14 सागर
38	सातवां देवलोक देव	14 सागर	17 सागर
39	आठवां देवलोक देव	17 सागर	18 सागर
40	नवमां देवलोक देव	18 सागर	19 सागर
41	दसवां देवलोक देव	19 सागर	20 सागर
42	ग्यारहवां देवलोक देव	20 सागर	21 सागर
43	बारहवां देवलोक देव	21 सागर	22 सागर
44	प्रथम ग्रैवेयक	22 सागर	23 सागर
45	दूसरी ग्रैवेयक	23 सागर	24 सागर
46	तीसरी ग्रैवेयक	24 सागरोपम	25 सागरोपम
47	चौथी ग्रैवेयक	25 सागरोपम	26 सागरोपम
48	पांचवी ग्रैवेयक	26 सागरोपम	27 सागरोपम
49	छठी ग्रैवेयक	27 सागरोपम	28 सागरोपम

50	सातवी ग्रैवेयक	28 सागरोपम	29 सागरोपम
51	आठवी ग्रैवेयक	29 सागरोपम	30 सागरोपम
52	नवमी ग्रैवेयक	30 सागरोपम	31 सागरोपम
53	चार अणुत्तर विमान	31 सागरोपम	33 सागरोपम
54	सर्वार्थ सिद्ध विमान	33 सागरोपम	33 सागरोपम
	पांच दंडक - पांच स्थावर		
55	सूक्ष्म पांच स्थावर	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त
56	बादर पृथ्वीकाय	अन्तर्मुहुर्त	22 हजार वर्ष
57	बादर अप्काय	अन्तर्मुहुर्त	7 हजार वर्ष
58	बादर तेजस्काय	अन्तर्मुहुर्त	3 अहोरात्रि
59	बादर वायुकाय	अन्तर्मुहुर्त	3 हजार वर्ष
60	बादर वनस्पतिकाय	अन्तर्मुहुर्त	दस हजार वर्ष
	तीन दंडक तीन विकलेन्द्रिय		
61	बेइन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	12 वर्ष
62	तेइन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	49 दिन
63	चतुरिन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	6 माह
	एक दंडक - ति. पंचेन्द्रिय		
64	समुच्चय तिर्यंच पंचेन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	3 पल्योपम
65	सम्मुर्च्छिम तिर्यंच पंचेन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	1 करोड़ पूर्व
66	गर्भज तिर्यंच पंचेन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	3 पल्य
67	जलचर तिर्यंच पंचेन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	1 करोड़ पूर्व
68	स्थलचर तिर्यंच पंचेन्द्रिय (गर्भज) समुच्चय	अन्तर्मुहुर्त	3 पल्य
69	स्थलचर तिर्यंच पंचेन्द्रिय सम्मुर्च्छिम	अन्तर्मुहुर्त	84 हजार वर्ष
70	उरपरिसर्प तिर्यंच पंचेन्द्रिय गर्भज	अन्तर्मुहुर्त	1 करोड़ पूर्व
71	उरपरिसर्प तिर्यंच पंचेन्द्रिय सम्मुर्च्छिम	अन्तर्मुहुर्त	53 हजार वर्ष
72	भुजरिसर्प तिर्यंच गर्भज	अन्तर्मुहुर्त	1 करोड़ पूर्व
73	भुजपरिसर्प तिर्यंच पंचेन्द्रिय सम्मुर्च्छिम	अन्तर्मुहुर्त	42 हजार वर्ष
74	समुच्चय और गर्भज खेचर	अन्तर्मुहुर्त	पल्यका असं. भाग
75	सम्मुर्च्छिम खेचर	अन्तर्मुहुर्त	72 हजार वर्ष
	1 दंडक - मनुष्य		
76	समुच्चय और गर्भज मनुष्य	अन्तर्मुहुर्त	तीन पल्योपम
77	सम्मुर्च्छिम मनुष्य	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त

12. जीव पर्याय का थोकड़ा (पन्नवणा पद 5)- पर्याय जीव की भी और अजीव की भी होती है, प्रस्तुत प्रकरण में जीव की पर्याय का विवरण है। समुच्चय जीव की

अपेक्षा पर्यायें 4 गति के जीव और सिद्ध हैं। चार गति में नारकी आदि की पर्यायें उनकी अवगाहना, स्थिति, वर्णादि एवं ज्ञानादि है। इन पर्यायों को एक स्थान पतित (एगठ्ठाण वड़िया) द्विस्थान पतित (दुठ्ठाण वड़िया) त्रिस्थान पतित (तिट्ठाण वडिया) चतुः स्थान पतित (चउट्ठाण वड़िया) अवगाहना एवं स्थिति में तथा वर्णादि एवं उपयोग (ज्ञानादि) में षट्स्थान पतित (छठ्ठाण वड़िया) केवल ज्ञान में तुल्य बताई है। **1. एक स्थान पतित (एगट्ठाण वड़िया)** इसका आशय एक स्थान यानि असंख्यात भागहीन और असंख्यात भाग अधिक है। जैसे एक युगलिये की स्थिति अन्तर्मुहुर्त कम तीन पल्य और दूसरे की तीन पल्य है, यह अन्तर्मुहुर्त असंख्यातवां भागहीन है, अतः पहले की स्थिति असंख्यातवां भाग हीन, दूसरे की असंख्यातवां भाग अधिक है। यह उत्कृष्ट अवगाहना वाले मनुष्य की स्थिति एक स्थान पतित (एगट्ठाण वडिया) कही जायेगी।

2. द्विस्थान पतित (दुट्ठाण वडिया) असंख्यात भागहीन, संख्यात भाग हीन और असंख्यात भाग अधिक संख्यात भाग अधिक है। उत्कृष्ट अवगाहना वाले नैरयिकों की स्थिति द्विस्थान पतित होगी। एक नैरयिक की स्थिति अन्तर्मुहुर्त कम 33 सागर, दूसरे की पूरे 33 सागर है। यह असंख्यात भाग हीन- अधिक हुई। इसी प्रकार एक की स्थिति पल्योपम कम 33 सागर दूसरे की पूरे तेतीस सागर है, यह पल्योपम संख्यातवां भाग हीन-अधिक हुआ।

3. त्रिस्थान पतित (तिट्ठाण वडिया) असंख्यात भाग हीन, संख्यात भाग हीन, संख्यात गुण हीन तथा असंख्यात भाग अधिक, संख्यात भाग अधिक, संख्यात गुण अधिक को तिट्ठाण वड़िया अवगाहना स्थिति में कहेंगे। जैसे एक जीव की अवगाहना अंगुल के असंख्यातवे भाग कम 500 धनुष की, दूसरे की पूरे 500 धनुष की। पहले की असंख्यातवे भाग हीन दूसरे की असंख्यातवें भाग अधिक इसी तरह एक की 1 धनुष कम 500 धनुष, दूसरे की 500 धनुष्य, यह संख्यातवे भाग हीन-अधिक हुई। इसी तरह एक जीव की 125 धनुष दूसरे की 500 धनुष यह 4 से गुणा करने जितना अन्तर हुआ। पहले की संख्यात गुण हीन, दूसरे का संख्यात गुण अधिक हुआ। इसी तरह स्थिति में भी समझें पृथ्वीकाय के एक जीव की मुहुर्त के असंख्यातवे भाग कम 22 हजार वर्ष दूसरे की 22 हजार वर्ष। यह असंख्यात भाग हीन-अधिक। एक की मुहुर्त कम 22 हजार वर्ष, दूसरे की पूरे 22 हजार वर्ष यह संख्यात भाग हीन-अधिक। एक की एक हजार वर्ष दूसरे की 22 हजार वर्ष यह संख्यात गुण हीन-अधिक।

4. चतुःस्थान पतित (चउट्ठाण वड़िया)– असंख्यात भाग हीन, संख्यात भाग हीन, संख्यात गुण हीन, असंख्यात गुण हीन तथा असंख्यात भाग अधिक, संख्यात भाग अधिक, संख्यात गुण अधिक, असंख्यात गुण अधिक। ऊपर वाले से यहां एक स्थान असंख्यात गुण हीन-अधिक बढ़ा है। अवगाहना और स्थिति की अपेक्षा से इस तरह- पहले की अंगुल के असंख्यातवें भाग, दूसरे की एक अंगुल यह अवगाहना से असंख्यात गुणा हीन-अधिक हुआ। स्थिति में जैसे एक की स्थिति 10 हजार वर्ष दूसरे की तीन पल्य है यह असंख्यात गुणा स्थिति में हीन-अधिक हुआ।

5. छःस्थान पतित (छट्ठाण वडिया)– अनंत भाग हीन, असंख्यात भाग हीन, संख्यात भाग हीन, संख्यात गुण हीन, असंख्यात गुण हीन, अनंत गुण हीन और अनंत भाग अधिक, असंख्यात भाग अधिक, संख्यात भाग अधिक, संख्यात गुण अधिक, असंख्यात गुण अधिक, अनंत गुण अधिक। ये दो बोल- अनंत भाग हीन- अधिक, अनंत गुण हीन- अधिक इसमें बढ़े हैं। वर्ण, रस, गंध, स्पर्श के 20 बोल पर्याय तथा 10 उपयोग में 6 स्थान पतित बनते हैं। काले वर्ण की अनंत पर्यायें होती है इसलिए अनंत भाग हीन- अधिक, अनंत गुण हीन-अधिक का बोल बनता है इसी तरह 20 वर्णादि तथा ज्ञान अज्ञान में 6 दर्शन में 9 उपयोग में कहना। जैसे काले वर्ण की अनंत पर्यायों को असत् कल्पना से 10 हजार माना जाय और सर्व जीव संख्या को 100 माना जाय, भाग देने पर 100 आयेगा। एक जीव के काले वर्ण की पर्याय 10 हजार दूसरे के 100 कम यानि 9900 है। चूंकि यह सर्व जीवों की अनंत संख्या से भाग देने पर 100 आया है अतः अनंतवां भाग है। 9900 वाला दस हजार पर्याय वाले की अपेक्षा अनंत भाग हीन है- दूसरा अनंत भाग अधिक है। इसी तरह काले वर्ण पयार्यों को 10 हजार मानें और लोकाकाश प्रदेश प्रमाण असंख्यात संख्या को 50 मानें तो उसमें भाग देने पर 200 आता है यह असंख्यातवां भाग है। एक जीव की काले वर्ण की पर्याय 200 कम यानि 9800 है दूसरे की 10 हजार है यह असंख्यात भाग हीन- अधिक हुई। काले वर्ण की अनंत पर्यायों को 10 हजार मानकर उत्कृष्ट संख्यात संख्या को 10 मानें, भाग देने पर 1000 हुआ यह संख्यातवां भाग है एक जीव की काले वर्ण की 9000 दूसरे की 10000 पर्याय हैं यह संख्यात भाग हीन-अधिक हुई। ऊपर काले वर्ण की अनंत पर्यायों को दस हजार मानकर सर्व जीव संख्या 100, लोकाकाश के असंख्यात प्रदेश प्रमाण को 50 और संख्यात को 10 मानकर भाग दिया है जो 100,

200, 1000 आया है जिन्हे क्रमशः अनंतवां, असंख्यातवां, संख्यातवां भाग माना है। कल्पना करें एक जीव काले वर्ण की 1000, दूसरे की दस हजार है, हजार को 10 से गुण करने पर दस हजार हुआ यह संख्यात गुण हीन-अधिक हुआ। इसी तरह एक की 200, दूसरे की दस हजार तो 50 से गुणा करने पर 200 के दस हजार होंगे यह अपेक्षा से असंख्यात गुण हीन-अधिक। एक जीव की 100, दूसरे की दस हजार है तो 100 को 100 से गुणा करने पर दस हजार हुए यानि अनंत गुण हीन-अधिक हुआ। पर्याय दो तरह की है- जीव पर्याय-अजीव पर्याय। जीव पर्याय संख्यात, असंख्यात नहीं बल्कि अनंत है। क्योंकि 23 दंडक के जीव असंख्यात है, वनस्पति के अनंत है। सिद्ध भगवान भी अनन्त है। नारकी के जीवों की अनंत पर्याय है, अनंत गुणा अन्तर हो सकता है। एक नारकी दूसरे नारकी जीव से आत्म प्रदेश से तुल्य है, असंख्य आत्म प्रदेशों से भी तुल्य है, अवगाहना में दुगुना आदि अंतर है (संख्यात गुणा) स्थिति में असंख्यात गुणा, वर्णादि ज्ञानादि में अनंत गुणा फर्क होता है। इसी प्रकार 24 दंडक के जीवों के अनंत पर्याय है, यानि स्वयं के दण्डक वर्ती जीवों के आपस में किसी पर्याय की अपेक्षा अनंत गुणा फर्क होता है। 24 दंडक के जीवों की अनंत पर्यायें हैं। यहाँ 6 बोलों की विचारणा है 1. जीव द्रव्य- एक एक ही है 2. प्रदेश सभी के आत्म प्रदेश तुल्य (असंख्यात) है। 3. अवगाहना 4. स्थिति 5. वर्णादि 6. ज्ञानादि।

जघन्य उत्कृष्ट अवगाहना वाले नैरयिक आपस में तुल्य होते हैं, स्थिति से चौठाण वडिया वर्णादि 20 बोल, ज्ञानादि 9 बोल से छठ्ठाण वड़िया। मध्यम अवगाहना में मध्यम अवगाहना की अपेक्षा चौठाण वड़िया, पर्यायों की अपेक्षा अनंत गुणा फर्क होता है अतः जघन्य, मध्यम उत्कृष्ट अवगाहना वालों में अनंत अनंत पर्यायें हैं। इसी तरह जघन्य एवं उत्कृष्ट गुण काला में द्रव्य, प्रदेश तुल्य, अवगाहना स्थिति चौठाण वड़िया, वर्णादि 19 बोल, 9 उपयोग छठ्ठाण वड़िया काले वर्ण की अपेक्षा तुल्य होता है, मध्यम गुणकाला में वर्णादि 20 बोल ही छठ्ठाण वड़िया है। इसी प्रकार जघन्य, उत्कृष्ट, मध्यम मति ज्ञानी आदि समझना, ज्ञान अज्ञान में 6 उपयोग, दर्शन में 9 उपयोग कहना। जघन्य उत्कृष्ट में स्वयं को छोड़कर शेष को छठ्ठाण वड़िया कहना, मध्यम में स्वयं सहित छठ्ठाण वड़िया कहना। इसी प्रकार 24 दंडक में कहना।

चार्ट गत सूचना- नीचे चार्ट में दर्शाया गया है, उसमें जीव के पर्यव, द्रव्य और प्रदेश से सर्वत्र तुल्य है। जिस वर्ण की पृच्छा है उसके जघन्य उत्कृष्ट में स्वयं की अपेक्षा तुल्य

होते हैं, शेष 19 की अपेक्षा छठ्ठाण वड़िया होते हैं। जघन्य उत्कृष्ट ज्ञान दर्शन में भी जिसकी पृच्छा है, उसके स्वयं की अपेक्षा तुल्य, शेष ज्ञान दर्शन जो भी जहां पाये छठाण वड़िया होता है। मध्यम में स्वयं का भी छठ्ठाण वड़िया है। चार्ट में द्रव्य, प्रदेश का कालम नहीं दिया है एवं ज्ञानादि में तुल्य का कालम नहीं दिया है, उसे स्वतः समझ लेवें। विशेष- काला वर्ण के समान शेष वर्णादि का वर्णन है। मतिज्ञान के समान शेष ज्ञानाज्ञान का वर्णन है, अज्ञान में 3 ज्ञान नहीं होते। चक्षु दर्शन के समान शेष दर्शन भी है।

नारकी	अवगाहना से	स्थिति से	वर्णादि से छठ्ठाण व.	ज्ञानादि से छठ्ठाण वडिया
जघन्य अवगाहना	तुल्य	चौठाण वड़िया	20 बोल	9 उपयोग
उत्कृष्ट अवगाहना	तुल्य	दुठाण वड़िया	20 बोल	9 उपयोग
मध्यम अवगाहना	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	9 उपयोग
जघन्य स्थिति	चौठाण वड़िया	तुल्य	20 बोल	9 उपयोग
उत्कृष्ट स्थिति	चौठाण वड़िया	तुल्य	20 बोल	9 उपयोग
मध्यम स्थिति	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	9 उपयोग
जघन्य गुण काला	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	19 बोल	9 उपयोग
उत्कृष्ट गुण काला	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	19 बोल	9 उपयोग
मध्यम गुण काला	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	9 उपयोग
जघन्य मति ज्ञानी	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	2 ज्ञान 3 दर्शन
उत्कृष्ट मति ज्ञानी	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	2 ज्ञान 3 दर्शन
मध्यम मति ज्ञानी	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	3 ज्ञान 3 दर्शन
जघन्य चक्षु दर्शनी	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	8 उपयोग
उत्कृष्ट चक्षु दर्शनी	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	8 उपयोग
मध्यम चक्षु दर्शनी	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	9 उपयोग

नारकी के समान ही 10 भवनपति का संपूर्ण वर्णन है, किन्तु उत्कृष्ट अवगाहना में भवनपति में चौठाण वडिया है। वाण व्यंतर, ज्योतिषी का भी वर्णन भवनपतियों की तरह है। वैमानिक का वर्णन भी इसी तरह है, किन्तु स्थिति चौठाण वड़िया की जगह तिठाण वड़िया कहनी है।

तिर्यंच पंचेन्द्रिय	अवगाहना से	स्थिति से	वर्णादि से छठ्ठाण वड़िया	ज्ञानादि से छठ्ठाण वड़िया
जघन्य अवगाहना	तुल्य	तिठाण वड़िया	20 बोल	2 ज्ञान 2 अज्ञान 2 दर्शन
उत्कृष्ट अवगाहना	तुल्य	तिठाण वड़िया	20 बोल	3 ज्ञान 3 अज्ञान 3 दर्शन
मध्यम अवगाहना	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	3 ज्ञान 3 अज्ञान 3 दर्शन
जघन्य स्थिति	चौठाण वड़िया	तुल्य	20 बोल	2 अज्ञान 2 दर्शन

उत्कृष्ट स्थिति	चौठाण वड़िया	तुल्य	20 बोल	2 ज्ञान 2 अज्ञान 2 दर्शन
मध्यम स्थिति	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	9 उपयोग
जघन्य गुण काला	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	19 बोल	9 उपयोग
उत्कृष्ट गुण काला	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	19 बोल	9 उपयोग
मध्यम गुण काला	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	9 उपयोग
जघन्य मति ज्ञानी	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	1 ज्ञान 2 दर्शन
उत्कृष्ट मति ज्ञानी	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	2 ज्ञान 3 दर्शन
मध्यम मति ज्ञानी	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	3 ज्ञान 3 दर्शन
जघन्य अवधि ज्ञानी	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	2 ज्ञान 3 दर्शन
उत्कृष्ट अवधि ज्ञानी	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	2 ज्ञान 3 दर्शन
मध्यम अवधि ज्ञानी	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	3 ज्ञान 3 दर्शन

विशेष- जघन्य अवगाहना का तिर्यंच अपर्याप्ता होता है, अपर्याप्ता में अवधि ज्ञान, विभंग ज्ञान, अवधि दर्शन नहीं होते। जघन्य स्थिति का तिर्यंच भी अपर्याप्ता मरने वाला होने से समकित ज्ञान नहीं होते। उत्कृष्ट स्थिति तिर्यंच युगलिये की होती है उसमें भी विभंग ज्ञान नहीं होते। जघन्य मति ज्ञान में भी विभंग ज्ञान नहीं होते। उत्कृष्ट मति ज्ञान तिर्यंच युगलिये में नहीं होता अतः स्थिति तिठाण है क्योंकि मनुष्य तिर्यंच में स्थिति चौठाण युगलियों में होने पर ही होती है। इसी कारण अवधि ज्ञानी, मनपर्यव., विभंग ज्ञानी मनुष्य तिर्यंच में स्थिति तिठाण वड़िया ही होती है। मतिज्ञान के समान श्रुत ज्ञान है, तीन ज्ञान की तरह तीन अज्ञान का वर्णन है, चक्षु-अचक्षु दर्शन मति ज्ञान के समान है। अवधि दर्शन अवधि ज्ञान के समान है, किन्तु उपयोग 5 और 6 के स्थान पर 8 और 9 है।

पृथ्वीकायादि 5 स्था.	अवगाहना से	स्थिति से	वर्णादि से छठ्ठाण वड़िया	ज्ञानादि से छठ्ठाण वड़िया
जघन्य अवगाहना	तुल्य	तिठाण वड़िया	20 बोल	2 अज्ञान 1 दर्शन
उत्कृष्ट अवगाहना	तुल्य	तिठाण वड़िया	20 बोल	2 अज्ञान 1 दर्शन
मध्यम अवगाहना	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	2 अज्ञान 1 दर्शन
जघन्य स्थिति	चौठाण वड़िया	तुल्य	20 बोल	2 अज्ञान 1 दर्शन
उत्कृष्ट स्थिति	चौठाण वड़िया	तुल्य	20 बोल	2 अज्ञान 1 दर्शन
मध्यम स्थिति	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	2 अज्ञान 1 दर्शन
जघन्य गुण काला	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	19 बोल	2 1ज्ञान 1 दर्शन
उत्कृष्ट गुण काला	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	19 बोल	2 अज्ञान 1 दर्शन
मध्यम गुण काला	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	2 अज्ञान 1 दर्शन
जघन्य मति अज्ञानी	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	1 अज्ञान 1 दर्शन

उत्कृष्ट मति अज्ञानी	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	1 अज्ञान 1 दर्शन
मध्यम मति अज्ञानी	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	2 अज्ञान 1 दर्शन
बेइन्द्रिय				
जघन्य अवगाहना	तुल्य	तिठाण वड़िया	20 बोल	5 उपयोग
उत्कृष्ट अवगाहना	तुल्य	तिठाण वड़िया	20 बोल	2 अज्ञान 1 दर्शन
मध्यम अवगाहना	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	5 उपयोग
जघन्य स्थिति	चौठाण वड़िया	तुल्य	20 बोल	2 अज्ञान 1 दर्शन
उत्कृष्ट स्थिति	चौठाण वड़िया	तुल्य	20 बोल	5 उपयोग
मध्यम स्थिति	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	5 उपयोग
जघन्य गुण काला	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	19 बोल	5 उपयोग
उत्कृष्ट गुण काला	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	19 बोल	5 उपयोग
मध्यम गुण काला	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	5 उपयोग
जघन्य मति ज्ञानी	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	1 ज्ञान 1 दर्शन
उत्कृष्ट मति ज्ञानी	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	1 ज्ञान 1 दर्शन
मध्यम मति ज्ञानी	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	3 उपयोग
जघन्य अचक्षु दर्शनी	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	2 ज्ञान 2 अज्ञान
उत्कृष्ट अचक्षु दर्शनी	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	2 ज्ञान 2 अज्ञान
मध्यम अचक्षु दर्शनी	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	5 उपयोग

विशेष- उत्कृष्ट अवगाहना वाला बेइन्द्रिय मिथ्या दृष्टि ही होता है, सास्वादन सम्यक्त्व यहां केवल अपर्याप्त में अंगुल के असंख्यातवें भाग की जघन्य एवं मध्यम अवगाहना में ही होते हैं, अतः उत्कृष्ट में ज्ञान नहीं है। जघन्य स्थिति बेइन्द्रिय में अपर्याप्त में मरने वाले की ही होती है। सास्वादन समकित लेकर आने वाला पर्याप्त होकर ही मरता है, अतः जघन्य स्थिति में ज्ञान नहीं है।

उपरोक्त बेइन्द्रिय की तरह तेइन्द्रिय चौरेन्द्रिय का भी वर्णन है, किन्तु चौरेन्द्रिय में चक्षु दर्शन अधिक होता है। अतः 5 उपयोग के स्थान पर 6 उपयोग तथा 2-3-4 उपयोग के स्थान पर 3-4-5 उपयोग क्रमशः समझना।

मनुष्य	**अवगाहना से**	**स्थिति से**	**वर्णादि से छठाण. वडिया**	**ज्ञानादि से छठाण वडिया**
जघन्य अवगाहना	तुल्य	तिठाण वड़िया	20 बोल	3 ज्ञान 2 अज्ञान 3दर्शन
उत्कृष्ट अवगाहना	तुल्य	एक ठाण वड़िया	20 बोल	2 ज्ञान 2 अज्ञान 2दर्शन
मध्यम अवगाहना	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	10 उपयोग / 2 तुल्य
जघन्य स्थिति	चौठाण वड़िया	तुल्य	20 बोल	2 अज्ञान 2 दर्शन
उत्कृष्ट स्थिति	चौठाण वड़िया	तुल्य	20 बोल	2 ज्ञान 2 अज्ञान 2दर्शन

मध्यम स्थिति	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	10 उपयोग / 2 तुल्य
जघन्य गुण काला	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	19 बोल	10 उपयोग / 2 तुल्य
उत्कृष्ट गुण काला	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	19 बोल	10 उपयोग / 2 तुल्य
मध्यम गुण काला	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	10 उपयोग / 2 तुल्य
जघन्य मति ज्ञानी	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	1 ज्ञान 2 दर्शन
उत्कृष्ट मति ज्ञानी	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	3 ज्ञान 3 दर्शन
मध्यम मति ज्ञानी	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	4 ज्ञान 3 दर्शन
जघन्य अवधि ज्ञानी	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	3 ज्ञान 3 दर्शन
उत्कृष्ट अवधि ज्ञानी	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	3 ज्ञान 3 दर्शन
मध्यम अवधि ज्ञानी	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	4 ज्ञान 3 दर्शन
जघन्य विभंग ज्ञानी	तिठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	2 अज्ञान 3 दर्शन
उत्कृष्ट विभंग ज्ञानी	तिठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	2 अज्ञान 3 दर्शन
मध्यम विभंग ज्ञानी	तिठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	3 अज्ञान 3 दर्शन
केवल ज्ञान	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	दो से तुल्य
जघन्य चक्षु दर्शन	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	2 ज्ञान 2 अज्ञान 1 दर्शन
उत्कृष्ट चक्षु दर्शन	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	4 ज्ञान 3 अज्ञान 2 दर्शन
मध्यम चक्षु दर्शन	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल	4 ज्ञान 3 अज्ञान 3 दर्शन
जघन्य अवधि दर्शन	तिठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	4 ज्ञान 3 अज्ञान 2 दर्शन
उत्कृष्ट अवधि दर्शन	तिठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	4 ज्ञान 3 अज्ञान 2 दर्शन
मध्यम अवधि दर्शन	चौठाण वड़िया	तिठाण वड़िया	20 बोल	10 उपयोग

विशेष- मति ज्ञान के समान श्रुत ज्ञान का वर्णन है, दोनों ज्ञान के समान दोनों अज्ञान का वर्णन है। अवधि ज्ञान के समान मनः पर्यव ज्ञान का वर्णन है, किन्तु अवगाहना और स्थिति में दोनों में तिठाण वड़िया है। चक्षु दर्शन के समान अचक्षु दर्शन का वर्णन है। केवल ज्ञान जैसा केवल दर्शन का है। तिर्यंच, मनुष्य में जघन्य अवगाहना युगलियों में नहीं होती है, अतः स्थिति तिठाण वड़िया ही है। उत्कृष्ट अवगाहना का मनुष्य युगलिया ही होता है। युगलियों में आपस में उम्र (स्थिति) का अंतर अत्यल्प असंख्यातवें भाग मात्र होता है, अतः स्थिति एक ठाण वड़िया होती है।

उत्कृष्ट मति ज्ञान भी युगलिये में नहीं होता, अवधि ज्ञान भी नहीं होता। अतः दोनों में स्थिति तिठाण वडिया ही हो सकती है। मनुष्य परभव से विभंग ज्ञान नहीं लाता है, अतः जघन्य अवगाहना में दो अज्ञान ही होते हैं। उत्कृष्ट अवगाहना मनुष्य में युगलिये की ही होती है, अतः अवधि विभंग नहीं है। जघन्य स्थिति मनुष्य में अपर्याप्त मरने वाले की है, उसमें समकित ज्ञान नहीं होते। जघन्य मतिज्ञानी मनुष्य में भी अवधि-

विभंग नहीं होते। उत्कृष्ट मतिज्ञान युगलियों में नहीं होता अतः मनुष्य तिर्यंच में स्थिति चौठाण वड़िया युगलिये होने पर ही होती है। इसी कारण अवधि ज्ञानी, मनःपर्यवज्ञानी, विभंग ज्ञानी, मनुष्य तिर्यंच में स्थिति तिठाण वड़िया ही होती है। केवली समुद्घात की अपेक्षा केवल ज्ञानी में अवगाहना चौठाण वड़िया होती है। अन्यथा तो 7 हाथ और 500 धनुष में तिठाण वड़िया ही हो सकता है। चक्षु दर्शन जघन्य चक्षु दर्शन युगलिये में नहीं हो सकता, अतः मनुष्य तिर्यंच के जघन्य चक्षु दर्शन में स्थिति तिठाण वडिया कहनी चाहिए। मूल पाठ में मतिज्ञान की भलावण है। अतः स्पष्ट नहीं कहा है। जघन्य मति ज्ञान तो युगलिये में हो सकता है, क्योंकि उसका संबंध शरीर से नहीं है, किन्तु चक्षु दर्शन (आंखों) का संबंध शरीर से है, विशाल शरीर में जघन्य चक्षु दर्शन युगलिया में मानना संगत नहीं है। भलावण में ऐसे कई तत्त्व अस्पष्ट होने से रह जाते हैं।

इस तरह नारकी के अवगाहना, स्थिति, वर्णादि 20 बोल तथा 9 उपयोग इन 31 के जघन्य उत्कृष्ट मध्यम की अपेक्षा से 31×3=93 अलावा हुए। नैरयिकों की तरह दस भवनपति देवों के भी 93×10=930 अलावा हुए। पृथ्वीकाय आदि 5 स्थावर के अवगाहना, स्थिति, वर्णादि 20 बोल एवं 3 उपयोग इन 25 बोल से जघन्य, उत्कृष्ट मध्यम अपेक्षा से 25×3=75×5=375 अलावा हुए। विकलेन्द्रिय में बेइन्द्रिय के और तेइन्द्रिय के अवगाहना स्थिति वर्णादि 20 बोल तथा 5 उपयोग से 27×3=81-81 अलावा दोनों (बेइन्द्रिय-तेइन्द्रिय) के हुए। चौरेन्द्रिय में चक्षु इन्द्रिय का 1 बोल बढा इसलिए 28 बोल हुए 28×3=84 अलावा हुए। तिर्यंच पंचेन्द्रिय के अवगाहना, स्थिति, वर्णादि 20 बोल 9 उपयोग इन 31×3=से 93 अलावा हुए। मनुष्य के अवगाहना, स्थिति, वर्णादि 20 बोल और 10 उपयोग इन 32 बोल से 32×3=96 और केवल ज्ञान केवल दर्शन मिलाकर 98 अलावा हुए। व्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक के भी भवनपति की तरह 93-93 अलावा हुए। समुच्चय के 24, नरक के 93, देवता के 13 दंडक के 93×13=1209, तिर्यंच पंचेन्द्रिय के 93, पांच स्थावर के 375, विकलेन्द्रिय के 246, मनुष्य के 98 कुल 2138 अलावा हुए।

13. अजीव पर्याय का थोकड़ा (पन्नवणा सूत्र पद 5)- अजीव पर्याय के 2 प्रकार अरूपी, रूपी।

अरूपी अजीव- अरूपी अजीव की पर्याय के 10 भेद है- धर्मास्तिकाय, धर्मास्तिकाय का देश, इसका प्रदेश। अधर्मास्तिकाय, इसका देश, प्रदेश। आकाशास्तिकाय, देश, प्रदेश और अद्धा समय यानि काल। ये 10 भेद हैं।

रूपी अजीव- रूपी अजीव की पर्याय के 4 भेद- स्कंध, स्कंध का देश, प्रदेश, परमाणु पुद्‌गल। यहां पर्याय और पर्यायी की अभेद विवक्षा है। रूपी अजीव की पर्याय अनंत है क्योंकि परमाणु पुद्‌गल अनंत है। अनंत द्विप्रदेशी स्कंध इसी प्रकार अनंत दस प्रदेशी, अनंत संख्यात प्रदेशी, अनंत असंख्यात प्रदेशी, अनंत-अनंत प्रदेशी स्कंध है।

परमाणु पुद्‌गल की भी अनंत पर्याय हैं इसी तरह अनंत प्रदेशी स्कंध के भी अनंत पर्याय है। परमाणु परमाणु में स्थिति का असंख्यात गुणा फर्क हो सकता है अर्थात् परमाणुओं में स्थिति की असंख्य पर्यायें होती है और वर्णादि की अनंत पर्यायें होती है। अतः कुल मिलाकर अनंत पर्यायें हो जाती है।

रूपी अजीव पर्यायों का कथन- परमाणु से अनंत प्रदेशी स्कंध की पर्यायों का कथन विभिन्न प्रकार से होता है। **1. द्रव्य की अपेक्षा-** परमाणु से अनंत प्रदेशी स्कंध तक की पर्यायें। **2. क्षेत्र की अपेक्षा से-** एक प्रदेशावगाढ़ से असंख्य प्रदेशावगाढ़ तक के पुद्‌गलों की पर्यायों का। **3. काल की अपेक्षा से-** एक समय से असंख्य समय की स्थिति वाले पुद्‌गलों की पर्याय **4. भाव की अपेक्षा से-** एक से अनंत गुण युक्त 20 बोल वर्णादि तक के पुद्‌गल पर्याय 5. दो प्रदेशी स्कंध से अनंत प्रदेशी स्कंध की जघन्य, उत्कृष्ट, मध्यम अवगाहना की अपेक्षा से पर्याय 6. द्विप्रदेशी से अनंत प्रदेशी स्कंध की तीनों स्थिति की अपेक्षा से 7. द्विप्रदेशी से अनंत प्रदेशी स्कंध के तीनों (जघन्य उत्कृष्ट मध्यम) वर्णादि अपेक्षा से 8. जघन्य आदि प्रदेशों की अपेक्षा से पर्यायें 9. जघन्यादि अवगाहना से पर्यायें 10. जघन्यादि स्थिति की अपेक्षा से 11. जघन्यादि 20 बोल वर्णादि अपेक्षा से पर्यायें इस प्रकार पर्यायों का कथन होता है। द्रव्य के 13, क्षेत्र के 12, काल के 12, भाव के 260, अवगाहना के 35, स्थिति के 39, भाव के 636, द्रव्य के 3, क्षेत्र के 3, काल के 3, भाव के 60 ये कुल 1076 अलावा हुए।

द्रव्य की अपेक्षा- परमाणु पुदगल की अनंत पर्याय है, एक परमाणु पुद्‌गल दूसरे से द्रव्य से तुल्य है, प्रदेश से तुल्य है, अवगाहना से तुल्य है, स्थिति से चौठाण वडिया इसमें जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्यात समय की होती है। एक परमाणु में एक वर्ण, एक गंध, एक रस, 2 स्पर्श होते हैं। वर्णादि अपेक्षा से छठाण वड़िया है। द्विप्रदेशी द्रव्य से तुल्य, प्रदेश से तुल्य, अवगाहना से तुल्य भी और एक प्रदेश हीनाधिक भी होता है, स्थिति से चौठाण वड़िया, वर्णादि से छठाण वड़िया है।

विशेष विवरण आगे चार्ट से जानें। द्रव्य की अपेक्षा सर्वत्र तुल्य ही होता है। वर्णादि की अपेक्षा पृच्छा में जिसकी पृच्छा हो, उसके स्वयं की अपेक्षा तुल्य ही होता है, शेष की अपेक्षा छठाण वड़िया होता है। द्विप्रदेशी स्कंध कथंचित् तुल्य, कथंचित् हीन या अधिक होता है। इसी तरह तीन प्रदेशी से दस प्रदेशी स्कंध तक इसी तरह कहना त्रिप्रदेशी स्कंध तीन, दो या एक आकाश प्रदेश में रह सकता है। इसी तरह 4 से 10 प्रदेशी स्कंध तुल्य हीन या अधिक कहने चाहिए। 10 प्रदेशी यदि हीन होता है तो 1 प्रदेश यावत् 9 प्रदेश हीन होता है यदि अधिक होता है तो 1 प्रदेश यावत् 9 प्रदेश अधिक होता है। संख्यात प्रदेशी स्कंध द्रव्य से तुल्य, प्रदेश से द्विस्थान पतित, अवगाहना से द्विस्थान पतित, स्थिति से चतुःस्थान पतित, वर्णादि से 6 स्थान पतित होता है।

क्षेत्र की अपेक्षा- एक प्रदेशागाढ़ पुदगल एक प्रदेशावगाढ़ से द्रव्य से तुल्य, प्रदेश से छठाण वड़िया, अवगाहना से तुल्य। प्रदेश से छठाण वड़िया इसलिए कि परमाणु से अनंत प्रदेशी तक कोई भी स्कंध एक आकाश प्रदेश पर हो सकता है, अनंत प्रदेशी के अनंत भेद होने से 6 स्थान की हीनाधिकता हो सकती है। स्थिति से चौठाण वड़िया, वर्णादि से छठाण वड़िया।

एक प्रदेशावगाढ़ से संख्यात प्रदेशावगाढ स्कंध सूक्ष्म होते हैं, उनमें 4 स्पर्श होते हैं इस प्रकर 10 प्रदेशावगाढ़ स्कंध के अनंत पर्याय है। संख्यात प्रदेशावगाढ प्रदेश से छठाण वड़िया होते हैं अवगाहना से दुठाण वड़िया क्योंकि संख्यात प्रदेशावगाढ़ पुदगलों की अवगाहना संख्यात प्रदेशी होती है उनके संख्यात भेद है इसलिए संख्याता भाग और संख्याता गुण ये दो न्यूनाधिकता है। स्थिति से चौठाण वडिया वर्णादि से छठाण वड़िया। असंख्यात प्रदेशी प्रदेश से छठाण वडिया, अवगाहना से स्थिति से चौठाण वड़िया, वर्णादि से छठाण वड़िया। असंख्यात प्रदेशी तक 4 स्पर्शी और अनंत प्रदेशी में कोई 4 कोई आठ स्पर्शी (बादर) होते हैं।

काल की अपेक्षा- परमाणु से अनंत प्रदेशी तक स्कंधों की स्थिति और एक प्रदेशावगाढ़ से असंख्यात प्रदेशावगाढ़ स्कंधों की स्थिति जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्य काल की होती है। अनंत काल की नहीं होती। पुद्‌गल द्रव्य अनादि अनंत हैं, परन्तु वे अधिक से अधिक असंख्यात काल तक ही रह सकते हैं, उसके पश्चात् उनकी पर्यायें बदल जाती है। ये एक समय की स्थिति वाले द्रव्य से तुल्य, प्रदेश से छठाण वड़िया अवगाहना से चौठाण वड़िया, स्थिति से तुल्य, वर्णादि छठाण वड़िया। संख्यात और असंख्यात समय स्थिति वाले चौठाण वड़िया होते हैं।

भाव से- पुदगल द्रव्य की अनंत पर्यायें हैं, वर्ण गंध रस और स्पर्श के 20 बोल होते हैं। प्रत्येक के एक, दो, तीन, दस, संख्यात, यावत अनंत तक 13 बोल हैं। एक गुण काला के अनंत पर्याय हैं, द्रव्य से तुल्य, प्रदेश से छठाण वड़िया अनंत प्रदेशी में अनंत प्रदेश होने से प्रदेश से छठाण वड़िया है। अवगाहना से चौठाण वड़िया असंख्य प्रदेशावगाढ़ होने से, स्थिति चौठाण वड़िया असंख्य समय होने से, वर्णादि 19 बोल में छठाण वड़िया स्वयं की पृच्छा में तुल्य। संख्यात, असंख्यात, अनंत गुण में द्रव्य से तुल्य, प्रदेश से छठाण वड़िया अवगाहना से चौठाण वडिया स्थिति से चौठाण वड़िया 19 बोल वर्णादि में छठाण वड़िया है। स्व से समान न हो तो संख्यात में दुठाण वड़िया असंख्यात गुण काला में चौठाण वड़िया, अनंत गुण काला में छठाण वड़िया होता है। प्रदेश, स्थिति, अवगाहना, वर्णादि से जघन्य उत्कृष्ट मध्यम न्यूनाधिकता से कथन किया गया है। कुल 13+12+12+260+35+39+636+3+3+3+60 कुल 1076 अलावा है।

नाम	प्रदेश से	अवगाहना से	स्थिति से	वर्णादि से 6 ठाण व.
1. द्रव्य की अपेक्षा				
परमाणु	तुल्य	तुल्य	चौठाण वड़िया	16 बोल
द्विप्रदेशी	तुल्य	1 प्रदेश हीनाधिक	चौठाण वड़िया	16 बोल
तीन प्रदेशी	तुल्य	2 प्रदेश हीनाधिक	चौठाण वड़िया	16 बोल
1 से 10 प्रदेशी	तुल्य	3 से 9 प्रदेश हीना.	चौठाण वड़िया	16 बोल
संख्यात प्रदेशी	दुठाण वड़िया	दुठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	16 बोल
असंख्यात प्रदेशी	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	16 बोल
अनंत प्रदेशी	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल
2. क्षेत्र अपेक्षा				
एक प्रदेशावगाढ़ पुदगल	छठाण वड़िया	तुल्य	चौठाण वड़िया	16 बोल
2से 10 प्रदेशावगाढ़ पुद्गल	छठाण वड़िया	तुल्य	चौठाण वड़िया	16 बोल
संख्य. प्रदेशावगाढ़ पुदगल	छठाण वड़िया	दुठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	16 बोल
असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गल	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल
3. काल अपेक्षा				
एक समय की स्थिति के पु.	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	तुल्य	20 बोल
2 से 10 समय की स्थिति पुद	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	तुल्य	20 बोल
संख्यात समय स्थि. पुद्.	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	दुठाण वड़िया	20 बोल
असंख्यात समय स्थि. पुद्.	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल

4. भाव अपेक्षा				
एक गुण काला	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	19 बोल
दो से 10 गुण काला	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	19 बोल
संख्यात काला	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	19/1 दुठाण व.
असंख्यात काला	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	19/1 दुठाण व.
अनंत गुण काला	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल
5. अवगाहना से जघन्य उत्कृष्ट अवगाहना				
दो प्रदेशी	तुल्य	तुल्य	चौठाण वड़िया	16 बोल
ज.म.उ. अव. का 3 प्रदेशी	तुल्य	तुल्य	चौठाण वड़िया	16 बोल
ज.उ. अव. का 4 प्रदेशी	तुल्य	तुल्य	चौठाण वड़िया	16 बोल
म.अव. 4 प्रदेशी	तुल्य	1 प्रदेश हीनाधिक	चौठाण वड़िया	16 बोल
ज.उ. अव. 10 प्रदेशी	तुल्य	तुल्य	चौठाण वड़िया	16 बोल
म.अव. 10 प्रदेशी	तुल्य	7 प्रदेश हीनाधिक	चौठाण वड़िया	16 बोल
ज.उ. अव. संख्यात प्रदेशी	दुठाण वड़िया	तुल्य	चौठाण वड़िया	16 बोल
मध्यम अव. संख्यात प्रदेशी	दुठाण वड़िया	दुठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	16 बोल
ज.उ. अव. असंख्यात प्रदेशी	चौठाण वड़िया	तुल्य	चौठाण वड़िया	16 बोल
म.अव.असंख्यात प्रदेशी	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	16 बोल
जघन्य अव. का अनंत प्रदेश	छठाण वड़िया	तुल्य	चौठाण वड़िया	16 बोल
उत्कृष्ट अव. का अनंत प्रदेश	छठाण वड़िया	तुल्य	तुल्य	16 बोल
मध्यम अव. का अनंत प्रदेश	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल
6. स्थिति से				
ज.उ. स्थिति के परमाणु	तुल्य	तुल्य	तुल्य	16 बोल
मध्यम स्थिति के परमाणु	तुल्य	तुल्य	चौठाण वड़िया	16 बोल
ज.उ. स्थिति के द्विप्रदेशी	तुल्य	1 प्रदेश हीनाधिक	तुल्य	16 बोल
म. स्थिति के द्विप्रदेशी	तुल्य	1 प्रदेश हीनाधिक	चौठाण वड़िया	16 बोल
ज.उ. स्थिति के 10 प्रदेशी	तुल्य	9 प्रदेश हीनाधिक	तुल्य	16 बोल
मध्यम स्थिति के 10 प्रदेशी	तुल्य	9 प्रदेश हीनाधिक	चौठाण वड़िया	16 बोल
ज.उ. स्थिति के संख्यात प्रदेशी	दुठाण वड़िया	दुठाण वड़िया	तुल्य	16 बोल
मध्यम स्थिति के संख्यात प्रदेशी	दुठाण वड़िया	दुठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	16 बोल
ज.उ. स्थिति के असंख्यात प्रदेशी	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	तुल्य	16 बोल
मध्यम स्थिति के असंख्यात प्रदेशी	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	16 बोल
ज.उ. स्थिति के अनंत प्रदेशी	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	तुल्य	20 बोल
मध्यम स्थिति के अनंत प्रदेशी	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल

7. वर्णादि से				
ज.उ. गुण काला परमाणु	तुल्य	तुल्य	चौठाण वड़िया	11/1
मध्यम गुण काला परमाणु	तुल्य	तुल्य	चौठाण वड़िया	12 बोल
ज.उ. गुण काला प्रदेशी	तुल्य	1 प्रदेश हीनाधिक	चौठाण वड़िया	15 बोल
मध्यम गुण काला दस प्रदेशी	तुल्य	1 प्रदेश हीनाधिक	चौठाण वड़िया	16 बोल
ज.उ. गुण काला दस प्रदेशी	तुल्य	9 प्रदेश हीनाधिक	चौठाण वड़िया	15/16
मध्यम गुण काला दस प्रदेशी	तुल्य	9 प्रदेश हीनाधिक	चौठाण वड़िया	16 बोल
ज.उ. गुणकाला संख्यात प्र.	दुठाण वड़िया	दुठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	15/1बोल
मध्यम गुणकाला संख्यात प्र.	चौठाण वड़िया	दुठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	16 बोल
ज.उ. गुणकाला असंख्यात प्र.	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	15/1बोल
मध्यम गुणकाला असंख्यात प्र.	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	16 बोल
ज.उ. गुणकाला अनंत प्रदेशी	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	19/1बोल
मध्यम गुणकाला अनंत प्रदेशी	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल
ज.उ. कर्कश अनंत प्रदेशी	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	19/1बोल
मध्यम कर्कश अनंत प्रदेशी	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल
ज.उ. म. शीत परमाणु	तुल्य	तुल्य	चौठाण वड़िया	14/15बोल
ज.उ. म. शीत द्विप्रदेशी	तुल्य	1 प्रदेशी हीनाधिक	चौठाण वड़िया	15/16बोल
ज.उ. म. शीत दस प्रदेशी	तुल्य	9 प्रदेशी हीनाधिक	चौठाण वड़िया	15/16बोल
ज.उ. म. शीत संख्यात प्रदेशी	दुठाण वड़िया	दुठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	15/16बोल
ज.उ. म. शीत असंख्यात द्विप्रदेशी	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	15/16बोल
ज.उ. म. शीत अनंत प्रदेशी	छठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	19/20बोल
8. प्रदेश से				
जघन्य प्रदेशी स्कंध	तुल्य	1 प्रदेश हीनाधिक	चौठाण वड़िया	16 बोल
उत्कृष्ट प्रदेशी स्कंध	तुल्य	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल
मध्यम प्रदेशी स्कंध	6 ठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल
9. अवगाहना से				
जघन्य अवगाहना के पुद्गल	6 ठाण वड़िया	तुल्य	चौठाण वड़िया	16 बोल
उत्कृष्ट अवगाहना के पुद्गल	6 ठाण वड़िया	तुल्य	तुल्य	16 बोल
मध्यम अवगाहना के पुद्गल	6 ठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल
10. स्थिति से				
ज.उ. स्थिति के पुद्गल	6 ठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	तुल्य	20 बोल
मध्यम स्थिति के पुद्गल	6 ठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल
11. भाव से				
ज.उ. गुणकाला पुद्गल	6 ठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	19/1
मध्यम गुणकाला पुद्गल	6 ठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	चौठाण वड़िया	20 बोल

विशेष- 1. समुच्चय परमाणु में स्पर्श 4 होते हैं, वर्णादि 16 बोल होते हैं, किसी एक परमाणु में तो 1 वर्ण, 1 गंध, 1 रस, 2 स्पर्श यों 5 वर्णादि ही होते हैं, प्रतिपक्षी वर्णादि नहीं होते हैं, परन्तु यहां कथन व्यक्तिगत अकेले परमाणु की नहीं है, सामान्य की है इसलिए समुच्चय परमाणु में 16 वर्णादि है। 2. संख्यात प्रदेशी के दुठाण वड़िया और जीव पर्याय के दुठाण वड़िया में अन्तर है, जीव पर्याय में असंख्यातवें भाग, संख्यातवें भाग ये दो फर्क है यहां अजीव पर्यव में संख्यातवें भाग और संख्यातवें गुण ये दो फर्क हैं। 11 प्रदेश से लाखों करोड़ों प्रदेशी में दुठाण हो सकती है। एकठाण और तिठाण अजीव पर्यव में कहीं भी नहीं होती। 3. जघन्य और उत्कृष्ट अवगाहना के दो प्रदेशी की ही पृच्छा है मध्यम नहीं बनती है, वही परमाणु की तो पृच्छा ही नहीं हैं, क्योंकि जघन्य उत्कृष्ट मध्यम विषय नहीं बनता एक भाई के लिए छोटा बड़ा पुत्र पृच्छा नहीं बनता। 4. जघन्य स्थिति के परमाणु में भी 16 वर्णादि ही संभव है, स्पर्श दो ही कहे हैं, लिपि दोष संभव है। 5. जघन्य गुण काला के परमाणुओं की पृच्छा में प्रतिपक्षी शेष 4 वर्ण नहीं है, जघन्य गुण काला की पृच्छा में काले वर्ण से सभी तुल्य है, अतः वर्णादि में 16 में से 5 कम 11 वर्णादि से छठाण वड़िया है। उत्कृष्ट में भी 11 से परन्तु मध्यम में 12 से छठाण वडिया है। 6. शीत स्पर्श में तीन स्पर्श होते हैं, उष्ण नहीं होता अतः वर्णादि 15 होते हैं, स्वयं की अपेक्षा जघन्य, उत्कृष्ट से 14 और मध्यम में 15 वर्णादि से छठाण वड़िया है। 7. जघन्य प्रदेशी स्कंध में द्विप्रदेशी स्कंध ही विवक्षित है अतः 16 वर्णादि है। 8. जघन्य अवगाहना के पुद्गल में अनंत प्रदेशी भी हो सकते हैं, फिर भी वर्णादि 16 ही होते हैं, चौस्पर्शी होते हैं। अठस्पर्शी नहीं। 9. उत्कृष्ट अवगाहना के पुद्गल में अचित महास्कंध या केवली समुद्घात गत शरीर ग्रहीत है, जिसकी स्थिति 4-4 समय की होती है। अतः स्थिति तुल्य है।

14. विरह द्वार (पन्नवणा पद 6)- जीव संसार में जन्म मरण करते हुए चारों गति भ्रमण करते रहते हैं। चारों गतियों में स्थूल दृष्टि से सदा कोई न कोई जीव जन्मता, मरता रहता है फिर भी सूक्ष्म दृष्टि से यह जन्म मरण का सिलसिला कभी बंद भी रहता है, इसे विरह काल कहते हैं। यह विरहकाल 4 गति 24 दंडक में से पांच स्थावर में नहीं होता, शेष में होता है। जिस तरह उत्पन्न होने का कहा, उसी तरह उद्वर्तन (निकलने) का भी कहना चाहिए। नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देव में इन 4 गतियों में उत्पन्न होने का विरह जघन्य 1 समय उत्कृष्ट 12 मुहुर्त का है। ज्योतिषी और वैमानिक

में उद्वर्तन न कहकर च्यवन कहना है। 4 गति, 7 नारकी, 10 भवनपति, पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय, गर्भज तिर्यंच पंचेन्द्रिय, सम्मुर्च्छिम मनुष्य, गर्भज मनुष्य, व्यंतर, ज्योतिषी, 12 देवलोक, नव ग्रैवेयक की तीन त्रिक, चार अणुत्तर विमान, सर्वार्थ सिद्ध विमान और सिद्ध भगवान ये 53 बोल पन्नवणा में तथा 64 इन्द्रों का विरह पड़े तो जघन्य 1 समय उत्कृष्ट 6 मास का है। चन्द्र सूर्य ग्रहण की अपेक्षा विरह पड़े तो जघन्य 6 मास, उत्कृष्ट चंद्र का 42 माह का सूर्य का 48 वर्ष का। चन्द्र सूर्य दोनों का संयुक्त रूप से ग्रहण की अपेक्षा विरह पड़े तो जघन्य 15 दिन उत्कृष्ट 42 महिने (चन्द्रमास) का। नवीन समदृष्टि का विरह 7 दिन, नवीन श्रावक का 12 दिन का, नवीन साधु का 15 दिन का विरह पड़ता है। ये थोकड़े अन्य जगह से लिये हैं। सूर्य चन्द्र के ग्रहण के दो, सिद्ध, नवीन समदृष्टि, नवीन श्रावक, नवीन साधु ये 6 बोल उद्वर्त्तन में नहीं कहने। उद्वर्तन में 53 बोल होते हैं। शेष वर्णन आगे चार्ट में देखें।

तीन चारित्र (परिहार विशुद्धि, सूक्ष्म सम्पराय, यथाख्यात) का विरह पड़े तो जघन्य 84000 वर्ष से अधिक और उत्कृष्ट देशोन अठारह क्रोड़ा क्रोड़ सागरोपम। तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव का विरह पड़े तो तीर्थंकर का जघन्य 84 हजार वर्ष से अधिक, अन्त तीनों का 252000 वर्ष से अधिक, उत्कृष्ट सबका देशोन 18 क्रोड़ा क्रोड़ सागर। दो चारित्र (सामायिक, छेदोपस्थापनीय) का, चार तीर्थ, पांच महाव्रत का विरह पड़े तो जघन्य 63000 वर्ष से अधिक उत्कृष्ट देशोन 18 क्रोड़ाक्रोड़ सागरोपम। यह विरहकाल भरत-ऐरवत क्षेत्रों की अपेक्षा से हैं।

15. सान्तर निरन्तर (पन्नवणा पद 6)- 4 गति, 7 नरक, 10 भवनपति, 3 विकलेन्द्रिय, असंज्ञी और संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय, असंज्ञी और संज्ञी मनुष्य, व्यंतर, ज्योतिषी, 12 देवलोक, नव ग्रैवेयक की तीन त्रिक, 5 अणुत्तर विमान और सिद्ध ये 51 बोल में सान्तर और निरंतर उपजते हैं। पांच स्थावर में निरंतर उपजते हैं। ये 56 बोल हुए। उपजने की तरह निकलने का भी कहना पांच स्थावर निरंतर निकलते हैं, सिद्ध नहीं निकलते। उनका उद्वर्तन नहीं कहें। शेष सांतर निरंतर निकलते हैं। ज्योतिषी वैमानिक का उद्वर्तन के स्थान पर च्यवन कहना। ये 55 बोल हुए।

16. उत्पत्ति उद्वर्त्तन और च्यवन (पन्नवणा पद 6)- जघन्य और उत्कृष्ट संख्या में उत्पन्न होना इस अपेक्षा से यहां वर्णन है जो आगे चार्ट द्वारा समझाया है विशेष यह कि 4 स्थावर में 5 स्थावर की अपेक्षा प्रत्येक समय में विरह रहित निरंतर असंख्याता

उत्पन्न होते हैं, त्रस की अपेक्षा जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट असंख्याता है। अतः कुल मिलाकर प्रति समय असंख्याता उत्पन्न होते हैं। वनस्पति में वनस्पति की अपेक्षा प्रति समय विरह रहित अनंता उत्पन्न होते हैं। चार स्थावर में प्रति समय में असंख्याता उपजे और त्रसकाय में जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट असंख्याता उपजे, सभी मिलकर उत्कृष्टा अनंता उपजे, मरे। ये 53 बोल है उत्पन्न होने की तरह सिद्ध के सिवाय 52 बोल उद्वर्त्तन के हैं, ज्योतिषी वैमानिक में च्यवन कहना। सिद्ध भगवान गति से नहीं निकलते हैं अतः उनका च्यवन नहीं कहना।

उपरोक्त तीनों थोकड़ों विरहकाल, सांतर निरंतर, उत्पत्ति उद्वर्त्तन च्यवन का चार्ट से इस प्रकार

	विरहकाल		उत्पात संख्या	
नाम	**जघन्य**	**उत्कृष्ट**	**जघन्य**	**उत्कृष्ट**
पहली नरक	1 समय	24 मुहुर्त	1-2-3	असंख्याता
दूसरी नरक	1 समय	7 दिन	1-2-3	असंख्याता
तीसरी नरक	1 समय	15 दिन	1-2-3	असंख्याता
चौथी नरक	1 समय	1 महिना	1-2-3	असंख्याता
पांचवी नरक	1 समय	2 महिना	1-2-3	असंख्याता
छठी नरक	1 समय	4 महिना	1-2-3	असंख्याता
सातवीं नरक	1 समय	6 महिना	1-2-3	असंख्याता
भवनपति से दूसरे देवलोक तक	1 समय	24 मुहुर्त	1-2-3	असंख्याता
तीसरा देवलोक	1 समय	9 दिन 20 मुहुर्त	1-2-3	असंख्याता
चौथा देवलोक	1 समय	12 दिन 10 मुहुर्त	1-2-3	असंख्याता
पांचवा देवलोक	1 समय	22½ दिन	1-2-3	असंख्याता
छठा देवलोक	1 समय	45 दिन	1-2-3	असंख्याता
सातवां देवलोक	1 समय	80 दिन	1-2-3	असंख्याता
आठवां देवलोक	1 समय	100 दिन	1-2-3	असंख्याता
नौवां दसवां देवलोक	1 समय	संख्याता मास	1-2-3	संख्याता
ग्यारहवां बारहवा देवलोक	1 समय	संख्याता वर्ष	1-2-3	संख्याता
नव ग्रैवेयक प्रथम त्रिक	1 समय	संख्याता सौ वर्ष	1-2-3	संख्याता
नव ग्रैवेयक दूसरी त्रिक	1 समय	संख्याता हजार वर्ष	1-2-3	संख्याता
नव ग्रैवेयक तीसरी त्रिक	1 समय	संख्याता लाख वर्ष	1-2-3	संख्याता
चार अणुत्तर विमान	1 समय	असंख्यात काल	1-2-3	संख्याता
सर्वार्थ सिद्ध विमान	1 समय	पल्य का सं.	1-2-3	संख्याता

सिद्ध भगवान	1 समय	6 माह	1-2-3	108
चार स्थावर	विरह रहित	विरह रहित	निरंतर असं.	निरंतर असं.
वनस्पति	विरह रहित	विरह रहित	निरंतर अनंता	निरंतर अनंता
तीन विकलेन्द्रिय	1 समय	अन्तर्मुहुर्त	1-2-3	असंख्याता
असन्नी तिर्यंच	1 समय	अन्तर्मुहुर्त	1-2-3	असंख्याता
सन्नी तिर्यच	1 समय	12 मुहुर्त	1-2-3	असंख्याता
असन्नी मनुष्य	1 समय	24 मुहुर्त	1-2-3	असंख्याता
सन्नी मनुष्य	1 समय	12 मुहुर्त	1-2-3	संख्याता

विरहकाल की तरह उद्वर्त्तन भी (सिद्ध छोड़कर) समझें 53 बोलों में, उत्पत्ति की तरह 53 बोलों में से 52 बोलों में उद्वर्त्तन (सिद्ध छोड़कर) भी समझें। अन्य विवरण पिछले तीन थोकड़ों से समझें।

17. गति आगति-(पन्नवणा पद 6)- जीवों की आगत-गत के वर्णन में जीव के 563 भेद का संकलन किया जाता है। यहां 24 दंडक के आधार से ही 110 भेदों की अपेक्षा से आगत-गत वर्णन किया है। नवमें देवलोक के सर्वार्थ सिद्ध विमान तक आगत वर्णन में तीन दृष्टि, संयमासंयम, प्रमत्त अप्रमत्त, ऋद्धि (लब्धि) वान या लब्धि रहित की अपेक्षा वर्णन है। मनुष्य के वर्णन में 110 जीव के भेद के साथ 111वां सिद्ध अवस्था का भेद भी गति में बताया है। छोटी गतागत को समझने के लिए 110 भेद विवक्षा इस प्रकार है- 1. **नारकी के 7 भेद** (पर्याप्ता)

2. **तिर्यंच के 46 भेद-** पांच स्थावर के सूक्ष्म, बादर, पर्याप्त, अपर्याप्ता ये 20 भेद, तीन विकलेन्द्रियों के पर्याप्त-अपर्याप्त 6 भेद, पांच तिर्यंच पंचेन्द्रिय के सन्नी असन्नी पर्याप्त अपर्याप्त ये 20 भेद।

3. **मनुष्य के 3 भेद-** कर्म भूमिज संख्यात वर्षायु वाले सन्नी के पर्याप्त अपर्याप्त तथा सम्मुर्च्छिम मनुष्य।

4. **युगलिया के 5 भेद-** कर्मभूमि के असंख्यात वर्षायु वाले, अकर्मभूमि के मनुष्य युगलिये, छप्पन अंतद्वीपों के मनुष्य युगलिये (ये तीन मनुष्य के युगलिये) एवं खेचर तथा स्थलचर ये दो तिर्यंच युगलिया।

5. **देवता के 49 भेद-** 10 भवनपति, 8 वाणव्यंतर, 5 ज्योतिषी, 12 देवलोक, 9 ग्रैवेयक, 5 अणुत्तर विमान। ये 110 एवं 1 सिद्ध भगवान, ये 111 हुए। चार गति के (7+48+6+49) 110 भेद हुए।

गतागत विवरण-

नाम	आगति संख्या	आगति विवरण	गति संख्या	गति विवरण
पहली नरक	11	5 सन्नी 5 असन्नी तिर्यंच, 1 मनुष्य (संख्याता आयु कर्म भूमिज)	6	5 संज्ञी तिर्यंच, 1 मनुष्य (संख्यायु कर्म. भूमिज)
दूसरी नरक	6	5 सन्नी तिर्यंच, 1 मनुष्य (संख्यायु कर्मभू.)	6	आगत के समान विवरण
तीसरी नरक	5	उपरोक्त में भुज परिसर्प कम	5	आगत के समान विवरण
चौथी नरक	4	उपरोक्त में से खेचर कम	4	आगत के समान विवरण
पांचवी नरक	3	उपरोक्त में से स्थलचर कम	4	आगत के समान विवरण
छठी नरक	2	उपरोक्त में से उर परिसर्प कम (1 मनुष्य 1 जलचर)	2	आगत के समान विवरण
सातवीं नरक	2	1 मनुष्य 1 जलचर दोनों की स्त्री कम	1	जलचर
भवनपति व्यंतर	16	5 असन्नी 5 सन्नी तिर्यंच, 5 युगलिया 1 मनुष्य (संख्यातायु कर्मभूमि)	9	पांच सन्नी तिर्यंच, पृथ्वी, पानी, वनस्पति, 1 मनुष्य (संख्यायु कर्म भूमि)
ज्योतिषी से दूसरे देव	9	5 सन्नीति., 3 युगलिया (कर्मभूमि, अकर्म भूमि मनुष्य युग., स्थलचर युगलिया)	9	भवनपति के अनुसार गत
3 से 8वें देवलोक	6	पांच सन्नी तिर्यंच, 1 मनुष्य (संख्यायु कर्मभू.)	6	आगति के समान गत
9 से 12 देवलोक	1	मनुष्य (संख्यायु कर्मभू.) (मिथ्यात्वी, अव्रती समदृष्टि, श्रावक, साधु)	1	मनुष्य संख्यायु कर्मभूमि
9 नवग्रैवेयक	1	मनुष्य (स्वलिंगी समदृष्टि, मिथ्यादृष्टि) स्वलिंगी	1	मनुष्य संख्यायु कर्मभूमि
5 अणुत्तर विमान	1	मनुष्य (अप्रमत्त संयत साधु ऋद्धि-अऋिद्धि)	1	मनुष्य संख्यायु कर्मभूमि
पृथ्वी पानी वनस्पति	74	46 तिर्यंच, 3 मनुष्य, 25 देव क्रम से	49	46 तिर्यंच, 3 मनुष्य
तेउकाय, वायुकाय	49	46 तिर्यंच, 3 मनुष्य (49 की लड़ी)	46	46 तिर्यंच
तीन विकलेन्द्रिय	49	उपरोक्त 49 की लड़ी	49	46 तिर्यंच 3 मनुष्य की लड़ी
तिर्यंच पंचेन्द्रिय	87	46ति.+3मनु.+31 देवक्रम से(8वें देवलोक)+7 नरक	92	87 आगत के समान + 5 युगलिया
मनुष्य	96	38 तिर्यंच (तेउवायु छोड़ 8 कम) 3 मनुष्य, 49 देव, 6 नरक	111	110 सर्वत्र एवं सिद्ध गति

विशेष- सातवी नरक में पुरुष और नपुंसक दोनों जा सकते हैं, स्त्री कोई भी नहीं जाती। इस गति आगति प्रकरण में पर्याप्त नाम कर्म वालों की अपर्याप्त अवस्था को नहीं गिना है, इसलिए नारकी देवता में गति में भी आगति के समान पर्याप्त ही लिए हैं, दो भेद नहीं किये। इनमें पर्याप्त जीव ही आते हैं, और वे मरकर जहां भी जन्मते हैं, पर्याप्त ही बनते हैं। इसके बिना नहीं मरते। तिर्यंच मनुष्य परस्पर अपर्याप्त अवस्था का आयु बांध सकते है, और अपर्याप्त अवस्था में मरकर अन्यत्र (मनुष्य तिर्यंच) में जन्म सकते हैं। अणुत्तर विमान में अप्रमत्त संयत स्वलिंगी ही जाते हैं, वे ऋद्धिवान् अऋद्धिवान् दोनों हो सकते हैं। नवग्रैवेयक में समदृष्टि, मिथ्यादृष्टि दोनों स्वलिंगी ही जाते हैं। 12वें देवलोक तक साधु, श्रावक, स्वलिंगी, अन्य लिंगी, मिथ्यादृष्टि, समदृष्टि आदि मनुष्य जा सकते हैं।

18. आयुष्य बंध (पन्नवणा छठा पद) नारकी, देवता, युगलिये (असंख्यात वर्षायु वाले तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य) अपनी वर्तमान आयु के 6 महिने शेष रहते परभव की

आयु का बंध करते हैं। पृथ्वीकाय आदि 5 स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, संख्यात वर्षायु के तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य ये औदारिक के 10 दंडक अपनी उम्र का तीसरा भाग शेष रहने पर निरुपक्रम आयु वाले पर भव की आयु का बंध करते हैं। सोपक्रम आयु वाले तीसरे भाग शेष रहने पर, कभी तीसरे के तीसरे यानि नौंवां भाग शेष रहने पर, कभी 27वां, कभी 81वां, कभी 243वां, कभी 729वां भाग शेष रहने पर कभी यावत् अन्तर्मुहुर्त शेष रहने पर परभव की आयु का बंध करते हैं। सामान्य जीव और 24 दंडक में इसी प्रकार कथन है। एक भव में एक ही बार आयु बंध होता है। =24 अलावा हुए।

आयुष्य बंध के 6 भेद- आयु के साथ 6 बोल का बंध भी साथ साथ होता है। जैसे- इंजन के साथ डिब्बे जुड़े होते हैं, इसी प्रकार 1. जाति बंध 2. गति बंध 3. स्थिति बंध, 4 अवगाहना बंध 5. अनुभाग बंध 6. प्रदेश बंध इनका बंध निश्चित होता है। ये गति, जाति, अवगाहना औदारिक शरीर आदि रूप, ये नाम कर्म की विविध प्रकृतियें स्टोक में रहती है, यदि मनुष्यायु का बंध हो तो मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर की अवगाहना ये बोल आयु के साथ बंध जाते हैं, अनेक कर्मों की स्थिति, प्रदेश अनुभाग आयुष्य बंध के साथ जुड़ जाता है। इसी अपेक्षा से आयु बंध 6 प्रकार का कहा है। 25×6=150

आठ आकर्ष- उपरोक्त 6 प्रकार का आयु बंध 24 ही दंडक में जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट आठ आकर्ष से होता है। कर्म बंध के योग्य प्रयत्न विशेष रूप अध्यवसायों की धारा को आकर्ष कहते हैं। प्रयत्न विशेष से कर्म पुद्गल ग्रहण करता है, जब आयु कर्म के बंध योग्य अध्यवसायों की धारा तीव्र होती है तब एक धारा में बंध हो जाता है, कभी धारा मंद पड़ती है तब बंध रूक जाता है, बीच में अंतर पड़ जाता है, तब दो आकर्षों से बंध होता है, ज्यों ज्यों अध्यवसायों में मंदता आती है, त्यों त्यों आकर्ष बढ़ते जाते हैं, इस प्रकार अधिक से आठ आकर्ष हो सकते हैं आठ आकर्षों से आयु बंध होता है। जैसे गाय पानी पीती हुई घबरा कर पीछे देखती है, फिर पानी पीती है, रूकती है, पानी पीती है, इस प्रकार।

एक आकर्ष में असंख्यात समयों का अन्तर्मुहुर्त होता है, परन्तु 8 आकर्षों में भी कुल मिलाकर अन्तर्मुहुर्त से ज्यादा नहीं होता। एक भव में एक बार ही आयु बंध होता है। जीव और 24 दंडक में 6 प्रकार का आयु बंध 8 आकर्ष से बंधता है। 25×6×8=1200 अलावा।

अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़े आठ आकर्ष वाले, उनसे 7 आकर्षों से बंध करने वाले संख्यात गुणा। उनसे 6, 5, 4, 3, 2, 1 आकर्ष से आयु बंध करने वाले उत्तरोत्तर संख्यात गुणा। समुच्चय जीव और 24 दंडक में इसी तरह कहना। 25×6×8=1200 कुल 24+150+1200+1200=2574

19. श्वासोच्छवास (पन्नवणा पद 7) श्वासोच्छवास संसारी जीवों के शरीर की आवश्यक क्रिया है, इसके बिना कोई जीवित नहीं रह सकता। यह जीवों के भिन्न भिन्न रूप में मंद-तीव्र गति से होती है। इस प्रकरण में कौन कितने समय का श्वासोच्छवास लेता है। यानि उन उन जीवों को एक बार श्वास-उच्छवास की क्रिया में कितना समय लगता है? आगम में श्वासोच्छवास इस प्रकार है- केवइ कालस्स आणमंति? उत्तर में- जहण्णेणं सत्त थोवाणां आणमंति उक्कोसेणं साइरेगस्स पक्खस्स आणमंति। यहां पर कालस्स, थोवाणं साइरेगस्स पक्खस्स ये विशेषण है इनका स्पष्ट अर्थ है कितने काल का श्वासोच्छवास, एक थोव का, साधिक पक्ष का, श्वासोच्छवास लेते हैं। स्पष्ट है उन उन जीवों को एक बार की श्वासोच्छवास क्रिया में स्तोक, पक्ष आदि का समय लगता है। व्यवहार से भी सोचा जाय तो कोई भी स्वस्थ प्राणी रूक-रूक कर (विरह से) श्वास नहीं लेता है किंतु मंद गति, तीव्र गति देखी समझी जा सकती है। मनुष्य के लिए विमात्रा शब्द प्रयोग है जिसका भावार्थ मंद, मंदतर, तीव्र, तीव्रतर इस प्रकार विमात्रा से हो सकता है, परन्तु विरह मानना तर्क और न्याय संगत नहीं लगता। क्योंकि किसी भी मनुष्य के श्वांस आदि में, नाड़ी स्पंदन, धड़कन में एक मिनट, आधा मिनट, दो मिनट ऐसा विरह दृष्टिगोचर नहीं होता। आहार के समय श्वास में विरहकाल मानना तर्क संगत नहीं होता। फिर भी अनजाने में आगम आशय से अतिरिक्त कथन हुआ हो तो उसका मिच्छामि दुक्कड़ं। भिन्न भिन्न जीवों का श्वासोच्छवास काल मान इस प्रकार है-

1. नारक सदा लगातार निरंतर तीव्र गति से (लुहार की धमनी की तरह) श्वासोच्छवास लेते छोड़ते हैं।

2. असुर कुमार जघन्य 7 थोक (7 श्वासोच्छवास का 1 थोक) उत्कृष्ट साधिक पक्ष से एक श्वासोच्छवास लेते हैं।

3. नागकुमारादि 9 निकाय के एवं व्यंतर जघन्य 7 थोक उत्कृष्ट अनेक मुहुर्त (प्रत्येक) से लेते हैं।

4. ज्योतिषी देवों का श्वासोच्छवास काल जघन्य भी अनेक मुहुर्त उत्कृष्ट भी अनेक (प्रत्येक), महुर्त्त।

जघन्य से उत्कृष्ट का संख्यात गुणा (दुगुना चौगुना) अन्तर है।

5. देवलोक के देवों का श्वासोच्छवास काल मान इस प्रकार है।

देवलोक	जघन्य काल मान	उत्कृष्ट काल मान
पहला देवलोक	प्रत्येक (अनेक) मुहुर्त्त	दो पक्ष
दूसरा देवलोक	साधिक प्रत्येक मुहुर्त्त	साधिक दो पक्ष
तीसरा देवलोक	दो पक्ष	7 पक्ष
चौथा देवलोक	दो पक्ष साधिक	7 पक्ष साधिक
पांचवा देवलोक	7 पक्ष	10 पक्ष
छठा देवलोक	10 पक्ष	14 पक्ष
सातवां देवलोक	14 पक्ष	17 पक्ष
आठवां देवलोक	17 पक्ष	18 पक्ष
नवमां देवलोक	18 पक्ष	19 पक्ष
दसवां देवलोक	19 पक्ष	20 पक्ष
ग्यारहवां देवलोक	20 पक्ष	21 पक्ष
बारहवां देवलोक	21 पक्ष	22 पक्ष
नव ग्रैवेयक	22 से एक एक पक्ष बढ़ाते 30	23 से एक-एक बढ़ाते 31 पक्ष
4 अणुत्तर	31 पक्ष	33 पक्ष
सर्वार्थ सिद्ध विमान	33 पक्ष	33 पक्ष

देवों के जितने जितने सागरोपम की आयु है उतने उतने पक्ष से श्वासोच्छवास लेते हैं। या इतने काल का एक श्वासोच्छवास होता है। इसी विधि में लोकांतिक आदि देवों का भी समझना। जितने पल्योपम की आयु देवों के होती है उतने ही प्रत्येक मुहुर्त्त से श्वासोच्छवास लेते हैं। दस हजार वर्ष की स्थिति के 7 स्तोक का श्वासोच्छवास। पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य का श्वासोच्छवास लेना नियत नहीं है, अनियत, विमात्रा से हैं। विरहकाल विमात्रा से समझना।

20. संज्ञा (पन्नवणा पद 8) कर्मो के क्षयोपशम या उदय से उत्पन्न आहार आदि की इच्छा, अभिलाषा या रूचि या मनोवृत्ति को संज्ञा कहते हैं। ये 10 प्रकार की है-

1. आहार संज्ञा- 1. क्षुधा वेदनीय के उदय से 2. पेट खाली होने से 3. आहार की कथा सुनने से 4. आहार का चिंतन से

2. भय संज्ञा- 1. भय मोहनीय के उदय से 2. शक्ति नहीं होने से 3. भय की बात सुनने या भयानक वस्तु देखने से 4. भय के कारणों का चिन्तन करने से।

3. मैथुन संज्ञा- 1. वेद मोहनीय के उदय से 2. शरीर में रक्त मांस की वृद्धि होने से 3. काम कथा सुनने से 4. मैथुन का चिन्तन करने से।

4. परिग्रह संज्ञा- 1. लोभ मोहनीय के उदय से 2. अति मूर्च्छा आसक्ति से 3. परिग्रह की बात सुनने से 4. परिग्रह का चिन्तन करने से

5. क्रोध संज्ञा- क्रोध मोहनीय के उदय से, क्रोध वृत्ति के संकल्प से आत्म परिणति (परिणाम)

6. मान संज्ञा- मान मोहनीय के उदय से, गर्व अहंकारमय मानस से आत्म परिणति

7. माया संज्ञा- माया मोहनीय के उदय से मिथ्या भाषण या छल प्रपंच जनक आत्म परिणति

8. लोभ संज्ञा- लोभ मोहनीय के उदय से अनेक लालसाएं सुख समृद्धि यश सन्मान पदार्थ की इच्छाएं।

9. ओघ संज्ञा- दर्शनावरणीय कर्म के क्षयोपशम से होती है। इसमें कुछ भी सोचे समझे बिना, संकल्प विकल्प के बिना, धुन ही धुन से प्रवृत्ति करने के पीछे रही हुई मानस दशा आत्म परिणति ओघ संज्ञा है। जैसे बोलते हुए या बैठे हुए बिना प्रयोजन हाथ पैर हिलाना।

10. लोक संज्ञा- ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से होती है। देखादेखी, परंपरा, प्रवाह के अनुसार की जाने वाली प्रवृत्ति की मानस रूचि लोक संज्ञा। सामान्य ज्ञान ओघ संज्ञा, विशेष ज्ञान लोक संज्ञा। समुच्चय जीव और 24 दंडक में 10 संज्ञाएं पाई जाती है।

चार गति की अपेक्षा- 1. नारकी में भय संज्ञा, क्रोध संज्ञा अधिक 2. तिर्यंच में-आहार एवं माया संज्ञा की अधिकता। 3. मनुष्य में मैथुन और मान संज्ञा की बहुलता 4. देवता में परिग्रह और लोभ संज्ञा की बहुलता।

कर्म की अपेक्षा- आहार संज्ञा वेदनीय कर्म के उदय से, दूसरी से आठवीं तक मोह कर्म के उदय से, ओघ संज्ञा दर्शनावरण तथा लोक संज्ञा ज्ञानावरण के उदय से। (इनके क्षयोपशम से।)

गति की अपेक्षा अल्प बहुत्व- 1. नारकी में- सबसे थोड़े मैथुन संज्ञा वाले, आहार संज्ञा वाले परिग्रह संज्ञा वाले, भय संज्ञा वाले क्रमशः संख्यात- संख्यात गुणा है।

2. तिर्यंच में- सबसे थोड़े परिग्रह संज्ञा वाले, उससे मैथुन, भय, आहार संज्ञा वाले क्रमशः संख्यात गुणा।

3. मनुष्य में- सबसे थोड़े भय संज्ञा वाले, उससे आहार, परिग्रह, मैथुन संज्ञा वाले क्रमशः संख्यात गुणा।

4. देव में- सबसे थोड़े आहार संज्ञा वाले, उससे भय, मैथुन, परिग्रह संज्ञा वाले क्रमशः संख्यात गुणा।

इन्हें याद रखने के लिए माआपी, पीमाभ, भआपी, आभमा, संखेज्ज गुणा अहिया भवंति। क्रमशः नरक, तिर्यंच, मनुष्य, देव के लिए है शेष संज्ञा वह चौथी संज्ञा जानना। शेष 6 संज्ञाओं का यहां अल्प बहुत्व नहीं बताया है।

21. योनि का थोकड़ा- (पन्नवणा पद 9) जीव जहां जन्म लेते हैं, गर्भ रूप में उत्पन्न होते हैं, औदारिक आदि शरीर बनाने हेतु प्रथम आहार करते हैं, उस उत्पत्ति स्थान को योनि कहते हैं। ये संख्या में 84 लाख योनि हैं। विशेष भेदों से असंख्य है। यहां अपेक्षा से तीन-तीन प्रकारों से 4 तरह के भेद बताये है एवं अल्प बहुत्व भी दर्शाई है।

1. शीत योनि, उष्ण योनि, शीतोष्ण योनि- योनि के तीन प्रकार बताये हैं 1. पहली से तीसरी नरक तक शीत योनि होती है, उष्ण वेदना होती है। चौथी में शीत और उष्ण दोनों होती है शीत योनि के ज्यादा उष्ण के कम होते हैं। शीत योनि के उष्ण वेदना, उष्ण योनि के शीत वेदना होती है। पांचवी नरक में शीत और उष्ण दोनों है शीत के कम उष्ण योनि के ज्यादा है। वेदना उसी क्रम से। छठी सातवी नरक में उष्ण योनि और शीत वेदना है।

13 दंडक के देवता, गर्भज तिर्यंच पंचेन्द्रिय, गर्भज मनुष्य में शीतोष्ण यानि मिश्र योनि है। तेजस्काय को छोड़कर (अप्काय में शीत योनि मानते हैं), चार स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, समुर्च्छिम तिर्यंच पंचेन्द्रिय, सम्मुर्च्छिम मनुष्य में तीनों योनि, तेजस्काय में उष्ण योनि होती है।

अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़े शीतोष्ण योनि वाले, उष्ण योनि के असंख्यात गुणा, अयोनिक (योनि रहित) अनंत गुणा और शीत योनि के अनंत गुणा। अनंतकाय के शीत योनि होती है।

2. सचित, अचित और मिश्र योनि- ये भी योनि के 3 भेद गिनाये हैं- नारकी और देवता के 14 दंडक में एक अचित योनि। पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, सम्मुर्च्छिम तिर्यंच पंचेन्द्रिय और सम्मुर्च्छिम मनुष्य के तीनों योनि। गर्भज तिर्यंच पंचेन्द्रिय और गर्भज मनुष्य के मिश्र योनि होती है।

अल्प बहुत्व- सबसे थोड़े मिश्र योनि, उससे अचित योनि असंख्यात गुणा, अयोनिक अनंत गुणा, सचित योनिक अनंत गुणा (निगोद)। अतः निगोद को सचित योनि कहा है।

3. संवृत, विवृत और संवृत विवृत- योनि के तीन भेद संवृत (ढंकी हुई), विवृत (खुली), संवृत-विवृत (कुछ ढ़की कुछ खुली)। नारकी देवता 14 दंडक और पांच स्थावर इन 19 दंडक में एक संवृत योनि। तीन विकलेन्द्रिय, सम्मुर्च्छिम तिर्यंच पंचेन्द्रिय, सम्मुर्च्छिम मनुष्य में एक विवृत योनि। गर्भज तिर्यंच पंचेन्द्रिय और गर्भज मनुष्य में एक संवृत विवृत योनि (मिश्र) होती है।

अल्प बहुत्व- सबसे थोड़े संवृत विवृत योनिक, विवृत योनिक असंख्यात गुणा, अयोनिक अनंत गुणा, संवृत योनिक अनंत गुणा।

4. कूर्मोन्नत, शंखावर्त्त, वंशीपत्र योनि- ये तीन भेद संख्यात वर्ष की आयु वाले कर्म भूमिज मनुष्यों की अपेक्षा से किये हैं। कूर्मोन्नत योनि (कछुए की पीठ की तरह उन्नत), यह योनि तीर्थंकर, चक्रवर्त्ती, बलदेव, वासुदेव इन 54 (प्रति वासुदेव कम 63 में से) महापुरुषों माता के होती है। शंखावर्त्त योनि (शंख की तरह आवर्त वाली) चक्रवर्ती की श्री देवी के होती है। शंखावर्त्त योनि में जीव आते हैं, गर्भ रूप से उत्पन्न होते हैं, संचित होते हैं, उत्पन्न नहीं होते। वंशीपत्र योनि- (मिले हुए बांस के दो पत्र के आकार वाली) यह सामान्य पुरुषों की माताओं के होती है।

नाम जीव	शीत आदि 3 योनि	सचितादि 3 योनि	संवृत आदि 3 योनि
पहली से तीसरी नरक	शीत	अचित	संवृत
चौथी पांचवी नरक	शीत एवं उष्ण दो	अचित	संवृत
छठी सातवी नरक	उष्ण	अचित	संवृत
तेउकाय	उष्ण	तीनों	संवृत
4 स्थावर	तीनों	तीनों	संवृत
3 विकलेन्द्रिय, अ. तिर्यंच अ.मनुष्य	तीनों	तीनों	विवृत
सन्नी-तिर्यंच सन्नी मनुष्य	शीतोष्ण	मिश्र	संवृत विवृत
देवता	शीतोष्ण	अचित	संवृत

22. चरम पद (पन्नवणा 10वां पद) दसवें चरम पद में पृथ्वी आदि की चरमाचरम वक्तव्यता कही गई है। रत्न प्रभा पृथ्वी आदि 7 तथा सिद्ध शिला ये आठ पृथ्वीयां कही है इनके अतिरिक्त 12 देवलोक, 9 ग्रैवेयक 5 अणुत्तर विमान और लोक-अलोक ये 35 भेद बोल कहना।

द्रव्यापेक्षा- ये सभी एक-एक स्कंध है। इनमें 1. चरम 2. अनेक चरम 3. अचरम 4. अनेक अचरम 5. चरमांत प्रदेश 6. अचरमांत प्रदेश, इन 6 में से एक भी विकल्प नहीं बनता है। क्योंकि जो द्रव्य है, जिसके साथ कोई नहीं है, तब किसी दूसरे द्रव्य की विवक्षा बिना ये भंग नहीं बनते हैं।

विभागापेक्षा- रत्नप्रभादि ये सभी असंख्य प्रदेश अवगाहनात्मक अनेक स्कंधों से युक्त हैं, उनके चरम प्रदेश खुणा रूप है, उन खुणों (कोनों) को विभागापेक्षया अनेक चरम स्कंध रूप में विवक्षित करने पर एवं मध्य के पूरे एक गोल खंड को एक अचरम विवक्षित करने पर रत्नप्रभा आदि के चरम आदि 4 भेद बनते हैं- 1. अचरम 2. अनेक चरम 3. अचरमांत प्रदेश 4. चरमांत प्रदेश

1. अचरम- मध्य में स्थित बड़े खंड की अपेक्षा एक द्रव्य स्कंध।

2. अनेक चरम- अन्तिम भागों में खुणों रूप तथाविध एकत्व परिणाम वाले असंख्य खंड अनेक चरम द्रव्य है।

3. अचरमांत प्रदेश रूप- मध्य के बड़े खण्ड के अचरम द्रव्य अवगाहित प्रदेशों की अपेक्षा असंख्य प्रदेशात्मक है, अतः असंख्य अचरमांत प्रदेश है।

4. चरमांत प्रदेश- बाहरी अंतिम किनारे में रहे असंख्य खंड (खुणों) अवगाहित प्रदेशों की अपेक्षा। ये पृथ्वीयों के भेद विवक्षा से चरम अचरम आदि का कथन, उसके किनारे में आये प्रदेशों को छोड़कर शेष प्रदेशों से संबद्ध होने से एक अचरम द्रव्य रूप माना है, किनारे और बीच बीच में विदिशा आदि के कारण सम्बद्ध नहीं होने से अनेक चरम रूप गिना है। अलोक के चरमांत प्रदेशों में यहां उन्हीं अलोक के प्रदेशों को गिना गया है, जो लोक के चरमांत प्रदेशों से स्पर्श किये हैं। अलोक में भी 4 भंग है वहां असंख्य की जगह अनंत प्रदेश (आकाश) कहना।

अल्प बहुत्व (रत्न प्रभा से लोक तक की) 1. द्रव्य अपेक्षा- 1. सबसे थोड़ा एक अचरम द्रव्य (मध्यवर्ती 1 खंड) 2. उनसे चरम द्रव्य असंख्यात गुणा (किनारे के असंख्य खंड) 3. चरम अचरम द्रव्य विशेषाधिक (एक अचरम खण्ड मिल जाने से) **2. प्रदेशार्थ अपेक्षा से-** चरम अचरम प्रदेशों की अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़े चरमांत प्रदेश- किनारे के खण्ड अति सूक्ष्म होने से द्रव्य से तो अधिक हैं, परन्तु प्रदेश तो मध्य खंड में बहुत होते हैं। 2. अचरमांत प्रदेश असंख्यात गुणा- मध्य का एक अचरम खंड है, वह चरम खंडों के समूह की अपेक्षा से क्षेत्र से

अंख्यात गुणा बड़ा होने से, प्रदेश भी असंख्यात गुणा है। 3. उनसे चरमांत अचरमांत प्रदेश दोनों विशेषाधिक (अचरमांत प्रदेश राशि में चरमांत प्रदेश राशि शामिल करने से) **3. द्रव्य-प्रदेशार्थ (शामिल) अपेक्षा से-** चरम अचरम प्रदेशों की अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़ा एक अचरम द्रव्य 2. उनसे चरम द्रव्य असंख्यात गुणा 3. उनसे चरम अचरम द्रव्य दोनों विशेषाधिक 4. उनसे चरमान्त प्रदेश असंख्यात गुणा (असंख्यात खंड है, प्रत्येक खंड असंख्यात प्रदेशी एवं असंख्य प्रदेशावगाढ़ होने से) 5. उनसे अचरमांत प्रदेश असंख्यात गुणा 6. उनसे चरमांत अचरमांत प्रदेश दोनों विशेषाधिक। अलोक छोड़कर 34 बोलों की भी तीन-तीन ये अल्प बहुत्व कहना।

रत्नप्रभा पृथ्वी आदि चरम अचरम द्रव्य की अपेक्षा अल्प बहुत्व-

	विकल्प	प्रमाण	कारण
1.	अचरम	सबसे अल्प	मध्यवर्त्ती खंड एक है
2.	अनेक चरम	असंख्यात गुणा	पर्यंतवर्ती निष्कूट (खुणा) असंख्यात है।
3.	अचरम अनेक चरम	विशेषाधिक	चरम अचरम मिलकर एक ज्यादा हो गया
चरम अचरम प्रदेश की अल्प बहुत्व-			
1.	चरमांत प्रदेश	सबसे अल्प	खंड छोटे है।
2.	अचरमांत प्रदेश	असंख्यात गुणा	क्षेत्र असंख्यात गुणा। बड़ा है।
3.	चरमांत अचरमांत प्रदेश	विशेषाधिक	दोनों प्रकार के प्रदेशों की गणना साथ में है।
चरम अचरम की द्रव्य प्रदेश की शामिल अल्प बहुत्व-			
1.	अचरम द्रव्य	सबसे अल्प	मध्यवर्त्ती खंड एक है।
2.	अनेक चरम द्रव्य	असंख्यात गुणा	निष्कूट असंख्यात है।
3.	अचरम चरम द्रव्य	विशेषाधिक	अचरम चरम की गणना साथ में है
4.	चरमांत प्रदेश	असंख्यात गुणा	प्रत्येक चरमांत खंड असंख्यात है
5.	अचरमांत प्रदेश	विशेषाधिक	क्षेत्र असंख्यात गुणा बड़ा है
6.	चरमांत अचरमांत प्रदेश	विशेषाधिक	चरमांत अचरमांत प्रदेश की गणना साथ में है।
अलोक की तीन अल्प बहुत्व- **चरम अचरम द्रव्य की अपेक्षा अल्प बहुत्व**			
1.	अचरम	सबसे अल्प (तुल्य)	लोक के समीप निष्कूटों के सिवाय संपूर्ण अलोक एक रूप है।
2.	अनेक चरम	असंख्यात गुणा	लोक के समीप के अलोक के निष्कूट असंख्यात है
3.	अचरम चरम	विशेषाधिक	दोनों की गणना साथ है।
अलोक के चरम अचरम प्रदेश से अल्प बहुत्व-			
1.	चरमांत प्रदेश	सबसे कम	निष्कूट के क्षेत्र कम है।
2.	अचरमांत प्रदेश	अनंत गुणा	निष्कूट सिवाय का अलोक क्षेत्र अनंत गुणा बड़ा है।
3.	चरमांत अचरमांत प्रदेश	विशेषाधिक	दोनों की गणना साथ है।

अलोक के चरम अचरम द्रव्य-प्रदेश की शामिल अल्प बहुत्व-			
1.	अचरम	सबसे अल्प	एक खंड रूप है।
2.	अनेक चरम	असंख्यात गुणा	निष्कूट असंख्यात है
3.	अचरम-चरम	विशेषाधिक	दोनों की गणना साथ में है।
4.	चरमांत प्रदेश	असंख्यात गुणा	अलोक के प्रत्येक निष्कूट असंख्यात प्रदेशी है।
5.	अचरमांत प्रदेश	अनंत गुणा	निष्कूट के अतिरिक्त अलोक क्षेत्र अनंत है।
6.	चरमांत अचरमांत प्रदेश	विशेषाधिक	दोनों प्रकार के प्रदेशों की गणना साथ में है।
लोक अलोक की शामिल अल्प बहुत्व तीन (तीन)			
लोकालोक में चरम-अचरम द्रव्य की अपेक्षा-			
1.	लोक अलोक के अचरम द्रव्य	सबसे अल्प (तुल्य)	दोनों एक-एक अचरम खंड़ है। परस्पर तुल्य है।
2.	लोक के चरम द्रव्य	असंख्यात गुणा	लोक के पर्यंतवर्ती निष्कूट असंख्यात है।
3.	अलोक के चरम द्रव्य	विशेषाधिक	लोक से अलोक के निष्कूट विशेषाधिक है।
4.	लोकालोक के चरम अचरम द्रव्य	विशेषाधिक	उपरोक्त तीनों बोल शामिल हो जाने से।
लोकालोक में चरम अचरम प्रदेश की अपेक्षा से- अल्प बहुत्व-			
1.	लोक के चरमांत प्रदेश	सबसे अल्प	लोक के निष्कूटों का क्षेत्र छोटा है
2.	अलोक के चरमांत प्रदेश	विशेषाधिक	लोक से अलोक के निष्कूट क्षेत्र कुछ बड़े है।
3.	लोक के अचरमांत प्रदेश	असंख्यात गुणा	निष्कूट छोड़कर लोक का क्षेत्र असंख्यात गुणा बड़ा है।
4.	अलोक के अचरमांत प्रदेश	अनंत गुणा	निष्कूट के सिवाय अलोक क्षेत्र अनंत गुणा बड़ा है।
5.	लोकालोक के चरमांत अचरमांत प्रदेश	विशेषाधिक	उपरोक्त चारों बोलों की गणना साथ में है।
लोकालोक में चरम अचरम की द्रव्य प्रदेश से शामिल अल्प बहुत्व-			
1.	लोकालोक के अचरम द्रव्य	सबसे कम परस्पर तुल्य	दोनों एक-एक कुल दो खंड रूप हैं
2.	लोक के चरम द्रव्य	असंख्यात गुणा	लोक के निष्कूट असंख्यात है
3.	अलोक के चरम द्रव्य	विशेषाधिक	लोक से अलोक के निष्कूट विशेषाधिक है
4.	लोकालोक चरम अचरम द्रव्य	विशेषाधिक	उपरोक्त तीनों बोल की गणना शामिल है
5.	लोक के चरमान्त प्रदेश	असंख्यात गुणा	लोक के असंख्य निष्कूट असंख्यात प्रदेशी है
6.	अलोक के चरमान्त प्रदेश	विशेषाधिक	लोक से अलोक के निष्कूट अधिक हैं।
7.	लोक के अचरमांत प्रदेश	असंख्यात गुणा	लोकालोक के निष्कूटों से लोक का मध्य खंड असंख्यात गुणा बड़ा है
8.	अलोक के अचरमांत प्रदेश	अनन्त गुणा	क्षेत्र अनन्त गुणा बड़ा है
9.	लोकालोक के चरमांत अचरमांत प्रदेश	विशेषाधिक	उपरोक्त चारों का समावेश है
10.	सर्व द्रव्य	विशेषाधिक	धर्मास्तिकाय आदि पांच अजीव द्रव्यों का समावेश होता है
11.	सर्व प्रदेश	अनन्त गुणा	लोक की सीध सिवाय अलोक के प्रदेशों का समावेश
12.	सर्व पर्याय	अनन्त गुणा	सर्व द्रव्य सर्व प्रदेशों की अनंत अनंत अगुरू लघु आदि पर्यायें है।

परमाणु पुदगल में चरम अचरम और अवक्त्वय ये तीन बोल है। इनके एक वचन बहुवचन इनके असंयोगी 6, दो संयोगी 12 और तीन संयोगी 8 ये कुल 26 भंग होते हैं।

6 भंगों की परमाणु आदि में उपलब्धि-

क्र.	भंग का नाम	आकृति	विवरण
1.	एक चरम		एक प्रतर में दो आकाश प्रदेश पर दो से अनंत प्रदेशी तक के स्कंध
2.	एक अचरम	×	भंग नहीं बनता
3.	एक अवक्त्व्य		एक आकाश प्रदेश पर स्थित परमाणु से अनंत प्रदेशी स्कंध
4.	अनेक चरम	×	भंग नहीं बनता
5.	अनेक अचरम	×	भंग नहीं बनता
6.	अनेक अवक्त्व्य	×	भंग नहीं बनता

7.	एक चरम एक अचरम		एक प्रतर में पांच आकाश प्रदेश पर पांच प्रदेशी से अनंत प्रदेशी स्कंध
8.	एक चरम अनेक अचरम	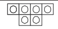	एक प्रतर में 6 आकाश प्रदेश पर 6 से अनंत प्रदेशी स्कंध
9.	अनेक चरम एक अचरम		एक प्रतर में तीन आकाश प्रदेश पर तीन से अनंत प्रदेशी स्कंध
10.	अनेक चरम अनेक अचरम		एक प्रतर में 4 आकाश प्रदेश पर चार से अनंत प्रदेशी स्कंध
11.	एक चरम तक अवक्तव्य		दो प्रतर में तीन आकाश पर तीन से अनंत प्रदेशी स्कंध
12.	एक चरम अनेक अवक्तव्य		तीन प्रतर में 4 आकाश प्रदेश पर 4 से अनंत प्रदेशी स्कंध
13.	अनेक चरम एक अवक्तव्य		तीन प्रतर में 5 आकाश प्रदेश पर 5 से अनंत प्रदेशी स्कंध
14.	अनेक चरम अनेक अवक्तव्य		4 प्रतर में 6 आकाश प्रदेश पर 6 से अनंत प्रदेशी स्कंध
15.	एक अचरम एक अवक्तव्य	×	भंग नहीं बनता
16.	एक अचरम अनेक अवक्तव्य	×	भंग नहीं बनता
17.	अनेक अचरम एक अवक्तव्य	×	भंग नहीं बनता
18.	अनेक अचरम अनेक अवक्तव्य	×	भंग नहीं बनता
19.	एक चरम, एक अचरम, एक अवक्तव्य	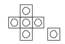	दो प्रतर में 6 आकाश प्रदेश पर 6 प्रदेशी से अनंत प्रदेशी तक
20.	1 चरम 1 अचरम अनेक अवक्तव्य	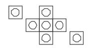	तीन प्रतर में 7 आकाश प्रदेश पर 7 प्रदेश से अनंत प्रदेशी स्कंध
21.	1 चरम अनेक अचरम 1 अवक्तव्य	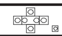	दो प्रतर में 7 आकाश प्रदेश पर 7 से अनंत प्रदेशी स्कंध
22.	1 चरम अनेक अचरम अनेक अवक्तव्य	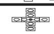	तीन प्रतर में 8 आकाश प्रदेश पर 8 से अनंत प्रदेशी स्कंध
23.	अनेक चरम 1 अचरम 1 अवक्तव्य		दो प्रतर में 4 आकाश प्र. पर 4 प्रदेश से अनंत प्रदेशी स्कंध
24.	अनेक चरम 1 अचरम अनेक अवक्तव्य	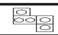	तीन प्रतर में पांच आकाश प्र. पर स्थित पांच प्रदेशी से अनंत प्रदेशी स्कंध
25.	अनेक चरम अनेक अचरम एक अवक्तव्य	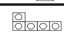	दो प्रतर में 5 आकाश प्र. पर स्थित 5 प्रदेशी से अनंत प्रदेशी स्कंध
26.	अनेक चरम अनेक अचरम अनेक अव.	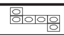	तीन प्रतर में 6 आकाश प्रदेश पर स्थित 6 से अनेक प्रदेशी स्कंध

चरम अचरम अवक्त्व्य के इन 26 भंगों में से 8 भंग शून्य है दूसरा, चौथा, पांचवा, छठा, पन्द्रहवां, सौलहंवा, सतरहवां, अठारहवां। शेष 18 भंग आठ प्रदेशों आदि सभी स्कंधों में पाये जाते हैं। परमाणु द्विप्रदेशी आदि जितने प्रदेशावगाढ़ हो सकते हैं, यथा संभव उतने भंग समझना।

1. परमाणु में 1 तीसरा भंग 2. द्विप्रदेशी में दो (पहला, तीसरा) भंग 3. तीन प्रदेशी में 4 भंग- पहला, तीसरा, नवमां, ग्यारहवां। 4. प्रदेशी स्कंध में- 7 (1, 3, 9, 10, 11, 12, 23) 5. पांच प्रदेशी स्कंध में- 11 भंग (1, 3, 7, 9, 10, 11, 12, 13, 23, 24, 25) (7, 13, 24, 25 नये) 6. 6 प्रदेशी स्कंध में- 15 भंग (1, 3,7 ,8, 9, 10, 11, 12, 13, 14, 19, 23, 24, 25, 26) (8, 14, 19, 26 नये) 7. 7 प्रदेशी स्कंध में 17 (1, 3, 7, 8, 9, 10, 11, 12, 13, 14, 19, 20, 21, 23, 24, 25, 26) 20-21 नया 8. आठ प्रदेशी स्कंध में 18 (पूर्वोक्त 17 और एक 22वां) 22 वां नया। दूसरा, चौथा, पांचवां, छठा, पन्द्रहवां, सौलहवां, सतरहवां, अठारहवां ये 8 भंग शून्य है कहीं नहीं बनते हैं।

क्रमांक	भंगांक	भंग का नाम	शून्यता का कारण
1	दूसरा	एक अचरम	चरम के बिना अचरम (मध्यम) नहीं होते
2	चौथा	अनेक चरम	बीच के अचरम बिना केवल अनेक चरम नहीं होते
3	पांचवा	अनेक अचरम	चरम बिना अनेक अचरम भी नहीं होते
4	छठा	अनेक अवक्तव्य	चरम या अचरम बिना केवल अनेक अवक्तव्य संभव नहीं
5 से 8	15 से 18	अचरम अवक्तव्य के संयोगी 4 भंग	चरम बिना अचरम (मध्यम) नहीं होते, इसलिए चरम रहित केवल अचरम और अवक्तव्य के संयोग वाले चारों भंग नहीं होते

नोट : कम प्रदेशी में पाया जाने वाला भंग अधिक प्रदेशी में अवश्य पाया जाता है। उपरोक्त भंगों में जिनमें अवक्तव्य, है, उन भंगों में अवक्तव्य के प्रदेश को टीकाकार विश्रेणी (विदिशा की श्रेणी) में स्थापित करते है, परन्तु विश्रेणी में रहा हुआ एक परमाणु रूप अवक्तव्य से दूसरे परमाणु का स्पर्श नहीं होता, क्योंकि परमाणु तो ''सव्वेणं सव्वं फुसइं'' होता है। भगवती शतक 8 उद्देशक 9 में आठ रूचक प्रदेशों के तीन-तीन प्रदेशों का ही स्पर्श बताया है, विश्रेणी का स्पर्श नहीं माना है। अतः चरम के साथ अवक्तव्य की स्थापना ऊपर या नीचे की श्रेणी या प्रतरान्तर में करनी चाहिए। विषम श्रेणी का अर्थ सम श्रेणी के ऊपर या नीचे की श्रेणी समझनी, विदिशा की नहीं समझनी चाहिए।

संस्थान : संस्थान 5 हैं- 1. परिमंडल 2. वृत्त 3. त्र्यंस्र 4. चतुरस्र 5. आयत। इन पांचों संस्थान के संख्यात, असंख्यात और अनंत प्रदेश। इन पांचों के 5-5 प्रकार हैं- 1. संख्यात प्रदेशी संख्यात प्रदेशावगाढ़ 2. असंख्यात प्रदेशी संख्यात प्रदेशावगाढ़ 3. असंख्यात प्रदेशी असंख्यात प्रदेशावगाढ़ 4. अनंत प्रदेशी संख्यात प्रदेशावगाढ़ 5. अनंत प्रदेशी असंख्यात प्रदेशावगाढ़। ये कुल 5×5=25 संस्थानों के प्रकार हैं। इन 25 बोल में चरमादि 6 बोल की रत्न प्रभा की तरह वक्तव्यता है। द्रव्यादेश से 6 ही बोल का निषेध है, विभागादेश से 4 विकल्प है उनकी अल्पबहुत्व है। संख्यात प्रदेशावगाढ़ में असंख्यात गुणा के स्थान पर संख्यात गुणा कहना। असंख्यात प्रदेशावगाढ़ में पूर्णतया रत्नप्रभा के समान है। अनंत प्रदेशी असंख्यात प्रदेशी के समान है, यानि वह क्षेत्रापेक्षया (अवगाहना की अपेक्षा) समान है। द्रव्यापेक्षा द्रव्य अनंत गुणे कहना। जैसे- सबसे थोड़ा एक अचरम उससे चरम असंख्यात गुणे (क्षेत्रापेक्षा) द्रव्यापेक्षा चरम द्रव्य अनंत गुणे हैं। उससे चरम और अचरम द्रव्य मिलकर विशेषाधिक है। इसी प्रकार सभी संस्थानों के चरमाचरम भंग और उनकी अल्प बहुत्व समझना।

गति आदि में चरम अचरम दो पदों की वक्तव्यता- एक नैरयिक की अपेक्षा कदाचित् चरम कदाचित् अचरम है, बहुवचन में बहुत नैरयिकों की अपेक्षा चरम भी है अचरम भी है। गति आदि 11 बोल होते हैं। 1. गति 2. स्थिति 3. भव 4. भाषा 5. श्वासोश्वास 6. आहार 7. भाव 8. वर्ण 9. गंध 10. रस 11. स्पर्श। इन 11 बोलों की अपेक्षा नरकादि 24 दंडक में एक जीव और अनेक जीव के चरम भी होते हैं अचरम भी होते हैं। 5 स्थावर में भाषा का बोल नहीं होता 19 दंडक में होता है। वहां चरम अचरम होते हैं। यानि नारकी जीव गति की अपेक्षा चरम भी है अचरम भी है, यावत् स्पर्श की अपेक्षा चरम भी अचरम भी। इसी तरह भवनपति देव गति की अपेक्षा चरम भी अचरम भी यावत् स्पर्श की अपेक्षा चरम भी अचरम भी है।

23. भाषा पद (पन्नवणा सूत्र पद 11) वस्तु तत्त्व का बोध कराने वाली भाषा होती है। 18 द्वार बताये हैं-

1. आदि द्वार- जीव के प्रयत्न विशेष के बिना वस्तु तत्त्व का बोध उत्पन्न कराने वाली भाषा संभव नहीं, भाषा की आदि जीव से है, यानि भाषा का मूल कारण जीव है।

2. उत्पत्ति द्वार- भाषा की उत्पत्ति औदारिक, वैक्रिय और आहारक शरीर से होती है।

3. संस्थान द्वार- वज्र आकार का संस्थान है, भाषा के द्रव्य सारे लोक में व्याप्त है, अतः लोक वज्र के समान है। (डमरू)

4. पर्यवसित द्वार- भाषा के पुद्गल लोकांत तक जाते हैं, आगे धर्मास्तिकाय नहीं होती अतः आगे नहीं जाते। विशिष्ट व्यक्ति द्वारा बोले भाषा पुद्गल लोकांत तक जाते हैं, नहीं तो संख्यात, असंख्यात योजन तक जाकर नष्ट हो जाते हैं। पर्यवसित यानि अवसान (अंत)।

5. द्रव्य द्वार- जीव भाषा रूप में अनंत प्रदेशी पुदगल स्कंधों को ग्रहण करता है।

6. क्षेत्र द्वार- क्षेत्र से असंख्यात आकाश प्रदेश पर रहे (अवगाहित) पुद्गल स्कंधों को ग्रहण करता है।

7. काल द्वार- एक समय, यावत 10 समय संख्यात असंख्यात समय की स्थिति वाले पुद्गल भाषा रूण ग्रहण किये जाते हैं।

8. भाव द्वार- वर्ण गंध रस और स्पर्श वाले पुद्गल भाषा रूप ग्रहण किये जाते हैं। ग्रहण योग्य द्रव्यों की अपेक्षा 1 वर्ण यावत् 5 वर्ण वाले पुद्गल ग्रहण किये जाते हैं। काले वर्ण के ग्रहण किये जाते हैं, वे 1 गुण यावत् अनंत गुण काले होते हैं, इसी प्रकार 5 वर्ण का

समझना और गंध में 2 गंध और रस में 5 रस का समझना। स्पर्श की अपेक्षा एक नहीं दो, तीन चार स्पर्श (उष्ण, शीत, स्निग्ध, रूक्ष) वाले पुद्गल ग्रहण किये जाते हैं, शेष 4 नहीं। ये गुण में अनंत गुण शीत आदि चारों में समझना। 5 वर्ण 2 गंध 5 रस 4 स्पर्श ये 16 बोल एक गुण यावत् अनंत गुण समझना। भाषा वर्गणा के पुद्गल जो जीव के स्पर्श में है अर्थात् जिस शरीर में आत्मा है, उस शरीर से स्पर्शित अवगाहित है उन्हें ग्रहण किया जाता है, अनवगाढ़ या अस्पर्शित को नहीं। अवगाहित में भी कंठ होठ के निकटतम है अनंतर है उन्हें ग्रहण किया जाता है, परम्पर को नहीं। अनन्तर अणु बादर पुद्गल ऊपर नीचे तिर्च्छे नियमतः छहों दिशाओं के ग्रहण किये जाते हैं। अन्तर्मुहुर्त तक ग्रहण योग्य होते हैं, प्रथम द्वितीय आदि समयों में अन्त समय में भी ग्रहण होते हैं। श्रोत्रेन्द्रिय के विषय होने से क्रम से समीप को पहले यों ग्रहण किये जाते हैं। सान्तर भी और निरंतन भी ग्रहण करता है, अन्तर जघन्य एक समय उत्कृष्ट असंख्याता समय हो सकता है। निकालता है तब सान्तर निकालता है निरन्तर नहीं। पहले समय में ग्रहण करता है, दूसरे समय में निस्सरण होता है। जब निरंतर ग्रहण करता है तो लगातार असंख्य समय तब बिना व्यवधान ग्रहण करता है। भाषा रूप ग्रहण किये को सांतर निकालता है, निरंतर नहीं। जघन्य दो समय के अन्तर से उत्कृष्ट अन्तर्मुहुर्त्त अन्तर से निकालता है। एक समय में एक ही क्रिया होती है दो नहीं इसी प्रकार प्रथम समय में केवल ग्रहण अंतिम समय में केवल निस्सरण बीच के समयों में ग्रहण निस्सरण दोनों होते हैं एक समय में योग्य अनेक क्रियायें हो सकना जिनानुमत है। एक समय में उपयोग एक ही होता है। मिथ्यात्व और सम्यक्त्व ऐसी विरोधी क्रियाएं एक साथ नहीं होती। किन्तु कई प्रकृतियों का बंध, उदय, उदीरणा, निर्जरा विभिन्न क्रियाएं होती रहती है। भाषा रूप ग्रहण पुद्गलों को भिन्न और अभिन्न रूप से निकालता है। भिन्न निकालता है तो अनंत गुण वृद्धि से बढ़ते हुए लोकान्त तक स्पर्श करते हैं, अभिन्न निकालते हैं तो असंख्यात अवगाहना वर्गणा तक जाकर भिन्न हो जाकर वे संख्यात योजन जाकर नष्ट हो जाते हैं।

इस तरह द्रव्य का 1 क्षेत्र का 1 काल के 12 वर्णादि के 16×13=208 और स्पृष्ट आदि 18 (स्पृष्ट, अवगाढ़, अनन्तरावगाढ़, अणु, बादर, ऊँची, नीची, तिर्च्छि, आदि, मध्य, अंत, आनुपूर्वी, 6 दिशा, सांतर, निरंतर ग्रहण, सांतर निस्सरण, भिन्न, अभिन्न निकालना) ये कुल 240 भेद बोल हुए।

9. दिशा द्वार– नियमतः 6 दिशा के भाषा पुद्गल ग्रहण किये जाते हैं।

10. स्थिति द्वार– जघन्य 1 समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहुर्त भाषा की स्थिति होती है।

11. अन्तर द्वार– जघन्य अन्तर्मुहुर्त उत्कृष्ट अनंत काल का है

12. ग्रहण द्वार– जीव काययोग से भाषा पुद्गल ग्रहण करता है।

13. निस्सरण द्वार– वचन योग से भाषा पुद्गल निस्सरण करता है।

14. ग्रहण-निस्सरण द्वार– पहले समय में ग्रहण करता है आगे दूसरे आदि समयों में भी ग्रहण करता है, निकालता भी है, अन्त समय में सिर्फ निकालता है। जघन्य दो समय उत्कृष्ट असंख्यात समय प्रमाण अन्तर्मुहुर्त तक ग्रहण निस्सरण करता है। भाषा पुद्गलों को निकालना भिन्न अभिन्न 5 प्रकार से कहा है-

1. खंड भेद– लोहा, ताम्बा, चांदी, सोना आदि के खंड होने की तरह 2. **प्रतर भेद–** बांस, बेंत, कदली, भोडल (अभ्रक) आदि के भेद की तरह **3. चूर्ण भेद–** पीसे हुए पदार्थों की तरह चूर्ण बन जाना। **4. अनुतटिका भेद–** जल स्थानों के सूख जाने पर मिट्टी में तिराड़े पड़ जाने के समान **5. उक्करिया भेद–** मसूर, मूंग, उड़द, तिल, चवला आदि की फलियां फटने के भेद समान। **अल्प बहुत्व–** 1. सबसे थोड़े उत्कटिका भेद से भिन्न हुए द्रव्य 2. अनुतटिका भेद से भिन्न अनंत गुणा 3. चूर्णिका भेद भिन्न हुए द्रव्य अनंत गुणा 4. प्रतर भेद से भिन्न हुए द्रव्य अनंत गुणा 5. खंड भेद से भिन्न हुए द्रव्य अनंत गुणा।

15. नाम द्वार– भाषा के 4 भेद- 1. सत्य भाषा 2. असत्य भाषा 3. मिश्र (सत्यामृषा) 4. व्यवहार भाषा

1. सत्य भाषा–

जणवय सम्मत ठवणा, नामे रुवे पडुच्च सच्चेय।
ववहारे भाव जोगे, दसमे ओवम्म सच्चेय ॥

10 प्रकार की सत्य भाषा है-

1. जनपद सत्य– देश विदेश की अपेक्षा इष्ट अर्थ कराने वाली कोंकण में पानी को ''पिच्च'' कहते हैं।

2. सम्मत सत्य– लोक सम्मत जो सत्य रूप प्रसिद्ध है, जैसे- पंकज = कमल। मेंढक को नहीं कहते।

3. स्थापना सत्य–जो भी नाम रख दिया शतरंज के मोहरों को हाथी घोड़ा आदि। एक अंक के आगे दो शून्य से सौ, तीन शून्य से हजार आदि। आकृति बनाकर चारभुजा आदि।

4. नाम सत्य- गुण हो या नहीं नाम रख दिया, महावीर, लक्ष्मी, कुलवर्द्धन आदि।

5. रूप सत्य- रूप, वेश देखकर बहुरूपीया जिस वेश में हो वह कहना।

6. प्रतीत्य (अपेक्षा) सत्य- किसी पदार्थ को अन्य किसी की अपेक्षा छोटा कहना, दूसरे की अपेक्षा बड़ा हो सकता है। कनिष्ठा (अंतिम) अंगुली से अनामिका बड़ी है, मध्यमा से छोटी है। एक ही पिता की अपेक्षा पुत्र, पुत्र से पिता।

7. व्यवहार सत्य- गांव आ गया, पहाड़ जल रहा है। वास्तव में गांव चलता नहीं है, पहाड़ के घास आदि जलते हैं।

8. भाव सत्य- जो भाव गुण प्रमुखता से पाया जाता है, उसे उसी से पुकारना। कोयल काली है, तोता हरा है।

9. योग सत्य- दंड रखने वाले को दंडी कहना आदि, संबंध की अपेक्षा सत्य।

10. उपमा सत्य- सिंह के समान शौर्य वाले को केसरी, मन को घोड़ा आदि, 1. सत् को सत् की, 2. सत् को असत् की, 3. असत् को सत् की 4. असत् को असत् की उपमा देना।

2. असत्य भाषा के 10 भेद-

कोहे, माणे, माया, लोभे, पिज्जे तहेव दोसे य।
हास भय अक्खाइय, उवघाइय, णिस्सिया दसमा ॥

क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रेम (राग), द्वेष, हास्य, भय, इन आठ के वशीभूत होकर विभावों के अधीन होकर जो असत्य भाषण किया जाता है, वह क्रमशः क्रोध असत्य यावत् भय असत्य है। 9. कथा, घटना आदि का वर्णन करते अतिशयोक्ति वश वर्णन आख्यायिक निःसृत असत्य है 10. दूसरों के हृदय को चोट पहुंचाने के लिए वचन प्रयोग तुम चोर हो आदि उपघात (निःसृत) असत्य है।

3. मिश्र भाषा के 10 भेद- 1. उत्पन्न (जन्म) 2. विगत (मरण) 3. उत्पन्न विगत (जन्म मरण) की संख्या के संबंध में कुछ सत्य कुछ असत्य वचन कहना, जैसे- 10 बालक जन्मे, इनमें कम ज्यादा हो सकते हैं। 4. जीव 5. अजीव 6. जीवाजीव के संबंधी सत्या सत्य कथन कहना, जैसे- कोई धान लाया देखकर धनेरिया और कंकर देखा कहा जीव ही जीव उठा लाया, जीव से सत्य अजीव से असत्य इस प्रकार। 7. अनंत 8. प्रत्येक संबंधी मिश्र भाषा का प्रयोग पत्ते के साथ मूले को देख यह अनंतकाय है आदि। 9. अद्धा 10. अद्धद्धा (काल और कालांश) संबंधी मिश्रित

दिन रहते कहना उठ रात हो गई, रात्रि रहते उठ दिन उग गया, पौरसी के समय उठो दोपहर हो गया आदि। इसी प्रकार सभी को इनमें समावेश करें।

4. व्यवहार भाषा के 12 भेद-

आमंतणी, आणमणी, जायणी तह पुच्छणीय पण्णवणी।
पच्चक्खाणी भासा, भासा इच्छाणु लोमाय ॥1॥
अणभिग्गहिया भासा, भासाय अभिग्गहम्मि बोद्धव्वा।
संसय करणी भासा, वोगडा अव्वोगडा चेव ॥2॥

1. संबोधन सूचन वचन (हे देव दत्त!) 2. आदेश वचन (उठो, जाओ) 3. किसी वस्तु के मांगने रूप वचन (याचनी) 4. प्रश्न पूछने रूप वचन (पृच्छनी) 5. उपदेश रूप वचन (प्रज्ञापनी) तत्त्व रूप वचन 6. व्रत प्रत्याख्यान प्रेरक वचन (प्रत्याख्यानी) 7. सुखप्रद अनुकूल वचन (इच्छानुलोमा) जैसी इच्छा 8. अनिश्चयकारी वचन सलाह वचन जो देखो सो करो (अनभिगृहीता) 9. निश्चयकारी सलाह सूचन (अभिगृहीता) 10. अनेकार्थक संशयोत्पादक वचन (संशयकरणी) 11. स्पष्टार्थक (व्याकृता-वोगडा) 12. गूढ़ार्थक (अव्याकृता)।

इस प्रकार विविध प्रसंगोपात अनेक प्रकार की भाषा बोली जाती है। समुच्चय भाषा के 20 अलावा- समुच्चय जीव और 19 दंडक (स्थावर कम)। व्यवहार भाषा के 20 अलावा। सत्य, असत्य, मिश्र के 17-17 (समुच्चय और 16 दंडक) (विकलेन्द्रिय कम) से 17×3=51 हुए। ये 20+20+51=91 अनेक जीव की अपेक्षा भी 91 ये 182 हुए। 240 बोल भाषा के रूप में ग्रहण करते हैं कुल 182×240=43680 अलावा हुए।

16. कारण द्वार- ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, अन्तराय के क्षयोपशम, मोहनीय के उदय और वचन योग से असत्य और मिश्र भाषा बोलते हैं। छद्मस्थता, पूर्ण ज्ञान के अभाव में, अनाभोग से बोली जाती है। घातीकर्म के क्षयोपशम और वचन योग से सत्य और व्यवहार भाषा बोलते हैं। काय योग से पुद्गल ग्रहण करके वचन योग से निकालते हैं।

17. पर्याप्त द्वार- प्रति नियत रूप से जिसका निश्चय हो सके, वह पर्याप्त भाषा है। सत्य और मृषा भाषा पर्याप्त भाषा है। जिसका प्रतिनियत रूप से निश्चय नहीं हो वह अपर्याप्त भाषा है। मिश्रभाषा, व्यवहार भाषा अपर्याप्त भाषा है।

18. अल्प बहुत्व द्वार- 1. सबसे थोड़े सत्य भाषा वाले 2. मिश्र भाषा वाले असंख्यात गुणा। 3. असत्य भाषी असंख्यात गुणा 4. व्यवहार भाषा वाले असंख्यात गुणा 5. अभाषक अनंत गुणा

24. बद्ध मुक्त शरीर (पन्नवणा 12वां पद)- चार गति में भ्रमण करने वाले सशरीरी जीव होते हैं। शरीर रहित बने हुए निज आत्म स्वरूप को प्राप्त सदा के लिए संसार से मुक्त हो जाते हैं। संसार में रहने वाले जीवों के एक ही या एक समान शरीर नहीं होता विभिन्न होता है, ये 5 है- औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस और कार्मण। नरक और देव 14 दंडक के तीन शरीर होते हैं- वैक्रिय, तैजस कार्मण। 4 स्थावर तीन विकलेन्द्रिय के तीन-औदारिक, तैजस, कार्मण। वायुकाय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय के आहारक के सिवाय 4 शरीर, मनुष्य में पांचों शरीर होते हैं। **बद्ध मुक्त-** ये शरीर दो तरह के होते हैं। वर्त्तमान में जीव जिन शरीरों को ग्रहण किये हुए हैं, वे बद्ध, और पहले के भवों में जीव ने जिन शरीरों को छोड़ दिया (शरीर रूप धारण किये हैं अन्य रूप नहीं हुए) वे मुक्त शरीर।

औदारिक बद्ध मुक्त शरीर- 1. बद्ध- समुच्चय जीव के बद्ध औदारिक शरीर असंख्यात है। काल माप से असंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी तुल्य है इतने ही बद्ध औदारिक शरीर है। क्षेत्र की अपेक्षा संपूर्ण लोक का जितना क्षेत्र है वैसे असंख्यात लोक जितने क्षेत्र के आकाश प्रदेशों की संख्या के तुल्य है। 2. मुक्त (मुक्केलग) जीव से छूटे हुए औदारिक शरीर अनंत है यानि आत्मा से छूटते ही एक शरीर के अनंत विभाग हो जाते हैं इसीलिए बद्धेलग असंख्य कहे और मुक्केलग अनंत कहे हैं। ये जब तक अन्य परिणाम को प्राप्त नहीं हो जाते तब तक पूर्व शरीर के मुक्केलग ही गिने जाते हैं। ऐसे औदारिक के मुक्केलग संख्या से अनंत है, काल माप की अपेक्षा अनंत उत्सपिर्णी के समय तुल्य है। क्षेत्र माप की अपेक्षा लोक जितने अनंत आकाश प्रदेश हों उसके तुल्य है। एवं द्रव्य माप की अपेक्षा ये शरीर अभव्यों की संख्या से अनंत गुणे और सिद्धों की संख्या के अनंतवें भाग जितने होते हैं।

वैक्रिय बद्ध मुक्त शरीर- वैक्रिय बद्धेलक- शरीर संख्या से असंख्य, काल से असंख्य उत्सर्पिणी अवसर्पिणी के समय तुल्य। क्षेत्र से 14 रज्जू लोक को घन करने से 343 रज्जू प्रमाण होता है उसमें 7 रज्जू लम्बी मुक्तावली की तरह एक आकाश प्रदेश की पंक्ति को श्रेणी समझें ऐसी असंख्य श्रेणियों में उस घन जैसे असंख्य प्रतर होते हैं, एक-एक प्रतर में असंख्य श्रेणियों में 7 राजू प्रमाण एक श्रेणी में असंख्य आकाश प्रदेश होते हैं। वे भी असंख्य उत्सर्पिणी अवसर्पिणी के समय तुल्य होते हैं। ये बद्धेलक ऐसी असंख्य श्रेणियों के प्रदेश तुल्य होते हैं। ये असंख्य श्रेणियां उस प्रतर की श्रेणियों के

असंख्यातवें भाग जितनी समझना। यानि सूचि (एक प्रदेशी) प्रतर से असंख्यातवें भाग की असंख्य श्रेणियों के आकाश प्रदेश के तुल्य ये बद्धेलक होते हैं।

मुक्केलक- शरीर संख्या से अनंत है, इनका स्वरूप द्रव्य क्षेत्र काल के कथन की अपेक्षा औदारिक के मुक्केलग के समान है यानि अनंत का कथन सभी अपेक्षाओं में समान होने पर भी अनंत अनंत में आपस में अन्तर हो सकता है। अतः औदारिक के मुक्केलग से ये कम होते हैं।

आहारक बद्ध मुक्त शरीर- लब्धिधारी मुनिराज के ही यह शरीर होता है अतः आहारक के बद्धेलग कभी होते हैं, कभी नहीं होते। जब होते है तो जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट अनेक हजार हो सकते हैं, यानि 15 क्षेत्रों में आहारक शरीर बनाने वाले मुनिराजों का संयोग मिल जाय तो उत्कृष्ट 2 से 9 हजार हो सकते हैं।

मुक्केलग- अनंत होते हैं, क्षेत्रकाल आदि का कथन औदारिक के समान, परन्तु ये औदारिक से बहुत कम होते हैं।

तैजस कार्मण के बद्धमुक्त शरीर- तैजस कार्मण दोनों साथ रहते हैं, मोक्ष जाने पर छूट जाते हैं। बद्धेलक- अनंत है, क्षेत्रादि का कथन औदारिक मुक्केलग के समान है, किन्तु द्रव्य माप की अपेक्षा सर्व संसारी जीवों के तुल्य है, सिद्धों से अनन्त गुणे हैं, और सर्व जीवों के अनंतवे भाग (सिद्ध जितने) कम हैं। मुक्केलग- भी अनंत है अनंत का क्षेत्र काल माप इसके ही बद्धेलग के समान है। द्रव्य माप की अपेक्षा सर्व जीवों की संख्या से अनंत गुणा है, एवं सर्व जीवों की संख्या का वर्ग किया जाये तो उस वर्ग राशि के अनंतवे भाग तुल्य तैजस कार्मण के मुक्केलग शरीर हैं। एक संख्या को उसी से गुणा करने पर वर्ग होता है $4 \times 4 = 16$ यह संख्या 4 का वर्ग है, इसी तरह जीव संख्या को उसी से गुणा करने पर जीव का वर्ग होता है। जैसे अनंत जीव = 10 हजार तो $10 \times 10 = 10$ करोड़ मुक्त तैजस कार्मण असत् कल्पना से 10 लाख है, इसीलिए सभी जीवों से 100 गुणा और जीव वर्ग का 100वां भाग है। अतः जीव वर्ग के अनन्तवें भाग कहे हैं।

समुच्चय जीव और 24 दंडक के मुक्त शरीर पांच-पांच गिनने से 125 होते हैं, इनमें समुच्चय जीव तथा वनस्पति के मुक्त तैजस कार्मण के सिवाय 121 एक समान जानना यानि ये 121 मुक्त शरीर उपरोक्त मुक्त औदारिक शरीर की तरह अभव्यों से अनंत गुणे और सिद्धों के अनंतवे भाग है। समुच्चय जीव के मुक्त तैजस कार्मण शरीर

तथा वनस्पति के मुक्त तैजस कार्मण शरीर सभी जीवों से अनंत गुणे और सिद्धों से अनंतवे भाग है।

24 दंडक के बद्ध मुक्त शरीर- नारकी- औदारिक आहारक के बद्धेलग नहीं होते, मुक्केलग समुच्चय वत्। वैक्रिय शरीर से बद्धेलग असंख्यात हैं, घनीकृत लोक प्रतर के असंख्यातवें भाग की असंख्य श्रेणियों के प्रदेश तुल्य। उन श्रेणियों का माप एक अंगुल जितने श्रेणी क्षेत्र में जितने आकाश प्रदेश होते हैं, उनका प्रथम वर्गमूल जो भी हो उसे दूसरे वर्गमूल से गुणा करने से जो गुणन फल आवे उतनी (असंख्य) श्रेणियां समझना। कल्पित संख्या से एक अंगुल क्षेत्र में 256 श्रेणी है उसका प्रथम वर्गमूल 16 हुआ दूसरा 4 अब 16 को 4 से गुणा से 64 हुआ। इसी प्रकार असंख्य गुणनफल आयेगा। वैक्रिय के मुक्केलग औदारिक के मुक्केलग के समान है। आहारक के बद्धेलग मुक्केलग औदारिक के समान। तैजसकार्मण के बद्धेलग मुक्केलग वैक्रिय के समान है।

भवनपति देव- औदारिक आहारक नारकी के समान। वैक्रिय के बद्धेलग नारकी के समान है, किन्तु श्रेणियों का माप प्रथम वर्गमूल का संख्यातवां भाग कहना, जैसे 256 का प्रथम 16 है इसकी संख्यातवां 5-6 आदि है इसके समान असंख्य श्रेणियां है यानि नारकी से असुर कुमार 64/5 इतने कम हैं। मुक्केलग नारकी के समान एवं तैजस कार्मण के बद्धेलग मुक्केलग वैक्रिय के समान।

पांच स्थावर- इनके औदारिक, तैजस, कार्मण के बद्धेलग मुक्केलग औदारिक (समुच्चय) के समान है। वैक्रिय और आहारक के बद्धेलग नहीं होते, मुक्केलग इनके औदारिक के समान है। वायुकाय के वैक्रिय के बद्धेलग क्षेत्र पल्योपम के असंख्यातवें भाग के समय तुल्य असंख्यात होते हैं। मुक्केलग समुच्चय वैक्रिय के समान है।वनस्पतिकाय में तैजस कार्मण के बद्धेलग समुच्चय के तैजस कार्मण जैसे अनंत, मुक्केलग भी अनंत है।

तीन विकलेन्द्रिय- औदारिक के बद्धेलग असंख्य है। घनीकृत लोक प्रतर के असंख्यातवें भाग की असंख्य श्रेणी के प्रदेश तुल्य। **असंख्य श्रेणी का माप** 1. असंख्यात क्रोडाक्रोड़ योजन में जितनी श्रेणियां होवे, उतनी श्रेणियों के प्रदेश तुल्य बेइन्द्रिय है। 2. एक श्रेणी (एक प्रदेशी) में जितने आकाश प्रदेश हैं उनके वर्गमूल के वर्गमूल निकालते जावें असंख्याता बार वर्गमूल निकलेंगे, असंख्य बार के सभी वर्गमूलों की संख्या का जो योग आता है, उतनी श्रेणियां जानना, 3. अंगुल के असंख्यातवें भाग जितने लंबे चौड़े क्षेत्र में एक-एक बेइन्द्रिय रखा जाय तो सात रजू लम्बा चौड़ा प्रतर भर जाता है। असत् कल्पना से श्रेणी में असंख्यात प्रदेश 65536

प्रदेश मानें प्रथम वर्गमूल 256, दूसरा 16 तीसरा 4, चौथा 2 है, ये कुल 278 हुए। इस प्रकार जो संख्या आवे वह प्रमाण सूचि। तैजस कार्मण औदारिक के समान है। वैक्रिय आहारक के बद्धेलग नहीं होते, मुक्केलग समुच्चय औदारिक के समान है। त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय का बेइन्द्रिय के समान कहना विशेष यह कि असंख्यात योजन क्रोड़ा क्रोडी योजन क्षेत्र अधिक बेइन्द्रिय से तेइन्द्रिय और तेइन्द्रिय से चौरेन्द्रिय में भी यों ही अधिक लेना।

तिर्यंच पंचेन्द्रिय- विकलेन्द्रिय के समान ही पंचेन्द्रिय के बद्धेलग है, मुक्केलग भी पूर्वोक्त है। आहारक शरीर नहीं है। तैजस कार्मण के बद्धेलग मुक्केलग इसके औदारिक के समान। एक श्रेणी के प्रदेशों के प्रथम वर्गमूल के असंख्यातवें भाग में जितने आकाश प्रदेश हों उतने वैक्रिय शरीर के बद्धेलग होते हैं। मुक्केलग समुच्चय के समान है। (भवनपति में संख्यातवां भाग कहा यहां असंख्यातवां कहना)।

मनुष्य- औदारिक शरीर के बद्धेलग कदाचित् संख्याता, कदाचित् असंख्याता होते हैं। जब असन्नी का विरह पड़ता है तो संख्यात (गर्भज) विरह नहीं हो तो (दोनों मिलकर) असंख्यात होते हैं। संख्याता का माप- 1. संख्याता क्रोड़ा क्रोड 2. तीन यमल पद से ऊपर 4 यमल पद से नीचे 3. पांचवे वर्गमूल से गुणा किया छठा वर्गमूल की राशि 4. 2 को 2 से 96 बार गुणा करने पर जो राशि आवे या जिस राशि में 2 का 96 बार भाग जाये वह राशि। यह राशि सन्नी मनुष्यों की अपेक्षा उत्कृष्ट राशि है, जघन्य इससे कुछ कम मनुष्य सदा मिलते हैं। **यमल पद वर्ग-** 2 को 2 से गुणा 4, चार को 4 से गुणा 16, सौलह को 16 से गुणा 256, चौथा वर्ग 65536 हुआ, पांचवा वर्ग 4294967296 और छठा वर्ग 18446744073709551616 यह छठे वर्ग की संख्या को पांचवे वर्ग की संख्या से गुणा करने पर 29 अंकों की संख्या आती है छठे वर्ग की संख्या तीन यमल पद होती है दो वर्ग का एक यमल, इन 6 वर्गों के तीन यमल पद हुए। यानि 6ठे वर्ग की संख्या तीसरा यमल पद है इससे ऊपर और चौथे यमल पद से नीचे मनुष्यों की संख्या है जो 5वें और छठे वर्ग से गुणा करने से प्राप्त राशि 79228162514264337593543950336 (29 अंक) है। इस राशि में 96 बार 2 का भाग देने पर अंत में एक प्राप्त होगा अतः छियानवे छेदनक दाई राशि कहा है। असन्नी मनुष्यों की अपेक्षा असंख्याता बद्धेलक होते हैं उसका माप इस प्रकार है- अंगुल जितने श्रेणी क्षेत्र में जितने आकाश प्रदेश हैं उसके पहले वर्गमूल को तीसरे वर्गमूल से गुणा करने पर जो असंख्य राशि आवे उतनी लम्बाई चौड़ाई के क्षेत्र में एक

असन्नी मनुष्य को रखा जाए तो एक प्रदेशी 7 रजू की लम्बी श्रेणी संपूर्ण भर जाय, उतनी राशि में से एक कम करने से जो राशि आती है, उतने असंख्यात असन्नी मनुष्य उत्कृष्ट हो सकते हैं। यानि एक प्रदेशी श्रेणी के असंख्यातवें भाग के प्रदेश तुल्य। जघन्य तो 1-2-3 भी हो सकते है और पूर्ण विरह भी पड़ता है।

मनुष्य में वैक्रिय शरीर के बद्धेलक संख्याता है और मुक्केलग औदारिक के मुक्केलग के समान है। आहारक शरीर के बद्धेलग मुक्केलग शरीर समुच्चय आहारक के समान है। तैजसकार्मण के बद्धेलग मुक्केलग इसके औदारिक शरीर के बद्ध मुक्त के समान होते हैं।

व्यंतर देव- औदारिक, आहारक के बद्धेलग मुक्केलग नारकी के समान है। वैक्रिय के बद्धेलग विकलेन्द्रिय के औदारिक के बद्धेलग के समान, किन्तु विशेषता यह कि अंगुल के असंख्यातवां भाग में एक बेइन्द्रिय को रखने को कहा गया किन्तु व्यंतर देव को संख्यात सौ योजन लम्बे चौड़े क्षेत्र में एक एक को रखा जाय तो 7 रज्जू लम्बा चौड़ा प्रतर क्षेत्र भर जाता है। मुक्केलग समुच्चय वैक्रिय के समान है। तैजस कार्मण के बद्धेलग मुक्केलग इनके वैक्रिय के समान है।

ज्योतिषी देव- सम्पूर्ण कथन व्यंतर के समान, किन्तु विशेषता यह कि 256 योजन लंबे चौड़े क्षेत्र प्रतर में एक ज्योतिषी को रखा जाय तो 7 रज्जू लम्बा-चौड़ा प्रतर क्षेत्र पूर्ण भर जाता है। इतने (असंख्यात) ज्योतिषी देव के वैक्रिय शरीर के बद्धेलग है।

वैमानिक देव- वैक्रिय के असंख्यात बद्धेलग का प्रमाण-अंगुल जितने क्षेत्र की श्रेणी में जितने आकाश प्रदेश हैं, उसके द्वितीय वर्गमूल को तीसरे वर्गमूल से गुणा करने पर जितनी संख्या आवे, उतनी श्रेणियों के प्रदेश तुल्य। तीसरे वर्ग का घन करने पर भी वही श्रेणी राशि प्राप्त होती है।

असत् कल्पना से 256 राशि का दूसरा वर्गमूल 4, तीसरा 2, इनके गुणा करने से 8 होते हैं। वैक्रिय के मुक्केलग औदारिक के समान है। तैजस कार्मण के बद्धेलक मुक्केलग इसके वैक्रिय के समान है। औदारिक और आहारक के बद्धेलक मुक्केलग नारकी के समान है।

ये सभी बद्धेलक मुक्केलक की उत्कृष्ट संख्या बताई गई है। मुक्केलग शरीर सभी दंडक में प्रायः (अनंत की अपेक्षा) समान कहे गये हैं, फिर भी अपने अपने बद्धेलकों के अनुपात से अन्तर समझ लेना।

	जीव-शरीर बद्ध मुक्त	विशिष्ट राशि ज्ञान
1	औदारिक बद्धेलक	असंख्य लोक के प्रदेश तुल्य
2	औदारिक मुक्केलग	अनंत लोक के प्रदेश तुल्य, अभव्यों से अनंत गुणे, सिद्धों से अनंतवे भाग
3	वैक्रिय बद्धेलक	सूचि प्रतर के असंख्यातवें भाग की असंख्य श्रेणियों के प्रदेश तुल्य
4	आहारक बद्धेलक	जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट अनेक हजार (2 से 9 हजार)
5	तैजस कार्मण बद्धेलक	सर्व संसारी जीवों की संख्या के समान, सिद्धों से अनंत गुणे
6	तैजस कार्मण मुक्केलग	सर्व जीवों के वर्ग के अनंतवें भाग, सर्व जीवों से अनंत गुणे
7	नारकी वैक्रिय बद्धेलक	अंगुल प्रदेशों का प्रथम वर्गमूल × दूसरा वर्गमूल, प्रतर के असंख्यातवें भाग की असंख्य श्रेणियां, उनके प्रदेशों के प्रदेश तुल्य
8	भवनपति वैक्रिय बद्धेलक	अंगुल प्रथम वर्गमूल का संख्यातवां भाग जितनी श्रेणियों के प्रदेश तुल्य
9	5 स्थावर औदारिक बद्धेलक	समुच्चय औदारिक के समान, असंख्य लोक के प्रदेश तुल्य
10	वायुकाय वैक्रिय बद्धेलक	क्षेत्र पल्योपम के असंख्यातवें भाग के समय तुल्य
11	वनस्पति के कार्मण बद्धेलक	समुच्चय कार्मण के समान
12	3 विकलेन्द्रिय औदा. बद्ध.	एक श्रेणी के सभी वर्गमूलों के योग से प्राप्त राशि प्रमाण, असंख्यात श्रेणियों के प्रदेश तुल्य। अंगुल के असंख्यातवें भाग की अवगाहना वाले बेइन्द्रियों से 7 रज्जू लम्बा चौड़ा एक प्रतर भर जाय उतने बद्धेलक हैं।
13	तिर्यंच पंचेन्द्रिय वैक्रिय बद्ध.	अंगुल प्रथम वर्गमूल का असंख्यातवां भाग
14	मनुष्य औदारिक बद्धेलक	1. 29 अंक 2. 5वां वर्ग × 6ठा वर्ग 3. (2)96 4. तीसरे चौथे यमल पद के बीच में
15	मनुष्य वैक्रिय बद्ध.	1-2-3 उत्कृष्ट संख्याता
16	मनुष्य आहारक बद्ध.	1-2-3 उत्कृष्ट अनेक हजार
17	असन्नी मनुष्य औदा. बद्ध.	अंगुल प्रथम वर्ग मूल × तीसरा वर्गमूल के जो आकाश प्रदेश होते है, उतने लम्बी चौड़ी अवगाहना से भरने पर सूची श्रेणी भर जाय एक कम रहे इतने हैं।
18.	व्यंतर वैक्रिय बद्धेलक	संख्यात सौ योजन क्षेत्र में एक-एक को रखा जाय तो 7 रज्जू लंबा चौड़ा प्रतर भर जाय
19.	ज्योतिषी वैक्रिय बद्धेलक	256 योजन क्षेत्र में एक-एक को रखने पर 7 रज्जू लंबा चौड़ा प्रतर (चोंतरा) भर जाय
20.	वैमानिक वैक्रिय बद्धेलक	अंगुल द्वितीय वर्ग मूल × तृतीय वर्ग मूल प्रमाण असंख्य श्रेणियों के प्रदेश तुल्य, तीसरे वर्ग का घन करना भी कह सकते हैं।

औघिक बद्ध मुक्त पांच शरीर

शरीर	बद्ध	मुक्त
1 औदारिक	(द्रव्य से) असंख्यात (क्षेत्र से) असंख्यात लोक प्रमाण (काल से) असंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी के समय प्रमाण	अनंत (द्रव्य से) अभव्य जीवों से अनंत गुणा, सिद्धों के अनंतवे भाग (क्षेत्र से) अनंत लोक प्रमाण (काल से) अनंत उत्सर्पिणी अवसर्पिणी के समय प्रमाण
2 वैक्रिय	(द्रव्य से) असंख्यात (क्षेत्र) से घनीकृत लोक प्रतर के असंख्यातवें भाग की श्रेणी के आकाश प्रदेश प्रमाण (काल से)- असंख्यात उत्स. अव. के समय प्रमाण	अनंत-मुक्त औदारिक वत्
3. आहारक	कभी होते, कभी नहीं होते, हो तो जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट अनेक हजार	अनंत-मुक्त औदारिक वत्

4.5. तैजस कार्मण	अनंत (द्रव्य से) सिद्धों से अनंत गुणा, सर्व जीवों के अनंतवे भाग (क्षेत्र से) अनंत लोक प्रमाण (काल से) अनंत उत्स. अव. के समय प्रमाण	अनंत। (द्रव्य से) सर्व जीवों से अनंत गुणा जीव वर्ग का अनंतवां भाग प्रमाण। (क्षेत्र से) अनंत लोक प्रमाण काल से- अनंत उत्स. अव. के समय प्रमाण।

25. जीव परिणाम पद (पन्नवणा पद 13) परिणाम- परिणमन दो प्रकार के जीव के, अजीव के। यहां जीव के कहे हैं। एक रूप से अन्य रूप में परिवर्तित होना परिणमन है। द्रव्यास्तिक नय से अपना अस्तित्व रखते हुए उत्तर पर्याय प्राप्त करना परिणाम है इसमें एकान्त रूप से पूर्व पर्याय न कायम रहती है न उसका नाश होता है। पर्यायास्तिक नय से पूर्व पर्याय का नाश होना अविद्यमान नयी पर्याय का प्राप्त होना है।

जीव परिणाम- के 10 भेद हैं- 1. गति 2. इन्द्रिय 3. कषाय 4. लेश्या 5. योग 6. उपयोग 7. ज्ञान 8. दर्शन 9. चारित्र 10. वेद परिणाम। जीव इनका उपार्जन करता है, इन इन अवस्थाओं में परिणत होता है। इन 10 के पुनः अनेक प्रकार हैं- (1) 4 गति (2) 5 इन्द्रिय और एक अनिन्द्रिय (3) 4 कषाय 1 अकषायी (4) लेश्या-6 और अलेशी (5) योग-3 और अयोगी (6) उपयोग 2-साकार अनाकार (7) ज्ञान-पांच-ज्ञान, तीन अज्ञान (8) दर्शन-सम्यग, मिथ्या, मिश्र-तीन दर्शन (9.) चारित्र-पांच चरित्र, असंयती, संयता संयती (10) वेद-तीन वेद और अवेदी ये कुल 50 भेद हुए।

24 दंडक में 50 बोल-

जीव	बोल	विवरण
नरक	29	गति 1, इन्द्रिय 5, कषाय 4, लेश्या 3, योग 3, उपयोग 2, ज्ञान 3, अज्ञान 3, दर्शन 3, चरित्र 1 वेद 1
भवनपति-व्यंतर	31	उपरोक्त 29 में से नपुंसक वेद कम तथा तेजोलेश्या और स्त्री पुरुष दो वेद बढ़ाना
ज्योतिषी पहला दूसरा देव	28	उपरोक्त 31 में से पहली तीन लेश्या कम करनी
3 से 12 देव, नव ग्रैवेयक	27	28 में स्त्री वेद कम (3 से 5 देव पद्म लेश्या आगे शुक्ल लेश्या कहना) (तेजो की जगह)
पांच अणुत्तर विमान	22	27 में से मिथ्या, मिश्र दो दर्शन, तीन अज्ञान कम ये 5 कम
पृथ्वी पानी वनस्पति	18	गति 1, इन्द्रिय 1, कषाय 4, लेश्या 4, योग 1, उपयोग 2, अज्ञान 2, दर्शन 1, चरित्र 1, वेद1 (असंयम)
तेउवायु	17	उपरोक्त में से तेजोलेश्या कम
द्वीन्द्रिय	22	17 ऊपर के, रसनाइन्द्रिय, वचन योग, मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, समदृष्टि बढी ये 22
तेइन्द्रिय	23	22 में घ्राणेन्द्रिय बढ़ी
चौरेन्द्रिय	24	23 में से चक्षु इन्द्रिय बढ़ी
तिर्यंच पंचेन्द्रिय	35	गति 1, इन्द्रिय 5, कषाय 4, लेश्या 6, योग 3, उपयोग 2, ज्ञान 3, अज्ञान 3, दर्शन 3, चारित्र 2, वेद 3
मनुष्य	47	तीन गति कम 50 में से

26 अजीव परिणाम (पन्नवणा पद 13)- अजीव पुद्‌गलों के परिणमन मुख्यतः 10 प्रकार के हैं-

1. बंध परिणाम- पुद्‌गल बंध तीन प्रकार के- 1. स्निग्ध-स्निग्ध 2. रूक्ष-रूक्ष 3. स्निग्ध रूक्ष। स्निग्ध या रूक्ष में सम स्निग्ध या सम रूक्ष होने पर और एकाधिक का

बंध नहीं होता। स्निग्ध रूक्ष पुद्‌गलों में जघन्य का (1 गुण के साथ) बंध नहीं होता, आपस में दो गुण अधिक स्निग्ध-स्निग्ध का ऐसे ही रूक्ष रूक्ष का बंध होता है। एक गुण को छोड़कर फिर रूक्ष स्निग्ध का सम विषम कोई भी बंध हो सकता है। 2 गुण स्निग्ध का 2 गुण स्निग्ध से, 2 गुण स्निग्ध का 3 गुण स्निग्ध से बंध नहीं होता। 2 गुण स्निग्ध का 4 गुण स्निग्ध से बंध होता है। 2 गुण स्निग्ध 2 गुण रूक्ष का बंध होता है। 2 गुण स्निग्ध का 3 गुण रूक्ष से बंध होता है। यह बंध पुद्‌गलों (स्कंध) के परमाणु आदि से जुड़ने की अपेक्षा कहा गया है अर्थात् वे परमाणु आदि जुड़कर नया पुद्‌गल स्कंध बनाते हैं।

2. गति परिणाम- गति के 2 भेद फुसमाण गति (स्पर्श करते हुए) अफुसमाण गति (स्पर्श नहीं करते हुए) दूसरे को स्पर्श करते हुए गति परिणाम (स्पर्शद्) पानी पर फेंकी ठीकरी जल का स्पर्श करते आगे जाती है। आकाश में उड़ता पक्षी बिना स्पर्श उड़ता है। गति परिणाम के दो भेद दीर्घ गति ह्रस्व गति परिणाम। फुसमान में असंख्य समय अफुसमान एक समय में भी हो जाती है। दूर देशांतर दीर्घगति परिणाम, इसके विपरीत कम देशांतर ह्रस्व गति परिणाम है।

3. संस्थान परिणाम- पांच संस्थान- 1. परिमंडल 2. वृत्त 3. त्र्यस्र 4. चतुरस्र 5. आयत संस्थान परिणाम

4. भेद परिणाम- पुद्‌गलों का भेदन पांच प्रकार का- 1. खंड 2. प्रतर 3. चूर्ण 4. अनुतरिका 5. उत्करिका

5. वर्ण परिणाम- 5 वर्ण-काला, नीला, लाल, पीला, सफेद ये 5 वर्ण के परिणमन

6. गंध- गंध के दो परिणमन-सुरभि गंध, दुरभिगंध

7. रस- 5 परिणमन- तीखा, कड़वा, कषैला, खट्टा, मीठा

8. स्पर्श- 8 परिणमन- कर्कश, मृदु, गुरू, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष

9. अगुरू लघु- (न हल्का न भारी) 4 स्पर्शी कर्म, मन और भाषा के द्रव्य, अमूर्त आकाश आदि अगुरू लघु परिणाम वाले हैं। अठस्पर्शी औदारिक वैक्रिय आहारक तैजस गुरू लघु परिणाम वाले होते हैं।

10. शब्द- शुभ शब्द, अशुभ शब्द (मनोज्ञ, अमनोज्ञ) दो प्रकार के हैं।

ये कुल 39 अजीव के परिणाम (3+2+5+5+5+2+5+8+2+2) हुए।

27. कषाय पद- (पन्नवणा 14वां पद)

आय पइट्ठिय खेत्तं, पडुच्च अणंताणुबंधी आभोगे।
चिण उवचिण बंध उदीर, वेद तह निज्जरा चेव॥

कषाय 4 प्रकार के हैं- क्रोध, मान, माया, लोभ। समुच्चय जीव 24 दंड़क में पाये जाते हैं।

क्रोध 4 अपेक्षा से होता है- 1. स्वयं पर आत्म प्रतिष्ठित 2. दूसरों पर किसी के अपशब्दादि से 3. दोनों पर- अपनी आत्मा और दूसरे पर क्रोध करना 4. अप्रतिष्ठित किसी पर भी नहीं केवल प्रकृति उदय से क्रोध मोहनीय के उदय से। 4 कारण से क्रोध उत्पन्न होता है 1. क्षेत्र 2. मकान 3. शरीर 4. उपधि

क्रोध के 4 प्रकार- अनंतानुबंधी (सम्यक्त्व का घात करता है) अप्रत्याख्यानी (देश विरति घात) प्रत्याख्यानावरणीय (सर्व विरति का घात) संज्वलन (यथाख्यात चरित्र घात) क्रोध।

इनके 4. भेद- 1. आभोग से क्रोध का कारण और फल जानकर क्रोध करना। 2. अनाभोग से गुण दोष जाने बिना परवश होकर क्रोध करना। 3. उपशांत-अंदर से हो परंतु ऊपर शांति दिखाई दे उदय में नहीं हो 4. अनुपशांत- उदय में आया। इसी तरह मान माया लोभ के भी समझना 4×4=16 कषाय, 16×25 दंडक=400 अलावा।

चार स्थान- 4 कषायों के वशीभूत होकर जीव ने भूतकाल में आठ कर्मों का चय किया है, उपचय किया, आठ कर्म बांधे, आठ कर्मों की उदीरणा की, आठ कर्म वेदे, आठ कर्मों की निर्जरा की। वर्त्तमान में आठ कर्मों का चय, उपचय, बंध, उदीरणा, वेदन, निर्जरा करता है, भविष्य में भी करेगा। **दृष्टांत-** कंडों को इकट्ठा करना (चय), जमाना (उपचय), जमे हुए कंडों को गोबर या मिट्टी से लीपना (बंध) वापस बिखेरना (उदीरणा) एक-एक कर जलाना (वेदन), सभी के जल जाने के बाद जगह साफ करना (निर्जरा)।

ये 6 बोल समुच्चय जीव और 24 दंडक से 25×6=150 और 150×3 काल=450 ऊपर के 400=850 अलावा क्रोध कषाय के इसी तरह 4 कषाय के 850×4=3400 अलावा हुए।

एक स्वतंत्र विकल्प से 4 कषाय × 4 प्रकार = 16 × 4 आभोगादि = 64 × 4 क्षेत्रादि =256 × 4 अपेक्षा (स्वयं आदि)= 1024×25 (समुच्चय + 24 दंडक) × 2 (एकवचन बहुवचन=51200 भंग)

8 कर्म×3 काल×6 चय उपचयादि=144×51200=7372800 भंग। 144×4 कषाय×25×2 (एकवचन बहुवचन) 28800 ये चयादि के स्वतंत्र विकल्प होते हैं।

28. इन्द्रिय पद-पांच भाव इन्द्रिय (प्रज्ञापन्न पद 15)- ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से विषय का बोध और जानने की शक्ति प्राप्त हो वह भावेन्द्रिय, ये 5 है- श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय। इनका 18 द्वारों से वर्णन इस प्रकार है-

1. नामद्वार- श्रोत्रेन्द्रिय (गोचरी), चक्षु इन्द्रिय (अगोचरी) घ्राणेन्द्रिय (दुमोही), रसनेन्द्रिय (चरपरी), स्पर्शेन्द्रिय (अचरपरी)।

2. संस्थान द्वार- 1. श्वोत्रेन्द्रिय (कदम्ब का फूल), 2. चक्षुन्द्रिय (मसूरदाल), 3. घ्राणेन्द्रिय (धमण), 4. रसनेन्द्रिय (उस्तरा) 5. स्पर्शेन्द्रिय (विविध) आकार है।

3. बाहल्य द्वार- सभी इन्द्रियों का जाडापन अंगुल के असंख्यातवें भाग है।

4. विस्तार लम्बाई द्वार- श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय और घ्राणेन्द्रिय की लम्बाई अंगुल के असंख्यातवें भाग और रसनेन्द्रिय की लम्बाई अनेक (दो से नौ) अंगुल (आत्मांगुल से) और स्पर्शेन्द्रिय की लम्बाई शरीर प्रमाण है।

5. अवगाढ़ द्वार- पांचों इन्द्रिया असंख्यात आकाश प्रदेश पर है।

6. स्पृष्ट द्वार- एक-एक इन्द्रिय के अनंत अनंत पुद्गल स्पृष्ट (लगे) हैं।

7. अवगाढ़ का अल्प बहुत्व द्वार- 1. सबसे थोड़े चक्षुइन्द्रिय के अवगाहे प्रदेश 2. श्रोत्रेन्द्रिय की अवगाहना संख्यात गुणा 3. घ्राणेन्द्रिय की उससे संख्यात गुणा 4. रसनेन्द्रिय की असंख्यात गुणा 5. स्पर्शेन्द्रिय के आकाश प्रदेश संख्यात गुणा अवगाहना से।

8. स्पृष्ट का अल्प बहुत्व द्वार- 1. सबसे थोड़े चक्षुइन्द्रिय के स्पृष्ट पुद्गल 2. श्रोत्रेन्द्रिय के संख्यात गुणा 3. घ्राणेन्द्रिय के संख्यात गुणा 4. रसनेन्द्रिय के असंख्यात गुणा 5. स्पर्शेन्द्रिय के स्पृष्ट पुद्गल संख्यात गुणा

9. अवगाढ़ और स्पृष्ट का शामिल अल्प बहुत्व द्वार- 1. सबसे थोड़ी अवगाहना चक्षुरिन्द्रिय की 2. श्रोत्रेन्द्रिय की संख्यात गुणा अवगाहना 3. घ्राणेन्द्रिय की उससे संख्यात गुणा अवगाहना 4. रसनेन्द्रिय की अवगाहना असंख्यात गुणा 5. स्पर्शेन्द्रिय के अवगाहे आकाश प्रदेश संख्यात गुणा 6. चक्षुइन्द्रिय के स्पृष्ट पुद्गल अनंत गुणा 7. श्रोत्रेन्द्रिय के संख्यात गुणा स्पृष्ट 8. घ्राणेन्द्रिय के संख्यात गुणा स्पृष्ट पुद्गल 9. रसनेन्द्रिय के स्पृष्ट पुद्गल असंख्यात गुणा 10. स्पर्शेन्द्रिय के स्पृष्ट पुद्गल संख्यात गुणा।

10. 11. कर्कश गुरू- लघु मृदु द्वार- प्रत्येक इन्द्रिय के कर्कश गुरू और लघु मृदु वाले अनंत पुद्गल लगे हैं।

12 से 14. कर्कश गुरू,लघु मृदु और दोनों का शामिल अल्प बहुत्व द्वार-

क्र सं.	इन्द्रिय	कर्कश गुरू	लघु मृदु	कर्कश गुरू/ लघु मृदु शामिल
1	चक्षुइन्द्रिय	1 अल्प	5 अनंत गुणा	1 अल्प/ 10 अनंत गुणा
2	श्रोत्रेन्द्रिय	2 अनंत गुणा	4 अनंत गुणा	2 अनंत गुणा/ 9 अंनत गुणा
3	घ्राणेन्द्रिय	3 अनंत गुणा	3 अनंत गुणा	3 अनंत गुणा/ 8 अंनत गुणा
4	रसनेन्द्रिय	4 अनंत गुणा	2 अनंत गुणा	4 अनंत गुणा/ 7 अंनत गुणा
5	स्पर्शेन्द्रिय	5 अनंत गुणा	1 अल्प	5 अनंत गुणा/ 6 अंनत गुणा

15. विषय द्वार- पांचों इन्द्रिय में जघन्य विषय चक्षुइन्द्रिय का अंगुल के संख्यातवें भाग है और शेष चार इन्द्रिय का जघन्य विषय क्षेत्र अंगुल के असंख्यातवें भाग है, उत्कृष्ट इस प्रकार है-

जीव नाम	श्रोत्रेन्द्रिय	चक्षु इन्द्रिय	घ्राणेन्द्रिय	रसनेन्द्रिय	स्पर्शेन्द्रिय
एकेन्द्रिय	-	-	-	-	400 धनुष
बेइन्द्रिय	-	-	-	64 धनुष	800 धनुष
तेइन्द्रिय	-	-	100 धनुष	128 धनुष	1600 धनुष
चतुरिन्द्रिय	-	2954 धनुष	200 धनुष	256 धनुष	3200 धनुष
असन्नी पंचेन्द्रिय	1 योजन	5908 धनुष	400 धनुष	512 धनुष	6400 धनुष
सन्नी पंचेन्द्रिय	12 योजन	1 लाख योजन साधिक	9 योजन	9 योजन	9 योजन
समुच्चय जीव	12 योजन	1 लाख योजन साधिक	9 योजन	9 योजन	9 योजन

असन्नी पंचेन्द्रिय में कहीं 800 धनुष कहीं 8000 धनुष मिलता है तत्त्व केवलि गम्य।

16 से 18. जघन्य उपयोग काल, उत्कृष्ट उपयोग काल, दोनों का शामिल उपयोग काल का अल्प बहुत्व-

क्र.	इन्द्रिय	जघन्य उपयोग काल	उत्कृष्ट उपयोग काल जघन्य	उपयोग उत्कृष्ट /उपयोग शामिल
1	चक्षुइन्द्रिय	1 अल्प	1 अल्प	1 अल्प/ 6 विशेषाधिक
2	श्रोत्रेन्द्रिय	2 विशेषाधिक	2 विशेषाधिक	2 विशेषाधिक/ 7 विशेषाधिक
3	घ्राणेन्द्रिय	3 विशेषाधिक	3 विशेषाधिक	3 विशेषाधिक/ 8 विशेषाधिक
4	रसनेन्द्रिय	4 विशेषाधिक	4 विशेषाधिक	4 विशेषाधिक/ 9 विशेषाधिक
5	स्पर्शेन्द्रिय	5 विशेषाधिक	5 विशेषाधिक	5 विशेषाधिक/ 10 विशेषाधिक

29. आठ द्रव्येन्द्रिय (पन्नवणा पद 15)- इन्द्रियों की पुद्‌गलिक रचना द्रव्येन्द्रिय है ये 8 है- 2 कान, 2 आंख, दो नाक, 1 जिव्हा 1 स्पर्शेन्द्रिय।

किसको कितनी इन्द्रियां- पांच स्थावर के 1 स्पर्शेन्द्रिय, बेइन्द्रिय के दो जिव्हा और

स्पर्शनेन्द्रिय, तेइन्द्रिय के चार-2 घ्राण 1 रसन, 1 स्पर्शनेन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय के 6-2 आंख, 2 नाक, 1 जिव्हा, 1 स्पर्शन। पंचेन्द्रिय के 8 द्रव्येन्द्रियां होती है।

इस थोकड़े में एक जीव की अपेक्षा अनेक जीवों की अपेक्षा, एक जीव परस्पर, अनेक जीव परस्पर तीन काल की अपेक्षा से वर्णन है।

24 दंडक में एक जीव, अनेक जीव की अपेक्षा त्रैकालिक द्रव्य इंद्रिया-
24 दंडक में 8 द्रव्येन्द्रियां है इनमें से कितनी द्रव्येन्द्रियां उन्हें प्राप्त है, भूतकाल में कितनी की, भविष्यकाल में कितनी होगी यह वर्णन है। जैसे प्रत्येक नारकी को भूतकाल में अनंत द्रव्येन्द्रिय प्राप्त हुई थी क्योंकि उस जीव ने भूतकाल में अनंत जन्म मरण किये, वर्त्तमान में 8 इन्द्रियां है, भविष्य में 8, संख्यात, असंख्यात अनंत द्रव्येन्द्रियां प्राप्त करेगा। जो नारकी जीव एक मनुष्य भव प्राप्त करके मोक्ष जायेगा तो मनुष्य भव की 8 द्रव्येन्द्रिय प्राप्त करेगा। एक तिर्यंच और फिर मनुष्य भव करके मोक्ष जायेगा तो 16 द्रव्येन्द्रियां, अगर संख्याता भव करे तो संख्याता, असंख्याता भव करे तो असंख्याता अनंत काल परिभ्रमण करे तो अनंत द्रव्येन्द्रिय प्राप्त करेगा। इसी प्रकार 24 दंडक में प्रत्येक जीव ने भूतकाल में अनंत द्रव्येन्द्रिय प्राप्त की, वर्त्तमान स्वयं के भव के अनुसार प्राप्त हुई है, भविष्य में भव के भ्रमण के अनुसार प्राप्त करेगा। इस प्रकार- 24 दंडक (एक जीव की अपेक्षा) त्रैकालिक द्रव्येन्द्रियां :-

दंडक के जीव	वर्त्तमान में	भूतकाल में	भविष्य में (एक जीव की अपेक्षा)
नारकी 1 से 4	8	अनंता	8, 16, 17 आदि अनंत
नारकी 5 से 7	8	अनंता	16, 17 आदि अनंत
भवनपति से दूसरे देवलोक	8	अनंता	8, 9 आदि अनंत
तीसरे देव. से 9 नव ग्रैवेयक	8	अनंता	8, 16, 17 आदि अनंत
4 अणुत्तर विमान देव	8	अनंता	8, 16, 24 आदि उत्कृष्ट संख्याता
सर्वार्थ सिद्ध विमान देव	8	अनंता	8
पृथ्वी पानी वनस्पति	1	अनंता	8, 9, 10 आदि उत्कृष्ट अनंत
तेउ-वायु	1	अनंता	9, 10 आदि उत्कृष्ट अनंत
बेइन्द्रिय	2	अनंता	9, 10 आदि उत्कृष्ट अनंत
तेइन्द्रिय	4	अनंता	9, 10 आदि उत्कृष्ट अनंत
चौरेन्द्रिय	6	अनंता	9, 10 आदि उत्कृष्ट अनंत
तिर्यंच पंचेन्द्रिय	8	अनंता	8, 9 आदि उत्कृष्ट अनंत
मनुष्य	8	अनंता	0, 8, 9 आदि उत्कृष्ट अनंत

अनेक जीवों की अपेक्षा- 24 दंडक के अनेक जीवों ने भूतकाल में अनंत, भविष्यकाल की अपेक्षा भी सभी दंडक में अनंत है। वर्तमान काल में वनस्पति में अनंत जीव होने पर भी औदारिक शरीर असंख्याता होने से असंख्याता, मनुष्य में कभी संख्याता, कभी असंख्याता, सर्वार्थ सिद्ध विमान में संख्याता, शेष सभी दंडक में असंख्याता द्रव्येन्द्रिय हैं।

एक जीव की परस्पर की अपेक्षा- एक एक जीव की सभी दंडकों में द्रव्येंद्रियां बताई है तीनों काल की अपेक्षा से बताई है। एक नारकी ने भूतकाल में नारकी पणे अनंत द्रव्येंद्रियां प्राप्त की वर्त्तमान में 8 है, भविष्य होगी या नहीं होगी होगी तो जितनी बार नरक में जावे उस प्रमाण से 8, 16, यावत संख्यात, असंख्य अनंत द्रव्येंद्रियां प्राप्त होगी। इसी प्रकार 22 दंडक में (संज्ञी मनुष्य, पांच अणुत्तर छोड़) अनंत द्रव्येन्द्रियां प्राप्त हुई थी वर्त्तमान में नहीं है भविष्य में एकेन्द्रिय पणे जघन्य 1-2-3, बेइन्द्रिय पणे 2,4,6 तेइन्द्रिय पणे 4,8,12 चौरेन्द्रिय पणे 6,12,18,24 पंचेन्द्रिय पणे 8,16,24 संख्यात, असंख्यात, अनंत प्राप्त होगी। नारकी को मनुष्य पणे भूतकाल में अनंत, वर्त्तमान में नहीं, भविष्य में अवश्य मिलेगी 8,16,24 संख्यात, असंख्यात या अनंत हो सकती है। नारकी को पांच अणुत्तर में भूतकाल में नहीं मिली, (अणुत्तर विमान के बाद नरक में नहीं जाता) वर्त्तमान में नहीं भविष्य में 4 अणुत्तर विमान में जाये तो 8,16 और सर्वार्थ सिद्ध में जावें तो 8 द्रव्येंद्रियां प्राप्त होगी। जीव चार अणुत्तर में 2 बार और सर्वार्थ सिद्ध में एक बार जाने के बाद मनुष्य भव से अवश्य मुक्त जो जाता है। इसी प्रकार 24 दंडक का वर्णन 24 दंडक जीवों को 24 दंडक में भूतकालीन द्रव्येंद्रियां-

क्र.	वर्त्तमान जीव	दंडक के जीव पणे	एक जीव की द्रव्येंद्रियां	अनेक जीवों की द्रव्येंद्रियां
1	24 दंडक के जीव	23 दंडक में (वैमानिक छोड़)	अनंत	अनंत
2	24 दंडक के जीव	वैमानिक में (नव ग्रैवेयक तक)	अनंत	अनंत
3	22 दंडक (मनुष्य वैमानिक छोड़)	चार अणुत्तर विमान में	नहीं प्राप्त किया	नहीं
4	मनुष्य	चार अणुत्तर विमान में	0/8/16	संख्यात
5	मनुष्य	सर्वार्थ सिद्ध	0/8	संख्यात
6	पहले देव. से 4 अणुत्तर विमान	चार अणुत्तर विमान में	0/8	असंख्यात
7	पहले देव. से 4 अणुत्तर विमान	सर्वाथ सिद्ध विमान में	नहीं	नहीं
8	सर्वार्थ सिद्ध विमान के देव	चार अणुत्तर विमान में	0/8	संख्यात
9	सर्वार्थ सिद्ध विमान के देव	सर्वार्थ सिद्ध विमान में	नहीं	नहीं

24 दंडक जीवों की वर्त्तमान कालीन (बद्ध) एक अनेक जीवों की द्रव्येन्द्रियां-

जीव	एक जीव की		अनेक जीवों की	
	स्वस्थान में	परस्थान में	स्वस्थान में	परस्थान में
एकेन्द्रिय	1	×	असंख्य	×
बेइन्द्रिय	2	×	असंख्य	×
तेइन्द्रिय	4	×	असंख्य	×
चतुरिन्द्रिय	6	×	असंख्य	×
पंचेन्द्रिय 4 गति	8	×	असंख्य	×
मनुष्य	8	×	संख्यात, असंख्यात	×
सर्वार्थ सिद्ध देव	8	×	संख्यात	×
वनस्पति	1	×	असंख्यात	×

भूतकाल में- एक नारकी ने पांच अणुत्तर विमान छोड़ सभी दण्डकों के रूप में अनंत इन्द्रियां की। उसी तरह सभी दण्डकों के जीवों ने भी भूतकाल में अनन्त इन्द्रियां की। अणुत्तर देव के रूप में 22 दंडक के जीवों ने एक भी इन्द्रिय नहीं की। मनुष्यों में किसी ने नहीं की और किसी ने की तो आठ अथवा सौलह। वैमानिक देवों ने अणुत्तर देव रूप में किसी ने नहीं की और किसी ने की तो केवल आठ की।

वर्त्तमान काल में- स्वयं की अपेक्षा जिसके जितनी द्रव्येन्द्रियां है उतनी कहनी है, अन्य परस्थान की अपेक्षा सर्वत्र नहीं (नत्थि) कहना।

भविष्य काल में- पंचेन्द्रिय की अपेक्षा 8, 16 यों अष्टाधिक ही होती है। इसी तरह चौरिन्द्रिय में 6, 12 आदि तेइन्द्रिय में 4-8 आदि बेइन्द्रिय में 2-4 आदि एकेन्द्रिय में 1-2-3 आदि। मनुष्य की अपेक्षा सभी को करना जरूरी है, शेष की अपेक्षा कोई करेगा या नहीं भी करेगा, करेगा तो 8-16 आदि।

एक-एक जीव की सभी दण्डकों में भविष्य कालीन इन्द्रियां (एक जीव परस्पर)

अपेक्षा	नारकी से ग्रैवेयक तक	चार अणुत्तर देव	सर्वार्थ सिद्ध	मनुष्य तिर्यंच
मनुष्य पने	8, 16 आदि अनंत	8, 16 आदि अनंत	08	0,8,16 आदि अनंत
नरक पने	0,8,16 आदि अनंत	×	×	0,8,16 आदि अनंत
तिर्यंच पने	0,8,16 आदि अनंत	×	×	0,8,16 आदि अनंत
भवन. व्य. ज्यो. पणे	0,8,16 आदि अनंत	×	×	0,8,16 आदि अनंत
वैमा. नव ग्रैवेयक तक	0,8,16 आदि अनंत	0,8,16 आदि संख्यात	×	0,8,16 आदि अनंत
चार अणुत्तर देव पणे	0,8 उत्कृष्ट 16	0,8	×	0,8,16 आदि अनंत

सर्वार्थ सिद्ध देव पने	0,8 अधिक नहीं	0,8	×	0,8
एकेन्द्रिय पने	0,1,2 आदि अनंत	×	×	0,1,2 आदि अनंत
बेइन्द्रिय पने	0,2,4 आदि अनंत	×	×	0,2,4 आदि अनंत
तेइन्द्रिय पने	0,4,8 आदि अनंत	×	×	0,4,8 आदि अनंत
चौरेन्द्रिय पने	0,6,12 आदि अनंत	×	×	0,6,12 आदि अनंत

अनेक जीवों की सभी दंडकों में भविष्यकालीन द्रव्येन्द्रिया

क्रम	अनेक जीव	जीवों में	द्रव्येन्द्रियां
1	23 दंडक के जीव	23 दंडक पणे	अनन्त
2	नव ग्रैवेयक तक के देव	23 दंडक पणे	अनन्त
3	4 अणुत्तर विमान के देव	22 दंडक पणे	×
4	4 अणुत्तर विमान के देव	मनुष्य पणे	असंख्यात
5	4 अणुत्तर विमान के देव	नवग्रैवेयक तक देव पणे	असंख्यात
6	4 अणुत्तर विमान के देव	4 अणुत्तर विमान के देव पणे	असंख्यात
7	4 अणुत्तर विमान के देव	सर्वार्थ सिद्ध के देव पणे	संख्यात
8	सर्वाथ सिद्ध के देव	22 दंडक पणे	×
9	सर्वाथ सिद्ध के देव	मनुष्य दंडक पणे	संख्यात
10	सर्वाथ सिद्ध के देव	पांच अणुत्तर विमान के देव पणे	×

अनेक जीवों की भूतकाल- सभी दंडकों के जीवों ने सभी दंडकों में भूतकाल में अनंत द्रव्येन्द्रियां की है। पांच अणुत्तर देव पणे 22 दंडक जीवों ने नहीं की, मनुष्यों ने संख्यात की है। वैमानिक में नव गैवेयक तक देवों ने असंख्य की है, चार अणुत्तर देवों ने असंख्य की है, सर्वार्थ सिद्ध देवों ने नहीं की।

वर्त्तमान काल- वर्त्तमान में स्व दंडक में असंख्यात द्रव्येन्द्रियां है, परस्थान की अपेक्षा नहीं है। मनुष्य में संख्यात या असंख्यात तथा सर्वार्थ सिद्ध में संख्याता है।

भविष्य में- अणुत्तर देवों को छोड़कर नारकी आदि सभी जीव सभी दंडकों में अनंत द्रव्येन्द्रियां करेंगे। वनस्पति के जीव अनंत होने पर भी औदारिक के असंख्यात शरीर होने से असंख्यात (अनंत) तथा 23 दंडकों के जीव असंख्यात द्रव्येन्द्रियां अणुत्तर देव में करेंगे, किन्तु मनुष्य संख्याता या असंख्याता करेंगे। पांच अणुत्तर देव मनुष्य में एवं वैमानिक देव में असंख्य करेंगे, चार अणुत्तर देव पांच अणुत्तर देव पणे असंख्य

करेंगे। सर्वार्थ सिद्ध के देव मनुष्य में संख्याता करेंगे वैमानिक में नहीं करेंगे।

30 पांच भावेन्द्रिय (पन्नवणा पद 15) भावेन्द्रियां पांच है- श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और स्पर्शनेन्द्रिय। नारकी, भवनपति आदि 13 दंडक देव, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य को ये सभी पांच तथा स्थावर में एकेन्द्रिय में स्पर्शनेन्द्रिय, बेइन्द्रिय में 2- स्पर्शेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय। तेइन्द्रिय में घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय और स्पर्शेन्द्रिय तथा चौरेन्द्रिय में चक्षु, घ्राण, रसन, स्पर्शन इन्द्रियां होती है।

यहां एक जीव और अनेक जीवों की अपेक्षा, तथा एक जीव में परस्पर की अपेक्षा तथा अनेक जीवों की परस्पर अपेक्षा से तीनों काल की अपेक्षा से कथन है। द्रव्योन्द्रियों की ही तरह भावेन्द्रियों का भी कथन है, संख्या फर्क है। जघन्य संख्याओं में फर्क है 8 जगह की जगह 5 है, 9 की जगह 6 तथा 13 की जगह 10 है। 6,12 के स्थान पर 4,8 है। 4,8 के स्थान पर 3,6 है। एक के स्थान पर एक, दो के स्थान पर दो है।

24 दंडक में प्रत्येक जीव की त्रैकालिक भावेन्द्रिय-

जीव	भूतकाल	वर्त्तमान	भविष्यकालीन
1 से 4 नारकी	अनंत	पांच	5,10,15 संख्यात, असंख्यात अनंत
5 से 7 नारकी	अनंत	पांच	10,15 संख्यात, असंख्यात अनंत
भवनपति से दूसरे देवलोक तक	अनंत	पांच	5,6 संख्यात, असंख्यात अनंत
तीसरे देव. से नव ग्रैवेयक तक	अनंत	पांच	5,10 संख्यात, असंख्यात अनंत
4 अणुत्तर विमान के देव	अनंत	पांच	5,10 संख्यात
सर्वाथ सिद्ध के देव	अनंत	पांच	5
पृथ्वी पानी वनस्पति	अनंत	एक	5,6,7 संख्यात, असंख्यात अनंत
तेउकाय वायुकाय	अनंत	एक	6,7 संख्यात, असंख्यात अनंत
तीन विकलेन्द्रिय	अनंत	2,3,4	6,7 संख्यात, असंख्यात अनंत
तिर्यंच पंचेन्द्रिय	अनंत	पांच	5,6,7 संख्यात, असंख्यात अनंत
मनुष्य	अनंत	पांच	0/5,6,7 संख्यात, असंख्यात अनंत

24 दंडक में अनेक जीवों की भावेन्द्रियां

जीव प्रकार	भूतकालीन	वर्त्तमान	भविष्यकालीन
नारकी से भवनपति से नव ग्रैवेयक तक	अनंत	असंख्यात	अनंत
चार अणुत्तर के देव	अनंत	असंख्यात	असंख्यात
सर्वार्थ सिद्ध के देव	अनंत	संख्यात	संख्यात
4 स्थावर, 3 विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचे.	अनंत	असंख्यात	अनंत
वनस्पति	अनंत	अनंत	अनंत
मनुष्य	अनंत	संख्यात, असंख्यात	अनंत

24 दंडक के प्रत्येक जीव की परस्पर 24 दंडक में त्रैकालिक भावेन्द्रियां- (एक जीव)

वर्त्तमान जीव ने	दंडक के जीव पणे	भूतकालीन	वर्त्तमान कालीन	भविष्यकालीन भावेन्द्रियां
1 नारकी, भवनपति, व्यंतर ज्योतिषी, पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय और ति. पं. ने	पांच अणुत्तर संज्ञी मनुष्य छोड शेष स्थानों में सर्व स्थान में	अनंत	स्वस्थान में स्वस्थान प्रमाण 1-2-3-4-5 और परस्थान में नहीं	कोई करेगा, कोई नहीं भी करेगा करे तो जघन्य स्थान प्रमाण से उत्कृष्ट अनंत करेगा
	संज्ञी मनुष्य पणे	अनंत	×	5,10,15संख्य,असंख्य,अनंत
	चार अणुत्तर देव पणे	×	×	0,5,10
	सर्वार्थ सिद्ध देव पणे	×	×	0,5
2 पहले देवलोक से 9 ग्रैवेयक तक के देव ने	पांच अणुत्तर, संज्ञी मनुष्य छोड़ शेष सभी स्थानों में जीव पणे	अनंत	स्वस्थान में पांच परस्थान में नहीं	करेगा, नहीं भी करेगा, करे तो स्थान प्रमाण से
	संज्ञी मनुष्य पणे	अनंत	×	5,10,15 यावत अनंत
	चार अणुत्तर देव पणे	0,5	×	0,5,10
	सर्वार्थ सिद्ध देव पणे	×	×	0,5
3 चार अणुत्तर विमान देव ने	पांच अणुत्तर, संज्ञी मनुष्य छोड़ सभी स्थानों में	अनंत	×	वैमानिक में 0,5,10 संख्याता शेष में नहीं
	संज्ञी मनुष्य पणे	अनंत	×	5,10 यावत संख्यात
	चार अणुत्तर देव पणे	0,5	5	0,5
	सर्वार्थ सिद्ध देव पणे	×	×	0,5
4 सर्वार्थ सिद्ध देव ने	अणुत्तर, संज्ञी मनुष्य छोड़ सभी जगह में	अनंत	×	×
	संज्ञी मनुष्य पणे	अनंत	×	5
	अणुत्तर विमान के देव पणे	0,5	×	×
	सर्वार्थ के देव पणे	×	5	×
5 मनुष्य में	अणुत्तर विमान छोड़ शेष सभी जगह	अनंत	स्वस्थान में 5	0,5,10 यावत अनंत
	चार अणुत्तर विमान देव पणे	0,5,10,	×	0,5,10
	सर्वार्थ सिद्ध देव पणे	0,5	×	0,5

24 दंडक के अनेक जीवों की दंडक में 24 दंडक में त्रैकालिक भावेन्द्रियां- (अनेक जीव परस्पर)

	वर्त्तमान जीव ने	दंडक जीव पणे	भूतकालीन	वर्त्तमानकालीन भावेन्द्रियां	भविष्यकालीन भावेन्द्रियां
1	नरक,भवनपति,व्यंतर,ज्योतिषी, पांच स्थावर, तीन विकले. तिर्यंच पंचेन्द्रिय में	अणुत्तर विमान छोड़ सभी जगह	अनंत	वनस्पति में अनंत, शेष में असंख्यात, पर स्थान में नहीं	अनंत
		अणुत्तर विमान देव पणे	×	×	वन.में अ. शेष जीवों में असं.
2	पहले देवलोक से नव ग्रैवेयक तक के देव	अणुत्तर विमान छोड़ सभी जगह	अनंत	स्वस्थान में असंख्यात, परस्थान में नहीं	अनंत
		अणुत्तर विमान देव पणे	असंख्यात		असंख्यात
		सर्वार्थ सिद्ध देव पणे	×	×	संख्यात
3	अणुत्तर विमान देव	वैमानिक देव, संज्ञी मनुष्य छोड़ शेष सभी स्थानों में	अनंत	×	×
		संज्ञी मनुष्य, पहले देव से नवग्रैवेयक तक	अनंत	×	असंख्यात
		चार अणुत्तर विमान देव पणे	असंख्यात	असंख्यात	असंख्यात
		सर्वार्थ सिद्ध देव पणे	×	×	संख्यात
4	सर्वार्थ सिद्ध देव	अणुत्तर विमान, संज्ञी मनुष्य छोड़ शेष सभी स्थानों में	अनंत	×	×
		चार अणुत्तर विमान देव पणे	संख्यात	×	×
		सर्वार्थ सिद्ध देव पणे	×	संख्यात	×
5	मनुष्य	अणुत्तर विमान, संज्ञी मनुष्य छोड़कर शेष सभी स्थानों में	अनंत	स्वस्थान में संख्यात/ असंख्यात	अनंत
		अणुत्तर विमान में देव पणे	संख्यात	×	संख्यात
		मनुष्य पणे	अनंत	संख्यात/ असंख्यात	अनंत

31. भवितात्मा अणगार संबंधी प्रश्न (पन्नवणा पद 15)- श्री गौतम स्वामी ने प्रभु महावीर से कुछ के पृच्छा किये प्रश्नों के उत्तर इस प्रकार है- 1. भवितात्मा अणगार जिन्होंने मारणान्तिक समुद्घात की है, उनके शैलेषी अवस्था के अन्तिम समय के निर्जरा पुद्गल सूक्ष्म है, सारे लोक में अवगाहित हैं। 2. ये पुद्गल सूक्ष्म हैं, इस कारण छद्मस्थ (इन्द्रियों द्वारा जानने वाले) मनुष्य इनके अन्यत्व, नानापन हीनता, तुच्छता, गुरूत्व लघुत्व को नहीं जान सकता। मनुष्य और वैमानिक देवों के सिवाय बाकी 22 दंडक के जीव भी इन निर्जरा पुदगलों को जानते, देखते नहीं है, किन्तु उनका आहार करते हैं। असंज्ञी मनुष्य जानते देखते नहीं किन्तु आहार करते हैं, संज्ञी में उपयोग रहित वाले मनुष्य भी जानते देखते नहीं, आहार करते हैं। उपयोग सहित (विशिष्ट अवधिज्ञानी) अपने विशिष्ट ज्ञान से जानते, देखते हैं, आहार करते हैं। वैमानिक देव मायी मिथ्यात्वी और अमायी सम्यक्त्वी में से मायी मिथ्या दृष्टि जानते देखते नहीं, आहार करते हैं। अमायी समदृष्टि अनन्तरोपपन्न जानते देखते नहीं, आहार करते हैं, परम्परोपपन्नक में अपर्याप्ता को छोड़कर पर्याप्ता में भी उपयोग रहित को छोड़ उपयोग सहित इन निर्जरा पुदगालों को जानते देखते हैं, आहार करते हैं, अन्य जानते, देखते नहीं, आहार करते हैं।

3. दर्पण देखता हुआ मनुष्य, दर्पण और अपना प्रतिबिम्ब देखता है, शरीर को नहीं देखता। तलवार, मणि, दूध, पानी, तेल, गीला गुड़ और चर्बी देखता है, इनके प्रतिबिम्ब को भी देखता है।

4. समेटी हुई कम्बल जितने आकाश प्रदेशों का अवगाहन करती है, फैलाई हुई भी उतने ही आकाश प्रदेशों का अवगाहन करती है, उसी तरह खड़ा किया स्तंभ और तिर्च्छा पड़ा स्तंभ के लिए भी समझना।

5. आकाश का थिग्गल (लोकाकाश) धर्मास्तिकाय से धर्मास्तिकाय के प्रदेशों से स्पृष्ट है, देश से नहीं। अधर्मास्तिकाय से भी इस तरह स्पृष्ट है (देश से नहीं)। आकाश का

थिग्गल आकाशास्तिकाय से स्पृष्ट नहीं, उनके देश और प्रदेशों से स्पृष्ट है। 5 स्थावर से सूक्ष्म रूप से स्पृष्ट है, त्रस से (केवली समुद्घात की अपेक्षा) स्पृष्ट होता है। इसके सिवाय (उस समय सारे लोक में आत्म प्रदेश व्याप्त होते हैं) त्रस से स्पृष्ट नहीं होता क्योंकि त्रस सारे लोकाकाश में नहीं होते अतः कभी होता है, कभी नहीं होता। काल से भी देश से स्पृष्ट है क्योंकि व्यवहार काल अढ़ाई द्वीप प्रमाण ही होता है।

6. जम्बूद्वीप धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय के देश और प्रदेशों से स्पृष्ट है, काल द्रव्य से स्पृष्ट है। पृथ्वीकायादि 5 स्थावर से स्पृष्ट है, त्रस कभी स्पृष्ट (केवली समुदघात के चौथे समय से) है, कभी अस्पृष्ट है। इसी तरह अढ़ाई द्वीप (बाकी के 2 समुद्र और अर्द्ध पुष्कर तक) के लिए कहना। बाह्य पुष्करार्द्ध द्वीप तथा अन्य द्वीप समुद्रों में इसी तरह कथन है, किन्तु काल से स्पृष्ट नहीं है।

7. लोक आकाश थिग्गल की तरह है, उसी प्रकार कथन करना।

8. अलोक आकाशास्तिकाय के देश और प्रदेशों से स्पृष्ट है, अन्य 14 बोलों से नहीं है। अलोक अजीव द्रव्य का देश यानि आकाशास्तिकाय का देश है। अगुरू लघु स्वभाव युक्त, अनंत अगुरू लघु पर्यायों से युक्त तथा सारे आकाश का अनंतवां भाग कम है। (1 से 3) धर्मास्तिकाय, देश, प्रदेश (4 से 6) अधर्मास्तिकाय, देश, प्रदेश, (7 से 9) आकाशास्तिकाय, देश, प्रदेश (10 से 14) पांच स्थावर (15) त्रसकाय (16) काल ये मार्गणा है। ये इनके 16 बोल हैं।

32. प्रयोग पद (पन्नवणा पद 16) आत्मा के द्वारा विशेष रूप से, प्रकर्ष रूप से किया जाने वाला व्यापार प्रयोग कहा जाता है, इसे प्रचलन में योग भी कहते हैं, शब्द के अलावा भावार्थ से कोई अन्तर नहीं है। समुच्चय जीव में योग 15 होते हैं। 13 शाश्वत दो अशाश्वत। इनके 9 भंग बनते हैं।

समुच्चय के 9 भंग- 1. सभी जीव 13 योग वाले 2. तेरह वाले बहुत आहारक एक 3. 13 के बहुत आहारक बहुत 4. 13 के बहुत आहारक मिश्र का एक। 5. 13 के बहुत आहारक मिश्र बहुत 6. 13 के बहुत आहारक योग का 1 मिश्र का एक 7. 13 के बहुत आहारक योग का 1 आ. मिश्र का बहुत 8. 13 के बहुत आहारक योग बहुत आहारक मिश्र का एक 9. 13 के बहुत आहारक योग बहुत आहारक मिश्र बहुत (सिर्फ आहारक, आहारक मिश्र से 8 भंग भी होते हैं।)

नारकी और देवता इन 14 दंडकों में 11 योग- 4 मन, 4 वचन, 3 काय, (वैक्रिय, वैक्रिय. मिश्र, कार्मण) योग इनमें 10 शाश्वत्, कार्मण अशाश्वत है। इनके तीन भंग

1. सभी 10 (2.) 10 बहुत कार्मण एक (3.) 10 बहुत, कार्मण बहुत

चार स्थावर (वायुकाय छोड़) में तीन योग औदारिक, औदारिक मिश्र, कार्मण शाश्वत। ये सभी अभंग है।

वायुकाय- 5 योग शाश्वत उपरोक्त स्थावर के तीन तथा वैक्रिय, वैक्रिय मिश्र ये पांच। भंग नहीं बनते।

तीन विकलेन्द्रिय- 4 योग तीन शाश्वत व्यवहार वचन, औदारिक, औदारिक मिश्र, एक अशाश्वत कार्मण योग, इनके 3 भंग- 1. तीन शाश्वत सभी 2. तीन वाले बहुत, कार्मण एक 3. तीन बहुत, कार्मण बहुत।

तिर्यंच पंचेन्द्रिय- 13 योग (आहारक, आहारक मिश्र छोड़कर) इनमें से 12 शाश्वत एक कार्मण योग अशाश्वत। इनके 3 भंग 1. 12 योग सभी (2.) 12 बहुत 1 कार्मण (3.) 12 बहुत कार्मण बहुत।

मनुष्य- 15 योग होते हैं, इनमें से 11 योग शाश्वत 4 योग (औदारिक मिश्र, आहारक, आहारक मिश्र, कार्मण योग) आशाश्वत है। इनके 80 भंग बनते हैं। असंयोगी 8, दो संयोगी 24, तीन संयोगी 32, चार संयोगी 16 (औदारिक मिश्र=औमि, आहारक=आ., आहारक मिश्र- आमि, कार्मण = का) (एक 1 बहुत=2)

असंयोगी 8 भंग-

(1.) औमि एक (2.) औमि बहुत (3.) आ. एक (4.) आ. बहुत (1,2,1,2)
(5.) आमि 1, (6.) आमि 2 (7.) का 1 (8.) का 2 (1,2,1,2)

दो संयोगी 24 भंग-

1 से 4.- औमि 1 आ. 1., औमि 1 आ 2., औमि 2 आ. 1., औमि 2 आ 2
5 से 8- 5. औमि 1 आमि 1, औमि 1 आमि 2, औमि 2 आमि 1, औमि 2 आमि 2
9 से 12- औमि 1 का 1, औमि 1 का 2, औमि 2 का 1, औमि 2 का 2
13 से 16- आ 1 आमि 1, आ 1 आमि 2, आ. 2 आमि 1, आ 2 आमि 2
17 से 20- आ 1 का 1, आ 1 का 2, आ 2 का 1, आ 2 का 2
21 से 24- आमि 1 का 1, आमि 1 का 2, आमि 2 का 1, आमि 2 का 2
संकेत अंक (11,12,21,22)

तीन संयोगी 32 1 से 4- औमि 1 आ 1 आमि 1, औमि 1 आ 1 आमि 2 । आमि 1 आ 2 आमि 1, औमि 1 आ 2, आमि 2,

5 से 8- औमि 2 आ 1 आमि 1 औमि 2 आ 1 आमि 2,
औमि 2 आ 2 आमि 1, औमि 2 आ 2, आमि 2,
9 से 12- औमि 1 आ 1 का 1, औमि 1 आ 1 का 2,
औमि 1 आ 2 का 1, औमि 1 आ 2 का 2
13 से 16- औमि 2 आ 1 का 1 औमि 2 आ 1 का 2,
औमि 2 आ 2 का 1, औमि 2 आ 2 का 2
17 से 20- औमि 1 आमि 1 का 1, औमि 1 आमि 1 का 2,
औमि 1 आमि 2 का 1, औमि 1 आमि 2 का 2
21 से 24- औमि 2 आमि 1 का 1, औमि 2 आमि 1 का 2,
औमि 2, आमि 2 का 1, औमि 2 आमि 2 का 2
25 से 28- आ 1 आमि 1 का 1, आ 1 आमि 1 का 2,
आ 1 आमि 2 का 1, आ 1 आमि 2 का 2
29 से 32- आ 2 आमि 1 का 1, आ 2 आमि 1 का 2,
आ 2 आमि 2 का 1, आ 2 आमि 2 का 2
(अंक- 111, 112, 121, 122, 211, 212, 221, 222)
चार संयोगी 16- 1 से 4- औमि 1 आ 1 आमि 1 का 1, औमि 1 आ 1 आमि 1 का 2,
औमि 1 आ 1 आमि 2 का 1, औमि 1 आ 1 आमि 2 का 2
5 से 8- औमि 1 आ 2 आमि 1 का 1, औमि 1 आ 2 आमि 1 का 2,
औमि 1 आ 2 आमि 2 का 1, औमि 1 आ 2 आमि 2 का 2
9 से 12- औमि 2 आ 1 आमि 1 का 1, औमि 2 आ 1 आमि 1 का 2,
औमि 2 आ 1 आमि 2 का 1, औमि 2 आ 1 आमि 2 का 2
13 से 16- औमि 2 आ 2 आमि 1 का 1, औमि 2 आ 2 आमि 1 का 2,
औमि 2 आ 2 आमि 2 का 1, औमि 2 आ 2 आमि 2 का 2
(संकेत अंक-1111, 1112, 1121, 1122, 1211, 1212, 1221, 1222, 2111, 2112, 2121, 2122, 2211, 2212, 2221, 2222)
इस प्रकार समुच्चय के 8, नारकी देवता के 14×3=42, तीन विकलेन्द्रिय के 3×3=9, तिर्यंच पंचेन्द्रिय के 3 (54) मनुष्य के 80 ये कुल 143 भंग होते हैं। पांच स्थावर में भंग नहीं होते। मनुष्य में 81 भी गिने हैं (1+8+24+32+16)

33. पांच गति (पन्नवणा पद 16)- जीव एवं पुद्‌गल के हलन चलन स्पंदन रूप प्रवृत्ति गति प्रवाह है, इसमें सभी जीवाजीव की गतियां समाविष्ट हो जाती है। गति प्रवाह के पांच भेद- प्रयोग, तत, बंधन छेदन, उपपात, विहायोगति ये 5 भेद हैं।

1. प्रयोग गति- इसके 15 (प्रयोगों, योगों) भेद हैं मन वचन काय के पुद्‌गलों का हलन चलन उपरोक्त 143 भंग कहें।

2. तत गति- तत यानि विस्तीर्ण। व्यक्ति कहीं जाने के लिए रवाना होता है, पहुंचने के पूर्व रास्ते में चलना गंतव्य के एक एक कदम नजदीक जा रहा है, वह सामान्य गति तत गति प्रवाह है।

3. बंधन छेदन- बंधन के छेदन से जीव से रहित हुए शरीर की या शरीर से रहित हुए जीव की गति (गमन स्पंदन क्रिया) होती है, वह बंधन छेदन गति प्रवाह है।

4. उपपात गति- इसके तीन भेद है- क्षेत्र उपपात, भव उपपात, नोभव उपपात गति।

क्षेत्र उपपात- इसमें मूल 5 भेद- नरक क्षेत्र, तिर्यंच क्षेत्र, मनुष्य क्षेत्र, देव क्षेत्र, सिद्ध क्षेत्र उपपात गति। उत्तर भेद से 75 और मिलाकर 80 की गई है। इसमें 7 नरक, 5 तिर्यंच (एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय), मनुष्य के 2 (सम्मुर्च्छिम, गर्भज) देव के 4 (भवनपति यावत् वैमानिक) सिद्धगति के 57-जम्बूद्वीप के 11 (1) भरत ऐरवत, (2) चुल्ल हिमवंत शिखरी पर्वत, (3) हैमवत हैरण्य वत (4) शब्दापाती, विकटापाती वृत्त वैताढ्य (5) महाहिमवन्त, रूक्मी वर्षधर पर्वत (6) हरि वर्ष, रम्यक वर्ष (7) गंधापाति माल्यवंत (8) निषध, नीलवंत पर्वत (9) पूर्व विदेह, पश्चिम विदेह (10) देवकुरू, उत्तर कुरू (11) मेरू की चारों दिशा-विदिशा। इसी तरह धातकी खंड और पुष्करार्द्ध द्वीप में 22-22 तथा लवण समुद्र और कालोदधि ये 57 हुए।

भव उपपात- नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देव भव-ये मूल 4 तथा उत्तर भेद 18 (7 नरक, 5 तिर्यंच, 2 मनुष्य, 4 देवता) मिलाकर 22 भेद भव उपपात गति।

नो भव उपपात- इसके 2 भेद-पुदगल उपपात (नो भव उपपात), सिद्ध नोभव उपपात।

पुद्‌गल नोभव उपपात- पुद्‌गल नोभव उपपात गति के 6 भेद परमाणु पुद्‌गल 1 समय में जाता है-1. लोक के पूर्व चरमांत से पश्चिम चरमांत 2. पश्चिम चरमांत से पूर्व चरमांत 3. उत्तर चरमांत से दक्षिण चरमांत 4. दक्षिण चरमांत से उत्तर चरमांत 5. ऊर्ध्व लोक चरमांत से अधोलोक चरमांत 6. अधोलोक चरमांत से ऊर्ध्वलोक के चरमांत एक समय में जाता है।

सिद्ध नोभव उपपात- दो भेद है- अनंतर सिद्ध नोभव, परम्पर सिद्ध नोभव। अनंतर सिद्ध नोभव के तीर्थ सिद्ध, अतीर्थ सिद्ध आदि 15 भेद हैं। परम्पर सिद्ध के प्रथम समय यावत् दस समय, संख्यात समय यावत् अनंत समय सिद्ध ये 13 भेद है। यो कुल 6+15+13=34 भेद हुए।

विहायोगति- इसके 17 भेद हैं। 1. **स्पृशद् गति-** परमाणु पुद्गल यावत अनंत प्रदेशी का परमाणु यावत अनंत प्रदेशी स्कंध से स्पर्श करते हुए जाते हैं, उसे स्पृशद् गति कहते हैं।

2. **अस्पृशद् गति-** परमाणु आदि का परमाणु पुद्गल आदि से स्पर्श हुए बिना जाना अस्पर्शद् गति है।

3. **उपसंपद्यमान (आश्रय युक्त) गति-** राजा, युवराज, ईश्वर, कौटुम्बिक सेठ आदि का आश्रय लेकर गति करना।

4. **अनुपसंपद्यमान गति-** उपरोक्त राजा आदि किसी के भी आश्रय, सहारा लिये बिना गति करना।

5. **पुद्गल गति-** परमाणु पुदगल यावत अनंत प्रदेशी स्कंध की गति को पुद्गल गति कहते हैं।

6. **मंडूक गति-** मेंढ़क की तरह फुदक फुदक कर चलना।

7. **नौका गति-** महानदी में नौका आदि में जाना नौका गति है।

8. **नय गति-** नैगम आदि नयों से एक दूसरे की अपेक्षा रखते हुए नयों द्वारा प्रमाण करना नय गति।

9. **छाया गति-** हाथी, घोड़े, मनुष्य, किन्नर, महोरग, गंधर्व, वृषभ, रथ आदि की छाया के आधार से चलना।

10. **छायानुपात गति-** पुरुष के साथ छाया जाती है, छाया के साथ पुरुष नहीं जाता।

11. **लेश्या गति-** कृष्ण लेश्या नील के द्रव्य पाकर नील लेश्या के वर्ण गंध रस रूप परिवर्तित होती है। इसी तरह अन्य लेश्या का भी। दूसरी तीसरी के वर्ण गंध रस रूप परिवर्तित होती है यो पांचवी छठी के द्रव्यादि से छठी रूप परिवर्तित होती है।

12. **लेश्यानुपात गति-** जीव जिस लेश्या में काल करता है, उसी में उत्पन्न होता है यह लेश्यानुपात गति।

13. **उद्दिश्य प्रविभक्त गति-** आचार्य उपाध्याय आदि के पास उद्देश्य लेकर धर्मोपदेशादि सुनने जाना।

14. **चतुः पुरुष प्रविभक्त गति-** चार पुरुषों की 4 प्रकार की गति। जैसे-चारों साथ रवाना हुए साथ पहुंचे, अलग अलग रवाना हुए साथ में पहुंचे, अलग अलग रवाना हुए अलग अलग पहुंचे, साथ में रवाना हुए अलग अलग पहुंचे।

15. **वक्र गति-** चार तरह की होती है- घट्टन (लंगड़ाते हुए) स्तंभन (रूक रूककर चलना) श्लेषण (शरीर के अंगों से दूसरे अंग का स्पर्श करते चलना) प्रपतन (गिरते गिरते चलना) ये चारों अनिष्ट, अप्रशस्त है इसलिए वक्र गति है।

16. **पंक गति-** कीचड़ या जल में शरीर को स्थिर करके सहारा देकर चलना।

17. **बंधन विमोचन गति-** पके आम, बिजौरा, बिल्ब, सीताफल, दाड़िम आदि का टूटकर गिरना (पेड़ से)।

34. लेश्या के 1242 अलावा- (पन्नवणा पद 17. उ.1) लेश्या आत्मा के साथ कर्मों को चिपकाती है। यह जीव का परिणाम विशेष है, यह योग निमित्तक है यह कषायानुरंजित भी होती है, द्रव्यानुरंजित भी।

द्रव्य लेश्या- पुद्गल द्रव्य की सहायता से आत्मा के विविध परिणाम प्रकट होते हैं, उन परिणामों के अनुसार जो पुद्गलों (कृष्णादि द्रव्यों) का ग्रहण होता है वह द्रव्य लेश्या है।

भाव लेश्या- कर्म का उदय, उपशम, क्षय आदि से आत्म परिणाम और कषाय और योग से अनुरंजित आत्म परिणाम भाव लेश्या है।

भाव लेश्या अरूपी है, द्रव्य लेश्या रूपी है दोनों परस्पर सापेक्ष है, लेश्या सहित जीव सलेशी होते हैं।

आहार सम सरीरा, उस्सासे कम्म वण्ण लेसासु।
सम वेयण सम किरिया, समाउया चेव बोद्धव्वा।

यहां नौ द्वार से ग्रहण किया है, सभी के साथ सम विशेषण लगाया है 1. सम आहार, 2. शरीर 3. श्वासोच्छवास 4. कर्म 5. वर्ण 6. लेश्या 7. वेदना 8. क्रिया 9. आयुष्य। 24 दंडक में 9 द्वारों से सलेशी में आहार कर्म आदि का सम विषम वर्णन किया है-

1 से 3 सलेशी नारकी में आहार, शरीर, श्वासोच्छवास- ये सभी सम नहीं होते क्योंकि नैरयिक दो प्रकार के होते हैं- महाशरीर वाले अल्प शरीर वाले। महाशरीरी बहुत

पुद्‌गलों का आहार करते हैं, बहुत पचाते हैं, बहुत पुद्‌गलों को श्वास रूप लेते हैं, बाहर निकालते हैं, यह क्रिया बार बार करते हैं। अल्प शरीर वाले थोड़े पुद्‌गलों का आहार करते हैं, कभी करते हैं, कभी आहार पचाते हैं, कभी श्वास लेते हैं, कभी छोड़ते हैं।

4 से 6 सलेशी नारकी कर्म-वर्ण-लेश्या- से समान नहीं होते, नैरयिक दो प्रकार के-पूर्वोत्पन्न, पश्चादोत्पन्न। पूर्वोत्पन्न अल्प कर्म वाले होते हैं, वे कर्म भोग चुके होते हैं, इसीलिए पश्चादोत्पन्न महाकर्म वाले होते हैं। इसी तरह वर्ण भी और लेश्या भी समझना नूतन उत्पन्न अविशुद्ध होते हैं।

7. सलेशी नारकी में वेदना सम नहीं होती, संज्ञी असंज्ञी दो भेद से। जो संज्ञी होते हैं वे महा वेदना वाले और असंज्ञी अल्प वेदना वाले होते हैं।

8. नारकी सम क्रिया- वाले नहीं होते समदृष्टि और मिथ्या दृष्टि और मिश्र दृष्टि के कारण। जो समदृष्टि होते हैं, वे 4 क्रिया वाले होते हैं आरंभिकी, पारिग्रहिकी, माया प्रत्यया, अप्रत्याख्यान और मिथ्यादृष्टि और मिश्र दृष्टि में पांचों क्रियाएं (पूर्वोक्त 4 तथा मिथ्या दर्शन प्रत्यया) होती है।

9. नारकी सम आयु नहीं होते, ये 4 प्रकार के होते है 1. समान आयु साथ उत्पन्न 2. समान आयु विषम उत्पन्न 3. विषम आयु साथ उत्पन्न 4. विषम आयु विषम उत्पन्न।

देवता में- आहार शरीर श्वासोच्छवास इसी तरह वर्णन है। कर्म वर्ण लेश्या में विपरीत कथन है पूर्वोत्पन्न देव महाकर्म वाले है क्योंकि बहुत शुभ कर्म भोग लिये है देवायु के बाद पृथ्वी पानी आदि में उत्पन्न होने वाले हैं, पश्चादुत्पन्न अल्पकर्म वाले है, इसी तरह पूर्वोत्पन्न अविशुद्ध वर्ण वाले, पश्चादुत्पन्न विशुद्ध वर्ण वाले इसी तरह लेश्या कहनी। ज्योतिषी वैमानिक में दो दृष्टि। मायी मिथ्यादृष्टि के ज्योतिषी वैमानिक के साता वेदनीय के अपेक्षा अल्प वेदना, अमायी सम्यग्दृष्टि के साता वेदनीय की अपेक्षा महावेदना है।

पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय में- नैरयिकों के समान कथन। वेदना सरीखी असंज्ञी भूत है और अव्यक्त वेदना, क्रिया भी पांचों लगती है।

तिर्यंच पंचेन्द्रिय- नैरयिकों जैसा कथन, क्रिया में भेद है तीन दृष्टि होने से संयत में तीन क्रियाएं आरंभिकी, पारिग्रहिकी, माया प्रत्यया। समदृष्टि असंयत के चार (मिथ्यादर्शन छोड़) और मिथ्या दृष्टि के पांच क्रिया होती है।

मनुष्य- नारकी की तरह वर्णन है किन्तु आहार और क्रिया में अन्तर है। मनुष्य युगलिया बड़ी अवगाहना होने पर बहुत पुद्‌गलों का आहार अधिक तो ग्रहण करता है,

परन्तु बारम्बार नहीं करता, यह फर्क है। क्रिया की अपेक्षा मनुष्य में तीन दृष्टियां होती है। सम्यगदृष्टि के तीन भेद- संयत, असंयत, संयतासंमत। संयत दो तरह के- सराग-संयत के दो भेद- प्रमादी, अप्रमादी। अप्रमादी के एक माया प्रत्यया। प्रमादी के दो- आरंभिकी, माया प्रत्यया। वीतरागी के पांच में से एक भी नहीं होती। असंयत के 4 (मिथ्या दर्शन छोड़) , संयतासंयत के तीन आरंभिकी, परिग्राहिकी, माया प्रत्यया होती है। मिथ्या और मिश्र दृष्टि के पांच क्रियाऐं होती हैं। 24×9=216, समुच्चय 24 दंडक के 216 अलावे, इसी तरह प्रत्येक के साथ सलेशी जोड़कर 216 अलावे कहना।

कृष्ण नील कापोत 22 दंडक के 22×3×9=594 अलावा। नारकी में संज्ञी असंज्ञी से नहीं समदृष्टि मिथ्या दृष्टि से भेद करना। मनुष्य में तीन क्रिया की अपेक्षा (संयत, असंयत, संयतासंयत) भेद करना क्रमशः दो, चार, तीन क्रियाएं होती है।

तेजोलेश्या में 18 दंडक समुच्चय की तरह है, किन्तु वेदना में 15 दंडक मायी मिथ्यादृष्टि अमायी समदृष्टि से दो भेद हैं। पृथ्वी पानी वनस्पति में असंज्ञी की अपेक्षा अल्प वेदना, क्रिया से पांच क्रिया। मनुष्य में सराग वीतराग भेद नहीं करने। 18×9=162 अलावे हुए।

पद्म लेश्या शुक्ल लेश्या- तीन-तीन दंडक तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य, वैमानिक तेजोलेश्या की तरह परन्तु शुक्ल लेश्या में मनुष्य में सराग वीतराग भेद कहना 3×2×9×=54 अलावा। 216+216+594+162+54=1242 अलावा हुए।

35. लेश्या की अल्प बहुत्व (पन्नवणा पद 17 उ.2) लेश्या और जीवों में उनकी अल्प बहुत्व-

	जीव नाम	लेश्या	कृष्ण	नील	कापोत	तेजो	पद्म	शुक्ल	अलेशी
1	समुच्चय जीव	6	7 विशे.	6 विशे.	5 अनंत	3 सं.	2 सं.	1 अल्प	4 अनंत
2	नारकी	3	1 अल्प	2 असं.	3 असं.	-	-	-	-
3	तिर्यंच	6	6 विशे.	5 विशे.	4 अनं.	3 सं.	2 सं.	1 अल्प	-
4	एकेन्द्रिय	4	4 विशे.	3 विशे.	2 अनं.	1 अल्प	-	-	-
5	पृथ्वीकाय	4	4 विशे.	3 विशे.	2 असं.	1 अल्प	-	-	-
6	अप्काय	4	4 विशे.	3 विशे.	2 अनं.	1 अल्प	-	-	-
7	वनस्पति	4	4 विशे.	3 विशे.	2 अनं.	1 अल्प	-	-	-
8	वायुकाय	3	3 विशे.	2 विशे.	1 अल्प	-	-	-	-
9	तेउकाय	3	3 विशे.	2 विशे.	1 अल्प	-	-	-	-
10	द्वीन्द्रिय	3	3 विशे.	2 विशे.	1 अल्प	-	-	-	-

11	त्रीन्द्रिय	3	3 विशे.	2 विशे.	1 अल्प	-	-	-	-
12	चतुरिन्द्रिय	3	3 विशे.	2 विशे.	1 अल्प	-	-	-	-
13	समु.तिर्यंच पंचे.	6	6 विशे.	5 विशे.	4 असं.	3 सं.	2 सं.	1 अल्प	-
14	असंज्ञी ति. पंचे.	3	3 विशे.	2 विशे.	1 अल्प	-	-	-	-
15	गर्भज ति. पंचे.	6	6 विशे.	5 विशे.	4 असं.	3 सं.	2 सं.	1 अल्प	-
16	गर्भज स्त्री ति. पंचे.	6	6 विशे.	5 विशे.	4 असं.	3 सं.	2 सं.	1 अल्प	-
17	समुच्चय मनुष्य	6	7 विशे.	6 विशे.	5 असं.	4 सं.	3 सं.	2 सं.	1 अल्प
18	समुर्च्छिम मनुष्य	3	3 विशे.	2 विशे.	1 अल्प	-	-	-	-
19	गर्भज मनुष्य	6	7 विशे.	6 विशे.	5 सं.	4 सं.	3 सं.	2 सं.	1 अल्प
20	गर्भज स्त्री	6	7 विशे.	6 विशे.	5 सं.	4 सं.	3 सं.	2 सं.	1 अल्प
21	समुच्चय देव	6	5 विशे.	4 विशे.	3 असं.	6 सं.	2 असं.	1 अल्प	
22	समुच्चय देवी	4	3 विशे.	2 विशे.	1 अल्प	4 सं.	-	-	-
23	भवनपति देव	4	4 विशे.	3 विशे.	2 असं.	1 अल्प	-	-	-
24	भवनपति देवी	4	4 विशे.	3 विशे.	2 असं.	1 अल्प	-	-	-
25	व्यंतर देव	4	4 विशे.	3 विशे.	2 असं.	1 अल्प	-	-	-
26	व्यंतर देवी	4	4 विशे.	3 विशे.	2 असं.	1 अल्प	-	-	-
27	ज्योतिषी देव	1	-	-	-	1 सभी	-	-	-
28	ज्योतिषी देवी	1	-	-	-	1 सभी	-	-	-
29	वैमानिक देव	3 विशुद्ध	-	-	-	3 असं.	2 असं.	1 अल्प	-
30	वैमानिक देवी	1	-	-	-	1 सभी	-	-	-

गर्भज तिर्यंच पंचेन्द्रिय और तिर्यंच स्त्री के 12 बोल शामिल अल्प बहुत्व- अल्प बहुत्व इस प्रकार हैं-

	लेश्या	कृष्ण	नील	कापोत	तेजो	पदम	शुक्ल
गर्भज तिर्यंच	6	9 विशे.	8 विशे.	7 सं.	5 सं.	3 सं.	1 अल्प
गर्भज तिर्यंचणी	6	12 विशे.	11 विशे.	10 सं.	6 सं.	4 सं.	2 संख्यात

गर्भज तिर्यंच पंचेन्द्रिय और सम्मुर्च्छिम तिर्यंच पंचेन्द्रिय 9 बोल-अल्प बहुत्व-

गर्भज तिर्यंच पं.	6	6 विशे.	5 विशे.	4 सं.	3 सं.	2 सं.	1 अल्प
सम्मुर्च्छिम ति.पं.	3	9 विशे.	8 विशे.	1 असं.	-	-	-

तिर्यंच स्त्री और सम्मुर्च्छिम तिर्यंच पंचेन्द्रिय के 9 अल्प बहुत्व- उपरोक्त अनुसार कहना गर्भज तिर्यंच के स्थान स्त्री कहना।

गर्भज ति. पंचेन्द्रिय गर्भज स्त्री और सम्मुर्च्छिम ति. पंचे. 15 बोल अल्प बहुत्व-

	लेश्या	कृष्ण	नील	कापोत	तेजो	पदम	शुक्ल
गर्भज तिर्यंच	6	9 विशे.	8 विशे.	7 सं.	5 सं.	3 सं.	1 अल्प
गर्भज तिर्यंचणी	6	12 विशे.	11 विशे.	10 सं.	6 सं.	4 सं.	2 संख्यात
सम्मुर्च्छिम तिर्यंच	3	15 विशे.	14 विशे.	13 असं.			

समुच्चय तिर्यंच पंचेन्द्रिय, तिर्यंच स्त्री के 12 बोल अल्प बहुत्व-

	लेश्या	कृष्ण	नील	कापोत	तेजो	पदम	शुक्ल
तिर्यंच पंचेन्द्रिय	6	12 विशे.	11 विशे.	10 असं.	5 सं.	3 सं.	1 अल्प
तिर्यंच स्त्री	6	9 विशे.	8 विशे.	7 सं.	6 सं.	4 सं.	2 सं.

समुच्चय तिर्यंच और तिर्यंच स्त्री के 12 बोल अल्प बहुत्व- उपरोक्त समुच्चय तिर्यंच पंचेन्द्रिय तिर्यंच स्त्री की तरह है, किन्तु 10वें बोल में कापोत लेश्या वाले तिर्यंच अनंत कहना।

गर्भज मनुष्य और गर्भज स्त्री के 12 बोल अल्प बहुत्व-

नाम जीव	लेश्या	कृष्ण	नील	कापोत	तेजो	पदम	शुक्ल
गर्भज मनुष्य	6	9 विशे.	8 विशे.	7 सं.	5 सं.	3 सं.	1 अल्प
गर्भज स्त्री	6	12 विशे.	11 विशे.	10 सं.	6 सं.	4 सं.	2 सं.

गर्भज मनुष्य तथा सम्मुर्च्छिम के 9-9 अल्प बहुत्व-

गर्भज मनुष्य/स्त्री	6	6 विशे.	5 विशे.	4 असं.	3 सं.	2 सं.	1 अल्प
सम्मुर्च्छिम	3	9 विशे.	8 विशे.	7 असं.			

गर्भज मनुष्य और गर्भज स्त्री तथा सम्मुर्च्छिम मनुष्य का 15 बोलों का अल्प बहुत्व-

गर्भज मनुष्य	6	9 विशे.	8 विशे.	7 सं.	5 सं.	3 सं.	1 अल्प
गर्भज स्त्री	6	12 विशे.	11 विशे.	10 सं.	6 सं.	4 सं.	2 सं.
सम्मुर्च्छिम मनुष्य	3	15 विशे.	14 विशे.	13 असं.			

सम्मुचय मनुष्य,स्त्री की अल्प बहुत्व 12 बोल-

मनुष्य समुच्चय	6	12 विशे.	11 विशे.	10 असं.	5 सं.	3 सं.	1 अल्प
स्त्री समुच्चय	6	9 विशे.	8 विशे.	7 सं.	6 सं.	4 सं.	2 सं.

देव देवी के 10 बोलों का शामिल अल्प बहुत्व-

	लेश्या	कृष्ण	नील	कापोत	तेजो	पदम	शुक्ल
देव	6	5 विशे.	4 विशे.	3 असं.	9 सं.	2 असं.	1 अल्प
देवी	4	8 विशे.	7 विशे.	6 सं.	10 सं.	-	-

भवनपति देव देवियों के 8 अल्प बहुत्व-

नाम	लेश्या	कृष्ण	नील	कापोत	तेजो
भवनपति देव	4	5 विशे.	4 विशे.	3 असं.	1 अल्प
भवनपति देवी	4	8 विशे.	7 विशे.	6 सं.	2 सं.

व्यंतर देव देवी के 8 बोल- भवनपति की तरह कहना भवनपति देव-देवी की जगह व्यंतर कहना।

ज्योतिषी देव देवी के 2 बोल- 1. सबसे अल्प ज्योतिषी देव 2. देवियां संख्यात गुणा तेजोलेश्या ही होती है।

वैमानिक देव, देवी के 4 बोल-

देव	लेश्या	तेजो	पदम	शुक्ल
वैमानिक देव	3	3 असं.	2 असं.	1 अल्प
वैमानिक देवी	1	1 सं.	-	-

समुच्चय देवों के 12 बोल का अल्प बहुत्व-

देव	लेश्या	कृष्ण	नील	कापोत	तेजो	पदम	शुक्ल
भवनपति देव	4	7 विशे.	6 विशे.	5 असं.	4 असं.	-	-
व्यंतर देव	4	11 विशे.	10 विशे.	9 असं.	8 असं.	-	-
ज्योतिषी देव	1	-	-	-	12 सं.	-	-
वैमानिक देव	3	-	-	-	3 असं.	2 असं.	1 अल्प

समुच्चय देवियों के 10 अल्प बहुत्व-

	लेश्या	कृष्ण	नील	कापोत	तेजो	पदम	शुक्ल
भवनपति देवियां	4	5 विशे.	4 विशे.	3 असं.	2 असं.	-	-
व्यंतर देवियां	4	9 विशे.	8 विशे.	7 असं.	6 असं.	-	-
ज्योतिषी देवियां	1	-	-	-	10 सं.	-	-
वैमानिक देवियां	1	-	-	-	1 अल्प	-	-

देव देवियों के 22 बोल अल्प बहुत्व-

नाम	लेश्या	कृष्ण	नील	कापोत	तेजो	पदम	शुक्ल
भवनपति देव		9 विशेष.	8 विशेष.	7 असं.	5 असं.	-	-
भवनपति देवी		12 विशेष.	11 विशेष.	10 सं.	6 सं.	-	-
व्यंतर देव		17 विशेष.	16 विशेष.	15 असं.	13 असं.	-	-
व्यंतर देवी		20 विशेष.	19 विशेष.	18 सं.	14 सं.	-	-
ज्योतिषी देव		-	-	-	21 सं.	-	-
ज्योतिषी देवी		-	-	-	22 सं.	-	-
वैमानिक देव		-	-	-	3 असं.	2 असं.	1 अल्प
वैमानिक देवी		-	-	-	4 सं.	-	-

अल्प ऋद्धि महा ऋद्धि- कृष्ण लेश्या वाले अल्प ऋद्धि वाले तथा आगे की लेश्या वाले महा ऋद्धि वाले होते हैं, यावत् शुक्ल लेश्या वाले महाऋद्धि वाले होते हैं। कृष्ण लेश्या वाले सभी जीव अल्प ऋद्धि शेष पांच लेश्या के महा ऋद्धि वाले होते हैं। नारकों में 1. सबसे थोड़े अल्प ऋद्धिक कृष्ण लेश्या वाले, 2. उनसे नील लेश्या वाले महर्द्धिक 3. उनसे कापोत लेशी महर्द्धिक। इसी तरह सभी बोलों की अल्प बहुत्व कहनी। 24 दंडक में लेश्या के 30 अलावे, 46 अल्प बहुत्व के 46, अल्पर्द्धिक के महर्द्धिक के 46 यों कुल 122 अलावा हुए।

36. लेश्या (पन्नवणा पद 17 उ. 3) 1.नैरयिक ही नरक में उत्पन्न होता है, अनैरयिक नारकी में उत्पन्न नहीं होता, क्योंकि नरकायु आरंभ होने के बाद ही जीव वहां जाते हैं, इसी तरह 24 दंडक में समझें।

2. नारकी में से अनैरियक निकलता है, नैरयिक नहीं निकलता (उद्वर्त्तन)। इसी तरह 24 दंडक में कहना। ज्योतिषी वैमानिक में उद्वर्त्तन की जगह च्यवन कहना।

3. कृष्ण लेशी नारक कृष्ण लेशी रूप उत्पन्न होता है, उसी लेश्या में मरता है इसी तरह नील और कापोत का भी समझें। नारकी की तरह देवता के 13 दंडक में भी कहना। भवनपति, व्यंतर में पहली चार लेश्याएं ज्योतिषी में तेजोलेश्या, वैमानिक में ऊपर की तीन विशुद्ध लेश्याएं होती है। ज्योतिषी वैमानिकों में उद्वर्त्तन की जगह च्यवन कहना। औदारिक के 10 दंडक के जीव जिस लेश्या से उत्पन्न होते हैं, वे उसी लेश्या के साथ अथवा दूसरी लेश्या से भी उद्वर्त्तते हैं। किन्तु पृथ्वी पानी वनस्पति के जीव तेजोलेश्या से उत्पन्न होते हैं, वे तेजोलेश्या के साथ मरते नहीं है, अन्य तीन कृष्णादि में मरते हैं। परन्तु जिस लेश्या में जीव मरते हैं, उसी लेश्या में उत्पन्न होते हैं यह नियम 24 दंडक में है। मनुष्य और तिर्यंच में एक-एक अन्तर्मुहुर्त से लेश्या परिवर्तन होता ही रहता है। मृत्यु समय कोई भी लेश्या (जो उपलब्ध) हो सकती है। जिस दंडक में जितनी लेश्या हो वही कथन करना। नारकी देवता में जन्म से मृत्यु तक द्रव्य लेश्या एक ही होती है, भाव लेश्या कोई भी हो सकती है।

4. दो कृष्ण लेशी नारक अवधि ज्ञान से समान जानते, देखते हैं, विषम भी जानते देखते हैं। एक समतल पर हो, दूसरा नीचे जमीन पर है, इन दोनों में अन्तर है, उसी प्रकार दो कृष्णलेशी में भी अवधिज्ञान से जानने देखने में अन्तर है, इसी प्रकार नील लेशी और कापोत लेशी का भी समझें जैसे पर्वत पर और पृथ्वी पर तथा पर्वत के ऊपरी सतह के वृक्ष पर चढ़कर तथा पर्वत चोटी से देखे ये विभिन्नताएं उनमें मिलती है।

सातवीं नरक का नैरयिक जघन्य आधा कोस उत्कृष्ट एक कोस, छठी का एक कोस, उ. डेढ कोस, पांचवी का डेढ कोस, उ. दो कोस, चौथी का दो कोस, उ. ढ़ाई कोस, तीसरी का ढाई कोस उ. तीन कोस दूसरी का तीन कोस उ. साढ़े तीन कोस पहली का साढ़े तीन कोस उत्कृष्ट चार कोस प्रमाण क्षेत्र जानता देखता है।

5. समुच्चय लेश्या में दो ज्ञान (मति श्रुत) तीन ज्ञान (मतिश्रुत अवधि अथवा मनःपर्यव ज्ञान) चार ज्ञान (उपरोक्त चारों) अथवा एक केवल ज्ञान हो सकते हैं। कृष्ण लेश्या में दो, तीन, चार, इसी तरह नील और कापोत में भी और पद्म लेश्या में भी 2-3-4 ज्ञान होते हैं। शुक्ल लेश्या में 2,3,4 और एक ज्ञान भी होते हैं।

उत्पन्न होने के 24, उद्वर्त्तन के (च्यवन के) 24 तीसरे प्रश्न के 90 (नारकी के 3, भवनपति के 40, व्यंतर के 4, ज्योतिषी का 1, वैमानिक के तीन, पृथ्वी पानी वनस्पति के $4 \times 3 = 12$ तेउवायु के $3 \times 2 = 6$ विकलेन्द्रिय के 9 तिर्यंच पंचेन्द्रिय के 6 मनुष्य के 6 ये कुल 90) अलावा हुए। चौथे के तीन (तीन लेश्या की अपेक्षा) पांचवे के 30 अलावा (6 लेश्या में 5 ज्ञान) कुल 171 अलावा हुए।

37. लेश्या परिणाम (पन्नवणा पद 17 उ .4) एक लेश्या का अन्य लेश्या रूप परिणमन होता है-

परिणाम वण्ण रस गंध, सुद्ध अप्पसत्थ संकिलिट्ठुण्हा।
गई परिणाम पएसोगाढ़, वग्गण ठाणाण मप्प बहुं॥

15 द्वार हैं-

1. परिणाम द्वार- जिस प्रकार दूध छाछ के संयोग से अपना मीठा स्वाद छोड़ खट्टा बन जाता है, श्वेत वस्त्र मंजीठादि के रंग से मंजीठा वर्ण का हो जाता है, उसी प्रकार कृष्ण लेश्या नील आदि लेश्या जिस लेश्या का संयोग मिला उसमें आगे से आगे परिवर्तित हो जाती है। बार बार परिणत हो जाती है। जैसे वैडूर्य मणि जिस रंग का धागा पिरोये उसी रंग की दिखती हे, इसी प्रकार कृष्णादि लेश्याएं भी शेष लेश्याएं भी भिन्न पांच लेश्याआ को पाकर उनके वर्ण गंध रस स्पर्श रूप बार बार परिवर्तित होती है।

2. वर्ण द्वार- कृष्ण लेश्या- का वर्ण काला होता है- अंजन, खंजन, भेंस का सींग, काजल, कोयल, भ्रमर, भंवर पंक्ति, हाथी का बच्चा, माथे के बाल, कृष्ण अशोक, काला कनेर, आदि से भी काला होता है। उससे भी अनिष्ट, अकांत, अमनोज्ञ, अप्रिय, अमनोज्ञतर है। नील लेश्या- नीला रंग (वर्ण) तोता, चास पक्षी, कबूतर की ग्रीवा, मयूर

ग्रीवा, अलसी का फूल, नील कमल, नीला अशोक, नील कनेर इनसे भी अनिष्ट अनिष्टतर आदि।

कापोत लेश्या- बेंगनी वर्ण है (लाल-काला मिश्र) खैरसार, करीर सार, धमास सार, तांबा, ताम्बा पात्र, बैंगन फूल, जवासा कुसुम ये प्रमुख बैंगनी वर्ण से भी अनिष्ट अकांत अमनोज्ञ हैं।

तेजोलेश्या- लाल वर्ण खरगोश, सांबर, बकरे और मनुष्य के रक्त, इन्द्र गोप, बाल सूर्य, संध्या समय लालिमा, गुंजा का आधा लाल भाग, जाति वंत हींगलू, प्रवालांकुर, लाक्षा रस, लोहिताक्षमणि, किरमची रंग की कम्बल, हाथी का तलवा, पारिजात पुष्प, जवा कुसुम, ढ़ाक का फूल, रक्त कमल, रक्त अशोक, रक्त कणेर, इनसे भी तेजो लेश्या का वर्ण अधिक इष्ट, कांत, मनोज्ञ मनोज्ञतर है।

पद्म लेश्या- पीला वर्ण है- चम्पक, चम्पक की छाल, हल्दी, हल्दी गुटिका, हल्दी टुकड़ा, हरिताल गुटिका, हरिताल टुकड़ा, स्वर्णचीप, सोने का कश, वासुदेव का पीत वस्त्र, स्वर्ण चम्पा पुष्प, कोला पुष्प, कोरंट पुष्पों की माला, पीत अशोक, पीत कनेर इन से भी पद्म लेश्या का वर्ण ईष्ट, कान्त, मनोज्ञ, प्रिय, मनोज्ञतर हैं।

शुक्ल लेश्या- श्वेत वर्ण है- अंक रत्न, शंख, चन्द्र, मोगरा, जल, दूध, दही, बल्लादी की सूखी फली, शरद ऋतु के बादल, कुमुद और पुण्डरीक की पंखुड़ी, चावल आटा, श्वेत अशोक, श्वेत कनेर, आदि श्वेत पदार्थों से भी अधिक ईष्ट, कांत, प्रिय, मनोज्ञ, मनोज्ञतर वर्ण हैं। इन 6 लेश्या में कापोत मिश्र है शेष स्वतंत्र वर्ण हैं।

3. रस द्वार- कृष्ण लेश्या का रस कडवा होता है- नीम, तुम्बा, रोहिणी, कुटज, कड़वी ककडी, कड़वी तुरई, आदि से भी कृष्ण लेश्या स्वाद में अधिक अनिष्ट, अकांत, अप्रिय, अमनोज्ञ अमनोज्ञतर है।

नील लेश्या- का रस तीखा (तीक्ष्ण) होता है, भृंगी, भृंगराज, गवारपाठा, चित्रमूल, पीपर, पीपर मूल, पीपर चूर्ण, मिर्च, मिर्च का चूर्ण, सौंठ, सौंठ चूर्ण आदि प्रमुख तीक्ष्ण पदार्थों से भी अनिष्ट, अप्रिय आदि।

कापोत लेश्या- खट्टा रस होता है- कच्चा आम (केरी), अम्बाड़ा, कच्चा बिल्ब, बिजौरा, कच्चा कबीठ, कच्ची दाड़िम, कच्चा अखरोट, कच्चा बेर, तिन्दुक (टीमरू) आदि से भी अनिष्ट, अप्रिय, अकांत, अमनोज्ञ हैं।

तेजोलेश्या- कुछ खट्टा अधिक मीठा, पके हुए आम आदि फलों से अधिक ईष्ट, कांत, प्रिय, मनोज्ञ आदि।

पद्म लेश्या- मीठा स्वाद, चन्द्रप्रभा, मणिशीला, सीधु, वर वारुणी, पत्रासक, पुष्पासव, फलासव, खजूर सार, द्राक्षासार, गन्नों का इक्षुरस, अवलेह, मध के समान उससे भी ईष्ट कान्त प्रिय मनोज्ञ है।

शुक्ल लेश्या- विशेष मीठा- गुड़, शक्कर, खांड, मिश्री, आदर्शिका मिठाई से भी ईष्ट कांत प्रिय है।

4. **गंधद्वार-** तीन अप्रशस्त लेश्याएं दुर्गंधमय यानि जानवरों के मृत कलेवरों सी दुर्गध वाली है। और तीन प्रशस्त लेश्याएं सुरभि गंध वाली है। अत्यंत दुर्गंध अनन्त सुगंध ऐसा क्रम समझें।

5. **शुद्ध द्वार-** पहली तीन लेश्याएं अप्रशस्त वर्ण, गंध, रस वाली है वे अविशुद्ध है, पिछली तीन प्रशस्त लेश्याएं है, प्रशस्त द्रव्य रूप है, प्रशस्त अध्यवसाय उत्पन्न कराने वाली है।

6. **अप्रशस्त द्वार-** पहली तीन लेश्याएं अप्रशस्त द्रव्य रूप, अप्रशस्त अध्यवसाय उत्पन्न कराने वाली है। पिछली तीन प्रशस्त-प्रशस्त लेश्याएं है, प्रशस्त द्रव्य रूप है, प्रशस्त अध्यवसाय उत्पन्न कराने वाली है।

7. **संक्लिष्ट द्वार-** पहली तीन लेश्याएं आर्त्त रौद्र ध्यान से संक्लिष्ट अध्यवसाय पैदा करने वाली है, पिछली तीन धर्म ध्यान शुक्ल ध्यान से असंक्लिष्ट अध्यवसाय जनक होने से असंक्लिष्ट हैं।

8. **उष्ण द्वार-** पहली तीन शीत और रूक्ष स्पर्श वाली, पिछली तीन उष्ण स्निग्ध स्पर्श वाली है।

9. **गति द्वार-** पहली तीन संक्लिष्ट अध्यवसाय जनक होने से दुर्गति में ले जाती है, पिछली तीन सुगति में।

10. **परिणाम द्वार-** कृष्ण लेश्या के तीन परिणाम जघन्य मध्यम उत्कृष्ट। पुनः इनके तीन-तीन यों क्रमशः 3, 9, 27, 81, 243 प्रकार होते हैं इसी प्रकार सभी के बहुविध परिणाम होते हैं।

11. **प्रदेश द्वार-** कृष्ण आदि छः हों लेश्याएं अनंत प्रदेशी हैं।

12. अवगाढ़ द्वार- प्रत्येक लेश्या असंख्यात आकाश प्रदेशों में रही हुई है।

13. वर्गणा द्वार- प्रत्येक लेश्या योग्य द्रव्य परमाणुओं की अनंत अनंत वर्गणाएं है।

14. **स्थान द्वार-** विशुद्धि अविशुद्धि के प्रकर्ष (अधिकता) अप्रकर्ष की अपेक्षा लेश्या के भेद उनके स्थान है। भाव लेश्या की अपेक्षा असंख्यात स्थान हैं। असंख्यात में काल की अपेक्षा असंख्यात उत्सर्पिणी अवसर्पिणी के समय परिमाण और असंख्यात क्षेत्र की अपेक्षा असंख्यात लोकाकाश के प्रदेश परिमाण। अशुभ लेश्याओं के अविशुद्ध रूप स्थान और शुभ लेश्याओं के स्थान विशुद्ध होते हैं। भाव लेश्याओं के स्थानों के कारण भूत कृष्णादि द्रव्यों के समूह भी स्थान कहे हैं। ये भी प्रत्येक लेश्या के असंख्यात असंख्यात है। जघन्य लेश्या के जघन्य उत्कृष्ट लेश्या के उत्कृष्ट परिणाम से दो भेद होते हैं। जघन्य उत्कृष्ट में भी गुणों के असंख्यात, परिणाम भेद होते हैं जैसे स्फटिक मणि जघन्य रक्त आलता से जघन्य रक्त अधिक रक्त आलता से एक दो तीन यावत् असंख्यात गुण अधिक रक्त हो जाती है। इसी तरह लेश्या के द्रव्यों के योग से लेश्या के असंख्य परिणाम होते हैं। उत्कृष्ट स्थान भी असंख्यात है। परिणामों की धारा के चढ़ने से, उतरने से लेश्याओं के स्थान भी बदलते रहते हैं।

15. **अल्प बहुत्व द्वार-** छहों लेश्याओं के जघन्य, उत्कृष्ट तथा जघन्य उत्कृष्ट (संयुक्त) स्थानों की द्रव्य, प्रदेश तथा द्रव्य प्रदेश से अल्प बहुत्व-

छः लेश्याओं का जघन्य स्थानों का द्रव्य से, प्रदेश से, द्रव्य प्रदेश दोनों से संयुक्त अल्प बहुत्व-

अल्प बहुत्व	कृष्ण	नील	कापोत	तेजो	पद्म	शुक्ल
द्रव्य से	3 असं.	2 असं.	1 अल्प	4 असं.	5 असं.	6 असं.
प्रदेश से	3 असं.	2 असं.	1 अल्प	4 असं.	5 असं.	6 असं.
द्रव्य प्रदेश दोनों से (पहले द्रव्य फिर प्रदेश)	3 असं./9असं	2 असं./8असं	1 अल्प/7असं	4 असं./10असं	5 असं./11असं	6 असं./12 असं

छः लेश्याओं के उत्कृष्ट स्थानों की तीनों अल्प बहुत्व भी उपरोक्त अनुसार कहना।

छः लेश्या के जघन्य उत्कृष्ट (संयुक्त) स्थानों की द्रव्य अपेक्षा अल्प बहुत्व-

द्रव्य अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट स्थान

अल्प बहुत्व	**कृष्ण**	**नील**	**कापोत**	**तेजो**	**पद्म**	**शुक्ल**
जघन्य स्थान	3 असं.	2 असं.	1 अल्प	4 असं.	5 असं.	6 असं.
उत्कृष्ट स्थान	9 असं.	8 असं.	7 असं.	10 असं.	11 असं.	12 असं.

जघन्य उत्कृष्ट (संयुक्त) स्थानों की प्रदेश अपेक्षा से भी उपरोक्त अल्प बहुत्व है यहां प्रदेश अपेक्षा कहना।

छः लेश्या के जघन्य उत्कृष्ट (संयुक्त) स्थानों की द्रव्य प्रदेश की संयुक्त अल्प बहुत्व-

अल्प बहुत्व	कृष्ण		नील		कापोत		तेजो		पद्म		शुक्ल	
	द्रव्य	प्रदेश	द्रव्य	प्रदेश	द्रव्य	प्रदेश	द्रव्य	प्रदेश	द्रव्य	प्रदेश	द्रव्य	प्रदेश
जघन्य स्थान	3 असं.	15 असं.	2 असं.	14 असं	1 अल्प	13 असं.	4 असं.	16 असं.	5 असं.	17 असं.	6 असं.	18 असं.
उत्कृष्ट स्थान	9 असं.	21 असं.	8 असं.	20 असं.	7 असं.	19 असं.	10 असं.	22 असं.	11 असं.	23 असं.	12 असं.	24 असं.

इसमें जघन्य उत्कृष्ट संयुक्त की द्रव्य एवं प्रदेश दोनों की संयुक्त रूप से अल्प बहुत्व बताई है। कृष्ण लेश्या के जघन्य स्थान द्रव्य से 3 असंख्यात गुणा, प्रदेश से 15 असंख्यात गुणा उत्कृष्ट स्थान में 9 असं. और 21 असं.।

38. लेश्या परिणाम (पन्नवणा पद 17 उ.5) इससे पूर्व के थोकड़े में तिर्यंच और मनुष्य की अपेक्षा से परिणाम द्वार से द्रव्य और भाव लेश्या का बार बार बदलना बताया गया था। यहां पर नरक और देव की अपेक्षा कथन है। कृष्ण लेश्या नील लेश्या को पाकर उसके रूप मे वर्ण गंध रस स्पर्श रूप बदलती नहीं है। नील लेश्या का संपर्क पाकर कृष्ण लेश्या में आकार (छाया) मात्र रहता है। परिणत नहीं होती। इसी प्रकार सभी लेश्या के संबंध में समझना। द्रव्य और भाव लेश्या बदलती नहीं है। इसीलिए वहाँ नरक और देवों में एक लेश्या का अन्य रूप में परिणत होने का निषेध कहा है। किन्तु अन्य लेश्या के संपर्क में आने पर तदाकार हो जाती है, इस प्रकार भाव परावर्तन से छहों लेश्याएं घटित होती है अतः सातवी नरक में सम्यक्त्व प्राप्त होने में कोई बाधा नहीं है।

39. लेश्या (पन्नवणा पद 17 उ. 6) समुच्चय जीव में 6 लेश्याएं होती है। कर्म भूमिज मनुष्य और स्त्री में तथा मनुष्य, स्त्री में 6-6 लेश्याएं होती है। भरत, ऐरवत तथा पूर्व, पश्चिम महाविदेह के मनुष्यों तथा मनुष्य स्त्री में 6-6 लेश्याएं होती है। अकर्म भूमि तथा छप्पन अन्तर्द्वीपों एवं हैमवत, हैरण्य वत, हरिवर्ष, रम्यक वर्ष, देवकुरू, उत्तर कुरू के मनुष्य और मनुष्य स्त्री में 4-4 लेश्याएं होती हैं। इसी अनुसार धातकी खंड और पुष्करार्द्ध द्वीप में समझना। ये 19+38+38=95अलावा हुए।

किसी भी लेश्या वाला किसी भी लेश्या वाले पुत्रादि को जन्म दे सकता है कृष्ण वाला यावत् शुक्ल और शुक्ल वाला कृष्ण से यावत् शुक्ल यानि माता पिता का संतान में लेश्या का कोई संबंध या प्रतिबंध नहीं होता। छहों लेश्या वाले छहो लेश्या वाले को गर्भ से उत्पन्न कर सकते हैं। ये 6×6=36 अलावा और मनुष्य, मनुष्य स्त्री, मनुष्य एवं स्त्री शामिल के 36×3=108 अलावा हुए। अकर्म भूमि के अन्तर्द्वीपज के 4×4=16×3=

48-48 अलावा हुए। जम्बू द्वीप के 19, घातकी खंड के 38, पुष्करार्द्धद्वीप के 38, समुच्चय मनुष्य 108 कर्म भूमि मनुष्य 108, अकर्म भूमि 48, अन्तरद्वीप के 48 ये कुल 407 अलावा हुए। अन्य विधान से 6060 अलावा भी कहते हैं। समुच्चय मनुष्य, मनुष्य और स्त्री के 108, इसी तरह कर्मभूमि के 108 (5 भरत 5 एरवत 5 महाविदेह) 15×108=1620 समुच्चय अकर्मभूमिज के तीनों के 48, तीस अकर्मभूमिज 30×48=1440 इसी तरह 56 अन्तर्द्वीपाज के 56×48=2688 यों कुल 108+108+1620+48+1440+48+2688=6060 हुए।

40. काय स्थिति (पन्नवणा पद 18) सामान्य रूप से अथवा विशेष रूप से पर्याय में जीव के निरंतर रहने का काल काय स्थिति है। जीव की जीवत्व रूप पर्याय सामान्य है, नरक तिर्यंचादि रूप पर्याय विशेष पर्याय है। जीव एक भव में जितने काल रहे वह भव स्थिति, जैसे पृथ्वीकाय के एक भव की जघन्य अन्तर्मुहुर्त उत्कृष्ट 22 हजार वर्ष। और पृथ्वीकाय आदि एक ही काय का जीव उसी काय में निरंतर जन्म मरण करता रहे, दूसरी (अन्य) काय में उत्पन्न न हो वह उसकी काय स्थिति होती है। काय स्थिति में अनेक अनंत भव भी हो सकते हैं, और पूरा एक भव भी नहीं होता है। दंडक, गति आदि की एवं जीव के भाव, पर्याय, ज्ञान, दर्शन, योग, उपयोग, कषाय, लेश्या आदि की भी काय स्थिति होती है। इसी प्रकार यहां मुख्य 22 द्वारों से काय स्थिति कही है। प्रत्येक द्वार में अनेकानेक प्रकार है यहां 22 द्वार के 205 भेदों से काय स्थिति कही गई है।

जीव गइइंदिय काए, जोए वेद कसाय, लेसाय।
सम्मत णाण दंसण संजय उवओग आहारे॥
भाषग परित्त पज्जत, सुहुम, सण्णी भवत्थि चरमेय।
एतिसिं तु पदाणं, काय ठिई होइ णायव्वा॥

1. जीव पद 2. गति 3. इन्द्रिय . काय पद 5. योग 6. वेद 7. कषाय 8. लेश्या 9. सम्यक्त्व 10. ज्ञान 11. दर्शन 12. संयत 13. उपयोग 14. आहार 15. भाषक 16. परित्त 17. पर्याप्त 18. सूक्ष्म 19. संज्ञी 20. भव्य (भव सिद्धिक) 21. अस्तिकाय पद 22. चरम पद।

इनके वर्णन में संक्षिप्त शब्द दिये जा रहे हैं, इनका स्पष्टीकरण इस प्रकार है-

बादर काल (असंख्याता काल) द्रव्य से असंख्याता उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल, क्षेत्र से अंगुल के असंख्यातवें भाग में रहे आकाश प्रदेश प्रमाण, काल से असंख्याता काल, भाव से बादर काल।

पृथ्वीकाल (असंख्याता काल) द्रव्य से असंख्याता उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल, क्षेत्र से असंख्यात लोक के आकाश प्रदेश खाली हो उतने काल, काल से असंख्यात, काल, भाव से अंगुल के असंख्यातवां भाग के आकाशप्रदेश की संख्या जितना लोक, उतना लोक का आकाश प्रदेश प्रमाण।

अर्द्ध पुदगल परावर्त्तन काल (अनंताकाल) द्रव्य से अनंत उत्सर्पिणी अवसर्पिणी, क्षेत्र से अनंता लोक, काल से अनंता काल, भाव से अर्द्धपुद्गल परावर्त्तन।

वनस्पति काल (अनंता काल) द्रव्य से अनंत उत्सर्पिणी अवसर्पिणी क्षेत्र से अनंत लोक, काल से अनंत काल, भाव से असंख्यात पुद्गल परावर्त्तन, जो आवलिका के असंख्यातवें भाग में जितने असंख्याता समय जाय उतना पुद्गल परावर्त्तन।

अ.अ.=अनादि अनंत। अ.सा.=अनादि सांत। सा.सां.=सादि सांत। अंत.मु.=अन्तर्मुहुर्त। सं.=संख्याता। असं.=असंख्याता।

क्र.म.	मार्गणा	जघन्य काय स्थिति	उत्कृष्टकाय स्थिति
1	**जीव द्वार**		
1.	समुच्चय जीव	शाश्वत	शाश्वत
2.	**गति द्वार**		
2.	नारकी	दस हजार वर्ष	33 सागरोपम
3.	देवता	दस हजार वर्ष	33 सागरोपम
4.	देवी	दस हजार वर्ष	55 पल्य
5.	तिर्यंच (नपुंसक)	अन्तर्मुहुर्त	अनंत काल (वनस्पति.)
6.	तिर्यंच पुरुष, तिर्यंचणी	अन्तर्मुहुर्त	3 पल्य और प्रत्येक करोड़ पूर्व
7.	मनुष्य	अन्तर्मुहुर्त	3 पल्य और प्रत्येक करोड़ पूर्व
8.	मनुष्यणी	अन्तर्मुहुर्त	3 पल्य और प्रत्येक करोड़ पूर्व
9.	सिद्ध भगवान	-	सादि अनंत (शाश्वत)
10 से 16	2 से 8 तक के अपर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त
17	पर्याप्ता नारकी	अन्तर्मुहुर्त कम दस हजार वर्ष	अन्तर्मुहुर्त कम 33 सागरोपम
18	पर्याप्ता देव	अन्तर्मुहुर्त कम दस हजार वर्ष	अन्तर्मुहुर्त कम 33 सागरोपम
19	पर्याप्ता देवी	अन्तर्मुहुर्त कम दस हजार वर्ष	अन्तर्मुहुर्त कम 55 पल्योपम
20	पर्याप्ता तिर्यंच	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त कम 3 पल्योपम
21	पर्याप्ता तिर्यंचणी	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त कम 3 पल्योपम
22	पर्याप्ता मनुष्य	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त कम 3 पल्योपम
23	पर्याप्ता मनुष्यणी	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त कम 3 पल्योपम
3	**इन्द्रिय द्वार-**		
24	सइन्द्रिय	-	अनादि अनंत, अ.सा. (1000 सागर सा.)
25	एकेन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	अनंत काल (वनस्पति)
26	बेइन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	संख्याता काल
27	तेइन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	संख्याता काल
28	चतुरिन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	संख्याता काल

29	पंचेन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	1000 सागर साधिक
30	अनिन्द्रिय	-	सादि अनंत
31से36	24 से 29 तक के अपर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त
37	सइन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	अनेक सौ सागर
38	एकेन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	संख्याता हजार वर्ष
39	बेइन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	संख्याता वर्ष
40	तेइन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	संख्याता अहोरात्रि
41	चौरेन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	संख्याता मास
42	पंचेन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	अनेक सौ सागर
4.	**काय द्वार**		
43	सकायी	-	अ.अ., अ. सांत
44	पृथ्वीकाय	अन्तर्मुहुर्त	असंख्याता काल (पृथ्वीकाल)
45	अप्काय	अन्तर्मुहुर्त	असंख्याता काल (पृथ्वीकाल)
46	तेउकाय	अन्तर्मुहुर्त	असंख्याता काल (पृथ्वीकाल)
47	वायुकाय	अन्तर्मुहुर्त	असंख्याता काल (पृथ्वीकाल)
48	वनस्पति काय	अन्तर्मुहुर्त	अनंत काल (वनस्पति)
49	त्रस काय	अन्तर्मुहुर्त	संख्याता वर्ष साधिक 2000 सागरोपय
50	अकाय	-	सादि अनंत
51 से 57	43 से 49 तक के अपर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त
58	सकाय पर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	प्रत्येक सौ सागर साधिक
59	पृथ्वीकाय पर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	संख्याता हजार वर्ष
60	अप्काय पर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	संख्याता हजार वर्ष
61	तेउकाय पर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	संख्याता दिन
62	वायुकाय पर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	संख्याता हजार वर्ष
63	वनस्पतिकाय पर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	संख्याता हजार वर्ष
64	त्रसकाय पर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	प्रत्येक सौ सागर साधिक
65	समुच्चय बादर	अन्तर्मुहुर्त	असंख्याता काल (बादर)
66	बादर वनस्पति	अन्तर्मुहुर्त	असंख्याता काल (बादर)
67	समुचचय निगोद	अन्तर्मुहुर्त	अनंतकाल (अढ़ाई क्षेत्र पुद्गल परावर्तन)
68	बादर त्रसकाय	अन्तर्मुहुर्त	2000 सागर झाझेरी
69 से 74	पांच पृथ्वीकायादि एवं बादर निगोद (बादर)	अन्तर्मुहुर्त	70 क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपय
65 से 81	सूक्ष्म-समुच्चय, पांच काय, सूक्ष्म निगोद	अन्तर्मुहुर्त	असंख्याता काल (पृथ्वीकाल)
82से98	65 से 81 तक के 17 बोल के अपर्याप्ता (समुच्चय बादर से सूक्ष्म निगोद तक)	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त
99से105	समुच्चय सूक्ष्म, पांच सू.काय, सू.निगोद के पर्याप्ता (7 बोल के)	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त
106से110	बादर-पृथ्वी, पानी, वायु, प्रत्येक, साधारण वनस्पति इन पांच बोल का पर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	संख्याता हजार वर्ष
111	बादर तेउकाय का पर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	संख्याता दिन रात
112	समुच्चय बादर पर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	प्रत्येक सौ सागर साधिक
113	समुच्चय निगोद पर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त
114	बादर निगोद का पर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त
115	बादर त्रस का पर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	प्रत्येक सौ सागर साधिक

5	**योग द्वार-**		
116	सयोगी	-	अ.अनंत, अनादि सांत
117	मन योगी	1 समय	अन्तर्मुहुर्त
118	वचन योगी	1 समय	अन्तर्मुहुर्त
119	काय योगी	अन्तर्मुहुर्त	अनंत काल/वनस्पति काल
120	अयोगी	-	सादि अनंत
6	**वेद द्वार-**		
121	सवेदी	-	अ.अ., अ.सा., सा.सा.
	सवेदी सादि सांत	अन्तर्मुहुर्त	देशऊणा अर्द्ध पुदगल परावर्त्तन
122	स्त्री वेद	1 समय	110 पल्य, प्रत्येक क्रोड़ पूर्व साधिक
123	पुरुष वेद	अन्तर्मुहुर्त	प्रत्येक सौ सागर साधिक
124	नपुंसक वेद	1 समय	अनंत काल (वनस्पति)
125	अवेदी	-	सा.सां, सा.अ.
	अवेदी सादि सांत	1 समय	अन्तर्मुहुर्त
7.	**कषाय द्वार-**		
126	सकषायी	-	अ.आ., अ.सां., सा.सा.
	सकषायी सा.सां	अन्तर्मुहुर्त्त	देश ऊणा अर्द्ध पुदगल परा.
127	क्रोध कषाय	अन्तर्मुहुर्त्त	अन्तर्मुहुर्त्त
128	मान कषाय	अन्तर्मुहुर्त्त	अन्तर्मुहुर्त्त
129	माया कषाय	अन्तर्मुहुर्त्त	अन्तर्मुहुर्त्त
130	लोभ कषाय	1 समय	अन्तर्मुहुर्त्त
131	अकषायी	-	सा.अ., सा.सां,
	अकषायी सा.सां,	1 समय	अन्तर्मुहुर्त
8.	**लेश्या द्वार-**		
132	सलेशी	-	अ.अ., अ.सां.
133	कृष्ण लेश्या	अन्तर्मुहुर्त्त	33 सागर अन्तर्मुहुर्त अधिक
134	नील	अन्तर्मुहुर्त्त	10 सागर, पल्य का असं. भाग अधिक
135	कापोत	अन्तर्मुहुर्त्त	3 सागर, पल्य का असं. भाग अधिक
136	तेजो	अन्तर्मुहुर्त्त	2 सागर, पल्य का असं. भाग साधिक
137	पद्म	अन्तर्मुहुर्त्त	10 सागर और अन्तर्मुहुर्त अधिक
138	शुक्ल लेश्या	अन्तर्मुहुर्त्त	33 सागर अन्तर्मुहुर्त अधिक
139	अलेशी	-	सादि अनंत
9.	**सम्यक्त्व द्वार-**		
140	सम्यक्त्व दृष्टि	-	सा.अ., सा.सां.
	सम्यक्त्व दृष्टि सा.सां.	अन्तर्मुहुर्त	66 सागर साधिक
141	मिथ्या दृष्टि	-	अ.अ. (अभव्य) अ.सा., सा.सां.
	मिथ्या दृष्टि सा.सां.	अन्तर्मुहुर्त	देशऊणा अर्द्ध पुदगल परावर्त्तन
142	मिश्र दृष्टि	अन्तर्मुहुर्त्त	अन्तर्मुहुर्त
143	क्षायक सम्यक्त्व	-	सादि अनंत
144	क्षयोपशम सम्यक्त्व	अन्तर्मुहुर्त्त	66 सागर साधिक
145	सास्वादन सम्यक्त्व	1 समय	6 आवलिका
146	उपशम सम्यक्त्व	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त
147	वेदक सम्यक्त्व	1 समय	66 सागर साधिक

10	**ज्ञान द्वार-**		
148	सज्ञानी	-	सा.अ., सा.सां.,
149	मति ज्ञान	-	सा.अ., सा.सां.,
150	श्रुत ज्ञान	-	सा.अ., सा.सां.,
	तीनों का सा.सां.	अन्तर्मुहुर्त	66 सागर साधिक
151	अवधि ज्ञान	1 समय	66 सागर साधिक
152	मनःपर्यव ज्ञान	1 समय	देश ऊणा क्रोड़ पूर्व
153	केवल ज्ञान	-	सादि अनंत
154	अज्ञान	-	अअ., असां., सा.सां.,
155	मति अज्ञान	-	अअ., असां., सा.सां.,
156	श्रुत अज्ञान	-	अअ., असां., सा.सां.,
	तीनों अज्ञान का सा.सां.	अन्तर्मुहुर्त	देशऊणा अर्द्ध पुदगल परावर्त्तन
157	विभंग ज्ञान	1 समय	33 सागर और देशोन क्रोड़ पूर्व साधिक
11	**दर्शन द्वार-**		
158	चक्षु दर्शन	अन्तर्मुहुर्त	1 हजार सागर साधिक
159	अचक्षु दर्शन	-	अअ., अ.सा.
160	अवधि दर्शन	1 समय	132 सागर अधिक
161	केवल दर्शन	-	सादि अनंत
12.	**संयत द्वार-**		
162	संयत	1 समय	देशोन क्रोड़पूर्व
163	असंयत	-	अआ., अ.सां., सा.सां.
	असंयत सा सां.	अन्तर्मुहुर्त	देशोन अर्द्ध पुदगल परावर्त्तन
164	संयता संयत	अन्तर्मुहुर्त	देशोन क्रोड़ पूर्व
165	नो संयत नो असंयत नो संयता संयत	-	सादि अनंत
166से169	सामा., छेदो., परि.,यथा. चरित्र (चार चरित्र)	1 समय	देशोन क्रोड़ पूर्व वर्ष (9 वर्ष कम) परि. में 29 वर्ष कम
170	सूक्ष्म सम्पराय चरित्र	1 समय	अन्तर्मुहुर्त
13	**उपयोग द्वार-**		
171	साकार उपयोग	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त
172	अनाकार उपयोग	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त
14.	**आहार द्वार**		
173	आहारक छदमस्थ	2 समय न्यून एक क्षुल्लक भव	असंख्याता काल (बादर काल)
174	आहारक केवली	अन्तर्मुहुर्त्त	देशोन क्रोड़ पूर्व वर्ष
175	अणाहारी छद्मस्थ	1 समय	2 समय
176	भवस्थ सयोगी केवली अणाहारक	-	अजघन्य अनुत्कृष्ट 3 समय
177	भवस्थ केवली अणाहारक (अयोगी)	-	पांच ह्रस्व अक्षर उच्चारण काल (अ.मु.)
178	सिद्ध अणाहारक	-	सादि अनंत
15.	**भाषक द्वार-**		
179	भाषक	1 समय	अन्तर्मुहुर्त्त
180	अभाषक सिद्ध	-	सादि अनंत
	अभाषक संसारी	अन्तर्मुहुर्त	अनंत काल (वनस्पति)
16.	**परित्त द्वार-**		
181	काय परित्त (प्रत्येक शरीरी जीव)	अन्तर्मुहुर्त	असंख्यातकाल (पृथ्वीकाल)
182	संसार परित्त (सम्यक्त्वी)	अन्तर्मुहुर्त	देशोन अर्द्ध पुदगल परावर्त्तन

183	काय अपरित्त (निगोदके)	अन्तर्मुहुर्त	अनंत काल (वनस्पति)
184	संसार अपरित्त (मिथ्यात्वी)	-	अअ., अ.सा.
185	नो परित नो अपरित (सिद्ध)	-	सादि अनंत
17.	**पर्याप्ता द्वार**		
186.	पर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	प्रत्येक सौ सागर साधिक
187	अपर्याप्ता	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त
188	नो पर्याप्ता नो अपर्याप्त	-	सादि अनंत
18.	**सूक्ष्म द्वार-**		
189	सूक्ष्म	अन्तर्मुहुर्त	असंख्याता काल (पृथ्वीकाल)
190	बादर	अन्तर्मुहुर्त	असंख्याता काल / बादरकाल
191	नो सूक्ष्म नो बादर	-	सादि अनंत
19.	**संज्ञी द्वार**		
192	संज्ञी	अन्तर्मुहुर्त	प्रत्येक सौ सागर साधिक
193	असंज्ञी	अन्तर्मुहुर्त	वनस्पति काल
194	नो संज्ञी नो असंज्ञी	-	सादि अनंत
20.	**भव सिद्धिक द्वार**		
195	भव सिद्धिया	-	अनादि सांत
196	अभव सिद्धिया	-	अनादि अनंत
197	नो भव सिद्धिक नो अभव सिद्धियक	-	सादि अनंत
21.	**अस्तिकाय द्वार-**		
198-203	धर्मास्तिकाय आदि 6 द्रव्य	-	सर्वकाल
22.	**चरम द्वार-**		
204	चरम (भव्य जीव)	-	अनादि सांत
205	अचरम (अभवी, सिद्ध)	-	अनादि अनंत, (अभवी) सादि अनंत (सिद्ध)

अन्तर

गति पद	जघन्य अन्तर	उत्कृष्ट अन्तर
सिद्ध भगवान	अन्तर नहीं	अन्तर नहीं
नरक, तिर्यंच स्त्री, मनुष्य, मनुष्य स्त्री, देव, देवी 6 समु. इनके पर्याप्त एवं अप. तिर्यंच स्त्री मनुष्य, मनुष्य स्त्री 15 बोल	अन्तर्मुहुर्त	अनन्त काल
अपर्याप्त नारकी, देवी, देवता	अन्तर्मुहुर्त साधिक 10 हजार वर्ष	अनन्त काल (वनस्पति)
शेष समु. तिर्यंच, पर्याप्त तिर्यंच, अपर्याप्त तिर्यंच	अन्तर्मुहुर्त	प्रत्येक सौ सागरोपम
इन्द्रिय पद		
समुच्चय से इन्द्रिय एवं अनिन्द्रिय	-	-
एकेन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	दो हजार सागरोपम साधिक
शेष चार इन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	अनन्तकाल (वनस्पति)
काया पद-		
सकायिक, अकायिक	-	-
पृथ्वी पानी तेउवायु त्रसकाय	अन्तर्मुहुर्त	अनंत काल (वनस्पति)
वनस्पतिकाय	अन्तर्मुहुर्त	असंख्याल काल (पृथ्वीकाल)
समुच्चय सूक्ष्म	अन्तर्मुहुर्त	असंख्याता काल (बादर काल)
सूक्ष्म वनस्पति सूक्ष्म निगोद	अन्तर्मुहुर्त	असंख्यात काल (पृथ्वीकाल)
सूक्ष्म पृथ्वी, पानी, तेउ, वायु	अन्तर्मुहुर्त	अनंत काल (वनस्पति काल)
समुच्चय बादर, बादर वनस्पति, बा. निगोद, समु. निगोद	अन्तर्मुहुर्त	पृथ्वीकाल
बादर पृथ्वी,पानी,तेउ,वायु,प्रत्येक वन.,बादर त्रस (6 बोल)	अन्तर्मुहुर्त	अनंत काल (वन. काल)
योग पद-		
सयोगी, अयोगी	-	-
मनयोगी, वचनयोगी	अन्तर्मुहुर्त	अनन्त काल (वनस्पति)
काय योगी	एक समय	अन्तर्मुहुर्त
वेद पद-		
सवेदी (अअ., अ.सां.) अवेदी (सा सां)	-	-
सवेदी (सा सां.)	1 समय	अन्तर्मुहुर्त
स्त्रीवेद	अन्तर्मुहुर्त	अनन्तकाल (वनस्पति)
पुरुष वेद	1 समय	अनन्तकाल (वनस्पति)
नपुंसक वेद	अन्तर्मुहुर्त	प्रत्येक सौ सागरोपम साधिक
अवेदी (सा अ.)	अन्तर्मुहुर्त	देशोन अर्द्ध पुद्गल परावर्त्तन
कषाय पद-		
सकषायी (अअ., असा.) अकषायी (सा.अ.)	-	-
सकषायी (सासा.) क्रोधमान माया	1 समय	अन्तर्मुहुर्त
सकषायी (सासा.) लोभ (जघन्य उत्कृष्ट)	अन्तर्मुहुर्त	अन्तमुहुर्त्त
अकषायी (सा.सा.)	अन्तर्मुहुर्त	देशोन अर्द्ध पुद्गल परावर्तन
लेश्या पद-		
सलेशी, अलेशी	-	-
कृष्ण, नील, कापोत	अन्तर्मुहुर्त	33 सागर अन्तर्मुहुर्त अधिक
तेजो, पद्म, शुक्ल	अन्तर्मुहुर्त	अनंतकाल (वनस्पति)
सम्यक्त्व पद		
सम्य. दृ. (सा.अ.), मि.दृ.(अ.अ.,अ.सा.) वेदक, क्षयिक स.	-	-
सम्यक दृष्टि(सासां.),उपशम, सास्वा.,क्षयोपशम, मिश्र दृष्टि	अन्तर्मुहुर्त	देशोन अर्द्ध पुद्गल परावर्त्तन
मिथ्या दृष्टि (सासा.)	अन्तर्मुहुर्त	66 सागरोपम साधिक
ज्ञान पद-		
समुच्चय ज्ञानी (सा.अ.) केवल ज्ञान	-	-
समु. ज्ञानी (सासा.),मति, श्रुत, अवधि, मनःप. ये 5 बोल	अन्तर्मुहुर्त	देशोन अर्द्ध पुद्गल परावर्त्तन
समु. अज्ञानी, मति अज्ञ. श्रुत अज्ञ. (तीनों के अअ., अ.सा.)	-	-
तीनों अज्ञान के सादि सांत	अन्तर्मुहुर्त	66 सागरोपम साधिक
विभंग ज्ञान	अन्तर्मुहुर्त	अनंतकाल (वनस्पति)
दर्शन पद-		
चक्षु दर्शन, अवधि दर्शन	अन्तर्मुहुर्त	अनंतकाल (वनस्पति)
अचक्षु दर्शन, केवल दर्शन	-	-
संयत पद-		
संयत, संयता संयत, पांच चारित्र ये 7 बोल	अन्तर्मुहुर्त	देशोन अर्द्ध पुद्गल परावर्त्तन
असंयत (सासां.)	1 समय	देशोन करोड़ पूर्व
असंयति (अ.अ., अ.सां.) नो संयत नो संयता संयत	-	-
उपयोग पद		
दोनों उपयोग जघन्य उत्कृष्ट	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त

आहारक पद- छदमस्थ आहारक	1 समय	2 समय
छदमस्थ अनाहारक	2 समय (न्यून क्षुल्लक भव.)	असंख्यात काल (बादरकाल)
सयोगी केवली आहारक	तीन समय	तीन समय
सयोगी केवली अनाहारक	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त
अयोगी केवली, सिद्ध केवली	-	-
भाषक पद- भाषक	अन्तर्मुहुर्त	अनंतकाल (वनस्पति)
संसारी अभाषक	1 समय	अन्तर्मुहुर्त
सिद्ध अभाषक	-	-
परित्त पद- संसार परित्त, नो परित्त नो अपरित्त, संसार अपरित्त	-	-
काय परित्त	अन्तर्मुहुर्त	अनंतकाल (ढ़ाई पुद्गल परा.)
काय अपरित्त	अन्तर्मुहुर्त	असंख्यात काल (पृथ्वीकाल)
पर्याप्त पद पर्याप्त	अन्तर्मुहुर्त	अन्तर्मुहुर्त
अपर्याप्त	अन्तर्मुहुर्त	प्रत्येक सौ सागर साधिक
नो पर्याप्त नो अपर्याप्त	-	-
सूक्ष्म पद- सूक्ष्म	अन्तर्मुहुर्त	असंख्यात काल (बादरकाल)
बादर	अन्तर्मुहुर्त	असंख्यात काल (पृथ्वीकाल)
नो सूक्ष्म नो बादर	-	-
संज्ञी पद संज्ञी	अन्तर्मुहुर्त	अनंतकाल (वनस्पति)
असंज्ञी	अन्तर्मुहुर्त	प्रत्येक सौ सागर साधिक
नो संज्ञी नो असंज्ञी	-	-
भव्य पद, अस्तिकाय पद, चरम पद	-	-

41. दृष्टि (पन्नवणा पद 19) सात नारकी, दस भवनपति, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य, व्यन्तर, ज्योतिषी, और वैमानिक इन 16 दण्डक में तीनों दृष्टियां पाई जाती हैं। पांच स्थावर मिथ्या दृष्टि होते हैं। तीन विकलेन्द्रिय सम्यग और मिथ्या दो दृष्टि पाई जाती है। पांच अणुत्तर विमान और सिद्ध भगवान में सम्यक् दृष्टि पाती है। दृष्टियां तीन है, सम्यक दृष्टि, मिथ्या दृष्टि, मिश्र दृष्टि। एक समय एक दृष्टि ही होती है।

42. अन्तक्रिया (पन्नवणा 20वां पद) भविष्य काल में मुक्त होने की योग्यता सभी दण्डक के जीवों में होती है। यहां अनन्तरागत और परम्परागत अन्तक्रिया का वर्णन है। 24 दंडक के जीव कहां से निकले कहां उत्पन्न होते हैं यह दिग्दर्शन कराया है।

1. 24 दंडक के जीवों में से कोई जीव अन्तक्रिया करता है, कोई नहीं करता।

2. 24 दंडक के जीवों में से 23 दण्डक (मनुष्य छोड़) के जीव अन्तक्रिया नहीं करते। मनुष्य में भी कोई करता है कोई नहीं करता।

3. समुच्चय जीवों में से कोई अनन्तरागत अन्त क्रिया करते है, कोई परम्परागत। पहली से चौथी नरक से निकले जीव कोई अनन्तरागत, कोई परम्परागत अन्तक्रिया करता है, कोई नहीं करता। पांचवी से सातवी नरक के निकले अनन्तरागत नहीं करते, परम्परागत कोई करते, कोई नहीं करते। भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक तथा पृथ्वी पानी, वनस्पति, संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय, संज्ञी मनुष्य के निकले जीव अनन्तरागत अन्तक्रिया करते हैं, परम्परागत भी करते हैं कोई नहीं भी करते। अग्नि, वायु और तीन विकलेन्द्रिय के निकले जीव अनन्तरागत नहीं करते, परम्परागत करते हैं, नहीं भी करते हैं।

4. 24 दण्डक से निकलकर मनुष्य में आकर एक समय में सिद्ध होने वालों की संख्या-

अनंतरागतों की मुक्त संख्या- जघन्य संख्या 1-2-3 है उत्कृष्ट संख्या इस प्रकार है-

उत्कृष्ट	जीव
एक समय में दस	प्रथम तीन नारकी, भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, तिर्यंचणी, मनुष्य
एक समय में बीस	मनुष्यणी, वैमानिक देवी, ज्योतिषी देवी
एक समय में 108	वैमानिक देव
एक समय में पांच	भवनपति देवी, व्यंतर देवी
एक समय में छः	वनस्पति
एक समय में चार	चौथी नारकी, पृथ्वी, पानी

पांचवी नरक से निकले- मनः पर्यव ज्ञानी। छठी से निकले- अवधि ज्ञानी। सातवीं नरक से निकले- सम्यक्त्वी हो सकते हैं। अग्नि और वायु से निकले मिथ्यादृष्टि होते हैं। तीन विकलेन्द्रिय से निकले मनः पर्यव ज्ञानी हो सकते हैं।

5. नरक से निकले दो दंडक तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य में ही उत्पन्न होते हैं, अन्य 22 में नहीं जाते। तिर्यंच पंचेन्द्रिय में किसी को धर्म श्रवण, बोधि, श्रद्धा, मति श्रुत ज्ञान, प्रत्याख्यान पौषध आदि अंगीकार होता है, किसी को अवधिज्ञान उत्पन्न होता है, किसी को नहीं होता। अवधि ज्ञानी तिर्यंच साधु नहीं बनते। नरक से निकल कर मनुष्य में उत्पन्न होते हैं, उन्हें किसी को उक्त धर्म श्रवण आदि एवं संयम ग्रहण होता है, अवधि

ज्ञान, मनःपर्यव ज्ञान, केवल ज्ञान प्राप्त करते हैं। कोई संयम ग्रहण करते हैं, कोई नहीं करते संयम ग्रहण कर यावत् केवल ज्ञान प्राप्त करने वालों को मुक्ति मिलती है।

भवनपति से निकलकर पृथ्वी पानी वनस्पति तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य इन पांच दण्डकों में उत्पन्न होते हैं। पृथ्वी पानी वनस्पति में जाने वालों को धर्म सुनने नहीं मिलता। तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य का वर्णन नरक वत् करना है।

पृथ्वी पानी वनस्पति में से निकले पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यच पंचेन्द्रिय और मनुष्य इन 10 दण्डकों में उत्पन्न होते हैं। पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय को धर्म श्रवण नहीं मिलता। तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य का वर्णन नरक वत् करना।

अग्नि वायु से निकले पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय तिर्यंच पंचेन्द्रिय 9 दण्डक में उत्पन्न होते हैं, अन्य 15 में नहीं। पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय को धर्म श्रवण नहीं मिलता। तिर्यंच पंचेन्द्रिय में से किसी को धर्म श्रवण मिलता किसी को नहीं मिलता। धर्म श्रवण मिलने पर भी बोध नहीं होता क्योंकि वे मिथ्या दृष्टि होते हैं।

तीन विकलेन्द्रिय से निकले पृथ्वी पानी की तरह 10 दंडक में उत्पन्न होते हैं अन्य 14 में नहीं। इनका अधिकार पृथ्वी पानी की तरह कहना, विशेष यह कि इन्हे साधु बनने पर मनः पर्यव ज्ञान होता है, केवल ज्ञान नहीं होता।

संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय से निकले 24 दंडक में जाते हैं। इनमें से नरक, भवनपति, व्यंतर-ज्योतिषी, वैमानिक इन 14 दंडक में से किसी को धर्म श्रवण का अवसर मिलता है, किसी को नहीं, जिसको मिलता वे कई उसे समझते हैं, कोई नहीं। जो समझते हैं उन्हें श्रद्धा, प्रतीति रूचि होती है उन्हें मति श्रुत अवधि ज्ञान प्राप्त होता है। जिन्हें नहीं होती वे ये ज्ञान नहीं प्राप्त करते। जिन्हें अवधि ज्ञान की प्राप्ति होती है वे भी शीलव्रत, गुणव्रत, विरमण व्रत, प्रत्याख्यान, पौषध नहीं कर सकते। पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय को धर्मश्रवण नहीं मिलता। संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य का अधिकार नरक की तरह कहना।

मनुष्य से 24 दंडक में उत्पन्न होते हैं। तिर्यंच पंचेन्द्रिय के अधिकार की तरह ऊपरवत् कहना।

व्यंतर से निकलकर ज्योतिषी व पहले दूसरे देवलोक से चवकर पृथ्वी पानी वनस्पति, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य पांच दंडक में उत्पन्न होते हैं। इनका अधिकार भवनपति की तरह कहना।

तीसरे से आठवें देवलोक से निकले तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य दो दंडक में उत्पन्न होते हैं, इनका नरक वत् कहना।

नवमें से सर्वार्थ सिद्ध तक से चव कर मात्र मनुष्य में उत्पन्न होते हैं इनका भी नरक वत कहना, विशेष सर्वार्थ सिद्ध से चवकर मनुष्य में उसी भव से मुक्त होते हैं।

6. प्रथम तीन नरक, 12 देवलोक, नौ लोकान्तिक, नौ ग्रैवेयक, पांच अणुत्तर से चव कर आये कोई तीर्थंकर बन सकते हैं, कोई नहीं। अन्य नहीं बन सकते।

7. चक्रवर्ती- पहली नरक, भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक से आकर चक्रवर्त्ती बन सकते हैं।

8. बलदेव- पहली दूसरी नरक, सभी देवता से आकर मनुष्य बनने वाले जीव बलदेव बन सकते हैं।

9. वासुदेव- पहली दूसरी नरक, 12 देवलोक, 9 लोकान्तिक, 9 ग्रैवेयक से चवकर आये वासुदेव बन सकते हैं।

10. मांडलिक राजा- सातवीं नरक, तेउ वायु छोड़ शेष सभी स्थानों से आये मनुष्य भव में मांडलिक राजा बन सकते हैं।

11. चक्रवर्त्ती के 14 रत्न- सात एकेन्द्रिय, 7 पंचेन्द्रिय (सेनापति, गाथापति, बढ़ई, पुरोहित, श्री देवी, अश्व, हस्ति)

सेनापति, गाथापति, बढ़ई, पुरोहित, श्री देवी ये पांच पंचेन्द्रिय रत्न- तेउ, वायु, सातवी नरक, पांच अणुत्तर देव छोडकर शेष स्थानों से आने वाले जीव ये पांचों बन सकते हैं।

हस्तिरत्न, अश्व रत्न- नवमें देवलोक से ऊपर के देवलोकों को छोड़कर सभी स्थानों से तिर्यंच पंचेन्द्रिय बनने वाले हस्तिरत्न, अश्वरत्न बन सकते हैं।

सात एकेन्द्रिय रत्न- सातवीं नरक और तीसरे देवलोक से ऊपर के देवों को छोड़कर सभी स्थानों से आने वाले पृथ्वीकाय में उत्पन्न होने वाले सातों एकेन्द्रिय रत्न बन सकते हैं। चक्र, छत्र, चर्म, दंड, असि, मणि, कांगणी रत्न ये सात रत्न एकेन्द्रिय के हैं। ये 14 रत्न चक्रवर्त्ती के अधीनस्थ होते हैं।

	तीर्थंकरादि की आगत	नारकी	देवता	तिर्यंच	मनुष्य	कुल भेद
1	तीर्थंकर	प्रथम तीन नरक	35 वैमानिक देव	×	×	38 की आगत
2	चक्रवर्त्ती	प्रथम नरक	15 परमा धामी 3 किल्विषी छोड़ 81 देव	×	×	82 की आगत
3	बलदेव	प्रथम दो नरक	81 जाति के देव	×	×	83 की आगत
4	वासुदेव	प्रथम दो नरक	पांच अणुत्तर छोड़ 30 वैमानिक देव	×	×	32 की आगत

5	मांडलिक राजा	1 से 6 नरक	99 जाति के देव	तेउवायु छोड़ 40 भेद	15 कर्मभू. के पर्याप्त अप., 101 समु. अप. ये 131 भेद	276 की आगत
6	पांच पंचेन्द्रिय रत्न सेनापति से श्री देवी आदि	प्रथम 6 नरक	5 अणुत्तर छोड़कर 94 जाति के देव	40 भेद उपर जैसे	131 भेद पूर्ववत्	271 की आगत
7	अश्वरत्न, हस्तिरत्न	सात नरक	आठवें देवलोक तक 81 जाति के देव	48 भेद	131 भेद	267 की आगत
8	सात एकेन्द्रिय रत्न	×	दूसरे देवलोक तक 64 जाति के देव	48 भेद	131 भेद	243 की आगत

नरक से निकलकर तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य में उत्पन्न होने वाले को निम्नांकित 10 बोल में से क्रमशः 6 और 10 बोलों की प्राप्ति हो सकती है। ये 10 बोल है- 1. धर्मश्रवण 2. धर्म बोधि 3. सम्यग दर्शन 4. मति श्रुत ज्ञान 5. अवधि ज्ञान 6. देशविरति 7. सर्व विरति 8. मनःपर्यव ज्ञान 9. केवल ज्ञान 10. मोक्ष। 24 दंडक में से आने वाले को 10 में से कितने बोल पाते है-

आगत जीव	**नरक गति में 5**	**देवगति बोल में 5**	**संज्ञीति. में 6 बोल**	**मनुष्य में 10 बोल**	**विवरण**
पहली चार नरक से	×	×	6	10	यथा योग्य सभी बोल
पांचवी नरक से	×	×	6	7	मनःपर्यवादि तीन नहीं पाते
छठी नरक से	×	×	6	6	संयमादि चार नहीं पाते
7वीं नरक से	×	×	5	×	तिर्यंच में ही जाते है 5 बोल देशविरति नहीं
भवनपति से 8वें देव.	×	×	6	10	यथा योग्य सभी
9वें देव से सर्वार्थ सिद्ध	×	×	×	10	सिर्फ मनुष्य गति, यथा योग्य बोल पावे.
पृथ्वी पानी वनस्पति	×	×	6	10	यथा योग्य सभी
तेउकाय वायुकाय	×	×	6	×	एक तिर्यंच गति
विकलेन्द्रिय से	×	×	6	8	तिर्यंच के 6, मनुष्य के अन्तिम दो नहीं
तिर्यंच पंचेन्द्रिय से	5	5	6	10	चारों गति में यथा योग्य
मनुष्य से	5	5	6	10	चारों गति में यथा योग्य

नरक और देव गति में प्रारंभ के 5 बोल, संज्ञी तिर्यंच को 6 बोल, कर्मभूमि गर्भज मनुष्य को 10 बोल, पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय को एक भी बोल नहीं प्राप्त हो सकता।

43. पदवी (प्रज्ञापना 20 पद) सात द्वार है- नाम, उत्पत्ति, अवगाहना, कार्य, आगति (आवण) गति, पावण (प्राप्ति) द्वार।

1. नाम द्वार- 7 एकेन्द्रिय रत्न- चक्र, छत्र, दण्ड, खड्ग, चर्म, मणि, कागणी रत्न।
7 पंचेन्द्रिय रत्न- सेनापति, गाथापति, बढ़ई, पुरोहित, हाथी, घोड़ा, श्री देवी।
9 मोटी पदवी- तीर्थंकर, चक्रवर्त्ती, बलदेव, वासुदेव, केवली, साधु, श्रावक, सम्यग्दृष्टि, मांडलिक राजा। कुल 23 पदवी ।

2. उत्पत्ति द्वार- हाथी घोड़ा वैताढ्य पर्वत के मूल में, सेनापति, गाथापति, बढ़ई, पुरोहित ये चक्रवर्त्ती की राजधानी में, चक्र, छत्र, दण्ड, खड्ग ये 4 चक्रवर्त्ती की आयुध शाला में, चर्म, मणि, कागणी रत्न चक्रवर्त्ती के भंडार में, श्री देवी विद्याधरों की उत्तर की श्रेणी में उत्पन्न होते हैं। अढ़ाई द्वीप में 15 कर्म भूमि में तीर्थंकर, चक्रवर्त्ती, बलदेव, वासुदेव आर्य क्षेत्र में ही उत्पन्न होते हैं, केवली साधु मांडलिक राजा आर्य अनार्य दोनों क्षेत्रों में तथा श्रावक व सम्यग्दृष्टि अढ़ाई द्वीप के अन्दर तथा बाहर भी उत्पन्न होते हैं।

3. अवगाहना द्वार- चक्र और छत्र रत्न 4 हाथ चौड़ा, दण्ड रत्न 4 हाथ लम्बा, खड्ग रत्न 50 अंगुल लम्बा 16 अंगुल चौड़ा 4 अंगुल की मूठ, आधा अंगुल की धार। चर्मरत्न 4 हाथ लम्बा 2 हाथ चौड़ा मणिरत्न 4 अंगुल लम्बा 2 अंगुल चौड़ा। कागणी रत्न 4 अंगुल लम्बा 4 अंगुल चौड़ा, 4 अंगुल ऊंचा।

कागणी रत्न के 6 तले, आठ कोण, 12 अंश होते हैं। वजन में 8 सोनैया भार, सुनार के एरण जैसा आकार होता है। सेनापति, गाथापति, बढ़ई, पुरोहित ये चक्रवर्त्ती के बराबर, हाथी की चक्रवर्त्ती से दुगुनी। घोड़ा 108 अंगुल लम्बा (चक्रवर्त्ती के अंगुल का माप), 80 अंगुल ऊंचा, 4 अंगुल के खुर, 16 अंगुल की पिंडी, 4 अंगुल का गोडा (घुटना) 20 अंगुल जांघ, 32 अंगुल का मुंह, 4 अंगुल का कान होता है। श्री देवी चक्रवर्त्ती से 4 अंगुल छोटी होती है। तीर्थंकर जघन्य 7 हाथ उत्कृष्ट 500 धनुष, चक्रवर्त्ती की भी यही अवगाहना, बलदेव वासुदेव जघन्य 10 धनुष उत्कृष्ट 500 धनुष, केवली व साधु की जघन्य 2 हाथ उत्कृष्ट 500 धनुष। श्रावक, सम्यग् दृष्टि की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट 1000 योजन, मांडलिक राजा जघन्य 2 हाथ उत्कृष्ट 500 धनुष की होती है।

4. कार्यद्वार- चक्ररत्न चक्रवर्त्ती के सेना के आगे आकाश में चलता है, चक्रवर्ती की इच्छानुसार ठहरता है, वहीं सेना का पड़ाव होता है। छत्र रत्न सेना पर 12 योजन लम्बा

चौड़ा छत्र करता है। खड्ग शत्रु पर घाव करता है दण्ड रत्न हजार योजन तक विषम भूमि को सम करता है। खण्ड प्रपात और तमिस्त्र गुफाओं के किंवाड़ खोलता है। चर्मरत्न 48 कोस (12 योजन) का चबूतरा बनाता है, नावा बनकर गंगा सिंधु नदी को पार कराता है, मणि रत्न प्रकाश करता है, कागणी रत्न तोल माप बढ़ाता है, गुण पचास-गुण पचास मांडला पूरता है। सेनापति देश जीतता है, गाथापति 24 प्रकार का धान्य पैदा करता है, बढ़ई 42 मंजिल महल बनाता है नदी पर पुल बनाता है, पुरोहित शांति पाठ करता है, लग्न निकालता है, लगे घावों को ठीक करता है, हाथी घोड़े सवारी के काम आते हैं, श्री देवी पटरानी भोगने के काम आती है।

5. आगति द्वार- 24 दंडक में से आकर कितनी पदवी पाता है, 23 में से इस प्रकार-

आगत जीव	पदवी	विवरण
पहली नरक से	16	सात एकेन्द्रिय रत्न छोड़कर
दूसरी नरक से	15	सोलह में से चक्रवर्त्ती छोड़कर
तीसरी नरक से	13	पन्द्रह में से बलदेव-वासुदेव छोड़कर
चौथी नरक से	12	तेरह में से तीर्थंकर कम करना
पांचवी नरक से	11	बारह में से केवली कम करना
छठी नरक से	10	ग्यारह में से साधु कम
सातवीं नरक से	3	हाथी, घोड़ा, सम्यग्दृष्टि पावे
भवनपति से ज्यो. तक	21	तीर्थंकर, वासुदेव छोड़ शेष 23 में से
1-2 देवलोक	23	सभी
3 से 8 देवलोक	16	सात एकेन्द्रिय छोड़कर
9 देव. से 9 ग्रैवेयक	14	16 में से हाथी, घोड़े छोड़कर
पांच अणुत्तर	8	नो मोटी पदवी में से वासुदेव छोड़कर
पृथ्वी, पानी, वनस्पति, सन्नी तिर्यंच सन्नी मनुष्य	19	23 में से तीर्थंकर, चक्रवर्त्ती, बलदेव वासुदेव छोड़कर
विकले. असनीति. असन्नी मनुष्य	18	उन्नीस में से केवली पदवी छोड़कर
तेउ वायु	9	सात एकेन्द्रिय, हाथी, घोड़ा ये 9 पदवी

6. गति द्वार- 23 पदवी वाले किस किस गति में जा सकते हैं-

23 पदवी के जीव की गति	पदवी	विवरण
1 से 4 नरक तक	11	7 पंचेन्द्रिय रत्न, चक्रवर्ती, वासुदेव, मांडलिक राजा, सम्यग्दृष्टि ये जावे
5 से छठी नरक तक	9	11 में से हाथी घोड़ा छोड़कर
सातवी नरक तक में	7	श्रीदेवी और सम्यक् दृष्टि छोड़कर
भवनपति से 12वें देवलोक तक	4	साधु, श्रावक, सम्यक्दृष्टि, मांडलिकराजा
नव ग्रैवेयक, पाँच अणुत्तर में	2	साधु, सम्यक् दृष्टि
पांच स्थावर, असन्नी मनुष्य	8	सात एकेन्द्रिय रत्न, मांडलिक राजा
विकलेन्द्रिय, सन्नी ति.पं., सन्नी मनुष्य, असन्नी ति.पं.	9	सात एकेन्द्रिय रत्न, मांडलिकराजा, सम्यक् दृष्टि

7. पावण द्वार- नरक देवों में एक पदवी-सम्यग्दृष्टि। तिर्यंच में 11 पदवी-7 एकेन्द्रिय रत्न, हाथी, घोड़ा, श्रावक और सम्यक्दृष्टि। मनुष्य में 14 पदवी-नौ मोटी, पांच पंचेन्द्रिय रत्न (हाथी घोड़ा छोड़कर)।

44. सीझना द्वार (सिद्ध होना) (प्रज्ञापना पद 20)- 15 द्वारों से इस थोकड़े का वर्णन दिया है- क्षेत्र, काल, गति, वेद, तीर्थ, लिंग, चारित्र, बुद्ध, ज्ञान, अवगाहना, उत्कृष्ट, अन्तर, अनुसमय, अल्प बहुत्व, गणना (संख्या) द्वार। यहां एक समय की उत्कृष्ट संख्या से वर्णन है, जघन्य एक भी हो सकती है।

1. क्षेत्र द्वार- ऊर्ध्व लोक में ऊर्ध्व दिशा में 1 समय में 4, अधोलोक में 20 (अधोदिशा में सिद्ध नहीं होते)। तिर्यक् लोक में तिर्यक् दिशा में 108, समुद्र में 2, शेष जल में 3, मेरू पर्वत के सौमनस वन, भद्रशाल वन, नन्दन वन में 4-4 और पंडक वन में 2, महाविदेह की प्रत्येक विजय में 20, अकर्मभूमि में 10, पन्द्रह कर्मभूमि में 108, चुल्ल हिमवन्त पर्वत पर 10 सिद्ध होते हैं।

2. काल द्वार- अवसर्पिणी के पहले दूसरे आरे में 10-10, तीसरे चौथे में 108-108 पांचवे में 20, छठे में दस सिद्ध होते हैं। उत्सर्पिणी के पहले से चौथे तक उपरोक्त पांचवें छठे में 10-10 सिद्ध होते हैं।

3. गति द्वार- प्रथम तीन नरक से 10-10, चौथी से 4 (पांचवी छठी सातवी से सिद्ध नहीं होते) भवनपति देवों से 10 इनकी देवी से 5, व्यंतर देव से 10 व्यंतरी से पांच,

ज्योतिषी देव से 10 इनकी देवी से 20, वैमानिक देवों से 108 इनकी देवी से 20, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और तिर्यंचणी से 10-10, वनस्पति से 6, पृथ्वी पानी से 4-4, मनुष्य से 10, मनुष्याणी से 20 सिद्ध होते हैं। तीन विकलेन्द्रिय, अग्नि वायु से सिद्ध नहीं होते।

4. वेद द्वार- स्त्री 20, नपुंसक 10 पुरुष, 108 (इस भव की अपेक्षा)। पुरुष मरकर पुरुष हो तो 108, पुरुष मरकर स्त्री हो तो 10, पुरुष मरकर नपुंसक हो तो 10, स्त्री मरकर स्त्री पुरुष या नपुंसक हो तो 10-10 सिद्ध होते हैं। नपुंसक मरकर नपुंसक, स्त्री या पुरुष हो तो 10-10 सिद्ध होते हैं।

5. तीर्थद्वार- पुरुष तीर्थंकर 4, स्त्री तीर्थंकर 2, प्रत्येक बुद्ध 10, स्वयं बुद्ध 4, बुद्ध बोधित 108 सिद्ध होते हैं।

6. लिंग द्वार- गृहलिंगी 4, अन्य लिंगी 10, स्वलिंगी 108 सिद्ध होते हैं।

7. चारित्र द्वार- सामायिक, सूक्ष्म सम्पराय, यथाख्यात तीन चारित्र का स्पर्श कर 108, उक्त तीन और छेदोपस्थापनीय इन 4 का स्पर्श कर 108, पांच चारित्र का स्पर्श कर 10 सिद्ध होते हैं।

8. बुद्ध द्वार- आचार्य या बड़ी साध्वी से प्रतिबोध पाकर पुरुष 108, स्त्री 20 और नपुंसक 10 सिद्ध होते हैं।

9. ज्ञान द्वार- मति, श्रुत, केवल ये तीन ज्ञान स्पर्श कर 1 समय में 4 । मति, श्रुत, अवधि, केवल 4 ज्ञान स्पर्श कर 108 । मति, श्रुत, मनःपर्यव, केवल ये 4 ज्ञान स्पर्श कर 10 । पांच ज्ञान स्पर्श कर 108 सिद्ध होते हैं।

10. अवगाहना द्वार- जघन्य अवगाहना वाले 4, मध्यम के 108 उत्कृष्ट वाले 2 सिद्ध होते हैं।

11. उत्कृष्ट द्वार- अप्रतिपाति 4, अनंतकाल के प्रतिपाति 108, असंख्यात काल, संख्यात काल के प्रतिपाति 10-10 होते हैं।

12-13. अन्तर, अनुसमय द्वार- जिस समय में 103 से 108 सिद्ध होते हैं, तो दूसरे समय में अवश्य अन्तर पड़ता है। यदि दो समय तक प्रति समय 97 से 102 सिद्ध होते हैं तो तीसरे समय में अन्तर पड़ता है। तीन समय में प्रति समय 85 से 96 सिद्ध हो तो चौथे में अन्तर पड़ता है। 4 समय तक प्रति समय 73 से 84 तक निरन्तर सिद्ध हो तो पांचवे समय में अंतर पड़ता है। पांच समय तक प्रति समय 61 से 72 तक सिद्ध हो तो छठे में अंतर पड़ेगा, छठे समय तक 49 से 60 प्रति समय सिद्ध हो तो सातवे में

अंतर पड़ेगा। यदि सात समय तक 33 से 48 तक निरंतर सिद्ध हो तो आठवें में अन्तर पड़ेगा, यदि आठ समय तक निरंतर 1 से 32 होते है तब नवमें समय में अंतर पड़ेगा।

14. अल्प बहुत्व द्वार- एक समय में सिद्ध होने वाले 108 सबसे कम, 107 सिद्ध होने वाले अनन्त गुणा, इसी तरह 106, 105 यावत् 51 तक अनंत गुणा, इनकी अपेक्षा 1 समय में 50 सिद्ध होने वाले असंख्यात गुणा, इसी प्रकार 49, 48 यावत् 26 तक असंख्यात गुणा, इनकी अपेक्षा 25 संख्यात गुणा यों 24, 23, 22, 21 यावत् एक सिद्ध होने वाले संख्यात गुणा।

15. गणना (संख्या) द्वार- जिस क्षेत्र में एक समय में 108 सिद्ध होने की क्षमता है वहां आठ समय तक निरंतर सिद्ध हो सकते हैं। जिस क्षेत्र में एक समय में 20 सिद्ध होने की क्षमता है उस क्षेत्र में निरंतर 4 सिद्ध हो सकते हैं, जहां 10 सिद्ध होने की क्षमता है वहां भी 4 सिद्ध निरंतर हो सकते हैं, जहां एक समय में 2-3 या 4 सिद्ध होने की क्षमता है, वहां दूसरे समय में अंतर पड़ता है।

एक समय में जघन्य, उत्कृष्ट सिद्ध होने वालों की संख्या एवं क्षेत्र- (अन्तर सहित)

क्र.	सिद्ध होने वाले	जघन्य	उत्कृष्ट
1से3	प्रथम तीन नरक से निकले	1	10
4	चौथी नरक से निकले	1	4
5	भवनपति देव से निकले	1	10
6	भवनपति देवी से निकले	1	5
7-8	पृथ्वी, पानी से से निकले	1	4
9	वनस्पति से निकले	1	6
10-11	गर्भज तिर्यंच, तिर्यंचणी से निकले	1	10
12	गर्भज मनुष्य	1	10
13	गर्भज मनुष्याणी	1	20
14	व्यंतर देव	1	10
15	व्यंतर देवी	1	5
16	ज्योतिषी देव	1	10
17	ज्योतिषी देवी	1	20
18	वैमानिक देव	1	108
19	वैमानिक देवी	1	20
20	तीर्थ सिद्ध	1	108
21	अतीर्थ सिद्ध	1	10

22	तीर्थंकर सिद्ध	2	4
23	अतीर्थंकर सिद्ध	1	108
24	प्रत्येक बुद्ध सिद्ध	1	10
25-26	बुद्ध बोधित, स्वलिंग सिद्ध	1	108
27-28	स्वयं बुद्ध, गृहस्थ लिंग सिद्ध	1	4
29	अन्यलिंग सिद्ध	1	10
30	स्त्रिलिंग सिद्ध	1	20
31	पुरुष लिंग सिद्ध	1	108
32	नपुंसक लिंग सिद्ध	1	10
33	एक सिद्ध	1	1
34	अनेक सिद्ध	2	108
35	ऊर्ध्वलोक से	1	4
36	अधोलोक से	1	20
37	तिर्यक् लोक से	1	108
38	जघन्य अवगाहना	1	4
39	मध्यम अवगाहना	1	108
40	उत्कृष्ट अवगाहना	1	2
41	समुद्र के अन्दर से	1	2
42	नदी प्रमुख जल से	1	3
43	महाविदेह विजयों (प्रत्येक) से	1	20
44 से 46	भद्रशाल, नन्दन, सोमनस वन से	1	4
47	पंडग वन से	1	2
48	अकर्म भूमि से	1	10
49	कर्मभूमि से	1	108
50-51	पहले, दूसरे आरे से	1	10
52-53	तीसरे चौथे आरे में से	1	108
54	पांचवे आरे में (चोथे में जन्मा)	1	20/10
55	छठे आरे में	1	10
56 से 58	अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी, नोअवसर्पिणी-उत्सर्पिणी	1	108

निरंतर आठ समय सिद्ध-

1	एक समय तक सिद्ध हों तो	103	108
2	दो समय तक सिद्ध हों तो	97	102
3	तीन समय तक सिद्ध हों तो	85	96
4	चार समय तक सिद्ध हों तो	73	84
5	पांच समय तक सिद्ध हों तो	61	72
6	छः समय तक सिद्ध हों तो	49	60
7	सात समय तक सिद्ध हों तो	33	48
8	आठ समय तक सिद्ध हों तो	1	32

आठ समय के बाद अन्तर पड़े बिना सिद्ध नहीं होते।

45. सिद्धों का 33 बोल का अल्प बहुत्व (पन्नवणा सूत्र पद 20) जीव मनुष्य भव में ही सिद्ध होता है, अतः मनुष्य भव चरम भव है। 33 स्थानों से चरम भव में आकर सिद्ध होते हैं, ये 33 स्थान चरम से पूर्व भव के समझना। उन 33 में से कहां से कम कहां से अधिक आकर सिद्ध हो सकते हैं यह वर्णन है-

1	चौथी नरक से	सबसे अल्प
2	तीसरी नरक से	संख्यात गुणा
3	दूसरी नरक से	संख्यात गुणा
4	वनस्पतिकाय से	संख्यात गुणा
5	पृथ्वीकाय से	संख्यात गुणा
6	अप्काय से	संख्यात गुणा
7	भवनपति देवी से	संख्यात गुणा
8	भवनपति देव से	संख्यात गुणा
9	व्यंतर देवियों से	संख्यात गुणा
10	व्यंतर देवों से	संख्यात गुणा
11	ज्योतिषी देवियों से	संख्यात गुणा
12	ज्योतिषी देवों से	संख्यात गुणा
13	मनुष्य स्त्री से	संख्यात गुणा
14	मनुष्य से	संख्यात गुणा

15	पहली नरक से	संख्यात गुणा
16	तिर्यंच स्त्री से	संख्यात गुणा
17	तिर्यंच पंचेन्द्रिय से	संख्यात गुणा
18	अणुत्तर विमान से	संख्यात गुणा
19	नव ग्रैवेयक देवों से	संख्यात गुणा
20	12वें देवलोक से	संख्यात गुणा
21	11वें देवलोक से	संख्यात गुणा
22	10 वें देवलोक से	संख्यात गुणा
23	9वें देवलोक से	संख्यात गुणा
24	8वें देवलोक से	संख्यात गुणा
25	7वें देवलोक से	संख्यात गुणा
26	6ठे देवलोक से	संख्यात गुणा
27	5वें देवलोक से	संख्यात गुणा
28	चौथे देवलोक से	संख्यात गुणा
29	तीसरे देवलोक से	संख्यात गुणा
30	दूसरे देव. की देवियों से	संख्यात गुणा
31	दूसरे देव के देवों से	संख्यात गुणा
32	पहले देव की देवियों से	संख्यात गुणा
33	पहले देव के देवों से	संख्यात गुणा

46. पांच शरीर (पन्नवणा पद 21) 15 द्वारों से पांच शरीर का वर्णन दिया है 1. नाम द्वार 2. अर्थ 3. स्वामी 4. संस्थान 5. अवगाहना 6. शरीर संयोग 7. द्रव्यार्थ से 8. प्रदेशार्थ से 9. द्रव्य-प्रदेश दोनों से 10. सूक्ष्म बादर 11. अवगाहना 12. प्रयोजन 13. विषय 14. स्थिति 15. अन्तर द्वार।

1. नाम द्वार– शरीर पांच है- औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस और कार्मण शरीर।

2. अर्थ द्वार– आत्म प्रदेशों की अवगाहना करे वह शरीर है- **1. औदारिक शरीर–** उदार यानि प्रधान स्थूल और औदारिक पुद्गलों से तथा हाड़ मांस रक्तादि से बना,

औदारिक शरीर नाम कर्म उदय से प्राप्त। तीर्थंकर, गणधर आदि पुरुषों को मुक्ति पद में सहाय करे। साधारण, सर्व साधारण का साधारण पुद्गलों से बनता है, मनुष्य और तिर्यंच को प्राप्त होता है। **2. वैक्रिय शरीर–** वैक्रिय शरीर नाम कर्म उदय से प्राप्त अनेक रूप परिवर्तन करने की शक्ति छोटा, बड़ा, आकाश में उड़ने, भूमि पर चलने, दृश्य-अदृश्य अनेक क्रियाएं अवस्थाएं यह कर सकता है। ये दो प्रकार का औपपातिक- नारक, देवों को जन्म से ही वैक्रिय शरीर मिलता है। लब्धि प्रत्यय- मनुष्य, तिर्यंच तपादि से विशेष शक्ति प्राप्त कर सकते हैं। **3. आहारक** शरीर नाम कर्म से मिलता है। छठे गुण स्थान वर्त्ती 14 पूर्व धारी मुनिराज को तपादि योग से प्राप्त होता है 1. तीर्थंकरादि की ऋद्धि देखने 2. मन का संशय टालने, निवारणार्थ 3. जीवदया के लिए 4. 14 पूर्व का अधूरा ज्ञान पूर्ण करने उत्तम पुद्गलों का आधार लेकर जघन्य न्यून हाथ उत्कृष्ट 1 हाथ का स्फटिक समान सफेद कोई न देखे ऐसा शरीर बनाते हैं।

4. तैजस् शरीर– शरीर में उष्णता रहे, आहार पचावे, तेजो लब्धि का हेतु तैजस शरीर, सभी सांसारिक जीवों के होता है। आहार को पचाने आदि का कार्य औदारिक शरीर और पर्याप्तियों का होता है, तैजस शरीर का नहीं।

5. कार्मण शरीर– नाम कर्म से प्राप्त जिसमें सभी कर्म स्कंध जीव प्रदेशों के साथ लगे हुए हो वह कार्मण शरीर है। यह सभी संसारी जीवों के होता है। इसी से जीव अपने स्थान से मरण कर उत्पत्ति स्थान पर जाता है।

3. स्वामी द्वार– औदारिक शरीर के स्वामी मनुष्य और तिर्यंच, नारकी और देव वैक्रिय शरीर के, 14 पूर्वधारी मुनिराज आहारक के, तैजस कार्मण के स्वामी चारों गति के सभी संसारी जीव।

4. संस्थान द्वार– औदारिक, तैजस, कार्मण में 6 संस्थान। वैक्रिय में सम चौरस और हुंडक, आहारक में सम चतुरस्र संस्थान।

5. अवगाहना– औदारिक की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट हजार योजन (कमल नाल की अपेक्षा), वैक्रिय शरीर की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट एक लाख योजन से साधिक (उत्तर वैक्रिय की अपेक्षा) बाकी साधारण 500 धनुष (उत्कृष्ट में), आहारक की जघन्य मुंड हाथ उत्कृष्ट एक हाथ। तैजस कार्मण की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट लोकान्त यानि 14 रज्जू प्रमाण (लोक प्रमाण) केवली समुद्घात अपेक्षा।

6. शरीर संयोग द्वार- औदारिक में वैक्रिय और आहारक की भजना (कभी होते कभी नहीं होते), तैजस कार्मण की नियमा है। वैक्रिय में औदारिक की भजना, आहारक शरीर नहीं होता, तैजस कार्मण नियमा होते हैं। आहारक शरीर में औदारिक तैजस कार्मण की नियमा, वैक्रिय नहीं होता। तैजस शरीर में कार्मण शरीर नियम से होता है। औदारिक, वैक्रिय, आहारक की भजना। कार्मण में तैजस की नियमा, औदारिक वैक्रिय आहारक की भजना होती है।

7. द्रव्यार्थ अपेक्षा से अल्पाबोध- आहारक के द्रव्यार्थ सबसे कम, वैक्रिय शरीर असंख्यात गुणा, औदारिक असंख्यात गुणा, उससे तैजस कार्मण शरीर द्रव्यार्थ अपेक्षा से अनंत गुणा परस्पर तुल्य है।

8. प्रदेशार्थ से अल्प बहुत्व- सबसे थोड़े आहारक शरीर प्रदेश की अपेक्षा, उससे वैक्रिय शरीर प्रदेशापेक्षा से असंख्यात गुणा, औदारिक के उससे असंख्यात गुणा, उससे तैजस के अनंत गुणा उससे कार्मण के अनंत गुणा।

9. द्रव्यार्थ प्रदेशार्थ शामिल से अल्प बहुत्व- सबसे थोड़े आहारक द्रव्यार्थ अपेक्षा, वैक्रिय शरीर द्रव्यार्थ से असंख्यात गुणा, औदारिक द्रव्यार्थ से असंख्यात गुणा, उससे आहारक शरीर प्रदेशापेक्षा अनंत गुणा, उससे वैक्रिय प्रदेशापेक्षा असंख्यात गुणा, उससे औदारिक शरीर प्रदेशापेक्षा असंख्यात गुणा, उससे तैजस कार्मण शरीर द्रव्यार्थ अपेक्षा अनंत गुणा परस्पर तुल्य, उससे तैजस शरीर प्रदेशापेक्षा अनंत गुणा, उससे कार्मण के प्रदेश अनंत गुणा।

10. सूक्ष्म बादर द्वार- सबसे सूक्ष्म पुद्गल कार्मण शरीर के, उससे तैजस के बादर, उससे आहारक के बादर, उससे वैक्रिय के बादर, उससे औदारिक के बादर। सबसे बादर पुद्गल औदारिक शरीर के, उससे वैक्रिय के सूक्ष्म, उससे आहारक के सूक्ष्म, उसकी अपेक्षा तैजस शरीर के सूक्ष्म, उससे कार्मण शरीर के सूक्ष्म है।

11. अवगाहना का अल्प बहुत्व- सबसे थोड़ी औदारिक की जघन्य अवगाहना, उससे तैजस कार्मण की जघन्य अवगाहना विशेषाधिक परस्पर तुल्य, उससे वैक्रिय की जघन्य अवगाहना असंख्यात गुणी, उससे आहारक की जघन्य अवगाहना असंख्यात गुणी, उससे आहारक की उत्कृष्ट अवगाहना विशेषाधिक, उससे औदारिक की उत्कृष्ट अवगाहना संख्यात गुणी उससे वैक्रिय की उत्कृष्ट संख्यात गुणी, उससे तैजस कार्मण की उत्कृष्ट अवगाहना असंख्यात गुणी परस्पर तुल्य।

12. प्रयोजन द्वार- 1. औदारिक शरीर का प्रयोजन मोक्ष प्राप्त करना 2. वैक्रिय शरीर का प्रयोजन विविध रूप बनाना 3. आहारक शरीर का प्रयोजन संशय टालना 4. तैजस शरीर का प्रयोजन तेज (उष्मा) बनाये रखना, पाचन करना, तेजोलब्धि का प्रयोग भी होता है। 5. कार्मण शरीर आठ कर्मों का खजाना यह आहार और कर्म को आकर्षित करता है।

13. विषय द्वार- औदारिक शरीर का विषय 15वां रूचक द्वीप तक (विद्याधर आदि) जाने की शक्ति, वैक्रिय शरीर का विषय असंख्यात द्वीप समुद्र तक, आहारक शरीर का विषय अढ़ाई द्वीप समुद्र तक जाने तथा तैजस कार्मण शरीर का विषय चौदह रज्जू लोक, संपूर्ण लोक प्रमाण जाने की (केवली समुद्घात) शक्ति प्रमाण है।

14. स्थिति द्वार- औदारिक की स्थिति जघन्य अन्तमुहुर्त (दो समय का क्षुल्लक भव) उत्कृष्ट तीन पल्योपम (युगलिया), वैक्रिय की जघन्य अन्तमुहुर्त्त उत्कृष्ट 33 सागरोपम, आहारक की जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहुर्त, तैजस कार्मण के दो भंग अनादि अनंत (अभव्य से) अनादि सांत (भव्य की अपेक्षा से)

15. अन्तर द्वार- औदारिक शरीर छोड़ पुनः औदारिक शरीर मिलने का अंतर जघन्य 1 समय (अन्तर्मुहुर्त) उत्कृष्ट 33 सागरोपम अन्तर्मुहुर्त साधिक। वैक्रिय का जघन्य अन्तर्मुहुर्त उत्कृष्ट अनंतकाल, आहारक का अन्तर जघन्य अन्तर्मुहुर्त उत्कृष्ट देशोन अर्द्ध पुद्गल परावर्त्तन, तैजस कार्मण का अन्तर नहीं होता, सर्वकाल साथ रहते हैं।

अन्य प्रकार से- आहारक शरीर छोड़ अन्य चार शरीर लोक में हमेशा मिलते हैं, आहारक का उत्कृष्ट अन्तर 6 मास आहारक शरीर एक भव में दो बार, कुल एक जीव को महत्तम चार बार आ सकता हैं।

द्वार	औदारिक शरीर	वैक्रिय शरीर	आहारक शरीर	तैजस कार्मण
1 नाम द्वार	औदारिक	वैक्रिय	आहारक	तैजस, कार्मण
2 अर्थ द्वार	उदार पुद्गल	वैक्रिय पुद्गल	आहारक पुद्गल	तैजस नाम, कर्म पुद्गल
3 स्वामी	मनुष्य, तिर्यंच	नारक देव	मनुष्य 14 पूर्वी	समस्त संसारी जीव
4 संस्थान द्वार	6 संस्थान	समचौरस, हुंडक	सम चौरस	6 संस्थान
5 अवगाहना	उ. हजार योजन	उ. लाख योजन	मुंडहाथ, एक हाथ	लोक प्रमाण
6 शरीर संयोग	वैक्रिय, आहारक की भजना	औदारिक भजना आहारक नहीं ते.का.नि.	औ.ते.का. नियमा वैक्रिय नास्ति	कार्मण तेजस नियमा (एक दूजे में) अन्य तीन की भजना
7 द्रव्यार्थ	3 असंख्यात गुणा	2 असंख्यात गुणा	1 अल्प	4 अनंत गुणा (तुल्य)
8 प्रदेशार्थ	3 असंख्यात गुणा	2 असंख्यात गुणा	1 अल्प	4 तेजस अनंत 5 कार्मण अनंत गुणा
9 द्रव्यार्थ प्रदेशार्थ	3 असंख्य/6 असंख्य	2 असंख्य/5असंख्य	1 अल्प/4 अनंत गुणा	7 अनंत दोनों/तै.8 अनंत/9 का. अनंत

10 सूक्ष्म बादर	5 बादर/1 सबसे बादर	4 बादर/2 बादर सूक्ष्म	3 बा./3 बासू.	1 अल्प कार्मण/2 तै बा./4 ते./5 का
11 अवगाहना ज./उ.	1 अल्प/6 संख्यात गुणी	3 असं./7 संख्यात	4 असंख्य/5 विशेषा.	2 विशेषा./8 असंख्य (दोनों)
12 प्रयोजन	मोक्ष	अनेक रूप	संशय मिटाना	उष्मा/कर्म संग्रह
13 विषय (शक्ति)	15वां रूचक द्वीप तक	असंख्यात द्वीप समुद्र	अढ़ाई द्वीप	संपूर्ण लोक
14 स्थिति (उत्कृष्ट)	उत्कृष्ट तीन पल्य	33 सागर	अन्तर्मुहुर्त	अनादि अनंत (अभवी) अना. सां. (भवी)
15 अन्तर	1 समय/3सागर उत्कृष्ट	अं. मु./अनंत.उत्कृष्ट	अं .मु./देशोन अर्द्ध पुद्गल	नहीं होता

47. मारणान्तिक समुद्घात (प्रज्ञापना 21वां पद) मारणान्तिक समुद्घात के समय तैजस कार्मण शरीर का विष्कंभ, बाहल्य, (चौड़ाई, मोटाई) शरीर प्रमाण और आयाम (लम्बाई) इस प्रकार है-

1. नारक मारणान्तिक समुद्घात करे तो (नैरयिक नीचे समुद्घात नहीं करता है, किन्तु सातवीं नरक के करते हैं इस अपेक्षा से नीचे की समुद्घात कही है) जघन्य एक हजार योजन साधिक, उत्कृष्ट नीचे 7वीं नरक तक, तिर्च्छे स्वयंभू रमण समुद्र तक, ऊपर मेरू पर्वत के पंडग वन की बावड़ियों तक।

2. भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी, पहले दूसरे देवलोक के देवता करें तो जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट नीचे तीसरी नरक के चरमांत तक, तिर्च्छे स्वयंभू रमण की बाह्य वेदिका के चरमांत तक ऊपर में सिद्धशिला तक।

3. तीसरे से आठवे देवलोक के देव करें तो जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट नीचे करे तो महापाताल कलशों के दो तिहाई भाग तक, तिर्च्छे स्वयंभूरमण समुद्र पर्यंत, ऊपर 12वें देवलोक तक (वैसे देवता ऊपर समुद्घात नहीं करते, परन्तु कोई देव वहां ले जाय और वहां उमर पूरी हो जाय तो)

4. नौवें से 12वें देवलोक के देव करें तो जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग, उत्कृष्ट नीचे सलिलावती, वप्रा विजय तक, तिर्च्छे मनुष्य क्षेत्र, ऊपर 12वें देवलोक तक (कोई ले जाय तो वही आयु पूर्ण हो तो) तथा 12वें देवलोक के देव ऊपर अपने विमान तक।

5. नव ग्रैवेयक और पांच अणुत्तर विमान के देव करे तो जघन्य विद्याधरों की श्रेणी तक उत्कृष्ट नीचे अधोलोक के सलिलावती वप्रा विजय तक, तिर्च्छे मनुष्य क्षेत्र तक, ऊपर अपने अपने विमानों तक (जहां रहते वहीं काल करते)

6. पांच स्थावर करें तो जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट लोकान्त से लांकात (संपूर्ण लोक) तक।

7. तीन विकलेन्द्रिय और तिर्यंच पंचेन्द्रिय मारणान्तिक समुद्घात करे तो जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट लोक के किसी भी भाग से लोकान्त तक (दिशाविदिशा कहीं से भी लोकांत तक)।

8. मनुष्य करें तो जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट समय क्षेत्र से लोकांत तक (सभी दिशा विदिशा से)

48. क्रिया पद (प्रज्ञापना 22वां पद) 24 दंडक में क्रिया संबंधी प्रकरण में 18 द्वार है। 1. नाम 2. अर्थ और भेद 3. सक्रिय अक्रिय 4. क्रिया किससे लगे 5. क्रिया करते कर्म बंध 6. कर्म बांधते क्रिया 7. जीव को जीव से क्रिया 8. 24 दंडक में नियमा भजना 9. आयोजिका क्रिया 10. स्पृष्ट 11. क्रिया के भेद और स्वामी 12. क्रिया की प्राप्ति 13. नियमा भजना 14. 18 पाप से निर्वर्तन 15. 18 पाप निवृत्त से कर्मबंध 16. शाश्वत अशाश्वत भांगे 17. 18 पाप निवृत से क्रिया 18. अल्प बहुत्व द्वार।

1. नाम द्वार- कर्म बंध के कारण भूत शारीरिक, वाचिक, मानसिक चेष्टा क्रिया कहलाती है। ये पांच हैं कायिकी, अधिकारिणी, प्राद्वेषिकी, परितापनिकी, प्राणातिपातिकी।

2. अर्थ और भेद द्वार- 1. कायिकी- काया से या काया में होने वाली हलन चलन आदि क्रिया कायिकी, इसके 2 भेद।

अनुपरत कायिकी- देश अथवा सर्व विरति से जो सावद्य योग से विरत नहीं है, 18 पापों से अविरत को (चौथे गुण स्थान तक) लगने वाली क्रिया। दुष्प्रयुक्त कायिकी- योगों के दुष्ट प्रयोग से, छठे गुण स्थान तक होती है।

2. आधिकारिणीकी क्रिया- अनुष्ठान अथवा बाह्य शस्त्रादि को अधिकरण कहते हैं ये भी दो भेद- संजोयणा यानि पहले बने शस्त्रादि के अलग अलग अंगों को जोड़ना। निर्वर्तनाधिकरणिकी- नये शस्त्रादि बनाना, पांच प्रकार के शरीर बनाना (दुष्प्रयुक्त शरीर संसार वृद्धि कारक है।)

3. प्राद्वेषिकी- मत्सर भाव, प्रद्वेष भाव से अकुशल परिणाम से होने वाली क्रिया। यह स्व, पर, उभय तीन प्रकार की है। अपनी आत्मा पर द्वेष करना स्व, दूसरों पर द्वेष करना पर और अपनी आत्मा तथा दूसरों पर प्रद्वेष करना।

4. पारितापनिकी- यानि पीड़ा, पीड़ा के निमित्त से या पीड़ा में होने वाली क्रिया पारितापनिकी ये भी तीन प्रकार की है, अपनी आत्मा को कष्ट देना स्व, दूसरों को कष्ट देना पर, और स्व-पर दोनों को उभय।

5. प्राणातिपातिकी– इन्द्रियादि 10 प्राण में से किसी का भी नाश करना प्राणातिपातिकी है, ये भी तीन प्रकार की है। स्वयं के प्राणों का नाश करना स्व, दूसरों की घात करना पर, स्व पर दोनों की घात करना उभय प्राणातिपाति की है।

3. सक्रिय अक्रिय द्वार– जीव सक्रिय भी है, अक्रिय भी। जीव के दो भेद-सिद्ध और संसारी। सिद्ध अक्रिय है। संसारी जीवों के दो भेद- शैलेषी प्रतिपन्न ये अयोगी अवस्था प्राप्त 13वें गुण स्थान के अन्तर्मुहुर्त शेष रहते योग निरोध अवस्था में तथा 14वें गुणस्थानवर्त्ती जीव के योगों का निरोध है, अतः वे अक्रिय हैं। अशैलेषी प्रतिपन्न पहले से 12वें गुण स्थान तक के जीव सयोगी हैं, सक्रिय हैं।

4. क्रिया का विषय– जीव को 18 पाप स्थानकों के अध्यवसाय से वे-वे 18 प्रकार से क्रिया लगती है, जैसे हिंसा के परिणाम से प्राणातिपातिकी यों 18 पाप से समझना। प्राणातिपात का विषय 6 जीवनिकाय है, मृषावाद की सभी द्रव्यों से लगती है। अदत्ता-दान की क्रिया ग्रहण-धारण करने से, मैथुन परिणाम का विषय रूपवान पदार्थ, स्वरूपवान स्त्री आदि है, परिग्रह का परिणाम विषय सर्व द्रव्य है क्रोधादि शेष का विषय सर्व द्रव्य है। इसी प्रकार समुच्चय जीव को, 24 दंडक को सभी द्रव्यों से लगती है। प्राणातिपात, अदत्तादान, मैथुन देश द्रव्य वाले हैं, शेष 15 सर्व द्रव्य वाले हैं। उपलक्षण से सर्व पर्यायों से भी 15 पापों की क्रियाएं लगती हैं। 18×25=450 भंग एक जीव के और अनेक जीव (बहुत जीवों) की अपेक्षा 450+450=900 आलापक हुए।

5. क्रिया से कर्म बंध– एक जीव प्राणातिपातिकी की क्रिया करते कभी सात कभी आठ कर्म बांधता है, इसी तरह 24 दंडक एकवचन की अपेक्षा से, और इसी तरह शेष 17 पाप स्थान का कहना है। इसी तरह 19 दंडक (पांच स्थावर छोड़) में तीन भंग (1) सभी सात कर्म बांधे (2) सात बांधने वाले बहुत आठ बांधे एक (3) सात बांधे बहुत आठ बंधे बहुत। यो 19×3=57×18 पाप स्थानक से गुणा करने पर 1026 भंग हुए। पांच स्थावर में भंग नहीं बनता आयु कर्म बांधते समय आठ, शेष समय सात बांधते हैं।

6. कर्म बंध से क्रिया– ज्ञानावरणीय कर्म बांधते एक जीव को 3-4-5 क्रियाएं लगती है। समुच्चय जीव और 24 दंडक की अपेक्षा कहें। इसी तरह बहुवचन से भी कहना यों एक वचन से 25, बहुवचन से 25 कुल 50 भंग इसी तरह शेष सात कर्म का भी कहना 50×8=400 भंग।

7. जीव को जीव से क्रिया– समुच्चय एक जीव को समुच्चय एक जीव से 3-4-5 क्रिया लगती है, कभी अक्रिय भी होता है ये क्रियाएं वर्त्तमान भव की अपेक्षा समझनी। समुच्चय जीव को औदारिक के 10 दण्डक की अपेक्षा इस प्रकार कहना। समुच्चय जीव को नारकी देवता के 14 दंडक की अपेक्षा 3-4 क्रिया और अक्रिय भी। 14 दंडक को इन 14 दंडक की अपेक्षा कभी 3 कभी 4 क्रिया लगती है। 14 दंडक को समुच्चय जीव और औदारिक के 10 दंडकों की अपेक्षा 3-4-5 क्रियाएं लगती है। मनुष्य छोड़ शेष 9 औदारिक दंडकों को 14 दंडक की अपेक्षा कभी तीन कभी चार, और समुच्चय जीव और 10 औदारिक की अपेक्षा 3-4-5 क्रियाएं लगती है। मनुष्य समुच्चय जीव की तरह कहना। 2. इसी तरह एक जीव को बहुत जीवों की अपेक्षा कहना। 3. बहुत जीवों को एक जीव की अपेक्षा कहना 4. बहुत जीवों को बहुत जीवों की अपेक्षा कहना। चौथे अलावा में सिय शब्द नहीं होता 3 भी 4 भी पांच भी क्रिया लगती है ऐसा कहना। समुच्चय और मनुष्य में अक्रिय भी कहना। समुच्चय जीव और 24 दंडक में 4 आलापक होने से 25×4=100 भंग और समुच्चय तथा 24 दंडक की अपेक्षा 100×25=2500 भंग हुए।

8. 24 दंडक में क्रिया की प्राप्ति नियमा भजना– समुच्चय जीव और 24 दंडक में कायिकी आदि 5-5 क्रियाएं होती है।

1. कायिकी क्रिया होती है तो अधिकारिणी तथा अधिकारिणी हो तो कायिकी होती है।

2. कायिकी क्रिया लगे तो प्राद्वेषिकी नियमा लगती है, प्राद्वेषिकी को कायिकी क्रिया लगती है।

3. कायिकी में पारितापनिकी की भजना, परन्तु जिसे पारितापनिकी लगती हो वहां कायिकी की नियमा।

4. कायिकी में प्राणातिपातिकी की भजना, परन्तु प्राणातिपातिकी वाले को कायिकी की नियमा होती है।

5. जिसे आधिकारिणीकी लगे उसे प्राद्वेषिकी नियमा लगती है और प्राद्वेषिकी वाले को अधिकरणिकी नियमा।

6. आधिकरणिकी में पारितापनिकी की भजना परन्तु पारितापनिकी वाले को आधिकरणिकी की नियमा।

7. अधिकरणिकी में प्राणातिपातिकी की भजना, प्राणातिपातिकी में आधिकरणिकी की नियमा।

8. प्राद्वेषिकी में पारितापनिकी की भजना, पारितापनिकी लगे तो प्राद्वेषिकी नियमा लगे।
9. प्राद्वेषिकी में प्राणातिपातिकी को भजना, प्राणातिपातिकी लगे तो प्राद्वेषिकी की नियमा
10. पारितापनिकी में प्राणातिपातिकी की भजना, प्राणतिपातिकी में पारितापनिकी नियमा लगे।

इसी तरह समय (सामान्य काल समझना काल का सूक्ष्म अंश नहीं) देश, प्रदेश की अपेक्षा भी 10-10 भंग कहना। जैसे जिस समय कायिकी की जाती है, उस समय आधिकरणिकी नियमपूर्वक की जाती है।

इसी तरह जिस देश में कायिकी क्रिया की जाती है, उस देशमें आधिकारणिकी की जाती हैं। जिस प्रदेश में कायिकी क्रिया की जाती है, उस प्रदेश में आधिकरणिकी नियमपूर्वक की जाती है। इस तरह नियमा भजना द्वार में कहे अनुसार समय, देश, प्रदेश के भंग कहना। समुच्चय के 10, समय के 10, देश के 10, प्रदेश के 10 यों 40 भंग। समुच्चय और 24 दंडक इन 25 से गुणा करने पर 40×25=1000 भंग हुए।

क्रिया का नाम	कायिकी	आधिकरणिकी	प्राद्वेषिकी	पारितापनिकी	प्राणातिपातिकी
कायिकी	नियमा	नियमा	नियमा	भजना	भजना
आधिकरणिकी	नियमा	नियमा	नियमा	भजना	भजना
प्राद्वेषिकी	नियमा	नियमा	नियमा	भजना	भजना
पारितापनिकी	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा	भजना
प्राणातिपातिकी	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा

9. आयोजिका क्रिया- जीव को संसार में जोड़ने की क्रिया आयोजिता क्रिया है। उपरोक्त पांचों भेद है और आठवें द्वार के कहे अनुसार 1000 भंग कहना।

10. स्पृष्ट द्वार- जिस समय जीव तीन प्रथम क्रियाओं से स्पृष्ट हों तब पारितापनिकी और प्राणातिपातिकी क्रियाओं से स्पृष्ट-अस्पृष्ट के 4 भंग है- 1. कोई जीव इन तीन से स्पृष्ट हो तो इन दोनों से भी स्पृष्ट होता है। 2. कोई जीव तीन से स्पृष्ट होने पर पारितापिनिकी से स्पृष्ट होता है, कोई प्राणातिपातिकी से स्पृष्ट नहीं होता। 3. कोई तीन से स्पृष्ट होने पर इन दोनों से स्पृष्ट नहीं होता 4. कोई जीव तीनों से अस्पृष्ट होता है उस समय इन दोनों से भी स्पृष्ट नहीं होता।

11. क्रिया के पांच भेद- प्रकारान्तर से क्रिया के पांच भेद है- **1. आरंभिकी-** यह क्रिया प्रमत्त संयत (छठे गुण.) तक के जीवों के लगती है जीव आरंभिकी जीव हिंसा से अजीव आरंभिकी के विविध प्रकार जैसे जीव आकार के पदार्थ फाड़ने, जलाने,

मृत शरीर जलाने, अजीव माध्यम से जीव हिंसा, अजीव में जीव आरोहण कर उसका वध करना जैसे रावण का पुतला जलाना आदि। **2. पारिग्रहिकी क्रिया-** यह संयता संयत तक यानि पांचवे गुण स्थान तक के (1 से 5 तक) जीवों को लगती है। **जीव परिग्रहिकी-** दास, दासी आदि का मूर्च्छा भाव से संग्रह करना। **अजीव** यानि धन धान्य सोना चांदी आदि जड़ पदार्थों का आसक्ति पूर्वक संग्रह करना।

3. माया प्रत्यया- यह पहले से 10वें गुण स्थान तक के जीवों के होती है (अप्रमत्त संयत) कषाय निमित्त से लगती है।

4. अप्रत्याख्यान क्रिया- प्रत्याख्यान न करने वालों चौथे गुण स्थान तक के जीवों को लगती है।

5. मिथ्या दर्शन प्रत्यया- मिथ्यात्व के निमित्त से लगती है पहले दूसरे तीसरे गुण स्थानवर्त्ती तक को लगती है।

12. क्रिया प्राप्ति (पावण) द्वार- समुच्चय और 24 दंडक में उपरोक्त पांच क्रिया पाई जाती है।

13. नियमा भजना द्वार- 1. आरंभिकी में पारिग्रहिकी की भजना है, पारिग्रहिकी में आरंभिकी की नियमा होती है। 2. आरंभिकी में माया प्रत्यया नियमा, परन्तु माया प्रत्यया में आरंभिकी की भजना। 3. आरंभिकी में अप्रत्याख्यान की भजना, अप्रत्याख्यान में आरंभिकी नियमा होती है। 4. आरंभिकी में मिथ्या दर्शन की भजना और मिथ्यादर्शन में आरंभिकी नियमा होती है। 5. पारिग्रहिकी में माया प्रत्यया नियमा होती है, माया प्रत्यया में पारिग्रहिकी की भजना है। 6. पारिग्रहिकी में अप्रत्याख्यान की भजना, अप्रत्याख्यान में पारिग्रहिकी की नियमा। 7. पारिग्रहिकी में मिथ्यादर्शन की भजना, मिथ्यादर्शन में पारिग्रहिकी की नियमा। 8. माया प्रत्यया में अप्रत्याख्यान की भजना, अप्रत्याख्यान में माया प्रत्यया की नियमा 9. माया प्रत्यया में मिथ्या दर्शन की भजना, मिथ्या दर्शन में माया प्रत्यया नियमा होती है। 10. अप्रत्याख्यान में मिथ्या दर्शन की भजना, मिथ्यादर्शन में अप्रत्याख्यान की नियमा होती है। इस प्रकार समझें-

क्रिया का नाम	आरंभिकी	पारिग्रहिकी	माया प्रत्यया	अप्रत्याख्यान	मिथ्या दर्शन
आरंभिकी	नियमा	भजना	नियमा	भजना	भजना
पारिग्रहिकी	नियमा	नियमा	नियमा	भजना	भजना
माया प्रत्यया	भजना	भजना	नियमा	भजना	भजना
अप्रत्याख्यान	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा	भजना
मिथ्या दर्शन प्रत्यया	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा	नियमा

नारकी देवता के 14 दंडक में चार क्रिया नियमा होती है। मिथ्या दर्शन प्रत्यया होने से पांच क्रिया नियमा होती है। पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय 8 दंडक में पांच क्रिया की नियमा है। तिर्यंच पंचेन्द्रिय में तीन क्रिया नियमा अप्रत्याख्यान हो तो 4 मिथ्या दर्शन की भजना है, मिथ्या दर्शन प्रत्यया होने पर पांच क्रिया नियमा होती है। समुच्चय की तरह मनुष्य का कथन, मिथ्यात्वी में पांच, अविरति सम्यग्दृष्टि को चार, देशविरति को तीन प्रमत संयत को दो क्रिया। (7 से 10 गुणस्थान वर्त्ती), अप्रमत्त को एक माया प्रत्यया लगती है। 11 से 14 गुण वालों को वीतरागी को क्रिया नहीं लगती।

14. अठारह पाप निर्वर्त्तन द्वार- समुच्चय जीव 18 पाप से विरत (निवृत्त) होता है। पांच स्थावर, तीन विकलेन्द्रिय 18 पाप से विरत नहीं होते। नारक, देव, तिर्यंच पंचेन्द्रिय मिथ्यात्व से विरत हो सकते हैं, 17 पाप से विरत नहीं होते। नारक, देव, तिर्यंच पंचेन्द्रिय मिथ्यात्व से विरत हो सकते हैं, 17 पाप से विरत नहीं होते। मनुष्य 18 पाप से विरत (निवृत्त) हो सकता है।

15. अठारह पाप से निवृत्त और कर्म बंध द्वार- समुच्चय एक जीव 18 पाप से निवृत्त होता हुआ, कभी सात, कभी आठ, कभी छह, कभी एक कर्म में बांधता है। कभी अबंध होता है। नारकी, देव, तिर्यंच पंचेन्द्रिय ये 15 दंडक का एक जीव मिथ्यात्व से निवृत होता हुआ कभी सात कभी आठ कर्म बांधता है। मनुष्य समुच्चय की तरह कहना। 18 पाप से विरत समुच्चय एक जीव आयु कर्म बंध करे तो 8, बाकी समय 7, दसवें गुण स्थान में आयु, मोहनीय छोड़ 6 कर्म, ग्यारवें, बारहवें तेरहवें गुण स्थान में साता वेदनीय एक कर्म बांधते है, चौदहवें गुण स्थान में अबंधक होता है।

16. शाश्वत अशाश्वत से बनने वाले भंग- सात कर्म एवं एक कर्म बांधने वाले शाश्वत मिलते है, 8 कर्म, 6 कर्म और अबंधक अशाश्वत होते हैं। इनके 27 भंग है। असंयोगी 1, दो संयोगी 6, तीन संयोगी 12, 4 संयोगी के आठ।

1. असंयोगी 1 भंग- सभी 7 कर्म बांधने वाले और एक कर्म बांधने वाले। शाश्वत का 1 भंग

2. दो संयोगी 6 भंग- तीन अशाश्वत के। एक और अनेक की अपेक्षा असंयोगी 6 भंग

1.	अनेक जीव सात और एक कर्म के बंधक और 1 जीव आठ कर्म बंधक	(21)
2.	अनेक जीव सात और एक कर्म के बंधक और अनेक जीव आठ कर्म बंधक	(22)
3.	अनेक जीव सात और एक कर्म के बंधक और 1 जीव 6 कर्म बंधक	(21)
4.	अनेक जीव सात और एक कर्म के बंधक और अनेक जीव 6 कर्म बंधक	(22)
5.	अनेक जीव सात कर्म और एक कर्म के बंधक और एक जीव अबंधक	(21)
6.	अनेक जीव सात और एक कर्म के बंधक और अनेक जीव अबंधक	(22)

3. त्रिसंयोगी 12 भंग- तीन अशाश्वत के तीन द्विक की 3 चौभंगी होने से द्विसंयोगी 12 भंग

1	अनेकों 7 कर्म या 1 कर्म बंधक, एक 8 कर्म बंधक, एक 6 कर्म बंधक	(211)
2	अनेकों 7 कर्म या 1 कर्म बंधक, एक 8 कर्म बंधक, अनेक 6 कर्म बंधक	(212)
3	अनेकों 7 कर्म या 1 कर्म बंधक, अनेक 8 कर्म बंधक, एक 6 कर्म बंधक	(221)
4	अनेकों 7 कर्म या 1 कर्म बंधक, अनेक 8 कर्म बंधक, अनेक 6 कर्म बंधक	(222)
5	अनेकों 7 कर्म या 1 कर्म बंधक, एक 8 कर्म बंधक, एक अबंधक	(211)
6	अनेकों 7 कर्म या 1 कर्म बंधक, एक 8 कर्म बंधक, अनेक अबंधक	(212)
7	अनेकों 7 कर्म या 1 कर्म बंधक, अनेक 8 कर्म बंधक, एक अबंधक	(221)
8	अनेकों 7 कर्म या 1 कर्म बंधक, अनेक 8 कर्म बंधक, अनेक अबंधक	(222)
9	अनेकों 7 कर्म या 1 कर्म बंधक, एक 6 कर्म बंधक, एक अबंधक	(211)
10	अनेकों 7 कर्म या 1 कर्म बंधक, एक 6 कर्म बंधक, अनेक अबंधक	(212)
11	अनेकों 7 कर्म या 1 कर्म बंधक, अनेक 6 कर्म बंधक, एक अबंधक	(221)
12	अनेकों 7 कर्म या 1 कर्म बंधक, अनेक 6 कर्म बंधक, अनेक अबंधक	(222)

4. चार संयोगी 8 भंग (तीन अशाश्वत की एक त्रिक के तीन संयोगी 8 भंग)-

1	अनेकों 7 कर्म 1 कर्म के बंधक, एक 8 कर्म बंधक, एक 6 कर्म बंधक, एक अबंधक	(2111)
2	अनेकों 7 कर्म 1 कर्म के बंधक, एक 8 कर्म बंधक, एक 6 कर्म बंधक, अनेक अबंधक	(2112)
3	अनेकों 7 कर्म 1 कर्म के बंधक, एक 8 कर्म बंधक, अनेक 6 कर्म बंधक, एक अबंधक	(2121)
4	अनेकों 7 कर्म 1 कर्म के बंधक, एक 8 कर्म बंधक, अनेक 6 कर्म बंधक, अनेक अबंधक	(2122)
5	अनेकों 7 कर्म 1 कर्म के बंधक, अनेक 8 कर्म बंधक, एक 6 कर्म बंधक, एक अबंधक	(2211)
6	अनेकों 7 कर्म 1 कर्म के बंधक, अनेक 8 कर्म बंधक, एक 6 कर्म बंधक, अनेक अबंधक	(2212)
7	अनेकों 7 कर्म 1 कर्म के बंधक, अनेक 8 कर्म बंधक, अनेक 6 कर्म बंधक, एक अबंधक	(2221)
8	अनेकों 7 कर्म 1 कर्म के बंधक, अनेक 8 कर्म बंधक, अनेक 6 कर्म बंधक, अनेक अबंधक	(2222)

समुच्चय जीव की तरह मनुष्य के 27 भंग, समुच्चय और मनुष्य के 25 भंग इनको 18 से गुणा करो 972 भंग हुए। नारकी का 1, देवों के 13, तिर्यंच पंचेन्द्रिय का एक, इन 15 दंडक में अनेक जीव मिथ्यात्व से निवृत होते हुए सात और आठ कर्म बांधते हैं, इनके तीन भंग-असंयोगी 1 सभी सात के बंधक, दो असंयोगी सात के बंधक बहुत, आठ का बंधक एक, सात के बंधक अनेक, आठ के अनेक ये 15×3=45 भंग कुल 1017 भंग हुए।

17. अठारह पाप से निवृत्त और क्रिया द्वार- 18 पापों से विरत समुच्चय जीव को 2 क्रिया- आरंभिकी और माया प्रत्यया की भजना, तथा पारिग्रहिकी, अप्रत्याख्यान, मिथ्यादर्शन नहीं लगती। मिथ्यात्व से विरत चार से 14 और 17 पाप से विरत 6 से 14 गुण स्थान में होते हैं। मिथ्या दर्शन से विरत को मिथ्यादर्शन नहीं होती शेष 4 की भजना। समुच्चय जीव की तरह मनुष्य की कहना। 23 दंडक 18 पाप से निवृत नहीं होते। बस इतना कि मिथ्यात्व से विरत नारकी देवों के मिथ्यादर्शन नहीं होती शेष 4 होती है। तिर्यंच पंचेन्द्रिय के (मिथ्यात्व से विरत) मिथ्यादर्शन नहीं लगती, अप्रत्याख्यान की भजना, शेष तीन लगती है। समुच्चय जीव और 24 दंडक को 18 पाप से गुणा करने पर 25×18=450 भंग होते हैं।

18. अल्प बहुत्व द्वार- 1. सबसे थोड़े मिथ्यात्व की क्रिया वाले 2. अप्रत्याख्यानी विशेषाधिक 3. पारिग्रहिकी वाले विशेषाधिक 4. आरंभिकी की क्रिया वाले विशेषाधिक 5. माया प्रत्यया वाले विशेषाधिक। क्रिया से संबंधित अन्य सूत्रों में आये हुए वर्णन-

1. आचारांग सूत्र- श्रुत स्कंध 2 अध्ययन 2 उद्देशक 2- 1. कालातिक्रांत क्रिया- चातुर्मास के बाद वहीं रहना।

2. उपस्थान क्रिया चातुर्मासादि के बाद पूर्ण या उचित समय बिताये बिना उसी स्थान में रहना।

3. अभिक्रांत क्रिया- श्रमणादि के लिए बनाये मकान में श्रमणादि के रहने के बाद रहना अभिक्रांत।

4. अनभिक्रांत क्रिया- श्रमणादि के लिए बनाये ये श्रमणादि के रहने के पहले रहना अनभिक्रांत।

5. वर्ज्य क्रिया- श्रावक के मकान में रहे, श्रावक नया मकान अपने लिए बनाए, पश्चात् कर्म दोष वाला।

6. महा वर्ज्य क्रिया- श्रमणादि का अलग अलग नाम देकर बनाये मकान में रहना।

7. सावद्य क्रिया- श्रमणादि के नाम से उनके उद्देश्य से बनाए में रहना।

8. महासावद्य क्रिया- साधु के निमित्त से बनाए में रहना।

9. अल्प सावद्य क्रिया- गृहस्थ के खुद के लिए बनाए मकान में रहना अल्प (अभाव) सावद्य क्रिया है।

2. श्री सूत्रकृतांत्र सूत्र अध्ययन 2 श्रुत स्कंध 2- 13 क्रिया स्थान बताये है- **1. अर्थ दण्ड** 2. **अनर्थ दण्ड** (प्रयोजन वश त्रस स्थावर जीवों की हिंसा से लगने वाला, बिना प्रयोजन हिंसा से लगने वाला पाप) **3. हिंसा दंड-** यह मुझे मारता है, मारेगा इस कारण जीव हिंसा **4. अकस्मात दण्ड-** अन्य को मारते किसी अन्य का मारा जाना **5. दृष्टि विपर्यास दंड-** भ्रांति वश प्राणी विशेष के बदले अन्य को मारना **6. मृषावाद प्रत्ययिक-** अपने लिए, परिवार, जाति, मकान के लिए झूठ बोलना **7. अदत्ता दान प्रत्ययिक-** अपने, परिवार, जाति के लिए चोरी से लगने वाला पाप **8. अध्यात्म प्रत्ययिक-** कोई शोकादि (धनादि पुत्रादि) नहीं होने, अपमान न होने पर भी अपने को दीन हीन दुःखी चिन्ताग्रस्त होकर आर्त्तध्यान करना, क्रोध मानादि चारों भाव आत्मा से उत्पन्न होते हैं, इनसे लगने वाला पाप अध्यात्म प्रत्ययिक **9. मान प्रत्ययिक** जाति, कुल, बल, रूप, तप, श्रुत, लाभ, ऐश्वर्य, बुद्धि के मद से मत्त हो दूसरे की अवहेलना निंदा, पराभव करना, स्वयं को उत्कृष्ट, दूसरों को हीन समझना आदि। **10. मित्र द्वेष प्रत्ययिक-** परिवार में माता, पिता, पुत्र, पुत्री, पत्नी, भाई, पुत्रवधु आदि के साथ रहते, छोटी सी भूल या गलती का सख्त दंड देना। ऐसा व्यक्ति घर में रहता है, तो घर वाले दुःखी, बाहर जाने पर सुखी मानते हैं। परलोक में दुःखी, क्रोधी, चुगलखोर होता है।

11. माया प्रत्ययिक- लोगों को ठगना, पापाचरण करना, तुच्छ होकर महान् समझना, आर्य हो तो अनार्य भाषा बोलना, अन्य होकर अन्य समझना, प्रश्नों के सही उत्तर न देकर गलत उत्तर देना।

12. लोभ प्रत्ययिक- स्वार्थ साधन हेतु कल्पित बातें करना, प्राणभूत जीव सत्व के संबंध में मिश्र बोलना। मैं हनन, आज्ञापन, परिताप, उपद्रव योग्य नहीं हूं, दूसरे प्राणी इस योग्य है। ये लोग कामिनी, कामभोग में आसक्त रहते हैं। ये लोग कुछ समय कामभोगादि में व्यस्त रहकर किल्विषी देव बनते हैं, वहां से निकल कर जन्मांध, गूंगे आदि होते हैं।

13. ईर्यापथिकी- आत्म स्वरूप की प्राप्ति हेतु आश्रवों का निरोध संवर में प्रवृत्त हो, पांच समिति तीन गुप्ति की आराधना शरीर इन्द्रियों को गोपन कर गुप्त ब्रह्मचारी अणगार यतनापूर्वक कषाय रहित योगों से गमनागमन क्रिया करते हैं। उन्हें सूक्ष्म ईर्यापथिकी क्रिया लगती है, पहले समय में बंध, दूसरे समय वेदन, तीसरे समय निर्जरा होती है। यह पाप, ईर्यापथिकी है।

3. श्री भगवती सूत्र शतक 1 उद्देशक 8 में- मृग मारने के लिए जाल बुनने वाले को नहीं बांधने, नहीं मारने से पहले तीन क्रिया- कायिकी, आधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी लगती है, बांधने पर चार (पारितापनिकी) और मारने पर पांचों क्रियाएं लगती है। आग लगाने वाले को तृण इकट्ठा करने पर तीन, आग लगाने पर चार, जला देने पर पांच क्रिया। मृग मारने बाण को चलाते समय तीन, बाण से बींधने पर चार, मारने पर पांच क्रिया। एक मनुष्य बाण खींच कर मृग मारना चाहता है, दूसरा उसी समय उसका (पहले) मस्तक उड़ा देता है, बाण खिंचा होने से छूट जाता है मृग बींध देता है यह दूसरा पुरुष मृग वैर से स्पृष्ट है या पुरुष वैर से। ''कज्जमाणे कडे'' किया जा रहा किया, इस न्याय से पुरुष मृग मारने वाला मृग से, पुरुष को मारने वाला पुरुष वैर से। मरने वाला 6 माह से पूर्व मरे तो मारने वाले को 5 क्रिया, 6 माह बाद मरे तो मारने वाले को चार क्रिया लगेगी। कोई पुरुष तलवार, बर्च्छी से मस्तक काटे तो उसे पांच क्रिया लगती है।

4. श्री भगवती सूत्र शतक 33 उद्देशक 3 में- मंडित पुत्र के प्रश्न पर प्रभु ने 5 क्रियाएं कायिकी आदि बताई। कायिकी के 2 भेद- अनुपरत कायिकी अविरति को दुष्प्रयुक्त कायिकी छठे गुण स्थान वाले को लगती है। आधिकरणिकी के 2 भेद- संयोजना, संयोजन करना निर्वर्त्तना नये शस्त्रादि बनाना। प्राद्वेषिकी- जीव अजीव दो भेद। पारितापनिकी के 2 भेद स्वहस्त, परहस्त से स्व पर उभय को परिताप देना। प्राणातिपातिकी के 2 भेद- स्वहस्त, परहस्त से स्व पर, उभय को प्राणातिपात यो तीन-तीन। पहले क्रिया होती है फिर वेदना होती है, पहले वेदना नहीं होती। श्रमण निर्ग्रंथ को भी प्रमाद और योग से क्रिया लगती है। कम्पन, विकम्पन, चलन, स्पंदन, क्षोभन, उदीकरण तथा उत्क्षेपण, अवक्षेपण, आकुंचन, प्रसारण आदि भिन्न भिन्न रूप परिणमन इन सात क्रिया में प्रवृत्ति करता हुआ सकल कर्मक्षय रूप अन्त क्रिया करता है इस प्रकार के मण्डित पुत्र के प्रश्न पर भगवान ने फरमाया कि पृथ्वी आदि जीवों को हिंसा का संकल्प संरंभ है, परिताप उपजाना समारंभ है, हिंसा करना आरंभ है। जिस समय आरंभ 1. करता है 2. संरंभ करता है 3. समारंभ करता है (4 से 6) इनमें वर्त्तता है 7 से 9 ये करता है, 10 से 12 इनमें वर्त्तता हुआ जीव 13 से 16 प्राणी, भूत, जीव सत्व को 17 दुःख पहुंचाता 18 शोक कराता है 19 झूराता है 20 आंसू गिरवाता है 21 पीटता है 22 परिताप उपजाता है। इस कारण 22 बोलों में प्रवर्त्तता 7 क्रियाएं करता

जीव अन्तक्रिया नहीं करता। जैसे कोई सूखे घास में आग डाले, तपे लोहे के तवे पर जल बूंद डाले तो भस्म हो जाती है। पानी भरे तालाब में छिद्र वाली नौका डाले, वह शीघ्र पानी से भर नीचे बैठने लगती है। यदि कोई चतुर सभी छिद्र बंद कर दे,भरे पानी को उचील दे तो नाव तैरने लगती है। इसी प्रकार यतना करने वाले ईर्या समितिवंत, आदि क्रिया भी यतना पूर्वक करने वाले को ईर्यापथिकी क्रिया लगती है। प्रमत्त संयत की स्थिति एक जीव की जघन्य 1 समय उत्कृष्ट देशोन करोड़ पूर्व, अनेक जीवों की सव्वद्धाकाल। अप्रमत्त संयत की एक जीव की अपेक्षा जघन्य अन्तर्मुहुर्त उत्कृष्ट देशोन करोड़ पूर्व, अनेक की सर्वकाल।

पाताल कलशों (7884) चार महापाताल कलशों में वायु क्षुब्ध होती है नीचे वायु बीच में जल, वायु ऊपरी भाग में जल होता है, कलशों में वायु क्षुब्ध होती है तब लवण समुद्र का पानी आठम, चवदस, अमावस, पूर्णिमा को बढ़ता है, वायु क्षुब्ध नहीं होती तब पानी घटता है।

5. भगवती सूत्र शतक 5 उद्देशक 6- किसी वस्तु को चोर चुरा ले, उसे ढूंढते हुए 4 क्रिया भारी लगती है। मिथ्यादर्शन की भजना है। वस्तु मिल जाने पर ये क्रियाएं हल्की होती है।

6. भगवती सूत्र शतक 5 उद्देशक 6- किराणा लेने बेचने में व्यापारी बेचता है, खरीददार खरीदता है, नहीं तोलने और मूल्य चुकाने से पहले दोनों को चार-चार क्रियाएं लगती है। मिथ्यादर्शन की भजना। व्यापारी को किराणे की भारी, रूपयों की हल्की और खरीददार को रूपयों की भारी, किराणे की हल्की लगती है। व्यापारी माल तोल दे, रूपये नहीं ले तब किराणा और रूपयों दोनों की हल्की, खरीददार को दोनों की भारी क्रिया लगती है। जब खरीददार व्यापारी को किराणे के रूपये दे देता है, व्यापारी माल तोलकर नहीं देता तब तक खरीददार को दोनों क्रिया हल्की, व्यापारी को दोनों भारी लगती है। लेने देने की प्रक्रिया हो जाने पर व्यापारी को किराणे की हल्की रूपयों की भारी, खरीरदार को किराणे की भारी रूपयों की हल्की क्रिया लगती है।

7. भगवती शतक 5 उद्देशक 6 में- कोई धनुर्धर बाण ग्रहण कर, आसन पर बैठ, बाण चढ़ाकर, खींचकर, आकाश में बाण फेंकता है उसमें प्राणभूत जीव सत्व की हिंसा होने से पांच क्रियाएं कायिकी आदि लगती है। धनुष्य, ज्या (डोरी), धनुष का पृष्ठ भाग, स्नायु, बाण, बाण के अवयव, (शर, पत्र, फल अग्रभाग) और स्नायु डोरी चमड़े

की, ये जिन जिन जीवों के शरीर से बने है, उन जीवों को भी पांच-पांच क्रियाएं लगती है। ऊपर फेंका बाण स्वभावतः नीचे गिरता है यहां प्राण भूत आदि चारों की हिंसा होती है, इस हिंसा से धनुर्धर को तथा जिन शरीरों से ये (बाण आदि) बने हैं, उन जीवों को चार क्रियाएं लगती है। प्राणातिपात नहीं लगती। बाण और बाण के अवयव जिनसे बने है उन जीवों को पांच क्रियाएं लगती है। नीचे गिरते बाण के अवग्रह में जो जीव होते हैं, उन्हें भी पांच क्रियाएं लगती है। बाण लगने से जीव मरकर नीचे गिरा, उससे जीवों की हिंसा होती है, इसलिए मरने वाले (गिरने वाले) जीव को भी पांच क्रियाएं लगती है।

8. श्री भगवती सूत्र शतक 7 उद्देशक 10- आग जलाने वाले महाकर्म, महाक्रिया, महाआश्रव, महत्ती वेदना वाला है, आग बुझाने वाला अल्पकर्म, अल्पक्रिया, अल्पाश्रव, अल्प वेदना वाला है। क्योंकि आग जलाने वाला अग्निकाय का अल्प आरंभ करता है और पृथ्वी, पानी, वायु, वनस्पति और त्रसकाय का महाआरंभ करता है। बुझाने वाला अग्निकाय का महाआरंभ करता है, शेष पांच का अल्प आरंभ करता है।

9. श्री भगवती सूत्र शतक 9 उद्देशक 34- कोई पुरुष किसी पुरुष को मारता हुआ पुरुष को मारता है और पुरुष के सिवाय अन्य जीवों (जूं, लीख, चरमिया, कृमि) नो पुरुष को भी। (दोनों को) मारता है। इसी तरह अश्व, हाथी, सिंह यावत् चील तक 18 (जानवरों के बोल) बोल कहना। इसी प्रकार त्रस प्राणी विशेष को मारता हुआ पुरुष उस त्रसप्राणी को और उसके सिवाय दूसरे त्रस प्राणियों को भी मारता है। ऋषि को मारता हुआ पुरुष ऋषि को मारता है, इसके सिवाय अनंत जीवों को मारता है। क्योंकि ऋषि के मर जाने पर वह अविरत हो जाता है और अनंत जीवों का घातक होता है। अथवा ऋषि जीते हुए अनेंक प्राणियों को प्रतिबोध देता है। जिससे वे क्रमशः मोक्ष प्राप्त करते हैं, मुक्त होकर अनंत संसारी जीवों के अहिंसक हो जाते हैं। उनमें ऋषि कारण होता है, इसलिए ऋषि को मारने वाले को अनंत जीवों को घातक बताया है। यह एक भंग हुआ, यों 20 भंग एक जीव के हुए।

पुरुष को मारने वाला 1. पुरुष के वैर से स्पृष्ट होता है अथवा 2. एक पुरुष वैर एक नो पुरुष वैर से स्पृष्ट होता है। अथवा 3. एक पुरुष वैर अनेक नो पुरुष वैर से। इस तरह ऋषि के सिवाय शेष 19 बोल के तीन-तीन भंग कहना 19×3=57 भंग हुए। एक ऋषि को मारने वाला ऋषि के वैर से और अनंत जीवों के वैर से स्पृष्ट होता है यह एक भंग कुल 57+1=58 भंग ये 58 और समुच्चय के 20 भंग कुल 78 भंग हुए।

पृथ्वीकाय- पृथ्वीकाय यावत् वनस्पतिकाय को श्वासोच्छवास रूप ग्रहण करता छोड़ता है, इसी तरह अप्काय, तेउ, वायुकाय, वनस्पतिकाय का कहना 5×5=25 भंग हुए। इन 25 बोल के श्वास लेने छोड़ने वाले जीव को कभी तीन, कभी चार, कभी पांच क्रियाएं लगती है, ये 25 भंग हुए।

वृक्ष के मूल, कंद, स्कंध यावत् बीज तक के 10 बोलों को चलायमान करती, गिराती वायु को कभी तीन, कभी चार, कभी पांच क्रियाएं लगती है। ये 10 भंग हुए। कुल 78+25+25+10=138 भंग हुए।

10. श्री भगवती सूत्र शतक 17 उद्देशक 1- पांच शरीर, पांच इन्द्रिय, तीन योग इन 13 बोल उत्पन्न करने वाले एक जीव के कभी तीन, कभी चार, कभी पांच क्रियाएं लगती है। उक्त 13 बोल (समुच्चय जीव और मनुष्य में 13, नारकी देवता में 11 (औदारिक आहारक शरीर कम), चार स्थावर में पांच बोल 3 शरीर, स्पर्शन और काय योग। वायुकाय में 6 बोल वैक्रिय शरीर बढ़ा, द्वीन्द्रिय में 7 बोल 3 शरीर 2 इन्द्रिय 2 योग, त्रीन्द्रिय में आठ बोल घ्राणेन्द्रिय बढ़ी, चतुरिन्द्रिय में 9 बोल चक्षुइन्द्रिय बढ़ी, तिर्यंच पंचेन्द्रिय में आहारक के सिवाय बारह बोल पाते हैं) उत्पन्न करने वाले जीवों के तीन भी चार भी पांच भी क्रिया लगती है।

11. प्रश्नव्याकरण सूत्र के दूसरे संवर द्वार में- आत्म प्रशंसा, पर निन्दा रूप वचन बोलने का निषेध किया है- जैसे तू मेधावी नहीं है, धन्य, प्रियधर्मा, कुलीन, दानी, शूरवीर, रूपवान, सौभाग्यशाली, पंडित, बहुश्रुत, तपस्वी नहीं है। परलोक के विषय में तेरी बुद्धि निश्चित नहीं है। इस प्रकार जाति, कुल, रूप, व्याधि और रोग को प्रकट करने वाला वचन निंदनीय, वर्जनीय है, ऐसा वचन द्रव्य और भाव की अपेक्षा अपकारक होता है सत्य होने पर भी ऐसा नहीं बोलना चाहिए।

पच्चीस क्रिया के नाम 1. कायिकी 2. आधिकरणिकी 3. प्राद्वेषिकी 4. पारितापनिकी 5. प्राणातिपातिकी 6. आरंभिकी 7. पारिग्रहिकी 8. मायाप्रत्ययिकी 9. अप्रत्याख्यान 10. मिथ्या दर्शन प्रत्ययिकी। ये ऊपर बताई है। **11. दृष्टिजा-** रागद्वेष पूर्वक देखने से लगती है। जीव दृष्टिजा- जीवों को देखकर (हाथी घोड़े आदि)। अजीव दृष्टिजा- चित्र, महल, अजीव को देखकर लगने वाली क्रिया। **12. स्पृष्टिजा-** रागद्वेष के वशीभूत होकर जीव अजीव का स्पर्श करने से लगती है। **13. प्रातीत्यकी-** जीव अजीव के आश्रय से जो रागद्वेष की उत्पत्ति होती है वह प्रातीत्यकी है। **14. सामन्तोपनिपातिकी-**

चारों ओर से लोग आकर जीवों और अजीव की प्रशंसा करते हैं, उससे उसका स्वामी खुश होता है जीवों की प्रशंसा से सामन्तोपनिपाति की और अजीवों (रथ, मकान आभूषणादि) की प्रशंसा से सामन्तोपनिपाति की लगती है। घी तेल आदि प्रमादवश खुला छोड़ देने से चारों ओर से जीव गिरकर मर जाते हैं इससे भी सामन्तोपनिपातिकी क्रिया लगती है। **15. नैसृष्टिकी-** अयतना से जीव अजीव वस्तु फेंकने से, जल का फव्वारा छोड़ना, पानी डालना, गोफन से पत्थर फेंकना आदि जीव और अजीव दो समझना। **16. स्वहस्तिकी-** अपने हाथ में लिये हुए जीव अथवा अजीव शस्त्रादि द्वारा जीव को मारने, अजीव वस्तु तोड़ने से लगती है। **17. आज्ञापनिकी अथवा आनयनिकी-** जीव अथवा अजीव के संबंध में आज्ञा देने से, जीव अथवा अजीव को आज्ञा देकर मंगाने से लगती है। **18. वैदारणिकी-** जीव अजीव को छेदन, भेदन, चीरने फाड़ने से लगने वाली क्रिया व्यापार में तेजी मंदी से दलाल भाव ऊंचा नीचा कर सौदा करा देता है, उससे भी वैदारिणिकी लगती है। **19. अनाभोग प्रत्ययिकी-** उपयोग बिना असावधानी से वस्त्र पात्रादि रखने, बिना उपयोग प्रमार्जन करने, बिना उपयोग चलने फिरने से लगती है, ये दो हैं- अनायुक्त आदानता, अनायुक्त प्रमार्जनता। बिना उपयोग देखे बिना वस्तु लेना अनायुक्त आदानता, बिना उपयोग प्रमार्जन पूंजने से अनायुक्त प्रमार्जनता।

20. अनवकांक्षा प्रत्ययिकी- लोक परलोक की परवाह किये बिना लोक विरोधी हिंसा चोरी आदि के आचरण से लगती है। स्व शरीर की परवाह किये बिना की गई क्रिया अनवकांक्षा, इहलोक परलोक की अपेक्षा इहलोक अनवकांक्षा, परलोक अनवकांक्षा। स्व पर शरीर अपेक्षा से आत्म शरीर अनवकांक्षा, पर शरीर अनवकांक्षा है।

21. प्रेम प्रत्ययिकी- रागवश माया मोह से लोभ से प्रेम उत्पन्न करने वाला वचन मायाप्रेम, लोभ प्रेम प्रत्ययिकी है। **22. द्वेष प्रत्ययिकी-** द्वेष वश होकर स्वयं क्रोध मान करने से, सामने वालों को क्रोध मान उत्पन्न कराने से द्वेष प्रत्ययिकी- क्रोध द्वेष प्रत्ययिकी, मान द्वेष प्रत्ययिकी ये दो भेद हैं।

23. प्रयोग क्रिया- आर्त्तध्यान, रौद्र ध्यान करना, तीर्थंकर द्वारा गर्हित सावद्य भाषा बोलना, प्रमाद पूर्वक गमनागमन करना इस प्रकार मन वचन काय के व्यापारों से लगती है। मनप्रयोग, वचन प्रयोग, काय प्रयोग क्रिया।

24. समुदान क्रिया- इससे आठ कर्मों का समूह ग्रहण किया जाता है नाटक, सिनेमा, मेले आदि में एकत्रित जीवों के सरीखे अध्यवसायों, हंसने, खेलने आरंभादि की प्रशंसा करने रूप शरीर क्रियाओं से एक साथ समुदाय रूप में सभी के जो सरीखा कर्मबंधन होता है, वह समुदान क्रिया है, ये जीव जन्मान्तर में एक साथ इसका फल भोगते हैं। **25. ईर्यापथिकी क्रिया-** अप्रमत्त संयमी, उपशांत मोह, क्षीणमोह, केवली भगवान के उपयोग पूर्वक गमनागमन सोते, बैठते, खाते-पीते, भाषण करते, वस्त्र पात्रादि रखते, ग्रहण करते समय जो साता वेदनीय कर्म बंध होता है, वह ईर्यापथिकी है। पहले समय बंधती, दूसरे में वेदन, तीसरे समय उसकी निर्जरा होती है।

49. आठ कर्म भोगने के 93 कारण- (प्रज्ञापना सूत्र पद 23 उद्देशक 1) मिथ्यात्व, अविरत, प्रमाद, कषाय और योग इनके निमित्त से आत्मा में जो अचेतन द्रव्य आता है, वही कर्म द्रव्य है, राग द्वेष के संयोग से वह आत्मा के साथ संलग्न (बंध) हो जाता है, समय पाकर वह स्वाभावानुसार फल देता है।

कति पगड़ी कह बंधइ, कइहिवि ठाणेहिं बंधए जीवो।
कति वेदेइ य पयड़ी, अणु भावो कइविहो कस्स॥

द्वार 5 बताये हैं- 1. कर्म प्रकृतियों के नाम 2. जीव इन्हें कैसे बांधता है 3. किन स्थानों या कारणों से बांधे 4. कितनी कर्म प्रकृतियों का वेदन 5. किसका कितना विपाक है?

1. कर्म प्रकृतियां- नरकादि 24 दंडकों में कर्मों के स्वभाव उनका वर्गीकरण किया या समझा जाता है। अतः प्रकृति की अपेक्षा आठ प्रमुख प्रकार है- मूल कर्म आठ हैं-

1. ज्ञानावरणीय- वस्तु के विशेष धर्म को जानना ज्ञान है, आत्मा के ज्ञान गुण को आच्छादित करने वाला जैसे सूर्य बादलों से ढ़क जाता है।

2. दर्शनावरणीय- वस्तु के सामान्य धर्म को जानना दर्शन है। यह दर्शन गुण एवं जागृति को आवृत करने वाला है।

3. वेदनीय कर्म- जिस कर्म से सुख और दुःख का अनुभव हो, सुख दुःख की विभिन्न अवस्थाओं को देने वाला।

4. मोहनीय कर्म- आत्मा मोहित होकर सत्-असत् ज्ञान से शून्य हो जाय जैसे मदिरा पान से बेसुध। कुश्रद्धा, कुमान्यता असदाचरणों में कषायों एवं विकारों में उलझाने वाला।

5. आयुष्य कर्म- किसी न किसी सांसारिक चार गतियों में भव स्थिति में बलात् रोके रखे, जैसे कारागार में चोर।

6. नाम कर्म- जिस के उदय से जीव गति, जाति, संस्थान, संहनन, स्वर आदि देहिक विचित्रताओं को प्राप्त करे सुन्दर, खराब, शक्तिवान, कमजोर विभिन्न शरीर संयोग प्राप्त करावे।

7. गोत्र कर्म- ऊंच, नीच, जाति, कुल हीनाधिक बल, रूप आदि कुंभकार के घड़े जैसे प्राप्त कराने वाला।

8. अन्तराय कर्म- दान, लाभ, भोग, उपभोग और शक्ति प्राप्ति में विघ्न, बाधाएं उपस्थित हो, राजा की आज्ञा के बाद भी भंडारी बाधक बने अन्तराय कर्म।

2. जीव के साथ कर्म बंधन कैसे? एक कर्म के उदय से दूसरे कर्म का उदय होता रहता है, कर्म के उदय से जीव की मति और परिणति वैसी होती रहती है जिससे अन्य कर्म का उदय होता है। परिणति की तारतम्यता से पुनः नये कर्म बंधते रहते हैं यह परम्परा चलती रहती है, संसार चक्र चलता रहता है। ज्ञानावरणीय कर्म के उदय से दर्शनावरणीय का उदय होता है, दर्शनावरणीय के उदय से दर्शन मोह का इसके उदय से मिथ्यात्व मोह का उदय होता है, मिथ्यात्व मोह के उदय से आठ कर्मों का उदय होता है। बहुधा ऐसा होता है अतः यह नियम बताया है, बाकी सम्यगदृष्टि भी आठ कर्म बांधता है, वहां मिथ्यात्वोदय नहीं होता है। सूक्ष्म सम्पराय वाले आठ कर्म नहीं बांधते हैं बस पूर्व के परिणाम से उत्तर कर्म उत्पन्न होता है, बीज से अंकुर, अंकुर से पत्र आदि-

जीव परिणाम हेऊ, कम्मत्ता पोग्गला परिणमंति।
पुग्गल कम्म निमित्तं, जीवो वि तहेव परिणमइ॥

जीव के परिणाम से पुद्‌गल कर्म रूप परिणमते हैं और कर्म पुद्‌गलों के कारण जीव का वैसा परिणाम होता है। विशिष्ट विवेक से आत्मा सशक्त बनकर कर्मों से मुक्त बनती जाती है, वह शाश्वत सिद्ध अवस्था प्राप्त कर लेती है। आठ कर्म चार प्रकार से बंधते हैं- कषाय प्रेरित अथवा कषाय रहित मन वचन काया की प्रवृत्ति से ही आत्मा में कर्मों का बंधन होता है, कर्म परमाणु का चार प्रकार का बंध होता है-

1. प्रकृति बंध- आत्मा के ज्ञान दर्शन आदि गुणों को आवृत्त करने रूप, सुख दुःख देने रूप आठ प्रकार के स्वभाव का बंध होना, प्रकृति बंध है।

2. स्थिति बंध- कर्म रूप ग्रहीत पुद्‌गल आठ कर्म उनकी 148 प्रकृतियों का विपाक की अवधि का निश्चय करना स्थिति बंध है।

3. अनुभाग बंध- कर्म पुद्‌गलों के शुभाशुभ, तीव्रमंद फल देने की शक्ति अनुभाग बंध है।

4. प्रदेश बंध- बंध प्राप्त कर्मों के भिन्न-भिन्न स्वभाव वाले कर्म प्रदेशों की संख्या का निर्धारण होना। जैसे सोंठ, मेथी और अजवायण के लड्डू में किसी का कफनाशक, पित्तनाशक, वायुनाशक स्वभाव प्रकृति बंध है। एक सप्ताह एक पक्ष एक माह तक विकृत नहीं होना स्थिति बंध है। मीठा, कम मीठा, तीखा आदि अनुभाग बंध। कोई छटांक, पाव, आधा पाव यों भिन्न परिणाम का प्रदेश बंध है।

3. कर्म बंध के कारण या स्थान- राग द्वेष जनित मानसिक प्रवृत्ति से इन दो स्थानों से कर्म बंधते हैं। माया, लोभ राग रूप है, क्रोध मान द्वेष रूप हैं।

पन्नवणा और भगवती श. 8 उ. 9 में भी ये कारण बताये हैं-

1. ज्ञानावरणीय बंध के 6 कारण- 1. णाण पडिणीययाए- ज्ञान और ज्ञानी का विरोध, शत्रुता रखना।

2. णाणणिण्हवणयाए- ज्ञान और गुरू का नाम छिपाना **3. णाणंतराएणं-** ज्ञान में अन्तराय देना **4. णाणप्पदोसेणं-** ज्ञान एवं ज्ञानी से द्वेष **5. णाणच्चासायणाए-** ज्ञान, ज्ञानी की आशातना करना।

6. णाणा विसंवादणा जोगेणं- ज्ञानी के साथ विसंवाद करना, दोष दिखाना, ज्ञान पर अरूचि दिखाना।

2. दर्शनावरणीय बंध के 6 कारण- 1. दंसण पडिणीययाए- दर्शन, दर्शनी का विरोध, शत्रुता, प्रतिकूल आचरण।

2. दंसण णिण्हवणयाए- दर्शन का गोपन, दर्शनी का नाम छिपाना **3. दंसणंतराएणं-** दर्शन में अन्तराय देना **4. दंसणप्पदोसेणं-** दर्शन, दर्शनी से द्वेष **5. दंसणाच्चासायणाए-** दर्शन दर्शनी की आशातना करना

6. दंसण विसंवादणाजोगेणं- दर्शनी से विसंवाद करना, दोष निकालना, दर्शन में अरूचि रखना।

3. वेदनीय बंध के कारण- साता वेदनीय बंध के 10 कारण- 1. पाणाणुकंपयाए- प्राण=बेइन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय की अनुकम्पा करना 2. भूयाणुकम्पयाए- भूत=वनस्पति की

अनुकंपा 3. जीवाणुकम्पयाए- जीव=पंचेन्द्रिय की अनुकम्पा करना 4. सत्ताणुकम्पयाए- सत्व यानि पृथ्वीकाय, पानी, तेउकाय वायुकाय की अनुकंपा करना 5. बहुणं पाणाणं जाव सत्ताणं अदुक्खणयाए- बहुत प्राण भूत जीव और सत्व को दुःख नहीं देना। 6. असोयणयाए- इन्हें शोक न देना 7. अझूरणयाए- झूराना नहीं 8. अतिप्पणयाए- आंसू नहीं गिरवाना 9. अपिट्टणयाए- मारना, पीटना नहीं 10. अपरितावणयाए- परिताप नहीं देना।

असाता वेदनीय बंध के 12 कारण- प्राण भूत जीव सत्व को 1. दुक्खणयाए- दुःख देना 2. सोयणयाए- शोक 3. झूरणयाए- झूराना, रूलाना 4. तिप्पणयाए- वेदना, आंसू गिरवाना 5. पिट्टणयाए- पीटना 6. परितावणयाए- परिताप देना 7. बहु दुक्खणयाए- बहुत दुख देना 8. बहुसोयणयाए- बहुत शोक देना 9. बहु झूरणयाए- बहुत झूराना रूलाना 10. बहु तिप्पणयाए- बहुत टपटप आंसू गिरवाना 11. बहुपिट्टणयाए- बहुत पीटना 12. बहु परितावणयाए- बहुत परिताप देना।

4. मोहनीय कर्म बंध के 6 प्रकार- 1. तिव्वकोहयाए 2. तिव्व माणयाए 3. तिव्व मायाए 4. तिव्व लोभाए 5. तिव्व दंसण मोहणिज्जयाए 6. तिव्व चरित्त मोहणिज्जयाए। इन छहों की तीव्रता से सेवन के कारण।

5. आयु कर्म बंध के 4 भेद 16 प्रकार- नरकायु के 4 कारण महारंभ, महापरिग्रह, पंचेन्द्रिय वध, मद्य मांस का आहार। **तिर्यंचायु के 4 कारण** माया सेवन, गूढ़माया सेवन, असत्य बोलना, झूठा तोल माप रखना।

मनुष्यायु के 4 कारण- प्रकृति भद्र होना, स्वभाव विनीत होना, अनुकम्पा दयालु होना, अमत्सर ईर्ष्या नहीं होना।

देवायु के 4 कारण- सरागसंयम, संयमासंयम (श्रावक), अकाम निर्जरा, बाल तप।

6. नाम कर्म 2 भेद 8 कारण- शुभ नाम कर्म के 4 कारण- काया की सरलता, भावों की, वचन की सरलता, मन वचन काया से एक सरीखा व्यवहार रखना। **अशुभ नाम कर्म बंध के 4 कारण-** काया की, भावों की, वचन की वक्रता, विसंवादी योग यानि कहना कुछ करना कुछ।

7. गोत्र कर्म दो भेद 8-8 कारण- उच्च गौत्र की नीच गौत्र दोनों के आठ-आठ कारण जाति, कुल, बल, रूप, तप, श्रुत, लाभ, ऐश्वर्य इन आठ बोलों का मद (अभिमान) न करने से उच्च एवं करने से नीच गोत्र बंधता है।

8. अन्तराय कर्म के 5 कारण- दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य पराक्रम में अन्तराय देने से बंधता है।

4. कर्म प्रकृतियों का वेदन- जिस जीव ने घाती कर्मों का क्षय कर दिया है वह ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय और अंतराय कर्म नहीं वेदते, इसी तरह मनुष्य का कहना शेष 23 दंडक के जीव नियमपूर्वक वेदते हैं। वेदनीय, आयु, नाम और गोत्र ये कर्म जीव वेदता भी है, नहीं भी। सिद्धात्माओं ने चारों अघाती कर्म क्षय कर दिये हैं, वे नहीं वेदते। शेष 24 दंडक के जीव इन्हें नियमपूर्वक वेदते हैं।

5. कर्म और उनके विपाक- आठों कर्मों को भोगने के प्रकार-

1. ज्ञानावरणीय कर्म- 10 प्रकार से भोगा जाता है- श्रोत्रावरण, श्रोत्र विज्ञानावरण, नेत्रावरण, नेत्र विज्ञानावरण, घ्राणावरण, घ्राण विज्ञानावरण, रसावरण, रस विज्ञानावरण, स्पर्शावरण, स्पर्श विज्ञानावरण (लब्धि और अनुभव समझना)

2. दर्शनावरणीय कर्म- 9 प्रकार से भोगा जाता है- निद्रा, निद्रा-निद्रा, प्रचला, प्रचला-प्रचला, स्त्यानगृद्धि, चक्षु दर्शनावरण, अचक्षु दर्शनावरण, अवधि दर्शनावरण, केवल दर्शनावरण।

3. वेदनीय- साता वेदनीय 8 प्रकार से भोगा जाता है- मनोज्ञ शब्द, रूप, गंध, रस, स्पर्श, मनः सुखता, वाक् सुखता, काय सुखता। असाता भी 8 प्रकार से- अमनोज्ञ शब्द, गंध, रस, स्पर्श, मनःदुखता, वाक् दुःखता, काय दुःखता (रोगी होना)।

4. मोहनीय कर्म- 5 प्रकार से भोगा जाता है समकित मोहनीय, मिथ्यात्व मोहनीय, मिश्रमोहनीय, कषाय मोहनीय, नोकषाय मोहनीय।

5. आयु कर्म- 4 प्रकार से भोगा जाता है- नरकायु, तिर्यंचायु, मनुष्यायु, देवायु।

6. नाम कर्म- शुभ नाम कर्म 14 प्रकार से- इष्ट शब्द, रूप, गंध, रस, स्पर्श, गति, स्थिति, लावण्य (शरीर की कांति) यशःकीर्त्ति, उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषाकार पराक्रम, ईष्ट स्वर, कांत स्वर, प्रिय स्वर, मनोज्ञ स्वर। अशुभ नाम कर्म भी 14 प्रकार इनसे विपरीत अनिष्ट शब्द, रूप, गंध, रस, स्पर्श, गति, स्थिति, लावण्य, अपयश कीर्ति, अनिष्ट उत्थानादि, अनिष्ट स्वर, अकांत स्वर, अप्रिय स्वर, अमनोज्ञ स्वर।

7. गोत्रकर्म- उच्च गोत्र 8 प्रकार से भोगा जाता है- जाति, कुल, बल, रूप, तप, श्रुत, लाभ, ऐश्वय का विशिष्ट होना तथा इन आठों से हीन होना नीच गोत्र ये भी 8 प्रकार से।

8. अन्तराय कर्म- 1. दानान्तराय 2. लाभान्तराय 3. भोगान्तराय 4. उपभोगान्तराय 5. वीर्यान्तराय।

	आठ कर्म प्रकृतियां	प्रकृति	बांधे	भोगे
1.	ज्ञानवरणीय कर्म	5	6	10
2	दर्शनावरणीय कर्म	9	6	9
3	वेदनीय साता असाता वेदनीय	2	10 12	8 8
4	मोहनीय कर्म	28	6	5
5	आयुष्य	4	16	4
6	नाम	93	8	28
7	गोत्र	16	16	16
8	अन्तराय	5	5	5

50. कर्म प्रकृतियों की स्थिति एवं अबाधा काल (पन्नवणा सूत्र पद 23 उद्देशक 2) यहां 8 कर्मों की विभिन्न प्रकृतियों (148) की स्थिति तथा अबाधा काल दर्शाया गया है। कर्म बंधन के अमुक समय तक किसी भी प्रकार का फल न दे सकने की स्थिति आबाधाकाल होती है। जिस कर्म की जितने कोटा कोटी सागर की स्थिति होती है, उसका उतने ही सौ वर्ष का आबाधाकाल होता है। जिस कर्म की स्थिति कोटा कोटी सागरोपम के अंदर है (कम है) उसका आबाधा काल अन्तर्मुहुर्त का होता है। आयु कर्म का आबाधा काल जघन्य अन्तर्मुहुर्त उत्कृष्ट करोड़ पूर्व के तीसरे भाग है, आबाधाकाल में यहां उत्कृष्ट स्थिति का वर्णन है।

	कर्म एवं प्रकृतियां	जघन्य स्थिति	उत्कृष्ट स्थिति	आबाधाकाल
1 से 20	5 ज्ञानावरणीय 4 दर्शनावरणीय 5 अंतराय ये 14	अन्तमुहुर्त (समुच्चय)	30 कोटा कोटी सागरोपम	3 हजार वर्ष
	5 निद्रा 1 असातावेदनीय	3/7 सागरोपम पल्योपम के असंख्यातवें भाग न्यून	30 कोटा कोटी सागरोपम	3 हजार वर्ष
	एकेन्द्रिय से असंज्ञी पंचेन्द्रिय	अपनी उत्कृष्ट स्थिति से पल्योपम के असंख्यातवें भाग कम	एके. 3/7 सागर, बेइ. 75/7 सागर, त्रिन्द्रिय 150/7 सागर, चतु. 300/7 सागर असं.ति.पं.3000/7 सागर	
	संज्ञी पंचेन्द्रिय 14	अन्तर्मुहुर्त	30 कोटा कोटी सागरोपम	3 हजार वर्ष
	6 प्रकृतियां	कोड़ाकोडी सागर से कुछ न्यून	30 कोटा कोटी सागरोपम	3 हजार वर्ष
21	साता वेदनीय साम्परायिक एकेन्द्रिय बेइन्द्रिय	ईर्यापथिक दो समय (समुच्चय) 12 मुहुर्त (समुच्चय) 3/14 सागर से पल्य के असं. भाग कम उत्कृष्ट से पल्य के असंख्यातवें भाग कम	और सन्नी पंचेन्द्रिय ही बांधते हैं) 15 कोटा कोटी सागरोपम 3/14 सागरोपम 75/14 सागरोपम	1500 वर्ष

	त्रिन्द्रिय चतुरिन्द्रिय संज्ञी पंचेन्द्रिय संज्ञी पंचेन्द्रिय	उत्कृष्ट से पल्य के असंख्यातवें भाग कम उत्कृष्ट से पल्य के असंख्यातवें भाग कम उत्कृष्ट से पल्य के असंख्यातवें भाग कम 12 मुहुर्त	150/14 300/14 सागरोपम 3000/14 सागरोपम 15 कोटा कोटी सागरोपम	1500 वर्ष
22से49 मोहनीय की 28 प्रकृतियां	अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानी प्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ 12 प्रकृतियां संज्वलन क्रोध संज्वलन मान संज्वलन माया संज्वलन लोभ (16 प्र.)	4/7 सागरोपम से पल्योपम के असंख्यातवें भाग कम (12 प्रकृतियां) 2 माह 1 माह पन्द्रह दिन अन्तर्महुर्त	40 कोटा कोटी सागरोपम (16 प्रकृतियां)	4000 वर्ष
16	इन 16 की एकेन्द्रिय बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय चतु. असं. पंचेन्द्रिय संज्ञी पंचेन्द्रिय 12 प्रकृति संज्वलन की 4 प्रकृतियां समु. जीव हास्य रति समु. जीव पुरुष वेद	अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थिति से पल्योपय के असंख्यातवें भाग न्यून देशोन क्रोडाक्रोडी सागरोपम 2 माह, 1 माह, 15 दिन, अन्तर्मुहुर्त क्रमशः 1/7 सागर में पल्य का असं. भाग कम आठ वर्ष	4/7 सागरोपम 100/7 सागरोपम 200/7 400/7 4000/7 40 कोटा कोटी सागरोपम (16 प्रकृ.) 10 कोड़ा कोड़ी सागरोपम (तीनों प्रकृतियां)	4000 वर्ष 1000 वर्ष
3	तीनों एकेन्द्रिय से अ. पंचे. संज्ञी पंचेन्द्रिय हास्य रति संज्ञी पंचेन्द्रिय पुरुष वेद समु. अरति, भय, शोक	पांचों की अपनी उत्कृष्ट से पल्य का असं.न्यू. देशोन क्रोड़ा क्रोडी सागरोपम आठ वर्ष 2/7 सागरोपम से पल्य के असं. भाग न्यून	1/7,25/7,50/7,100/7, 1000/7 क्रमशः 10 क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम (तीनों) उपरोक्त 20 कोटा कोटी सागरोपम	1000 वर्ष 1000 वर्ष 2000 वर्ष
5	जुगुप्सा, नपुंसक वेद ये 5 ये पांच एकेन्द्रिय से असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय तक संज्ञी पंचेन्द्रिय (पांचों) समुच्चय जीव स्त्री वेद एकेन्द्रिय से अ. पं.	अपनी उत्कृष्ट आयु से पल्योपम के असं. भाग कम देशोन कोटा कोटी सागरोपम 3/14 सागर में पल्य का असं. भाग न्यून अपनी उत्कृष्ट से पल्य का असं. भाग न्यून	2/7, 50/7, 100/7, 200/7, 2000/7 क्रमशः सागरोपम 20 कोटा कोटी सागरोपम 15 कोटा कोटी सागरोपम 3/14, 75/14, 150/14, 300/14,3000/14 क्रमशः सागर	2000 वर्ष 1500 वर्ष
1	संज्ञी पंचेन्द्रिय स्त्री वेद	अन्तःकोटा कोटी सागरोपम	15 कोटा कोटी सागरोपम	1500 वर्ष
1	मिथ्यात्वमोह समु. जीव	सागरोपम मे पल्य का असं. भाग न्यून	70 कोटा कोटी सागरोपम	7000 वर्ष
	एकेन्द्रिय से अ. पंचे. संज्ञी पंचेन्द्रिय मिथ्यात्वमोह	उत्कृष्ट से पल्य के असं. भाग कम कोटा कोटी सागरोपम कुछ न्यून	1 सागर, 25,50,100, 1000 सा. क्रमशः 70 कोटा कोटी सागरोपम	7000 वर्ष
1	मिश्र मोह.समु.और संज्ञी पं.	अं. मु. (समु.सं.पं. के सिवाय बंध नहीं होता)	अन्तमुहुर्त (अन्य में बंध नहीं होता)	
1	समकित मोह समु., संज्ञी पं.	अन्तर्मुहुर्त (अन्यों में बंध नहीं)	66 सागरोपम साधिक	
योग 28				

50 से 53 आयु की 4	नरकायु देवायु (समु.) 2 असन्नी पंचेन्द्रिय समुच्चय पंचे.	10000 वर्ष 10000 वर्ष अन्तर्मुहुर्त साधिक (एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय नहीं बांधे) समुच्चय जीव की तरह	33 साग. करोड़ पूर्व का तीसरा भाग पल्य का असं.भाग तथा करोड़ पूर्व का तीसरा भाग अधिक समुच्चय जीव की तरह	
	2 तिर्यंचायु मनुष्यायु (समुच्चय, संज्ञी पं.)	अन्तर्मुहुर्त	तीन पल्योपम, करोड़ पूर्व का तीसरा भाग साधिक	
	एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	करोड़ पूर्व और अपनी आयु का तीसरा भाग अधिक	
	असन्नी पंचेन्द्रिय	अन्तर्मुहुर्त	पल्य का असं. भाग और क्रोड़ पूर्व का तीसरा भाग साधिक	
	मनुष्य-नरकायु देवायु	दस हजार वर्ष अन्तर्मुहुर्त अधिक	33 सागर करोड़ पूर्व के तीसरे भाग अधिक	
	मनुष्य-मनुष्यायु तिर्यंचायु	अन्तर्मुहुर्त	तीन पल्य और करोड़ पूर्व के तीसरे भाग अधिक	
54 से 148 नाम की 93 गोत्र की 2 6	नरक गति, नरकानुपूर्वी वैक्रिय चतुष्क 6 असंज्ञी पं. (एके.नहीं बांधते) ये 6, संज्ञी पं.	2000/7 सागर से पल्य के असं. भाग कम समुच्चय जीव उपरोक्त कोटा कोटी सागरोपम कुछ न्यून	20 कोटा कोटी सागरोपम पूरे 2000/7 सागर 20 कोटा कोटी सागरोपम	2000 वर्ष 2000 वर्ष
2	देवगति, देवानुपूर्वी (समु.) अ.पं. (एकेन्द्रियादि नहीं) सं. पंचेन्द्रिय	1000/7 सागर में पल्य का अं. भाग न्यून उत्कृष्ट में पल्य का असं. भाग कम कोटा कोटी सागरोपम से कुछ न्यून	10 कोटा कोटी सागरोपम 1000/7 सागरोपम 10 कोटा कोटी सागरोपम	1000 वर्ष 1000 वर्ष
2	मनुष्य गति, मनुष्यानु पूर्वी एकेन्द्रिय से. अ. पंचेन्द्रिय	3/14 सागर में पल्य का असं. भाग न्यून उत्कृष्ट से पल्य का असं. भाग न्यून	15 कोटा कोटी सागरोपम 3/14, 75/14,150/14, 300/14,3000/14 सागर क्रमशः	1500 वर्ष
	संज्ञी पंचेन्द्रिय	कोटा कोटी सागरोपम कुछ न्यून	15 कोटा कोटी सागरोपम	1500 वर्ष
19	तिर्यंच गति, तिर्यंचानु पूर्वी एके, पंचेन्द्रिय, औदारिक चतुष्क, तैजसत्रिक, कार्मणत्रिक, चार अशुभ स्पर्श, दुरभिगंध=19 एकेन्द्रिय से अ. पंचे.	(समुच्चय जीव) पल्योपम के असं. ख्यातवे भाग कम 2/7 सागरोपम (इन सभी 19 में) अपनी उत्कृष्ट से पल्य के असं. भाग न्यून	20 कोटा कोटी सागरोपम (19 बोल समुच्चय में) 2/7,50/7,100/7,200/7, 2000/7 सागर क्रमशः	2000 वर्ष
	सं.पंचेन्द्रिय 19 में	कोटा कोटी सागर से कुछ न्यून	20 कोटा कोटी सागरोपम	2000 वर्ष
6	तीन विकलेन्द्रिय, सूक्ष्म त्रिक, ये 6 प्रकृतियां	(समुच्चय) 9/35 सागर में उल्योपम का असंख्यातवां भाग न्यून	18 कोटा कोटी सागरोपम	1800 वर्ष
	एकेन्द्रिय से अ.पंचेन्द्रिय	अपनी उत्कृष्ट से पल्य का असं. भाग कम	9/35,45/7,90/7,180/7, 1800/7 सागर क्रमशः	
	संज्ञी पंचेन्द्रिय	कोटा कोटी सागरोपम कुछ न्यून	18 कोटा कोटी सागरोपम	1800 वर्ष
5	4 शुभ स्पर्श, सुरभिगंध एकेन्द्रिय से अ. पंचे.	1/7 सागर से पल्यका असं. भाग न्यून अपनी उत्कृष्ट से पल्य का असं. भाग न्यून	10 कोटा कोटी सागरोपम 1/7,25/7,50/7,100/7, 1000/7 सागर क्रमशः	1000 वर्ष
	संज्ञी पंचेन्द्रिय	कोटा कोटी सागर से न्यून	10 कोटा कोटी सागरोपम	1000 वर्ष
5	आहा. चतुष्क, जिन नाम (समु., संज्ञी पंचे.बांधे)	कोटा कोटी सागर से कुछ न्यून (एकेन्द्रिय से अ.पं.नहीं बांधते)	कोटा कोटी सागर से कुछ न्यून	
10	पांच वर्ण, पांच रस (समुच्चय)	पल्य के असं. भाग कम 4/28,5/28, 6/28,7/28,8/28	10,12½,15,17½,20 कोटा कोटी सागर	1000,1250,

	(पश्चानुपूर्वी कथन)	सागरोपम (क्रमशःएक-एक)	क्रमशः एक वर्ण और एक रस यो समझे	1500,1750, 2000 वर्ष
	एकेन्द्रिय से असं.पंचेन्द्रि (पश्चानुपूर्वी से समझे)	अपनी उत्कृष्ट स्थिति से पल्य का असंख्यातवें भाग कम	4 या 8/28, 100 या 200/28, 200 या 400/28,400-800/28 4000-8000 सागरोपम/28	
	संज्ञी पंचेन्द्रिय पश्चानुपूर्वी से समझें	कोटा कोटी सागरोपम से कुछ छ न्यून	10,12 1/2,15,17,20 कोटा कोटी सागर	1000, 1250, 1500,1750, 2 हजार वर्ष
12	छ संहनन 6 संस्थान(समु.) (समुच्चय जीव)	पल्य के असं.भाग कम 5/35,6/35,7/35 8/35, 9/35, 10/35 सागरोपम	10,12,14,16,18,20 कोटा कोटी सागरोपम	1000,1200, 1400,1600, 1800,2000वर्ष
	12 में एकेन्द्रिय	अपनी उत्कृष्ट से पल्य के असं. भाग न्यून	सागरोपम के पेंतीसिया 5,6,7,8, 9,10वां भाग	
	12 में द्वीन्द्रिय	अपनी उत्कृष्ट से पल्य के असं. भाग न्यून	25 साग. के पेंतीसिया 5 से 10 भाग	
	त्रिन्द्रिय	अपनी उत्कृष्ट से पल्य के असं. भाग न्यून	50 साग. के पेंतीसिया 5से10 भाग	
	चतुरिन्द्रिय	अपनी उत्कृष्ट से पल्य के असं. भाग न्यून	100 साग. के पेंतीसिया 5से10 भाग	
	असन्नी पंचेन्द्रिय	अपनी उत्कृष्ट से पल्य के असं. भाग न्यून	1000 साग. के पेंतीसिया 5से10 भा.	
	संज्ञी पंचेन्द्रिय 12 में	कोटा कोटी सागरोपम कुछ न्यून	10,12,14,16,18,20 कोटा कोटी सागरोपम	1000,1200, 1400,1600, 1800,2000वर्ष
20 8	स्थावर दशक की सात प्र. (सूक्ष्म त्रिक छोड़कर) जिन नाम छोड़ प्रत्येक की सात प्रकृतियां, त्रस दशक में से 4 प्रकृ.(त्रस, बादर, प्रत्येक, पर्या.) नीच गौत्र, अशुभ विहायोगति (ये 20) त्रस दशक की 6 प्रकृतियां उच्च गौत्र, शुभ विहायोगति	तिर्यंचगति की तरह 2/7 सागरोपम में पल्योपम के असंख्यातवें भाग कम	20 क्रोड़ा क्रोड़ सागरोपम	2000 वर्ष
2	यशः कीर्ति-उच्च गौत्र	आठ मुहुर्त (समुच्चय)	10 कोटा कोटी सागरोपम	1000 वर्ष
6	शेष 6 प्रकृतियां	1/7 सागरोपम में पल्य के असं.भाग न्यून	10 कोटा कोटी सागरोपम	1000 वर्ष
	एकेन्द्रिय से असं. पंचे. (आठ)	अपनी उत्कृष्ट स्थिति से पल्य के असं.भाग न्यून	1/7,24/7,50/7,100/7, 1000/7, सागर क्रमशः	
	सं.पंचे.उच्चगो. यशकीर्ति 2	आठ मुहुर्त	दस कोटा कोटी सागरोपम	1000 वर्ष
95 योग	सं.पंचे 6 प्रकृतियां	कोटा कोटा सागरोपम कुछ न्यून	सभी आठों प्रकृतियां के लिए	

विशेष- कुल 148 कर्म प्रकृतियों आठ कर्मों का दिग्दर्शन कराया है। वैक्रिय चतुष्क (वैक्रिय शरीर, अंगोपांग, बंधन, संघात) औदारिक चतुष्क (औदारिक शरीर संघात तक) तैजस त्रिक (तैजस शरीर, बंधन, संघात) इसी तरह कार्मण त्रिक समझे। 4 अशुभ स्पर्श (कर्कश, भारी, शीत, रूक्ष) सूक्ष्म त्रिक (सूक्ष्म नाम, साधारण, अपर्याप्त नाम) 4 शुभ स्पर्श (कोमल, लघु, उष्ण, स्निग्ध) आहारक चतुष्क (शरीर, अंगोपांग, बंधन, आहारक संघात) स्थावर दशक की अन्य 7 प्रकृतियां (स्थावर, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, अयशःकीर्त्ति) 7 प्रत्येक प्रकृतियां (पराघात, उच्छवास,

आतप, उद्योत अगुरु लघु, निर्माण, उपघात) त्रस दशक की 4 प्रकृतियां (त्रस नाम, बादर, प्रत्येक, पर्याप्त नाम) त्रस दशक की 6 प्रकृतियां (स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, यशःकीर्त्ति) ये संक्षिप्त शब्द पहचानें। 20+ 1+ 16+3+ 5+1+1+2+ 4+ 6+ 2+ 2+ 19+ 6+ 5+ 5+ 10+ 12+ 20+ 8=148 आलापक हुए।

800 बोलों की बंधी- श्री प्रज्ञापना सूत्र के पद संख्या 24, 25, 26, 27 इन चार पदों में समुच्चय जीव और 24 दंडक इन 25 में जीवों में आठ कर्मों के बंध वेदन संबंधी कथन है यों 25×8=200 बोल होते हैं। इन बातों का ध्यान रखने पर थोकड़ों को समझा जा सकता है।

1. शाश्वत गुण स्थान 6- 1,4,5,6,7,13

2. बंध के गुण स्थान- ज्ञानावरण, दर्शनावरण, नाम, गोत्र, अंतराय ये पांच 10वें गुण स्थान तक निरंतर बंधते हैं। आयु कर्म तीसरे छोड़ सातवें तक पूरे जीवन में एक बार बंधे। मोहनीय 9वें तक तथा वेदनीय 13वें तक निरंतर बंधता है। 14वां अबंधक है, कोई भी कर्म नहीं बंधता।

3. वेदन (उदय) गुण स्थान- ज्ञानावरण, दर्शनावरण अन्तराय ये तीन 12वें तक वेदते हैं, वेदनीय, आयु, नाम गोत्र 14वें तक, मोहनीय 10वें तक वेदते हैं।

4. बंध के स्थान- एक से सातवें तक तीसरे गुण स्थान को छोड़कर आठ कर्म, सात कर्म बंधते हैं। तीसरे, आठवें, नवमें गुण स्थान में 7 कर्म बंधते हैं। 10वें में 6 कर्म, 11वें 12वें 13वें गुण स्थान में एक कर्म बांधते हैं। 14वें में अबंधक है।

5. वेदन (उदय) के स्थान- 1 से 10 गुण स्थान तक आठ कर्म वेदते हैं। 11वें 12वें में सात कर्म, 13वें 14वें में चार अघाती कर्म वेदते हैं।

6. एक कर्म (बंध या वेदन) अशाश्वत होने पर भांगे बनते हैं दो कर्म अशाश्वत होने पर 9 भंग और तीन कर्म अशाश्वत होने पर 27 भंग बनते हैं। सभी कर्मों के बंधक शाश्वत होने पर भंग नहीं बनते हैं। समुच्चय जीव चौबीस दंडक इन 25 बोलों पर आठ कर्म के 25×8=200 (1) कर्म बांधतो बांधे के 200 बोल (2) बांधतो वेदे के 200 (3) वेदतो बांधे के 200 (4) कर्म वेदतो वेदे के 200 ये कुल 800 बोल हुए।

51. कर्म बांधते हुए बांधना (प्रज्ञापना सूत्र पद 24) एक कर्म प्रकृति को बांधता हुआ दूसरे कर्म प्रकृतियां का बंध होता रहता है, इसके 453 भंग बनते हैं- आठ कर्म बंध उदय में गुण स्थान-

कर्म	बंध में गुण स्थान	उदय में गुण स्थान
ज्ञानावरणीय, दर्शना. अन्तराय	10	12
मोहनीय	9	10
वेदनीय	13	14
आयुष्य	1 से 7 (तीसरा छोड़कर)	14
नाम, गोत्र	10	14

समुच्चय एक जीव ज्ञानावरण कर्म बंध करता हुआ सात, आठ या 6 कर्म बांधता है, एक जीव में तीन में से एक विकल्प होता है। इसी प्रकार मनुष्य 7-8 या 6 कर्म बांधता है, शेष 23 दंडक आठ या सात कर्म बांधते हैं, वहां 10वां गुण स्थान नहीं होने से 6 कर्म का विकल्प नहीं होता। सात या आठ कर्म बंधक शाश्वत हैं, 6 कर्म के बंधक अशाश्वत हैं। इनके 3 भंग है। 1. सभी 7-8 बांधने वाले 2. 7-8 बांधने वाले बहुत, 6 के बंधक एक 3. सात आठ के बहुत 6 के बहुत। ये समुच्चय जीव के हुए।

पांच स्थावर के अनेक जीवों में 7 अथवा 8 कर्म बंधक शाश्वत है वहां कोई भंग नहीं बनता।

नारकी, देवता, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, तीन विकलेन्द्रिय- 18 दंडक में सात अथवा आठ कर्म बांधते हैं, इनके तीन भंग है- 1. सभी सात बांधने वाले (शाश्वत) 2. सात के बंधक बहुत आठ का एक 3. सात के बहुत आठ के बहुत। 54 भंग हुए।

मनुष्य- इनमें 7 के बंधक शाश्वत होते हैं, आठ और 6 के अशाश्वत इनके 9 भंग होते हैं।

असंयोगी एक- सभी सात के बंधक। **दो संयोगी 4 भंग-** 1. बहुत सात के बंधक एक आठ का बंधक 2. सात के बहुत आठ के बहुत 3. सात के बहुत 6 का बंधक एक 4. सात के बहुत 6 के बंधक बहुत।

तीन संयोग 4 भंग- (1) 7 के बहुत 8 का 1, 6 का एक (2) 7 के बहुत 8 का एक, 6 के बहुत। (3) 7 के बहुत 8 के बहुत 6 का एक (4) सात के बहुत आठ के बहुत 6 के बहुत। यों 1+4+4=9 भंग हुए। यों 3+54+9=66 भंग। इसी तरह दर्शनावरणीय, अंतराय, नाम, गौत्र के 66-66 से 66×5=330 भंग हुए।

वेदनीय कर्म- समुच्चय जीव वेदनीय कर्म बांधता हुआ 8-7-6 या एक कर्म बांधता है। इसी तरह मनुष्य का कथन है। इनमें से 8-7-1 ये शाश्वत है 6 कर्म का बंधक अशाश्वत है इसमें तीन भंग बनते हैं।

(1) सभी जीव आठ सात या 1 कर्म बंधक है (2) बहुत 8-7-1 के बंधक, एक 6 कर्म बंधक (3) बहुत 8-7-1 के बंधक और 6 के भी बहुत। पांच स्थावर सात अथवा आठ के बंधक होते हैं, वहां भंग नहीं बनता।

नारकी आदि 18 दंडक- अनेक जीव वेदनीय बांधते 7 या 8 कर्म बांधते हैं उनमें 7 कर्म के शाश्वत 8 के अशाश्वत होने से तीन भंग बनते हैं पूर्ववत् भंग कहना। 18×3=54 भंग हुए।

मनुष्य- अनेक मनुष्य वेदनीय बांधते 7-8-6-1 कर्म के बंधक होते हैं इनमें सात या 1 कर्म के बंधक शाश्वत तथा 8 और 6 कर्म बंधक अशाश्वत होने से पूर्ववत् 9 भंग बनते हैं।

समुच्चय अनेक जीवों के वेदनीय बंधकों के 3 भंग, नारकी आदि 18 दंडक के 54, मनुष्यों के 9 भंग, ये कुल 66 भंग हुए।

मोहनीय कर्म- बांधते समुच्चय जीव 7 या 8 कर्म बांधते हैं इसी तरह 24 दंडक में कहना एक जीव में एक विकल्प होगा। समुच्चय अनेक जीवों 7 या 8 कर्म बंधक शाश्वत मिलते हैं भंग नहीं होता। पांच स्थावर भी अभंग है।

शेष 19 दंडक के जीव सात अथवा आठ कर्म बांधते हैं। 7 कर्म के बंधक शाश्वत, 8 के अशाश्वत होने से तीन भंग बनते हैं। पूर्ववत् कहना 19×3=57 भंग हुए।

आयुष्य कर्म- समुच्चय जीव 24 दंडक एक या अनेक आयुष्य के बंधक आठों कर्म बांधते हैं। कोई भंग नहीं बनता। यों 5 कर्म के 330 भंग + वेदनीय के 66 भंग + मोहनीय के 57 भंग यों कुल 453 भंग हुए।

एक कर्म बंध में कर्म बंध (एक जीव)

कर्म	बंधक	सात के बंधक	आठ के बंधक	6 के बंधक	एक कर्म बंधक
1 ज्ञाना, दर्शना, अन्त., नाम, गोत्र	समुच्चय	✔	✔	✔	✘
	मनुष्य	✔	✔	✔	✘
	23 दंडक जीव	✔	✔	✘	✘
2 मोहनीय कर्म	समुच्चय	✔	✔	✘	✘
	24 दंडक जीव	✔	✔	✘	✘
3 वेदनीय कर्म	समुच्चय जीव	✔	✔	✔	✔
	मनुष्य	✔	✔	✔	✔
	23 दंडक जीव	✔	✔	✘	✘
4 आयुष्य कर्म	सर्व जीव	✘	✔	✘	✘

एक कर्म बंध में अन्य कर्म बंध (एक जीव) 453 भंग बांधतो बांधे-

कर्म	बंधक जीव (अनेक)	आठ के बंधक	सात बंधक	6 बंधक	एक बंधक	भंग संख्या×कर्म ×जीव=कुल भंग
1 ज्ञाना.,दर्शना.,अंत., नाम गोत्र ये 5 कर्म	समुच्चय जीव अनेक	✔	✔	विकल्प	✘	3×5×1=15
	मनुष्यों	विकल्प	✔	विकल्प	✘	9×5×1=45
	पांच स्थावरों	✔	✔	✘	✘	अभंग
	18 दंडक जीवों (ना.दे.तिपं.विकले.)	विकल्प	✔	✘	✘	3×5×18=270
2 मोहनीय कर्म	समुच्चय जीवों	✔	✔	✘	✘	अभंग
	मनुष्यों	विकल्प	✔	✘	✘	3×1×1=3
	पांच स्थावरों	✔	✔	✘	✘	अभंग
	18 दंडक के जीवों	विकल्प	✔	✘	✘	3×1×18=54
3 वेदनीय कर्म	समुच्चय जीवों	✔	✔	विकल्प	✔	3×1×1=3
	मनुष्यों	विकल्प	✔	विकल्प	✔	9×1×1=9
	पांच स्थावरों	✔	✔	✘	✘	अभंग
	18 दंडक जीवों	विकल्प	✔	✘	✘	3×1×18=54
4 आयुष्य कर्म	सर्व जीवों	✔	✘	✘	✘	अभंग। **कुल भंग 453**

52. कर्म बांधते हुए वेदना (प्रज्ञापना सूत्र 25वां पद)- सामान्य तया ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अन्तराय का वेदन 12 गुणस्थान, मोहनीय का 10वां और अघाती का 14 गुणस्थान तक वेदन होता है। 1 से 10 गुणस्थान तक आठ, 11वें 12वें में 7 और 13वें व 14वें में 4 कर्म वेदन होता है। समुच्चय जीव 24 दंडक ज्ञानावरणीय आदि 7 कर्म वेदनीय छोड़कर आठों ही कर्म प्रकृतियां वेदते हैं। कोई विकल्प नहीं है। वेदनीय कर्म बांधता हुआ आठ, सात या चार प्रकृतियां वेदता है। समुच्चय जीव में कहना। इसी प्रकार मनुष्य में कहना। शेष 23 दंडक 8 कर्म वेदते हैं। कोई विकल्प नहीं है। समुच्चय जीव वेदनीय बांधते आठ, सात या चार वेदते हैं, आठ और 4 शाश्वत है। 7 कर्म वेदक अशाश्वत है इनमें तीन भंग बनते हैं, ये भंग मनुष्य में कहना। (1) सभी आठ व चार वेदक (2) आठ व चार के वेदक बहुत 7 का एक (3) आठ व 4 के बहुत, सात के भी बहुत। ये समुच्चय और मनुष्य के 6 भंग है।

एक कर्म बंध में कर्म वेदन (एक जीव)

कर्म	बंधक जीव	आठ कर्म वेदक	सात कर्म वेदक	चार कर्म वेदक
7 कर्म-ज्ञाना.,दर्शना.,मोह.,अंत,आयु,नाम गोत्र	सर्व जीव	✔	✘	✘
1 कर्म-वेदनीय कर्म	समुच्चय/मनुष्य	✔	✔	✔
	23 दंडक के जीव	✔	✘	✘

कर्म बंध में कर्म वेदन (अनेक जीव)

कर्म	बंधक	आठ के वेदक	सात कर्म वेदक	चार कर्म वेदक	भंग संख्या×कर्म×जीव=कुल भंग
सात कर्म	जीव, मनुष्य	✔	✘	✘	अभंग (कोई विकल्प नहीं एक ही भंग है)
वेदनीय	जीव, मनुष्य	✔	विकल्प	✔	3×1×2=6 भंग
आठ कर्म	23 दंडक	✔	✘	✘	अभंग, कुल 6 भंग

53. कर्म वेदते हुए बांधे (प्रज्ञापना सूत्र पद 26)- एक कर्म का वेदन करते हुए कर्मों का बंधन करने का वर्णन है। समुच्चय एक जीव ज्ञानावरणीय को वेदता हुआ सात-आठ-छह अथवा एक कर्म का बंध करता है, इसी तरह मनुष्य में भी कहना। नारकी आदि शेष 23 दंडक में (10वां गुण स्थान नहीं होने से) सात या आठ कर्म बंध करता है। समुच्चय बहुत जीव ज्ञानावरणीय वेदते सात, आठ, 6 और एक कर्म बांधते हैं, इनमें सात और आठ के बंधक शाश्वत हैं, 10वां 11वां 12वां गुण स्थान अशाश्वत होने से 6 कर्म और एक कर्म के बंधक के अशाश्वत हैं। 9 भंग है।

असंयोगी 1 भंग- सभी सात आठ कर्म के बंधक (समुच्चय)

दो संयोगी 4 भंग-1. अनेक सात, आठ के बंधक, 6 का एक 2. अनेक सात आठ के बंधक, बहुत 6 के बंधक 3. अनेक सात आठ के बंधक, एक कर्म का बंधक एक 4. अनेक सात आठ के बंधक, एक कर्म के बंधक अनेक।

त्रिसंयोगी भंग चार- 1. अनेक सात आठ के, एक छ के, एक एक का बंधक (2) अनेक सात आठ के एक 6 का, अनेक एक के बंधक। (3) अनेक सात आठ के, अनेक 6 के, एक एक का बंधक (4) अनेक सात आठ के अनेक 6 के अनेक एक के बंधक। ये समुच्चय के 9 भंग हुए। **पांच स्थावर** में सात कर्म आठ कर्म के बंधक शाश्वत मिलते हैं, अतः भंग नहीं होता। नारकी, देवता, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, तीन विकलेन्द्रिय इन 18 दंडक में 7 कर्म और 8 कर्म के बंधक होते हैं, सात के शाश्वत आठ के बंधक अशाश्वत होते हैं, इनके तीन भंग बनते हैं। (1) सभी सात के (2) अनेक सात एक आठ (3) अनेक सात अनेक आठ के बंधक। यों 18×3=54 भंग बनते हैं।

बहुत मनुष्य- समुच्चय जीवों की तरह सात, आठ, छ, एक कर्मबंधक होते हैं। सात के शाश्वत होते हैं। परन्तु मनुष्यों में आयुष्य कर्म बंधक, 10वें, 11वें, 12वें गुण स्थान वर्ती जीव हमेशा नहीं होते, अतः आठ, छह, एक कर्म बंधक अशाश्वत होते हैं। ये तीन स्थान अशाश्वत होने से 27 भंग बनते हैं। 1+6+12+8=27 भंग।

असंयोगी 1 भंग- सभी सात के बंधक

दो संयोगी 6 भंग- (1) अनेक सात, एक आठ का बंधक (2) अनेक सात अनेक आठ (3) अनेक सात एक 6 का बंधक (4) अनेक सात, अनेक 6 के बंधक (5) अनेक सात, एक एक कर्म बंधक (6) अनेक सात अनेक एक कर्म बंधक (31-33 अंक) **तीन संयोगी 12 भंग**- (1) एक सात, एक आठ, एक 6 का बंधक (2) अनेक सात एक आठ अनेक 6 के (3) अनेक सात, अनेक आठ, एक 6 का (4) अनेक सात अनेक आठ अनेक 6 के बंधक। (5) अनेक सात, एक आठ, एक एक का बंधक (6) अनेक सात, एक आठ, अनेक एक का (7) अनेक सात, अनेक आठ, एक एक का (8) अनेक सात, अनेक आठ, अनेक एक का बंधक (9) अनेक सात, एक 6, एक एक का बंधक (10) अनेक सात, एक 6, अनेक एक का (11) अनेक सात, अनेक 6, एक एक का (12) अनेक सात, अनेक 6, अनेक एक के बंधक (311, 313, 331, 333)

चार संयोगी 8 भंग- (1) अनेक सात एक आठ, एक 6, एक एक का (2) अनेक सात, एक आठ, एक 6, अनेक एक का बंधक (3) अनेक सात, एक आठ, अनेक 6, एक एक का (4) अनेक सात एक आठ, अनेक 6, अनेक एक के बंधक (3111, 3113, 3131, 3133) (5) अनेक सात, अनेक आठ, एक 6, एक एक का (6) अनेक सात अनेक आठ, एक 6, अनेक एक का (7) अनेक सात अनेक आठ अनेक 6, एक एक का बंधक (8) अनेक सात अनेक आठ अनेक 6, अनेक एक के बंधक (अंक 3311, 3313, 3331, 3333) इस प्रकार 9+54+27=90 भंग हुए। ज्ञानावरणीय की तरह दर्शनावरणीय और अंतराय का उदय भी 12वें गुण स्थान तक होता है अतः समुच्चय एक-अनेक और 24 दंडक में 90 + 90 = मिलाकर 90×3 =270 भंग हुए।

समुच्चय एक जीव मोहनीय कर्म- का वेदन करते आठ सात 6 कर्म बंधते हैं। मोहनीय का वेदन 10वें गुणस्थान तक होता है, एक जीव में एक विकल्प होता है, इसी प्रकार मनुष्य का भी कहना। शेष 23 दंडक में सात-आठ के बंधक है।

समुच्चय अनेक मोहनीय- का वेदन करते सात, आठ, 6 कर्म बांधते हैं। सात आठ के बंधक शाश्वत, 6 के बंधक अशाश्वत होते हैं। इनके तीन भंग मिलते हैं। (1) सभी सात आठ के (2) अनेक सात आठ, एक 6 का (3) अनेक 7-8, अनेक 6 के। **पांच स्थावर** में सात आठ के बंधक शाश्वत मिलते हैं अभंग है। मनुष्य के सिवाय शेष 18 दंडक में भी तीन भंग बनते हैं वहां सात के शाश्वत आठ के अशाश्वत होने से बनते हैं। 18×3=54 भंग होते हैं।

मनुष्य में सात के बंधक शाश्वत, आठ और 6 के बंधक अशाश्वत होते हैं इनके 9 भंग होते हैं। असंयोगी एक, दो संयोगी चार, तीन संयोगी चार। यों कुल 3+54+9=66 भंग हुए।

समुच्चय एक जीव तथा एक मनुष्य-वेदनीय- का वेदन करते सात, आठ, छह या एक कर्म का बंधन करता है। अबंधक कोई कर्म नहीं बांधता। एक जीव का चार में से एक विकल्प ही होता है या अबंधक होता है। शेष 23 दंडक सात या आठ कर्म बांधते हैं।

समुच्चय अनेक जीव- वेदनीय कर्म वेदते सात, आठ, 6, एक बांधते या अबंधक होते हैं। इनमें से सात, आठ और एक कर्म बंधक शाश्वत हैं, 6 और अबंधक अशाश्वत है इनके 9 भंग हैं- 1. असंयोगी एक भंग 2. दो संयोगी चार 3. तीन संयोगी चार भंग।

असंयोगी 1 भंग सभी सात आठ एक कर्म के बंधक।

दो संयोगी चार भंग- (1) अनेक 7-8-1 के बंधक, एक 6 का बंधक (2) अनेक 7-8-1 का बंधक अनेक 6 के बंधक (3) अनेक 7-8-1 का बंधक एक अबंधक (4) अनेक 7-8-1 के बंधक अनेक अबंधक। (31, 33 अंक)

तीन संयोगी चार भंग- (1) अनेक 7-8-1 के बंधक, एक 6 का बंधक, एक अबंधक (2) अनेक 7-8-1 का बंधक एक 6 बंधक, अनेक अबंधक (3) अनेक 7-8-1 के बंधक, अनेक 6 के बंधक, एक अबंधक (4) अनेक 7-8-1 के बंधक अनेक 6 के बंधक अनेक अबंधक।

नरकादि 18 दंडक में सात के बंधक शाश्वत, आठ के अशाश्वत होने से पूर्ववत् 3 भंग होते हैं 18×3=54 भंग हुए। पांच स्थावर में सात और आठ के बंधक शाश्वत मिलते हैं भंग नहीं बनते।

अनेक मनुष्यों में- वेदनीय वेदते सात आठ 6 एक के बंधक, और अबंधक भी होते हैं। इनमें सात और एक के बंधक शाश्वत। आठ, 6 के बंधक और अबंधक अशाश्वत होते हैं। इनके 27 भंग होते हैं। असंयोगी एक, दो संयोगी 6, तीन संयोगी 12, चार संयोगी-8, ज्ञानावरणीय कर्म में कहे वैसे समझना। यों कुल 9+54+27=90 भंग हुए। इसी तरह आयु नाम गौत्र का भी समझना उनके भी 90×3=270 भंग हुए। यों 7 कर्म के 90 से 630+66 मोहनीय के कुल 696 भंग हुए। दूसरी तरह से समुच्चय जीव के 7 कर्म (मोहनीय छोड़कर) 9-9 भंग 9×7=63+3 मोहनीय के 66 भंग। पांच स्थावर

में भंग नहीं। 18 दंडक (मनुष्य छोड़) के एक कर्म के 3 भंग 18×3×8 कर्म = 432 भंग। मनुष्य में मोहनीय के 9 शेष 7 कर्म के 27×7=189+9=198 यों कुल भंग 66+ 432+ 198 =696 भंग हुए। अब इसे चार्ट से भी समझें- एक जीव

	कर्म	वेदक जीव	आठ के बंधक	सात के बंधक	छ के बंधक	एक के बंधक	अबंधक
3 कर्म	ज्ञाना.दर्शना.अंतराय	समु.जीव और मनुष्य	✔	✔	✔	✔	✘
		23 दंडक के जीव	✔	✔	✘	✘	✘
1 कर्म	मोहनीय कर्म	समुच्चय/मनुष्य	✔	✔	✔	✘	✘
		23 दंडक के जीव	✔	✔	✘	✘	✘
4 कर्म	वेदनीय कर्म आयुष्य	समुच्चय/मनुष्य	✔	✔	✔	✔	✔
	और नाम गौत्र	23 दंडक के जीव	✔	✔	✘	✘	✘

(यह एक जीव की अपेक्षा कर्म वेदन के समय कर्म बंधन है) (7 में मोह छूटा 6 में आयुष्य भी कम 1 में साता वेदनीय)

एक कर्म वेदन में कर्म बंधन (अनेक जीव) वेदता बांधे- (696 भंग)

कर्म	वेदक जीव (अनेक)	आठ के बंध	सात का बंध	छ का बंधक	एक के बंधक	अबंधक	भंग×कर्म×जीव	कुल भंग
ज्ञाना.दर्शना.अंत.	समुच्चय जीवों	✔	✔	विकल्प	विकल्प	✘	9×3×1	27
	मनुष्यों	विकल्प	✔	विकल्प	विकल्प	✘	27×3×1	81
	पांच स्थावरों	✔	✔	✘	✘	✘	अभंग	-
	18 दंडक के जीवों	विकल्प	✔	✘	✘	✘	3×3×18	162
मोहनीय कर्म	समुच्चय जीवो	✔	✔	विकल्प	✘	✘	3×1×1	3
	मनुष्यों	विकल्प	✔	विकल्प	✘	✘	9×1×1	9
	पांच स्थावरों	✔	✔	✘	✘	✘	अभंग	-
	18 दंडक के जीवों	विकल्प	✔	✘	✘	✘	3×1×18	54
वेद.आयु नाम-गौत्र	समुच्चय जीवो	✔	✔	विकल्प	✔	विकल्प	9×4×1	36
	मनुष्यों	विकल्प	✔	विकल्प	✔	विकल्प	27×4×1	108
	पांच स्थावरों	✔	✔	✘	✘	✘	अभंग	-
	18 दंडक के जीवों	विकल्प	✔	✘	✘	✘	3×4×18	216
							कुल भंग	**696**

54. 2. कर्म वेदते हुए वेदना (पन्नवणा सूत्र पद 27वां) ज्ञानावरणीय कर्म का वेदन करता हुआ समुच्चय में एक जीव सात या आठ कर्म का वेदन करता है। 12वें गुणस्थान तक वेदन होता है, 10वें तक 8 कर्म का, 11वें 12वें में 7 कर्म को वेदता है। एक मनुष्य का इसी प्रकार कहना। शेष 23 दंडक आठों का वेदन करते हैं, क्योंकि उनके कोई कर्म क्षय नहीं होता।

समुच्चय बहुत जीव- सात या आठ का वेदन (ज्ञानावरण वेदे तब) करते है, सात अशाश्वत, आठ शाश्वत है इनके तीन भंग है। 11-12वां गुण स्थान अशाश्वत होने से

एक विकल्प अशाश्वत होता है। अनेक मनुष्यों का भी समुच्चय जीवों की तरह तीन भंग है। ये 6 भंग हुए। सभी आठ के वेदक, अनेक आठ एक सात, अनेक आठ अनेक सात के वेदक। इसी तरह दर्शनावरणीय, अन्तराय के भी 6+6=12 भंग कहना।

मोहनीय कर्म का वेदन करते नियमा आठ का वेदन होता है, 10वें गुण स्थान तक मोह उदय है वहां आठ का उदय है। कोई विकल्प नहीं। समुच्चय एक जीव वेदनीय कर्म का वेदन करते आठ, सात, चार कर्म वेदता है इसी तरह मनुष्य का भी कहना। नारकी आदि 23 दंडक आठों कर्म वेदते हैं। वहां कोई विकल्प नहीं है।

समुच्चय अनेक जीव वेदनीय वेदते आठ, सात या चार कर्म वेदते हैं आठ के शाश्वत है, चार के केवली भी शाश्वत है। सात के वेदक अशाश्वत हैं। इनके तीन भंग है। इसी तरह मनुष्यों के भी तीन भंग है। नारकी आदि 23 दंडक आठों कर्म वेदते हैं। वेदनीय की तरह नाम गोत्र आयु के भी 6+6+6=18 भंग हुए।

इस प्रकार मोहनीय में भंग नहीं होने से शेष 7 कर्मों के 6 भंग होने से कुल 7×6=42 भंग हुए। इस प्रकार कर्म बांधते बांधे के 453 भंग, बांधते वेदने के 6 भंग, वेदते बांधने के 696 भंग, वेदते वेदे के 42 भंग कुल 1197 भंग हुए।

एक जीव की अपेक्षा एक कर्म वेदते अन्य कर्म वेदन-

कर्म	वेदक जीव	आठ के वेदक	सात के वेदक	चार के वेदक
ज्ञाना. दर्शना. अन्तराय	समुच्चय जीव/ मनुष्य	✔	✔	✘
	23 दंडक के जीव	✔	✘	✘
मोहनीय कर्म	24 दंडक के जीव	✔	✘	✘
वेदनीय, आयु, नाम, गोत्र	समुच्चय जीव/ मनुष्य	✔	✔	✔
	23 दंडक के जीव	✔	✘	✘

कर्म वेदन में कर्म वेदन (अनेक जीव की अपेक्षा) भंग 42

कर्म	वेदक जीव	आठ के वेदक	सात के वेदक	चार के वेदक	भंग×कर्म×जीव	कुल भंग
ज्ञाना.दर्शना.अंत	जीव/मनुष्य	✔	विकल्प	✘	3×3×2	18
	23 दंडक	✔	✘	✘	अभंग	-
मोहनीय	सभी जीव	✔	✘	✘	अभंग	-
वेदनीय,आयु,नाम गौत्र	जीव/मनुष्य	✔	विकल्प	✔	3×4×2	24
	23 दंडक	✔	✘	✘	अभंग	
					भंग कुल	**42**

55. आहार (प्रज्ञापना 28वां पद उद्देशक 1) 11 द्वारों से 24 दंडक के जीवों में आहार का वर्णन है।

सच्चित्ताहारट्ठी केवति, किं वावि सव्वओ चेव।
कतिभागं सव्वे खलु, परिणामे चेव बोद्धव्वे॥1॥

एगिंदिय सरीरादि लोमाहारो तहेव मणभक्खी।
एतेसिं तु पदाणं, विभावणा होंति कायव्वा॥2॥

1. सचित्ताहारी 2. आहारार्थी 3. कितने काल से आहारेच्छा 4. किन पुद्‌गलों का आहार 5. सर्वआत्म-प्रदेशों से आहार 6. ग्रहण पुद्‌गलों का कितना भाग आहार, आस्वादन 7. ग्रहण पुद्‌गलों का सभी का आहार या? 8. आहार का परिणमन 9. एकेन्द्रिय शरीरादि का आहार करते है 10. लोमाहारी या प्रक्षेपाहारी 11. ओज आहारी या मनोभक्षी आहारी।

आहार संज्ञा से प्रेरित जीव शरीर निर्माण, पुष्टि के लिए पुद्‌गल ग्रहण करता है वह आहार है, सचित पुद्‌गल से सचित्ताहार, अचित पुद्‌गलों का अचित आहार, कुछ सचित कुछ अचित यह मिश्र आहार यों तीन प्रकार का है। उत्पत्ति समय में प्रथम शरीर पर्याप्ति पूर्ण हो तब तक अनाभोग रूप पुद्‌गल ग्रहण ओज आहार, पर्याप्ति पूर्ण होने के बाद रोमराय द्वारा अनाभोग रूप ग्रहण पुद्‌गल लोमाहार, इच्छापूर्वक कवलादि ग्रहण प्रक्षेपाहार है। ओजाहार अनाभोग पणे, लोमाहार आभोग से (नारकी अपेक्षा) अनाभोग (सर्व जीव)प्रक्षेपाहार आभोग (इच्छा) से।

1. सचित्ताहारी- नारकी और देवता ये 14 दंडक अचित्ताहार करते हैं। पांच स्थावर, विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य औदारिक के 10 दण्डक तीनों प्रकार (सचित अचित मिश्र) के पुद्‌गलों का आहार करते हैं।

2. आहारार्थी- नारकी आदि 24 दंडक में आहार की इच्छा होती है।

3. कितने काल से आहारेच्छा- आहार के दो प्रकार आभोग निवर्तित, अनाभोग निवर्तित (इच्छा से, अनिच्छा से) अनाभोग निवर्तित आहारेच्छा समस्त संसारी जीवों के निरंतर होती है। आहार भी निरंतर होता रहता है। आभोग निवर्तित आहार की काल मर्यादा 24 दंडक में भिन्न भिन्न होती है। इस चार्ट से समझें-

जीव प्रकार	जघन्य	उत्कृष्ट
नारकी	असंख्यात समय का अंतर्मुहुर्त	असंख्यात समय का अन्तर्मुहुर्त
भवनपति-असुर कुमार	एक दिवस	साधिक एक हजार वर्ष
नवनिकाय-व्यंतर देव	एक दिवस	प्रत्येक दिवस (2 से 9)
ज्योतिषी	प्रत्येक दिवस	प्रत्येक दिवस (2 से 9)
पहला देव लोक	प्रत्येक दिवस	दो हजार वर्ष
दूसरा देवलोक	साधिक प्रत्येक दिवस	साधिक दो हजार वर्ष
तीसरे से सर्वार्थ सिद्ध तक	जितने सागर की आयु उतने हजार वर्ष से दो से 33 हजार वर्ष	जितने सागर आयु उतने हजार वर्ष से आहरेच्छा 7 से 33 हजार वर्ष
पांच स्थावर	निरंतर	निरंतर
तीन विकलेन्द्रिय	विमात्रा से	विमात्रा से
तिर्यंच पंचेन्द्रिय	अंतर्मुहुर्त	दो दिवस (युगलिये की अपेक्षा)
मनुष्य	अन्तर्मुहुर्त	तीन दिवस (युगलिये की अपेक्षा)

4. किन पुदगलों का आहार- नारकी- नैरयिक द्रव्य से अनन्तानन्त प्रदेशी स्कंधों का क्षेत्र से असंख्यात प्रदेशावगाढ़ पुद्गलों का **काल से** एक से दस समय संख्यात असंख्यात स्थिति वाले 12 बोलों का, **भाव से** वर्ण-गंध-रस-स्पर्श युक्त 5+2+5+8=20 बोल युक्त पुद्गल ग्रहण करते हैं, उनमें काला वर्ण में एक गुण वर्ण काला यावत अनन्त गुण काला 13 बोल होते हैं, इसी प्रकार 20 बोलों में 13 से 260 बोल होते हैं। उनके साथ 1. स्पृष्ट 2. अवगाढ़ 3. अनंतरावगाढ़ 4. सूक्ष्म 5. बादर 6. ऊंचे 7. नीचे 8. तिर्च्छे 9. आदि 10. मध्य 11. अन्त 12. स्व विषयक (स्वयं के योग्य) 13. आनुपूर्वी 14. दिशा 6 नियमा ये सब मिलाकर द्रव्य+क्षेत्र+12 काल+260 भाव+14 स्पृशादि=288 बोल का आहार करते हैं। नारकी प्रायः अशुभवर्ण (काले, नीले) दुरभिगंध, तीखा कड़वा रस, अशुभ स्पर्श (कर्कश, गुरु, शीत, रुक्ष) पुद्गलों का आहार करते हैं। उन्हें अनिष्ट, अकांत, अप्रिय, अशुभ, अमनोज्ञ, अतृप्तिकर, अनभिप्सित, अनभिलषित, गुरू और दुःख रूप परिणत करके आहार करते हैं। भविष्य में तीर्थकरादि उत्तम पदवी प्राप्त करने वाले नारक कभी भी अशुभ पुद्गलों का आहार नहीं करके शुभ परिणत कर आहार करते हें।

देवता- उपरोक्त 288 प्रकार के बोल का अधिकतर शुभ वर्ण (पीला, सफेद) शुभ गंध शुभ रस (खट्टे, मीठे) शुभ स्पर्श कोमल, लघु, स्निग्ध, उष्ण को ग्रहण करते हैं। ग्रहण किये पुद्गलों के पुराने वर्णादि नष्ट कर अपूर्व शुभ वर्णादि उत्पन्न कर इष्ट कांत प्रिय

शुभ मनोज्ञ, तृप्तिकर, अभिसिप्त, अभिलषणी, लघु, सुख रूप परिणत कर सभी आत्म प्रदेशों से आहार करते हैं।

औदारिक 10 दंडक अपने कर्मानुसार शुभाशुभ पुद्गल ग्रहण करते हैं, इष्टानिष्ट सुख दुःख रुप परिणमाते हैं। पांच स्थावर व्याघात निर्व्याघात से आहार करते हैं कभी तीन, कभी चार, कभी पांच (व्याघात हो तो) दिशा का निर्व्याघात 6 दिशा का ग्रहण करता है। ये कुल 25×288=7200 अलापक हुए।

5. सर्व आत्म प्रदेशों से आहार- नारकी आदि 24 दंडक के जीव 1. आहार लेते है 2. परिणमाते हैं 3. उच्छवास लेते हैं 4. निःश्वास छोड़ते हैं 5. बार बार आहार करता है 6. बार बार उच्छवास लेते हैं 8. छोड़ते हैं 9. अपर्याप्त अपेक्षा कदाचित् आहार लेते हैं 10. कदाचित् पचाते हैं 11. कदाचित् श्वास लेते हैं 12. कदाचित् श्वास छोड़ते हैं। 24×12=288 बोल। सर्वात्म प्रदेशों से 12 क्रिया होती है। 1 से 4 अनाभोग, 5 से 8 पर्याप्त बोल, 9 से 12 अपर्याप्त जीवों की अपेक्षा से है।

6. कितने भाग आहार कितना आस्वाद- 24 दंडक के जीव ग्रहण किये पुद्गलों में से असंख्यातवें भाग का आहार करता है, अनंतवां भाग आस्वाद करते हैं। जैसे गाय घास का पूला मुंह में लेती है, कितना ही भाग गिर जाता है, खाये में से थोड़ा आस्वादन होता है, बाकी आस्वादन किये बिना शरीर रूप परिणमन हो जाता है। पांच स्थावर के स्पर्शेन्द्रिय होती है, वे मुंह से नहीं करते स्पर्शेन्द्रिय से ग्रहण करते हैं।

7. आहार ग्रहण किये सभी का या नहीं- नारकी देवता पांच स्थावर ये 19 दंडक लोमाहार रूप ग्रहण करते हैं, ग्रहण किये सभी पुद्गलों का आहार करते हैं, इनके लोमाहार ही होता है। विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय मनुष्य में लोमाहार संपूर्ण ग्रहण होता है। प्रक्षेपाहार में बेइन्द्रिय असंख्यातवें भाग का आहार करता है, बहुत से असंख्यात भाग बिना स्पर्शे, बिना स्वाद लिए नष्ट हो जाता है। शेष का ग्रहण किये पुद्गलों में से बहुत से असंख्यात भाग का स्पर्श किये बिना, स्वाद लिये बिना, गंध लिये बिना नष्ट हो जाता है। बिना गंध लिये सबसे थोड़े, अनास्वादित पुद्गल अनंत गुणा, अस्पृष्ट अनंत गुणा।

8. परिणाम- नारकी का पंचेन्द्रिय पणे और अशुभ रूप से परिणत होते हैं, देवता के शुभ रूप से परिणत होते हैं। औदारिक के 10 दंडक के जीवों में अपनीअपनी इन्द्रियों के रूप में शुभाशुभ रूप से परिणत होते हैं।

9. एकेन्द्रियादि शरीर आदि- नारकी के जीव और 16 दंडक पंचेन्द्रिय के जीव पूर्व पर्याय की अपेक्षा एकेन्द्रिय यावत् पंचेन्द्रिय के शरीर का (छोड़े हुए शरीर का) आहार करते हैं वर्तमान में नारकी के पंचेन्द्रिय शरीर है। आहार रूप ग्रहण किये पुद्गल पंचेन्द्रिय शरीर रूप में परिणत होते है, इसलिए वे पुद्गल भी पंचेन्द्रिय शरीर कहलाते हैं। पांच स्थावर एकेन्द्रिय शरीर का, विकलेन्द्रिय को अपने प्राप्त शरीर की इन्द्रियों का आहार लेते हैं। उतने उतने शरीर का आहार करते हैं।

10. लोमाहार- नारकी, देवता, पाँच स्थावर ये 19 दंडक लोमाहारी है। तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य लोमाहारी और प्रक्षेपाहारी दोनों है।

11. ओज आहारी या मनोभक्षी- ओज आहार उत्पत्ति के देश में आहार योग्य पुद्गल समूह है, जो प्रथम समय से शरीर पर्याप्ति तक होता है यह 24 दंडक में होता है। मन में आहार की इच्छा से आहार करने वाले मनोभक्षी होते हैं देवता के 13 दंडक मनोभक्षी हैं ओज आहारी भी हैं। औदारिक में 10 दंडक के जीव ओज आहारी है। नरक भी ओज आहारी है। 11 दंडक के ये मनोभक्षी नहीं है।

सचित्त आहारादि आहार संबंधी 11 द्वार-

द्वार	नारकी	देवता	एकेन्द्रिय	विकले. ति.पं. मनुष्य
1 सचित्ताहारादि	अचित्ताहारी	अचित्ताहारी	सचित अचित मिश्र	सचित अचित मिश्र
2 आहारार्थी	हां	हां	हां	हां
3 अनाभोग/आभोग	निरंतर/ अंतर्मुहुर्त	निरंतर/जघन्य एकांतर उ. 33 हजार वर्ष	निरंतर/निरंतर	निरंतर/विकले. अंमु. तिपं. दो दिन, मनुष्य-तीन दिन
4 कैसा आहार	अशुभ	शुभ	शुभाशुभ	शुभाशुभ
5 सर्वतः / दिशा	सर्वआत्मना/6दिशा	सर्वात्मना/6दिशा	सर्वात्मना/3,4,5,6 दिशा	सर्वात्मना/6 दिशा
6 कितना भाग आहार/ आस्वादन	असं.भाग/अनंतवा भाग	असं. भाग/अनंतवा भाग	असं. भाग/अनंतवा भाग	असं. भाग/अनंतवा भाग
7 सर्वतः परिणमन	अपरिशेष परिणमन	अपरिशेष परिणमन	अपरिशेष परिणमन	लोमा. सर्वतः/ प्रक्षेपा. सं. भाग
8 परिणाम	पांच इन्द्रिय पणे अशुभ पणे	पांच इन्द्रियपणे अशुभपणे	एकेन्द्रिय शुभाशुभ पणे	2,3,4 पांच यथायोग्य इंद्रिय पणे. शुभाशुभपणे
9 पूर्व पर्यायपिक्षा एकेन्द्रियादि वर्तमान पर्याय प्रज्ञापना	एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रि के पुद्. पंचेन्द्रिय के पुद्गलों	एके. से पंचे. के पुद्. पं. पंचेन्द्रिय के पुद्गलों	एके. से पंचे. के पुद्. एकेन्द्रिय के पुद्गलों	एके. से पंचे. के पुद् यथायोग्य बे,तीन,चौरे. पुद्
10 लोमाहारिआदि	लोमाहार	लोमहार	लोमाहार	लोमाहार, प्रक्षेपाहार
11 ओजाहारिआदि	ओजाहारी	ओजाहारी, मनोभक्षी	ओजाहारी	ओजाहारी

56. आहार- (प्रज्ञापना पद 28वां उद्देशक 2) औदारिक, वैक्रिय, आहारक इन तीन शरीरों से पुद्गल ग्रहण करना आहार है।

आहार भविय सण्णी, लेसा दिट्ठी य संजय कसाए।
णाणे जोगुवओगे, वेदे य सरीर पज्जत्ती॥

आहार, भव्य, संज्ञी, लेश्या, दृष्टि, संयत, कषाय, ज्ञान, योग, उपयोग, वेद, शरीर, पर्याप्ति ये 13 द्वार से वर्णन है।

1. आहार द्वार- समुच्चय जीव 24 दंडक एक जीव की अपेक्षा कभी आहारक कभी अनाहारक, बहुत जीवों की अपेक्षा समुच्चय जीव पांच स्थावर कभी आहारक कभी अनाहारक। शेष 19 दंडक के तीन भंग 1. सभी आहारक 2. आहारक अनेक, अनाहारक एक 3. आहारक अनेक अनाहारक अनेक/ सिद्ध सभी अनाहारक हैं।

2. भव्य (भवसिद्धिक) द्वार- 24 दंडक में भवी अभवी दोनों होते हैं उनमें समुच्चय भवी और पांच स्थावर ये आहारक अनाहारक दोनों होते हैं, भंग नहीं होते, शेष 19 दंडक बहुत जीव की अपेक्षा तीन पूर्ववत् भंग है। नो भव्य नो अभव्य सिद्ध भगवान अनाहारक होते हैं।

3. संज्ञी द्वार- समुच्चय संज्ञी जीव और पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय छोड़ 16 दंडक संज्ञी जीव कभी आहारक, कभी अनाहारक होता है, बहुत जीव की अपेक्षा 3 भंग (पूर्ववत्) है। असंज्ञी जीव समुच्चय और ज्योतिषी वैमानिक छोड़ 22 दंडक कभी आहारक कभी अनाहारक होते हैं, उनमें समुच्चय और पांच स्थावर कभी आहारक कभी अनाहारक होते हैं। भंग नहीं होते। असंज्ञी, तीन विकलेन्द्रिय और तिर्यंच पंचेन्द्रिय में ऊपर कहे अनुसार तीन भंग होते हैं। असंज्ञी नैरयिक, दस भवनपति, व्यंतर और मनुष्य बहुत जीव अपेक्षा 6 भंग (1) सभी आहारक (2) सभी अनाहारक (3) आहारक एक, अनाहारक एक (4) आहारक एक, अनाहारक अनेक (5) आहारक अनेक अनाहारक एक (6) आहारक अनेक, अनाहारक अनेक। नो संज्ञी नो असंज्ञी मनुष्यों में 13-14 गुणस्थान वर्त्ती और सिद्ध होते हैं, समुच्चय जीव और मनुष्यों (अनेक) में तीन भंग (पूर्ववत्) सिद्ध सभी अनाहारक हैं।

4. लेश्या- समुच्चय एक जीव, पांच स्थावर में अभंग। शेष 19 दंडक में सलेशी में तीन भंग। कृष्ण-नील-कापोत 5 स्थावर अभंगक, शेष 19 दंडक में तीन भंग। तेजोलेश्या 18 दंडक (तेउ, वायु, तीन विकलेन्द्रिय नारकी 6 छोड़कर) आहारक अनाहारक दोनों होते हैं। बहुत जीव अपेक्षा 15 द्वार असुरकुमारादि में तीन भंग। पृथ्वी पानी वनस्पति में

(देव मरकर अपर्याप्तावस्था तक तेजोलेश्या में होते हैं) आहारक अनाहारक दोनों अशाश्वत होने से 6 भंग (पूर्ववत्)। पद्म लेश्या शुक्ल लेश्या समुच्चय जीव तीन दंडक (तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य, वैमानिक) में दोनों होते हैं। बहुत जीव अपेक्षा तीन भंग कहना। अलेशी समुच्चय जीव, मनुष्य अयोगी केवली, सिद्ध सभी अनाहारक होते हैं।

5. दृष्टि द्वार– सम्यगदृष्टि समुच्चय एक और 19 दंडक (5 स्थावर छोड़) आहारक अनाहारक दोनों। उनमें से बहुत जीव अपेक्षा 16 दंडक (तीन विकलेन्द्रिय छोड़) में तीन भंग, विकलेन्द्रिय में 6 भंग कहना। उन्हें अपर्याप्तावस्था में सास्वादन समकित अल्प जीवों को अल्पकाल के लिए होती है। सिद्ध अनाहारक है।

मिथ्यादृष्टि– समुच्चजीव पांच स्थावर छोड़ 19 दंडक में तीन भंग (बहुत जीवों में) मिश्र दृष्टि समुच्चय जीव और पंचेन्द्रिय के 16 दंडक आहारक ही होते हैं। मिश्र दृष्टि पर्याप्तों में ही होती है।

6. संयत द्वार– संयत– समुच्चय जीव और मनुष्यों में तीन भंग, संयत में केवली समुद्घात और अयोगी अवस्था में अनाहारक भाव होता है। संयतासंयत- समुच्चय जीवों, तिर्यंच पंचेन्द्रिय आहारक ही होते हैं, पर्याप्तावस्था में होते है। श्रावक में केवल ज्ञान नहीं होता अतः अनाहारक नहीं होते। असंयत समुच्चय जीव 24 दंडक दोनों होते हैं। एकेन्द्रिय छोड़ शेष 19 दंडक बहुत जीवापेक्षा तीन भंग, स्थावरों में भंग नहीं होते। नो संयत नो असंयत नो संयतासंयत समुच्चय जीव और सिद्ध अनाहारक होते हैं।

7. कषाय द्वार– समुच्चय जीव, पांच स्थावर बहुत की अपेक्षा अभंग, 19 दंडक में तीन भंग। चार कषाय में लोभ मान माया नारकी में तथा क्रोध मान माया देवता में 6-6 भंग। नारकी देवता में तीन तीन कषाय अशाश्वत है। शेष पांच दंडक तीन तीन भंग। लोभ कषाय 18 दंडक में तीन तीन भंग। अकषायी जीव में एक भंग मनुष्य में तीन भंग, सिद्ध भगवान अनाहारक। नारकी में क्रोध, देवों में लोभ कषाय शाश्वत है।

8. ज्ञान द्वार– सज्ञानी, मति, श्रुत, अवधिज्ञानी- समुच्चय जीव, नारकी, देवता, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य इनमें तीन-तीन भंग, तीन विकलेन्द्रिय में 6 भंग। 19 दंडक बहुत की अपेक्षा। अवधि ज्ञानी में 15 दंडक (तीन विकलेन्द्रिय छूटे, तिर्यंच पंचेन्द्रिय आहारक होते हैं) में तीन भंग। मनःपर्यवज्ञानी- आहारक (मनुष्यों) ही होते हैं। केवल ज्ञानी मनुष्यों में तीन भंग। सिद्धों को अनाहारक कहना। समुच्चय अज्ञानी, मतिश्रुत अज्ञानी समुच्चय जीवों, पांच स्थावरों को अभंगक, 19 दंडक में तीन भंग कहना। विभंग

ज्ञानी- समुच्चय जीवों नारकी देवता के 14 दंडकों में बहुत की अपेक्षा तीन भंग। मनुष्य तिर्यंचों में आहारक ही होते हैं।

9. योग द्वार– सयोगी और काय योगी समुच्चय जीवों, पांच स्थावर छोड़ 19 दंडकों में तीन भंग। मन योगी वचन योगी आहारक ही होते हैं, अयोगी अनाहारक ही होते हैं।

10. उपयोग द्वार– साकार अनाकारोपयोगी पूर्ववत् 19 दंडक में तीन भंग, सिद्ध अनाहारक होते हैं।

11. वेद द्वार– बहुत जीव की अपेक्षा (एक जीव में दोनों समझना) समुच्चय जीव और पांच स्थावरों में भंग नहीं। सवेदी और नपुंसक वेदी बहुत जीवों 11 में 5 स्थावर छोड़ 6 दंडक (तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य, नारकी) में तीन भंग। स्त्रीवेदी पुरुष वेदी समुच्चय जीवों और 15 दंडकों (13 देवता, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य) में तीन भंग। अवेदी समुच्चय जीवों और मनुष्यों में तीन भंग, सिद्ध भगवान एक और अनेक अनाहारक सभी जगह समझे।

12. शरीर द्वार– समुच्चय एक-अनेक, पांच स्थावर अनेक अभंग, शेष 19 दंडक में अनेक में तीन भंग। औदारिक में बहुत जीवों में मनुष्यों में तीन भंग, शेष 9 दंडक में अभंग (मनुष्यों में केवली समुद्घात और अयोगी अवस्था अनाहारक होते हैं अतः तीन भंग कहे) वैक्रिय में 17 दंडक आहारक ही होते हैं। आहारक में मनुष्य भी आहारक ही होते हैं। तैजस कार्मण शरीरी में समुच्चय जीवों पांच स्थावरों को छोड़ 19 दंडक में तीन भंग होते हैं। अशरीरी सिद्ध भगवान अनाहारक होते हैं।

13. पर्याप्ति द्वार– छहों पर्याप्ति के पर्याप्त मनुष्य छोड़ शेष 23 दंडक अभंग, मनुष्यों में औदारिक शरीर जैसे तीन भंग। आहार पर्याप्ति के अपर्याप्त अनाहारक होते हैं, विग्रह गति में होते हैं। शरीरादि शेष पांच पर्याप्ति शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छवास (24 दंडक) भाषामनः पर्याप्ति (16 दंडक पंचेन्द्रिय के) समुच्चय और स्थावरों को छोड़ तीन विकलेन्द्रियों तिर्यंच पंचेन्द्रियों में तीन-तीन भंग। नारक, देव मनुष्य (15 दंडक) में 6-6 भंग होते हैं। नारक देव मनुष्यों के उत्पत्ति का विरहकाल, अपर्याप्त अवस्था से ज्यादा (काल) है, अतः अपर्याप्त जीव हमेशा नहीं होते, इसलिए अपर्याप्ता में आहारक अनाहारक दोनों अशाश्वत होने से 6 भंग कहे हैं।

अनेक जीवों की अपेक्षा 13 द्वारों में आहारक अनाहारक- (समुच्चय एक जीव पांच स्थावर अभंग होते हैं।)

	जीव	आहारक	अनाहारक	भंग
1	**जीव द्वार-** समुच्चय जीव/पांच स्थावर जीवों	✔	✔	अभंग
	19 दंडक के जीव	✔	विकल्प	तीन भंग
2	**भवी द्वार-** भवसिद्धिक समुच्चय जीवों/पांच स्थावरों/दोनों के अभवी	✔	✔	अभंग
	भवसिद्धिक 19 दंडक के जीवों/अभवी	✔	विकल्प	तीन भंग
3	**संज्ञी द्वार** संज्ञी समुच्चय और 16 दंडक जीवों/तीन विकलेन्द्रिय असं. ति.पं.	✔	विकल्प	तीन भंग
	असंज्ञी समुच्चय और पांच स्थावरों/ नो संज्ञी नो असंज्ञी समु.	✔	✔	अभंग
	असंज्ञी नारकी, भवनपति, व्यंतर, समुच्छिम मनुष्यों	विकल्प	विकल्प	6 भंग
	नो संज्ञी नो असंज्ञी मनुष्यों	✔	विकल्प	तीन भंग
4	**लेश्या द्वार-** सलेशी समुच्चय, पांच स्थावरों, कृष्ण नील कापोत पांच स्थावर	✔	✔	अभंग
	सलेशी 19 दंडक, यथायोग्य लेशी 19 दंडक	✔	विकल्प	तीन भंग
	तेजोलेशी पृथ्वी पानी वनस्पति	विकल्प	विकल्प	6 भंग
5	**दृष्टि द्वार-** समदृष्टि समुच्चय, मिथ्यादृष्टि समुच्चय और पांच स्थावर	✔	✔	अभंग
	समदृष्टि नारक, देव, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य/मिथ्यादृष्टि 19 दंडक के जीव	✔	विकल्प	तीन भंग
	समदृष्टि विकलेन्द्रिय	विकल्प	विकल्प	6 भंग
	मिश्रदृष्टि समुच्चय और 16 (पंचेन्द्रिय) के दंडक	✔	✘	-
6	**संयत द्वार-** संयत समुच्चय और मनुष्यों/19 दंडक के असंयत जीवों	✔	विकल्प	तीन भंग
	संयतासंयत समुच्चय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्यों	✔	✘	-
	असंयत समुच्चय, पांच स्थावर	✔	✔	अभंग
7	**कषाय द्वार-** सकषाय समु., पांच स्थावर/क्रोधादि 4 कषाय ये दोनों/अकषायी समु.	✔	✔	अभंग
	सकषाय 19 दंडक/क्रोधादि 4 कषाय, विकलेन्द्रिय, ति.पं. मनुष्य/क्रोध नारकी	✔	विकल्प	तीन भंग
	लोभ युक्त देव/ अकषायी मनुष्य	✔	विकल्प	तीन भंग
	मान, माया, लोभ नारकी/ क्रोध मान माया के देवों	विकल्प	विकल्प	6 भंग
8	**ज्ञान द्वार-** समुच्चय ज्ञानी/केवल ज्ञानी समुच्चय जीवों	✔	✔	अभंग
	मतिश्रुत ज्ञान समुच्चय, 16 दंडक (पंचे.)/अवधि ज्ञानी, समु. नारक, देव, मनुष्य	✔	विकल्प	तीन भंग
	अवधि ज्ञान तिर्यंच पंचेन्द्रिय/ मनः पर्यवज्ञानी समुच्चय और मनुष्य	✔	✘	-
	मति श्रुत ज्ञानी विकलेन्द्रिय	विकल्प	विकल्प	6 भंग
	अज्ञानी, मतिश्रुत अज्ञानी समुच्चय, और स्थावरों	✔	✔	अभंग
	केवली मनुष्य/ अज्ञानी 19 दंडक के जीव/विभंग ज्ञानी समुच्चय, नारकी देवों	✔	विकल्प	तीन भंग
	विभंग ज्ञानी तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्यों	✔	✘	-
9.	**योगद्वार-** सयोगी समुच्चय, पांच स्थावरों, काययोगी जीवों, स्थावरों	✔	✔	अभंग
	सयोगी 19 दंडक जीवों/काययोगी 19 दंडक जीवों	✔	विकल्प	तीन भंग
	मनयोगी समुच्चय, 16 दंडक (पंचे.), वचनयोगी समुच्चय, 19 दंडक	✔	✘	-
	अयोगी जीव, मनुष्य, सिद्ध	✘	✔	-
10	**उपयोग द्वार-** साकार, अनाकारोपयोगी, समुच्चय, पांच स्थावरो	✔	✔	अभंग
	19 दंडक के जीवों	✔	विकल्प	तीन भंग
11	**वेद द्वार-** सवेदी समुच्चय, स्थावर/ नपुंसक समुच्चय, स्थावर/अवेदी समुच्चय	✔	✔	अभंग
	सवेदी19 दंडक जीव/नपुंसक नारकी,विक.,तिपं.,मनुष्य/स्त्री पुरुष समु.15 दं. जीव	✔	विकल्प	तीन भंग
	अवेदी मनुष्य	✔	विकल्प	तीन भंग
12	**शरीर द्वार-** सशरीर समु., स्थावर/तैजस कार्मण शरीरी समुच्चय, स्थावर	✔	✔	अभंग
	सशरीरी 19 दंडक/ औदारिक समुच्चय, मनुष्य/तैजस कार्मण 19 दंडक के जीव	✔	विकल्प	तीन भंग
	औदारिक स्थावर, विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय/वैक्रिय जीवों, 16 दंडक, वायुकाय	✔	✘	-
	आहारक शरीरी जीवों, मनुष्यों	✔	✘	-

13	**पर्याप्ति द्वार-** पर्याप्ता जीवों, समु., मनुष्यों। शरीर के अपर्याप्त जीवों, 24 दंडक	✔	विकल्प	तीन भंग
	पर्याप्त 23 दंडक के जीवों	✔	✘	-
	आहार पर्याप्ति से अपर्याप्त 24 दंडक और समुच्चय जीवो	✘	✔	-
	इन्द्रिय, श्वासो.,भाषा,मनः पर्याप्ति से अपर्याप्त स्थावरो	✔	✔	अभंग
	इन्द्रिय, श्वासो.,भाषा,मनः पर्याप्ति से अपर्याप्त तीन विकलेन्द्रिय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय	✔	विकल्प	तीन भंग
	इन 4 पर्याप्ति से अपर्याप्त नारकी, देवों, मनुष्यों	विकल्प	विकल्प	6 भंग

विशेष- सिद्ध भगवान एक और अनेक अनाहारक ही होते हैं, अतः चार्ट में उन्हें यथास्थान समझना।

57. उपयोग (प्रज्ञापना सूत्र पद 29) जीव को वस्तु की जानकारी जिस प्रकृति से होती है, वह उपयोग है। उपयोग 2 प्रकार के साकार, अनाकार। साकार के 8 भेद- 5 ज्ञान, तीन अज्ञान। अनाकार के 4 भेद- चक्षु दर्शन, अचक्षु दर्शन, अवधि दर्शन, केवल दर्शन। समुच्चय जीव में दोनों उपयोग पाते हैं विशेष कि जब ज्ञान, अज्ञान के उपयोग में होता है तब साकार और दर्शन के उपयोग में होता है तब अनाकारोपयोग में होता है। दंडकों में उपयोग-

नारकी/देवता में 9 उपयोग	तीन ज्ञान	तीन अज्ञान	3 दर्शन
पांच स्थावरों में 3	-	2 अज्ञान	1 दर्शन
तीन विकलेन्द्रिय 5/6	2 ज्ञान	2 अज्ञान	1 दर्शन/2 दर्शन (चतुरिन्द्रिय में)
तिर्यंच पंचेन्द्रिय 9	तीन ज्ञान	तीन अज्ञान	3 दर्शन
मनुष्य में 12	पांच ज्ञान	तीन अज्ञान	4 दर्शन

58. पश्यत्ता पद (प्रज्ञापना पद 30वां) यह शब्द दृशिर् धातु से बना है, परन्तु यहां पश्यत्तो भावः पश्यता। त्रैकालिक और स्पष्ट दर्शन रूप बोध को पश्यता कहा है। दो भेद है- साकार, अनाकार पश्यता। साकार के 6 भेद-4 ज्ञान-श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान केवल ज्ञान। 2 अज्ञान-श्रुत और विभंग ज्ञान। अनाकार के 3 भेद- चक्षु दर्शन, अवधि दर्शन, केवल दर्शन। उपयोग में वर्त्तमान कालिक और त्रैकालिक दोनों बोध ग्रहण होता है, पश्यता में त्रैकालिक ही ग्रहण होता है। मतिज्ञान, मतिअज्ञान, अचक्षु दर्शन ये तीनों पश्यता में नहीं होते। ये सामान्य भाव और आत्म भाव में होते हैं अतः यहां नहीं गिना है। ये तीनों बुद्धि ग्राह्य है। श्रुतज्ञानादि 4 ज्ञान, श्रुत अज्ञान, विभंग ज्ञान त्रैकालिक दीर्घकालिक बोध होने से अतीत, अनागत भावों को जान सकते हैं अतः साकार पश्यता तथा स्पष्टतर दर्शन चक्षु, अवधि, केवल दर्शन से होता है अन्य इन्द्रियों या मन से पदार्थ का स्पष्ट दर्शन नहीं होता अतः इन्हें अनाकार दर्शन पश्यता कहा है।

उपयोग	पश्यता (अन्तर)
साकारोपयोग त्रैकालिक, वर्त्तमान कालिक दोनों भाव जाने	साकार पश्यता त्रैकालिक भाव जाने (मात्र वर्तमान के ही नहीं)
अनाकारोपयोग स्पष्ट स्पष्टतर दोनों प्रकार के भाव जाने	अनाकार पश्यता स्पष्टतर भाव ही जाने
उपयोग के 12 भेद साकार के 8, अनाकार के 4	पश्यता के 9 भेद-साकार के 6, अनाकार के 3

नारकी देव और संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय में चार साकार पश्यता श्रुत ज्ञान, अवधि ज्ञान, श्रुत अज्ञान, विभंग ज्ञान। 2 अनाकार चक्षु दर्शन अवधि दर्शन पश्यता होती है। पांच स्थावरों में साकार पश्यता एक श्रुत अज्ञान। बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय को श्रुतज्ञान, श्रुत अज्ञान दो पश्यता साकार। चौरेन्द्रिय असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय को श्रुत ज्ञान श्रुत अज्ञान दो साकार और चक्षु दर्शन अनाकार पश्यता कुल 3 भेद। सम्मुर्च्छिम मनुष्य में श्रुत अज्ञान, चक्षु दर्शन दो भेद। युगलिक मनुष्यों को श्रुत ज्ञान, श्रुत अज्ञान, चक्षु दर्शन ये तीन भेद। कर्म भूमिज मनुष्यों को चार ज्ञान, दो अज्ञान, तीन दर्शन रूप 9 भेद पाते हैं। सिद्ध में दो केवल ज्ञान, केवल दर्शन।

जीव प्रकार (24 दंडक में)	उपयोग			पश्यता		
	साकार	अनाकार	कुल	साकार	अनाकार	कुल
समु.जीव, कर्म भूमिज गर्भज मनुष्य	8(5 ज्ञान 3 अज्ञान)	4 दर्शन	12	6 (4 ज्ञान 2 अज्ञान)	3 दर्शन	9
नारकी, देवता, संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय	6 (3 ज्ञान 3 अज्ञान)	3 दर्शन	9	4 (2 ज्ञान 2 अज्ञान)	2 दर्शन	6
पांच स्थावर	2 अज्ञान	1 दर्शन अचक्षु	3	1 श्रुत अज्ञान	×	1
बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय	4 (2 ज्ञान 2अ.)	1 अचक्षु दर्शन	5	2(श्रुत ज्ञान,श्रु.अ.)	×	2
चौरेन्द्रिय असंज्ञी ति.पंचेन्द्रिय	4 (2 ज्ञान 2 अज्ञान)	2 दर्शन	6	2 (श्रुत ज्ञान, अज्ञान)	1 चक्षु दर्शन	3
समुच्छिम मनुष्य	2 अज्ञान	2 दर्शन	4	श्रुत अज्ञान	1 चक्षु दर्शन	2
युगलिक मनुष्य	4 (2 ज्ञान 2 अज्ञान)	2 दर्शन	6	2 (श्रुत ज्ञान, अज्ञान)	1 चक्षु दर्शन	3

24 दंडक में 9 पश्यता- (मतिज्ञान, मति अज्ञान, अचक्षु दर्शन नहीं होते)

जीव	साकार पश्यता	अनाकार पश्यता	कुल	विगत
समुच्चय जीव	6 (4 ज्ञान, 2 अज्ञान)	3 दर्शन	9	सभी दंडक जीवों का समावेश होने से सभी 9 पश्यता
नारकी,देवता,संज्ञी ति.पं.	4 (2 ज्ञान, 2 अज्ञान)	2 (चक्षु अवधि)	6	मनःपर्यव, केवल ज्ञान, केवल दर्शन नहीं होते
पांच स्थावर	1 श्रुत अज्ञान	-	1	उपयोग तीन, पश्यता एक ही होती है।
बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय	2 (श्रुतज्ञान, अज्ञान)	-	2	उपयोग पांच, पश्यता दो ही 1 ज्ञान, 1 अज्ञान (श्रुत)
चौरेन्द्रिय, असंज्ञी ति.पं.	2 (श्रुत ज्ञान, अज्ञान)	1 चक्षु	3	इसमें चक्षु दर्शन बढ़ा
कर्मभूमिज मनुष्य	6 (4 ज्ञान, 2 अज्ञान)	3 सभी	9	सभी गुण स्थान होने से सभी 9 पश्यता
समुर्च्छिम मनुष्य	1 श्रुत अज्ञान	1 चक्षु दर्शन	2	उपयोग चार, पश्यता 2 होती है।
युगलिक मनुष्य	2 (श्रुतज्ञान, अज्ञान)	1 चक्षु दर्शन	3	उपयोग 6, पश्यता तीन होती है।

नेरियतिरिय मणुया य, वणयरग सुराई सण्णी असण्णीय।
विगलिंदिया असण्णी, जोइस वेमाणिया सण्णी॥

59. संज्ञी पद (प्रज्ञापना पद 31वां) जिन जीवों को भूत, वर्त्तमान, भविष्य की

सम्यक् विचारणा, मनोवृत्ति, वैचारिक शक्ति हो, विशिष्ट स्मरणादि रूप मनोविज्ञान हो, मन सहित जीवों को संज्ञी कहते हैं। जो मनोविज्ञान से रहित हो, मनोवृत्ति का अभाव है वे असंज्ञी। दोनों से अतीत केवली, सिद्ध जीव नो संज्ञी नो असंज्ञी होते हैं। संज्ञी में से आकर संज्ञीपन से उत्पन्न हो वे संज्ञी, असंज्ञी में से तथा असंज्ञीपने में उत्पन्न होने वाले असंज्ञी। ज्योतिषी वैमानिक असंज्ञी में से नहीं आते संज्ञी में से संज्ञी ही उत्पन्न होते हैं। नारकी, भवनपति व्यंतर, तिर्यंच पंचेन्द्रिय मनुष्य दोनों संज्ञी असंज्ञी में से उत्पन्न होते है, अतः उन्हें संज्ञी असंज्ञी दोनों कहा है। पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय असंज्ञी है।

24 दंडक में संज्ञी असंज्ञी-

जीव भेद	संज्ञी	असंज्ञी	नो संज्ञी नो असंज्ञी
समुच्चय जीव	✔	✔	✔
प्रथम नरक के अपर्याप्त भवनपति व्यंतर अपर्याप्ता	✔	✔	✘
पहली नरक के पर्याप्ता, दो से सात नरक के पर्याप्त अपर्याप्ता	✔	✘	✘
भवनपति, व्यंतर के पर्याप्ता संज्ञी ति.पं. युगलिक मनुष्य	✔	✘	✘
ज्योतिषी वैमानिक देवों के पर्याप्ता अपर्याप्ता	✔	✘	✘
पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय असंज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय	✘	✔	✘
कर्मभूमिज गर्भज मनुष्य	✔	✘	✔
समुर्च्छिम मनुष्य	✘	✔	✘
सिद्ध भगवान	✘	✘	✔

60 संयती पद (प्रज्ञापना पद 32)

संजय असंजय मीसगा य, जीवा तहेव मणुया य।
संजय रहिया तिरिया, सेसा अस्संजता होंति॥

संयत- सावद्य योगों से सम्यग्पूर्वक निवृत, हिंसादिपाप स्थानकों से निवृत, निरवद्य योग में प्रवृत्ते, पांच महाव्रतधारी संयत होते हैं। **असंयत-** इनसे विपरीत, सावद्य योग में रहे जीव। **संयतासंयत-** हिंसादि पापों से आंशिक रूप से विरत, आंशिक अविरत संयतासंयत। **नो संयत नो असंयत नो संयतासंयत**- जो जीव उपरोक्त तीनों अवस्थाओं से रहित हों वे सिद्ध भगवान।

समुच्चय जीव में सिद्ध भगवान का समावेश हो जाने से चारों प्रकार पाये जाते हैं। तिर्यंच पंचेन्द्रिय में पांचवा गुणस्थान होता है अतः असंयत और संयतासंयत होते हैं। मनुष्यों में समुर्च्छिम और एकान्तमिथ्यात्वी असंयत, युगलिक के भी 4 गुण स्थान होने से असंयत, गर्भज मनुष्य में प्रथम तीन प्रकार। पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय असंयत।

नारक देव चार गुण स्थान होने से असंयत। सिद्ध नो संयत नो असंयत नो संयतासंयत होते हैं।

24 दंडक में संयत आदि

जीव भेद	संयत	असंयत	संयता संयत	नो सं.नो असं. नो संयतासंयत
समुच्चय जीव	✔	✔	✔	✔
22 दंडक, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य छोड़कर	✘	✔	✘	✘
तिर्यंच पंचेन्द्रिय	✘	✔	✔	✘
मनुष्य	✔	✔	✔	✘
सिद्ध भगवान	✘	✘	✘	✔

61. **अवधि पद (प्रज्ञापना पद 33वां)**

भेद विसय संठाणे, अब्भिंतर बाहिरे य दे सोही।
ओहिस्स य खय वुड्ढी, पडिवाई चेव अपडिवाई॥

आठ द्वारों से अवधि ज्ञान का वर्णन है 1. भेद 2. विषय 3. संस्थान 4. आभ्यंतर बाह्य 5. देश सर्व अवधि 6. हीयमान वर्द्धमान अवस्थित 7. अनुगामी अनानुगामी 8. प्रतिपाती अप्रतिपाती द्वार।

1. भेद द्वार- दो भेद हैं- भव प्रत्यय नारकी देवों के, क्षयोपशमिक मनुष्य, तिर्यंच पंचेन्द्रिय को होता है।

2. विषय द्वार- नारकी का जघन्य आधाकोश उत्कृष्ट चारकोश है-

नाम	जघन्य विषय	उत्कृष्ट विषय
रत्न प्रभा	साढ़े तीन कोश	चारकोश यों क्रमशः आधा-आधा कोश कम करते जाना है
	7वी नरक में ज. आधा कोश	उत्कृष्ट एक कोश अवधिज्ञान का विषय है।
असुर कुमार देव	पच्चीस योजन	असंख्यात द्वीप समुद्र
असुर कुमार (पल्योपम आयु)	पच्चीस योजन	संख्याता द्वीप समुद्र
असुर कुमार (आधा से एक सागर)	पच्चीस योजन	असंख्याता द्वीप समुद्र
नवनिकाय, व्यंतर	पच्चीस योजन	संख्याता द्वीप समुद्र
तिर्यंच पंचेन्द्रिय	अंगुल के असं. भाग	असंख्याता द्वीप समुद्र
मनुष्य	अंगुल के असं. भाग	संपूर्ण लोक (अलोक में असंख्य लोक प्रमाण क्षमता है।)
ज्योतिषी	संख्यात द्वीप समुद्र	संख्यात द्वीप समुद्र
पहले दूसरे देवलोक	अंगुल के असंख्यातवें भाग	नीचे रत्नप्रभा चरमांत तीर्च्छे असं.द्वीप समुद्र, ऊपर स्वयं के विमान पताका
तीसरे चौथे देवलोक	अंगुल के असंख्यातवें भाग	उपरोक्त प्रमाण में नीचे दूसरी नरक के चरमांत तक (अधिक)
पांचवे छठे देवलोक	अंगुल के असंख्यातवें भाग	उपरोक्त में अधिक तीसरी नरक के चरमांत तक
सातवे आठवें देवलोक	अंगुल के असंख्यातवें भाग	उपरोक्त में चौथी नरक का चरमांत अधिक
नवमें से बारहवे देवलोक	अंगुल के असंख्यातवें भाग	उपरोक्त में पांचवी नरक का चरमांत जुड़ा
नवग्रैवे. पहली दूसरी (नीचे से) त्रिक	अंगुल के असंख्यातवें भाग	उपरोक्त में छठी नरक का चरमांत तक जुड़ा
नवग्रैवेयक ऊपर की त्रिक	अंगुल के असंख्यातवें भाग	उपरोक्त में सातवी नरक का चरमांत तक जुड़ा
पांच अणुत्तर विमान	अंगुल के असंख्यातवें भाग	अपनी ध्वजा पताका से ऊपर का छोड़ सम्पूर्ण लोक जानते देखते हैं।

3. संस्थान द्वार- नारकी का तिपाई नावा आकार का, भवनपति का चोकोन (पल्लक) आकार का। तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य का नाना प्रकार (भिन्न-भिन्न) का होता है। व्यंतरों के ढ़ोल सरीखा, ज्योतिषीयों के झालर जैसा, बारह देवलोक के खड़ी मृदंग जैसा, नव ग्रैवेयक के फूलों की चंगेरी (गूंथे हुए फूलों के शिखर) अणुत्तर विमानों के जवनालिका (कन्या की चोली कंचुक) जैसा होता है।

4. आभ्यन्तर बाह्य द्वार- जो निरंतर और अपने योग्य क्षेत्र को सभी दिशा में जाने वह आभ्यंतर और जो बार बार विच्छिन्न हो जाता है, वह बाह्य अवधि ज्ञान है। आभ्यंतर जन्म से, बाह्य बाद में पीछे से उत्पन्न होता है। नारकी देवता 14 दंडकों में आभ्यंतर, तिर्यंच में बाह्य होता है। मनुष्य में दोनों होते हैं।

5. देश अवधि सर्व अवधि- नारकी देवता तिर्यंच पंचेन्द्रिय देश अवधि (परमावधि से छोटा) मनुष्य में दोनों।

6. हीयमान, वर्द्धमान, अवस्थित अनवस्थित- क्रमशः घटने वाला, बढ़ने वाला, स्थिर, एक सरीखा नहीं रहने वाला। नारकी देवता 14 दंडकों में अनवस्थित (एक सरीखा नहीं) अवधि ज्ञान, तिर्यंच पंचेन्द्रिय मनुष्यों में चार प्रकार का होता है।

7. अनुगामी अनानुगामी- जो ज्ञानी के साथ जाता है अनुगामी। जो ज्ञानी के साथ नहीं जाता, ज्ञानी के वापस आने पर पुनः हो जाता है। वह अनुगामी। जैसे दीपक लेकर पुरुष जाता है, तो प्रकाश साथ जाता है। धूणी का प्रकाश धूनी के आसपास ही रहता है। नारकी देवता के 14 दंडकों में अनुगामी तथा तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य में अनुगामी अनानुगामी दोनों होते हैं।

8. प्रतिपाती अप्रतिपाती द्वार- गिरने वाला प्रतिपाती, भव पर्यंत स्थिर और अलोक को देखने वाला अप्रतिपाती। नारकी देवता में अप्रतिपाती, तिर्यच पंचेन्द्रिय और मनुष्य में दोनों प्रकार का होता है।

62. परिचारणा पद (प्रज्ञापना पद 34वां)-

अणंतरगयाहारे, आहारे भोयणा इय।
पोग्गला नेव जाणंति, अज्झावसाणा य अहिया ॥1॥

सम्मत स्साहिगमे, तत्तो परियारणा य बोद्धव्वा।
काए फासे रूवे, सद्दे य मणे य अप्प बहुं ॥2॥

परिचारणा का अर्थ- मैथुन सेवन, इन्द्रियों का काम भोग, काम क्रीड़ा रति विषय भोग आदि है, प्रवीचारणा भी कहते हैं।

सात द्वार से वर्णन है- 1. अनन्तरागत आहार द्वार 2. आभोग-अनाभोग 3. पुद्गल ज्ञान द्वार 4. अध्यवसाय द्वार 5. सम्यक्त्व अभिगम द्वार 6. परिचारणा द्वार 7. अल्प बहुत्व द्वार (काय, शब्द, रूप, स्पर्शादि)

1. अनन्तरागत आहार द्वार- कोई भी जीव उत्पन्न होते ही ओज आहार करता है। नारकी के जीव उत्पन्न होते ही आहार करते हैं, फिर शरीर बनाते हैं, फिर पुद्गलों का पर्यादान (ग्रहण) करते हैं, इन्द्रियादि रूप ग्रहण करते हैं। फिर शब्दादि विषय भोग रूप परिचारणा करते हैं और फिर वैक्रिय करते हैं। इसी तरह वायुकाय, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य भी करते हैं। चार स्थावर तीन विकलेन्द्रिय 7 दंडक में वैक्रिय नहीं होता शेष उसी प्रकार कहना। देवता के 13 दंडक नारकी वत् कहना किन्तु देव पहले वैक्रिय करते, फिर परिचारणा करते हैं।

2. आभोग-अनाभोग आहार द्वार- जीवों का आहार आभोग निवर्तित, अनाभोग निवर्तित। पांच स्थावर में अनाभोग निवर्तित। शेष 19 दंडक में आभोग-अनाभोग दोनों प्रकार का आहार होता है।

3. पुद्गल ज्ञान द्वार- यहां भंग है 1. जानते हैं, देखते हैं आहार करते हैं 2. जानते नहीं देखते हैं आहार करते हैं 3. जानते हैं देखते नहीं आहार करते हैं 4. जानते-देखते नहीं आहार करते हैं। नरक, भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी, पांच स्थावर, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय ये 20 दंडक के जीव पुदगलों को जानते नहीं, देखते नहीं, आहार करते हैं। नारक और देवों में लोमाहार है, लोमाहार पुद्गल अत्यंत सूक्ष्म होने से वे अवधि ज्ञान का विषय नहीं होने से जानते नहीं चक्षु के अविषय होने से देखते नहीं। पांच स्थावर देखते नहीं जानते भी नहीं। बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय में स्पष्ट ज्ञान नहीं होता नेत्र भी नहीं होते। चौरेन्द्रिय में दो भंग जानते नहीं देखते हैं आहार करते हैं 2. जानते नहीं, चक्षुइन्द्रिय के उपयोग रहित होने से देखते भी नहीं, आहार करते हैं।

तिर्यंच पंचेन्द्रियों मनुष्यों में विशिष्ट ज्ञान और चक्षु इन्द्रिय के उपयोग से चारों भंग घटित होते हैं। वैमानिक देवों में दो भेद मायी मिथ्यादृष्टि जानते देखते नहीं आहार करते हैं। अमायी सम्यक् दृष्टि के दो भेद अनंतरोपपन्नक (प्रथम समय उत्पन्न) ये जानते देखते नहीं आहार करते हैं। परम्परोपपन्नक के दो भेद अपर्याप्त- पर्याप्त अवधि ज्ञान

नहीं होने से जानते देखते नहीं आहार करते हैं। पर्याप्त वैमानिक देव दो प्रकार के उपयोग रहित देव जानते देखते नहीं आहार करते हैं, उपयोग सहित देव जानते हैं देखते हैं आहार करते हैं।

4. अध्यवसाय द्वार- 24 दंडक के जीवों में असंख्यात अध्यवसाय होते हैं। शुभ भी अशुभ भी दोनों होते हैं।

5. सम्यक्त्व अभिगम द्वार- नारकी, देवता, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य ये 16 दंडक सम्यक्त्व, मिथ्यात्व, मिश्र तीनों अभिगम प्राप्त करने वाले होते हैं। पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय मिथ्यात्व को प्राप्त करने वाले होते हैं।

6. परिचारणा द्वार- देवों में 1. भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी, पहला दूसरा देवलोक के देवता सदेवी सपरिचार होते हैं। 2. तीसरी से 12वें देवलोक के देव देवी रहित परिचाारणा सहित होते हैं। 3. नव ग्रैवेयक, अणुत्तर विमान के देव देवी रहित परिचारणा रहित होते हैं। 4. कोई भी देव देवी सहित और परिचारणा रहित नहीं होते।

परिचाारणा के प्रकार- पांच प्रकार है कायिक, स्पर्श, रूप, शब्द, मन परिचारणा। भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी पहला दूसरा देवलोक के देव मनुष्यों की तरह काया द्वारा मैथुन सेवन करते हैं। तीसरे चौथे के देवियों के स्पर्श से, पांचवे छठे के देव देवियों के रूप से, सातवें आठवें के देव देवियों के शब्द से, नवमें से बारहवें के देव मन की परिचाारणा वाले होते हैं। नव ग्रैवेयक अणुत्तर देव अपरिचारी होते हैं। कायिक परिचारणा वाले देवों की इच्छा जानकर देवियां वस्त्राभूषणों से सुसज्जित, शोभित, मनोज्ञ, मनोहर उत्तर वैक्रिय कर रूप की विकुर्वणा कर उपस्थित होती है। देव देवियों के साथ मनुष्यों की तरह काया से मैथुन सेवन करते हैं, देवों के शुक्रपुदगल देवी में जाते हैं, वहां गर्भाधान नहीं होता, वे पुद्गल शरीर में पांचों इन्द्रिय पणे, ईष्ट कांत मनोहर रूप लावण्य यौवन में परिणत होते हैं। स्पर्श परिचारणा में तीसरे चौथे देवलोक में क्रमशः पहले दूसरे देवलोक की अपरिग्रहीता देवियों को बुलाते हैं- उनके स्पर्श, आलिंगन मर्दन आदि स्पर्श से ही विषय सेवन करते हैं। इससे आगे रूप, शब्द, मन परिचाारणा में देवियों के दिव्य प्रभाव से ही देवों के शुक्र पुद्गल संक्रांत होते हैं रूप शब्द में देवियां न समीप न दूर उपस्थित होकर परिचारणा की जाती है, मन परिचारणा में देवियां अपने स्थान पर ही परम संतोषजनक अनुपम उच्च नीच मनोभाव धारण किये रहते ही परिचारणा कर लेते हैं। आगे चार्ट में देवलोक में जाने वाली अपरिग्रहिता देवियों का वर्णन किया है।

7. अल्प बहुत्व- 1. सबसे थोड़े देवता परिचारणा नहीं करने वाले 2. मन की परिचारणा वाले संख्यात गुणा 3. शब्द परिचारणा वाले देव असंख्यात गुणा 4. रूप परिचारणा वाले असंख्यात गुणा 5. स्पर्श परिचारणा वाले असंख्यात गुणा 6. काय परिचारणा वाले देव असंख्यात गुणा।

सुख की अपेक्षा से परिचारणा का अल्प बहुत्व- 1. सबसे कम सुख काय परिचारणा वालों का 2. उससे स्पर्श परिचारणा वालों का सुख अनंत गुणा 3. रूप परिचारणा वालों का सुख अनंत गुणा 4. शब्द परिचारणा वालों का सुख अनंत गुणा 5. मन परिचारणा वालों का सुख अनंत गुणा उससे 6. परिचारणा नहीं करने वालों का सुख अनंत गुणा।

देवलोक	जाने वाली देवियां (अपरिग्रहीता देवियां ही जाती है)
तीसरे देवलोक में	पहले देवलोक की 7 पल 1 समय अधिक से 10 पल की स्थिति वाली (1 पल्य सा. से 10 पल)
चौथे देवलोक में	दूसरे देवलोक की 9 पल 1 समय अधिक से 15 पल की स्थिति वाली (1 पल साधिक से 15 पल)
पांचवें देवलोक में	पहले देवलोक की 10 पल 1 समय अधिक से 20 पल की स्थिति वाली देवी का चिंतन करे
छठे देवलोक में	दूसरे देवलोक की 15 पल 1 समय अधिक से 25 पल की स्थिति वाली देवी का चिंतन करे
सातवें देवलोक में	पहले देवलोक की 20 पल 1 समय अधिक से 30 पल की स्थिति वाली देवी का चिंतन करे
आठवें देवलोक में	दूसरे देवलोक की 25 पल 1 समय अधिक से 35 पल की स्थिति वाली देवी का चिंतन करे
नवमें देवलोक में	पहले देवलोक की 30 से 1 समय अधिक से 40 पल की स्थिति वाली देवी का चिंतन करे
दसवें देवलोक में	दूसरे देवलोक की 35 पल 1 समय अधिक से 45 पल की स्थिति वाली देवी का चिंतन करे
ग्यारवें देवलोक में	पहले देवलोक की 40 से 1 समय अधिक से 50 पल की स्थिति वाली देवी का चिंतन करें
बारहवें देवलोक में	दूसरे देवलोक की 45 पल 1 समय अधिक से 55 पल की स्थिति वाली देवी का चिंतन करे

63. वेदना (प्रज्ञापना सूत्र पद 35वां)

सीता य दव्व सरीरा, साता, तह वेदणा भवति दुक्खा।
अब्भुवगमोवक्कमिया, णिदा या अणिदा, य नायव्वा॥
साय मसायं सव्वे सुहं च, दुक्खं अदुक्खमसुहं च।
माणस रहिंय विगलिंदिया, उ सेसा दुविह मेव॥

वेदना- ज्ञान, सुखदुःखानुभव, क्रीडा, दुःख संताप, रोगादि वेदना, कर्मफल योग, साता असाता अनुभव, उदयावलिका प्रविष्ट कर्म का अनुभव आदि। वेदना- यहां सात द्वारों से समझाया है-

1. शीतादि वेदना द्वार- शीत, उष्ण, शीतोष्ण तीन प्रकार की वेदना सभी 24 दंडक में होती है। प्रथम तीन नरक में शीत योनि। चौथी नरक में शीत योनि के ज्यादा जो उष्ण

वेदना वेदते हैं, उष्ण योनिक कम जो शीत वेदना वेदते हैं। इसलिए उष्ण वेदना के अधिक शीत वेदना वाले कम हैं। पांचवी नरक में शीत योनि के कम उष्ण के ज्यादा जो उष्ण वेदना के कम शीत वेदना वाले अधिक होते हैं। छठी नरक में उष्ण योनिक जो शीत वेदना वेदते हैं। सातवी नरक में महाउष्णयोनिक उन्हें शीत की प्रचण्ड वेदना होती है। शेष 23 दंडकों में तीनों वेदना।

2. द्रव्यादि चार प्रकार- द्रव्य क्षेत्र काल भाव से चार प्रकार नरक में पुद्गल द्रव्य से विचार करना द्रव्य वेदना। नरक उत्पत्ति क्षेत्र से क्षेत्र संबंधी, भव संबंधी काल विचार, वेदना अपेक्षा विकार भाव से हैं, यों 24 दंडक में समझें।

3. शारीरिक आदि वेदना- शारीरिक, मानसिक, और शारीरिक मानसिक यों तीन प्रकार की वेदना 16 दंडकों में होती है। पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय में एक शारीरिक वेदना ही होती है।

4. साता असाता- 24 दंडक में साता, असाता, साता-असाता तीनों वेदना होती है।

5. सुख दुःखादि- सुख दुःख और सुखदुःखादि रूप तीनों वेदना 24 दंडक में होती है।

6. आभ्युपगमिकी-औपक्रमिकी- स्वेच्छा से स्वीकार करने वाली वेदना जैसे केशलोच, आतापना यह स्वयं आभ्युपगमिकी अंगीकार की जाती है। उदय में आये या उदीरणा से लाये वेदना कर्म औपक्रमिकी वेदना है, यह वेदना तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य में दोनों प्रकार की होती है। शेष 22 दंडक में औपक्रमिकी ही होती है।

7. निदा अनिदा- मानसिक ज्ञान होना, चित्त लगा हो व्यक्त वेदना निदा है। जिसमें मानसिक ज्ञान नहीं हो वह अनिदा (अव्यक्त) है। नरक, भवनपति व्यंतर तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य 14 दंडक संज्ञी भी होते हैं, असंज्ञी भी होते हैं तो जो संज्ञी है वे निदा वेदते हैं, असंज्ञी अनिदा वेदते हैं। पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय असंज्ञी है, अनिदा वेदते हैं। वैमानिक में मायी मिथ्यादृष्टि अनिदा, अमायी समदृष्टि निदा वेदते हैं।

64. सात समुद्घात (प्रज्ञापना सूत्र पद 36वां)

वेयणा कसाय मरणे, वेउव्विय तेयए य आहारे।
केवलिए चेव भवे, जीव मणुस्साण सत्तेव।।

शरीर से कुछ आत्म प्रदेशों का बाहर अल्प समय के लिए निकलना, आत्म प्रदेशों की इस प्रकार की प्रक्रिया 7 प्रकार के संयोगों से बनती है, अतः सात समुद्घात कही है।

वेदना, कषाय, मारणान्तिक, वैक्रिय, तैजस, आहारक और केवली ये सात समुच्चय जीव और मनुष्य में सातों पाई जाती है। आठ द्वारों से वर्णन किया है।

1. नाम द्वार- 1. वेदना समुद्घात- असाता वेदनीय की तीव्रता से आत्म प्रदेश शरीर के अवगाहित क्षेत्र से बाहर परिस्पंदित होते हैं। **2. कषाय समुद्घात-** चार कषायों में से किसी भी कषाय की तीव्रता से आत्म प्रदेश शरीर अवगाहित क्षेत्र से बाहर परिस्पंदित होते हैं। **3. मारणान्तिक समुद्घात-** मरण समय में आगे के जन्म स्थान तक आत्म प्रदेशों का बाहर जाना, वापस आना। **4. वैक्रिय समुद्घात-** नारकी, देवता, तिर्यंच-पंचेन्द्रिय, मनुष्य कोई भी उत्तर वैक्रिय करते हैं, तब उन्हें पहले वैक्रिय करने के योग्य पुद्गल ग्रहण हेतु प्रक्रिया करनी होती है। **5. तैजस समुद्घात-** शीत या उष्ण तेजोलेश्या उपयोग करने हेतु उन पुद्गलों को विशेष मात्रा में ग्रहण करने छोड़ने हेतु आत्म प्रदेशों को निकालना आदि। **6. आहारक समुद्घात-** शंका समाधान हेतु नया लघु शरीर बनाकर करोड़ों मील दूर भेजा जाता है। **7. केवली समुद्घात-** मोक्ष जाने के निकट अघाती (आयुष्य छोड़कर) कर्मों की विषमता को सम करने हेतु आत्म प्रदेश संपूर्ण लोक प्रमाण प्रदेशों में व्याप्त हो जाते हैं।

2. काल द्वार- प्रथम 6 समुद्घात का काल असंख्य समय का अंतर्मुहुर्त का है, तथा केवली समुद्घात का 8 समय का है।

3. प्राप्ति द्वार- नारकी में चार, भवनपति व्यंतर ज्योतिषी से 12वें देवलोक तक पांच, नव ग्रैवेयक और अणुत्तर विमान में प्रथम तीन (शक्ति पांच की है, परन्तु करते नहीं) चार स्थावर तीन विकलेन्द्रिय में पहली तीन, वायुकाय में प्रथम चार, तिर्यंच पंचेन्द्रिय में प्रथम पांच, मनुष्यों में सातों समुद्घात होती है।

नारकी, वायुकाय	चार समुद्घात
देवों, तिर्यंच पंचेन्द्रिय	पांच समुद्घात
चार स्थावर, विकलेन्द्रिय	तीन समुद्घात
मनुष्य	सात समुद्घात

4. एक जीव की अपेक्षा अतीत अनागत काल समुद्घात- 24 दंडक के जीवों ने भूतकाल में समुद्घातें की है और भविष्य में करेगा यह एक जीव की अपेक्षा कहा है जैसे नरक के एक-एक नैरयिक ने पांच समुद्घात अनंत बार की अनागत में कोई करेगा,

कोई नहीं करेगा, जो करेगा जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट संख्यात, असंख्यात, अनंत होगी।

24 दंडक में उभय कालिक समुद्घाते- (एक जीव)

समुद्घात	जीव	भूतकाल में की		भविष्यकाल में करेगा	
		जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
वेदनीयादि पांच	24 दंडक में	-	अनंता	0/1-2-3	अनंता
आहारक	23 दंडक में	0/1-2-3	×	0/1-2-3-4	×
आहारक	मनुष्य में	0/1-2-3-4	×	0/1-2-3-4	×
केवली	23 दंडक में	×	×	0/1	×
केवली	मनुष्य में	0/1	×	0/1	×

वेदनियादि 5 का नरक की तरह 23 दंडक में ही कहना। आहारक किसी ने की, नहीं की, की तो 1-2-3 की आगे कोई करे या नहीं और करे तो उत्कृष्ट चार बार करेगा यह 23 दंडक में कहना। मनुष्य में पहले की तो उत्कृष्ट चार आगे करे तो चार करे (उत्कृष्ट)। केवली 23 दंडक में किसी ने नहीं की, भविष्य में अगर करे तो एक बार, मनुष्य में अगर की तो एक बार, करेगा तो भी एक बार करेगा।

5. बहुत जीवों की अपेक्षा अतीत अनागत कालीन समुद्घात- 24 दंडकों के बहुत जीवों ने की हुई और होने वाली समुद्घातों का चित्रण है- जैसे नरक के नैरयिक 5 समुद्घात अनंत की, भविष्य में अनंत करेंगे। 23 दंडक में भी कहना।

सभी जीवों की अपेक्षा- बहुत जीवों ने की है और करेंगे उसका चार्ट-

समुद्घात	जीव	भूतकाल में की गई		भविष्यकाल में की जाने वाली	
		जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
वेदनीयादि पांच	24 दंडक में	अनंता	अनंता	×	अनंता
आहारक	22 दंडक में	असंख्याता	असंख्याता	×	असंख्याता
आहारक	वनस्पति में	अनंत	अनंता	×	अनंता
आहारक	मनुष्य में	संख्याता	असंख्याता	संख्याता	असंख्याता
केवली	22 दंडक में	×	×	×	असंख्याता
केवली	वनस्पति में	×	×	×	अनंता
केवली	मनुष्य में	0/1-2-3	प्रत्येक सौ (400-600)	संख्याता	असंख्याता

6. एक जीव में परस्पर की अपेक्षा अतीत अनागत कालीन समुद्घात- एक-एक नैरयिक ने नरक रूप में चार समुद्घात अनंत बार की भविष्य में करे या नहीं भी, करे तो 1-2-3 उत्कृष्ट संख्यात असंख्यात अनंत करेगा। अन्तिम तीन नहीं की,

नहीं करेगा। नैरयिक ने (एक) देवता के 13 दंडक रूप। पांच समुद्घाते अनंत की भविष्य में अगर करे तो वेदना मारणान्तिक तैजस उसी प्रकार अनंत करे कहना। कषाय और वैक्रिय भवनपति व्यंतर रूप कदाचित अनंत करेगा। ज्योतिषी वैमानिक रूप में भी कदाचित अनंत करे। आहारक नहीं की नहीं करेगा। नैरयिक ने चार स्थावर तीन विकलेन्द्रिय में तीन, वायुकाय में चार, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य में पांच-पांच समुद्घात अनंत की, भविष्य में एक से अनंत (एगोत्तरिया) करेगा। नैरयिक ने मनुष्य रूप में आहारक की, नहीं की, की तो उत्कृष्ट तीन की भविष्य में करे या नहीं, करे तो उत्कृष्ट चार। केवली में नहीं की, भविष्य में करे या नहीं, करे तो एक करेगा। नैरयिक ने चार स्थावर तीन विकलेन्द्रिय में अन्तिम चार। वायुकाय में अन्तिम तीन, तिर्यंच पंचेन्द्रिय में अन्तिम दो, कभी नहीं की और नहीं करेगा।

13 दंडक देवता ने अपने और पर स्थान में पांच समुद्घात अतीत में अनंत की भविष्य में 1 से अनंत (करे तो) परस्थान में वेदना, मारणान्तिक तैजस् एक से अनंत करेगा, कषाय वैक्रिय भवनपति व्यंतर रूप में कदाचित संख्य, असंख्य, अनंत करेगा। ज्योतिष वैमानिक कदाचित् असंख्य अनंत करेगा। देवों ने स्वस्थान में अंतिम दो कभी नहीं की, भविष्य में भी नहीं करेगा। देवों ने (एक एक ने) नारकी रूप चार अनंत की, भविष्य में अगर करे तो मारणान्तिक एक से अनंत तक, बाकी तीन कदाचित् संख्यात, असंख्य, अनंत करेगा। देवता ने नरक रूप में अन्तिम तीन कभी नहीं, कभी नहीं करेगा। 13 दंडक के एक-एक देव ने चार स्थावर तीन विकलेन्द्रिय रूप में तीन, वायुकाय रूप चार, तिर्यंच पंचेन्द्रिय रूप, मनुष्य रूप पांच पांच अनंत की भविष्य में करे तो एक से अनंत (एगोत्तरिया) करेगा। मनुष्य रूप में आहारक समुद्घात अगर की तो 1-2-3 की भविष्य में करेगा तो उत्कृष्ट चार। केवली समुद्घात देव ने मनुष्य रूप में नहीं करी, करेगा तो एक करेगा। देव ने चार स्थावर तीन विकलेन्द्रिय रूप में चार, वायुकाय रूप में तीन, तिर्यंच पंचेन्द्रिय और मनुष्य रूप में दो-दो (अन्तिम) नहीं की, नहीं करेगा।

औदारिक 10 दंडक के जीव ने इन्हीं 10 दंडकों रूप में स्वस्थान परस्थान पाने वाली (आहारक, केवली छोड़) अतीत में अनंत की अनागत में करे तो एक से अनंत तक। एक मनुष्य ने आहारक की या नहीं की तो 1-2-3-4 की। अनागत में करेगा तो उत्कृष्ट चार। केवली समुद्घात मनुष्य मनुष्य में नहीं की, करे तो एक बार। औदारिक ने

9 दंडक (मनुष्य सिवाय) आहारक नहीं की, तो 1-2-3 भविष्य में अगर करे तो उत्कृष्ट चार। नौ दंडको ने केवली नहीं की, भविष्य में करे तो एक। औदारिक 10 दण्डकों के एक-एक ने नारकी रूप में चार अनंत की, भविष्य में करे तो मारणान्ति एक से अनंत तक, बाकी तीन कदाचित संख्य, असंख्य, अनंत करेगा। 10 औदारिक के एक जीव ने 13 दंडक देव रूप में 5 समुद्घात अतीत काल में अनंत की, भविष्य में कोई करे तो वेदना, मारणांतिक तैजस एक से अनंत करेगा, कषाय और वैक्रिय भवनपति व्यंतर रूप संख्य, असंख्य, अनंत करेगा, तथा ज्योतिषी वैमानिक रूप कदाचित् असंख्य करेंगे। 10 दंडक के जीव ने नारकी रूप में अंतिम तीन, देव रूप में अंतिम दो, चार स्थावर विकलेन्द्रिय अंतिम चार, वायुकाय रूप में अंतिम तीन, तिर्यंच पंचेन्द्रिय रूप में अंतिम दो समुद्घात नहीं की, नहीं करेगा।

एक-एक जीव की सभी दंडकों में समुद्घातें-

समुद्घात	**जीव**	**दंडक में**	**जघन्य**	**उत्कृष्ट**
वेदनीय	नैरयिक	24 दंडक में	0/1-2-3	अनंता
वेदनीय	23 दंडक	नरक में	0 / संख्याता	अनंता
वेदनीय	23 दंडक	23 दंडक में	0/1-2-3	अनंता
कषाय	नैरयिक	नरक में	0/1-2-3	अनंता
कषाय	नैरयिक	11 दंडक देव में	0/1-2-3	अनंता
कषाय	नैरयिक	ज्यो. वैमानिक में	0 /संख्याता	अनंता
कषाय	नैरयिक	औदारिक दंडकों में	0/1-2-3	अनंता
कषाय	13 दंडक के देव	नरक में	0 /संख्याता	अनंता
कषाय	13 दंडक के देव	13 दंडक स्वस्थान	0/1-2-3	अनंता
कषाय	13 दंडक के देव	13 दंडक पर स्थान	0 /संख्याता	अनंता
कषाय	13 दंडक के देव	ज्यो.वैमा. पर स्थान	0 /असंख्याता	अनंता
कषाय	शेष 10 दंडक	नरक देव में	0/संख्याता	अनंता
कषाय	शेष 10 दंडक	ज्यो. वेमा. में	0/असंख्याता	अनंता
कषाय	शेष 10 दंडक	शेष 10 दंडक में	0/1-2-3	अनंता

मारणांतिक	24 दंडक	24 दंडक में	0/1-2-3	अनंता
आहारक	24 दंडक	23 दंडक में	-	×
आहारक	23 दंडक	मनुष्य में	0/1-2-3-4	×
आहारक	मनुष्य	मनुष्य में	0/1-2-3-4	×
केवली	23 दंडक	मनुष्य में	0/1	×
केवली	मनुष्य	मनुष्य में	0/1	×
केवली	24 दंडक	23 दंडक में	×	×

विशेष- वैक्रिय समुद्घात कषाय समुद्घात के समान है, चार स्थावर तीन विकलेन्द्रिय में नहीं है, अतः 24 दंडक वाले जीवों के 17 दंडक में वैक्रिय समुद्घात का कथन करना। तैजस समुद्घात मारणान्तिक के समान है। किंतु 24 दंडक वालों के 15 दंडक में तैजस का कथन करना। भूतकाल की अपेक्षा पांचों समुदघातें जहां होवे वहां अनंत है। 0/1-2-3 का अर्थ है कभी होवे कभी नहीं होवे होवे तो जघन्य 1-2-3। आहारक समु. 23 दंडक के मनुष्य पणे में तथा मनुष्य के मनुष्य पणे में है, 23 दंडक में तो होती ही नहीं। केवली 23 दंडक के 24 में नहीं है, मनुष्य के मनुष्यपने में हैं। आहारक समुद्घात तीन बार किये तीन गतियों में मिल सकते हैं, मनुष्य में चार बार के मिल सकते हैं। चौथी बार का आहारक उसी भव मोक्ष जाता है। 10 औदारिक में समुद्घात की नियमा नहीं है, होवे तो जघन्य 1-2-3 होवे। नारकी में वेदनीय की नियमा है शेष किसी भी दंडक में नियम नहीं है। कषाय और वैक्रिय नारकी, देवों में नियम से होते हैं। नियमतः होने वाली 1000 आदि संख्याता वर्ष वालों के संख्याता, असंख्याता वर्ष वालों के जघन्य असंख्य। इसीलिए ज्योतिषी वैमानिक में परस्थान में कषाय जघन्य असंख्याता कही भवनपति आदि में जघन्य संख्यात कही है।

7. बहुत जीवों में परस्पर अतीत अनागत कालीन समुद्घातें- नारकी देवता बहुत में चार अतीत में अनंत की भविष्य में अनंत करेंगे। नारकों में 13 दंडक देवों के रूप में पांच, चार स्थावर तीन विकलेन्द्रिय रूप में तीन, वायुकाय में चार, तिर्यंच पंचेन्द्रिय मनुष्य रूप में पांच-पांच अनंत की, अनंत करेंगे। नारकों ने मनुष्य रूप में आहारक असंख्य की भविष्य में असंख्य करेंगे। केवली नहीं की भविष्य में असंख्य करेंगे। नारक रूप में अंतिम तीन, देव रूप अन्तिम दो, चार स्थावर तीन विकलेन्द्रिय में

अन्तिम चार, वायुकाय में अन्तिम तीन, तिर्यंच पंचेन्द्रिय रूप अंतिम दो नहीं की, नहीं करेंगे। बहुत औदारिक 10 दण्डक जीवों ने स्वस्थान पर स्थान में चार स्थावर तीन विकलेन्द्रिय रूप में तीन, वायुकाय रूप चार, तिर्यंच पंचेन्द्रिय मनुष्य रूप पांच पांच अतीत में अनंत की अनागात में अनंत करेंगे। बहुत मनुष्यों ने मनुष्य रूप आहारक कदाचित संख्यात, असंख्यात की और इसी प्रकार करेंगे। केवली समुदघात नहीं की की तो एक दो तीन उत्कृष्ट प्रत्येक सौ बार, भविष्य में कदाचित संख्यात असंख्यात करेंगे। बहुत पांच स्थावर तीन विकलेन्द्रिय तिर्यच पंचेन्द्रिय ने 23 दंडक रूप में आहारक, केवली नहीं की नहीं करेंगे। नौ दंडकों के जीवों ने मनुष्य रूप में अहारक अतीत में वनस्पति के जीवों ने अनंत की, शेष 8 दंडक जीवों ने असंख्यात की, भविष्य में वनस्पति अनंत करेंगे, शेष आठ असंख्यात करेंगे। केवली रूप नहीं की, वनस्पति के जीव अनंत और शेष 8 दंडक के असंख्यात केवली समुद्घात करेंगे। 10 दंडक जीवों ने नारकीय रूप में चार, देवरूप में पांच अनंत की अनंत करेंगे। 10 दंडक जीवों ने नरक में अन्तिम तीन, देव रूप में अन्तिम दो नहीं की नहीं करेंगे। दंडक के सभी जीवों की 24 दंडक में समुद्घातें-

समुद्घात	**जीव**	**दंडक में**	**अतीतकाल मे**	**अनागतकाल में**
पाँच समुद्घात	24 दंडक	24 दंडक में	अनंता	अनंता
आहारक	24 दंडक	23 दंडक	×	×
आहारक	22 दंडक	मनुष्य में	असंख्याता	असंख्याता
आहारक	वनस्पति	मनुष्य में	अनंता	अनंता
आहारक	मनुष्य	मनुष्य में	ज.सं. उ. असं.	ज.सं. उ. असं.
केवली	24 दंडक	23 दंडक में	×	×
केवली	22 दंडक	मनुष्य में	×	असंख्याता
केवली	वनस्पति	मनुष्य में	×	अनंता
केवली	मनुष्य	मनुष्य में	ज.0/1-2-3/उ. अनेक सौ	ज.सं.उ.असं.

8. अल्प बहुत्व द्वार- 1. सबसे थोड़े आहारक समुद्घात वाले 2. केवली समुद्घात वाले संख्यात गुणा (624) 3. तैजस समुद्घात वाले असंख्यता गुणा 4. वैक्रिय वाले असंख्यात गुणा 5. मारणान्तिक वाले अनंत गुणा 6. कषाय समुद्घात वाले असंख्यात गुणा 7. वेदनीय वाले विशेषाधिक 8. समुद्घात नहीं करने वाले संख्यात गुणा।

समुद्घातों की अल्प बहुत्व

जीव	वेदनीय	कषाय	मारणांतिक	वैक्रिय	तैजस	आहारक	केवली	असमोहया
जीव	7 विशे.	6 असं.	5 अनंत	4 असं.	3 असं.	1 अल्प	2 सं.	8 असं.
पृथ्वी पानी अग्नि	2 असं.	3 सं.	1 अल्प	×	×	×	×	4 सं
वायु	4 विशे.	3 सं.	2 असं.	1 अल्प पर्या. का असं. भाग	×	×	×	5 सं.
वनस्पति	2 असं.	3 सं.	1 अल्प	×	×	×	×	4 सं.
विकलेन्द्रिय	2 असं.	3 सं.	1 अल्प	×	×	×	×	4 सं.
ति.पंचे.	4 असं.	5 सं.	3 असं.	2 असं.	1 अल्प	-	×	6 सं.
मनुष्य	6 असं.	7 सं.	5 असं.	4 सं.	3 सं.	1 अल्प	2 सं.	8 सं.
देवता	3 असं.	4 सं.	2 असं.	5 सं.	1 अल्प			6 सं.
नारकी	4 सं.	3 सं.	1 अल्प	2 असं.	×	×	×	5 सं.

65. कषाय समुद्घात (प्रज्ञापना सूत्र पद 36) कषाय समुद्घात भी आठ द्वारों से समझायी है।

1. नाम द्वार- चार कषाय है, उनकी समुद्घात भी चार है, क्रोध, मान, माया, लोभ कषाय समुद्घात।

2. काल द्वार- काल जघन्य-उत्कृष्ट अन्तर्मुहुर्त है।

3. प्राप्ति द्वार- समुच्चय जीव और 24 दंडक में पाई जाती है।

4. एक जीव की अपेक्षा- एक जीव ने 24 दंडक में अतीत में अनंत की अनागत में करेगा, नहीं करेगा, करे तो जघन्य 1-2-3 यावत् संख्याता असंख्याता अनंत करेगा।

5. बहुत जीव की अपेक्षा- बहुत जीवों ने (प्रत्येक ने) सभी दंडकों के सभी जीवों ने सभी दंडकों में अतीत में अनंत की, भविष्य से अनंत करेंगे।

6. एक-एक जीव में परस्पर- एक-एक जीव ने सभी दंडकों में क्रोध समुद्घात का संपूर्ण कथन वेदना की तरह, मान माया का मरण समुद्घात के समान। लोभ का कषाय के समान कहना, किन्तु नरक में आगामी काल में जघन्य 0/1-2-3 उत्कृष्ट अनंत कहना। क्रोध-मान माया समुद्घात में एक-एक नारक में अनंत की (नारकी रूप) अनागत में अगर करे तो 0/1-2-3 यावत उत्कृष्ट अनंत करेगा, यह सभी 24 दंडकों में कहें। एक एक नारक ने नारकी रूप और 10 औदारिक के दस दण्डक रूप लोभ समुद्घात अनंत की, भविष्य में 0/1-2-3 उत्कृष्ट अनंत करेगा। एक एक नारक ने 13 दंडक देवता रूप में लोभ समुद्घात अनंत की, अनागत में 0/1-2-3 उत्कृष्ट अनंत करेगा। भवनपति व्यंतर रूप कदाचित् संख्यात असंख्यात अनंत और ज्योतिषी वैमानिक रूप में कदाचित् असंख्यात अनंत करेगा। 23 दंडक के एक-एक जीव ने 24 दंडक

रूप स्वस्थान परस्थान में क्रोध मान माया अनंत की भविष्य में 0/1-2-3 उत्कृष्ट अनंत करेगा। किन्तु नैरयिक रूप में अनागत काल में 0/1-2-3 उत्कृष्ट अनंत करेगा। 23 दंडक के एक-एक जीव ने औदारिक के 10 दण्डक स्वस्थान परस्थान में लोभ समुद्घात अतीत में अनंत की, भविष्य में 0/1-2-3 उत्कृष्ट अनंत करेगा। 13 दंडक देवता रूप (23 दंडक के एक-एक ने) उसी तरह कथन है। भवनपति व्यंतर में कदाचित संख्यात, असंख्यात अनंत और ज्योतिषी वैमानिक में असंख्यात अनंत (कदाचित्) कहना।

7. बहुत जीवों में परस्पर पाई जाने वाली अतीत अनागत कालीन समुद्घात (कषाय)- 24 दंडक के बहुत जीव 24 दंडक में अतीत में अनंत की, अनागत काल में अनंत करेंगे।

8. अल्प बहुत्व द्वार- 1. सबसे अल्प अकषायी समुद्घात 2. मान समु. करने वाले अनंत गुणा 3. क्रोध वाले विशेषाधिक 4. माया वाले विशेषाधिक 5. लोभ वाले विशेषाधिक 6. समुद्घात नहीं करने वाले संख्यात गुणा।

जीवों में	क्रोध	मान	माया	लोभ	अकषाय	असमुद्घात
नैरयिकों में	4 सं.	3 सं.	2 सं.	1 अल्प	×	5 सं.
13 दंडक देवता में	1 अल्प	2 सं.	3 सं.	4 सं.	×	5 सं.
9 दंडक(स्था.विक.ति.पं.)	2 विशे.	1 अल्प	3 विशे.	4 विशे.	×	5 सं.
मनुष्य	3 विशे.	2 असं.	4 विशे.	5 विशे.	1 अल्प	6 सं.
समुच्चय जीवों में	3 विशे.	2 अनंत	4 विशे.	5 विशे.	1 अल्प	6 सं.

66. छद्मस्थ समुद्घात (प्रज्ञापना सूत्र पद 36वां) केवली के अतिरिक्त छहों समुद्घात छदमस्थों के होती है।

(1) नामद्वार-बारहवें गुणस्थानक तक छद्मस्थ जीवों के 4 समुद्घात होती है। वेदना, कषाय मारणान्तिक वैक्रिय, तैजस आहारक (केवली नहीं होती)

(2) प्राप्ति द्वार- नरक में पहली चार, देवों में पांच, चार स्थावर तीन विकलेन्द्रियों में तीन, वायुकाय में चार, तिर्यंच पंचेन्द्रिय में पांच, मनुष्य में छहों होती है।

(3) कालद्वार-जघन्य उत्कृष्ट असंख्यात समयों का अन्तर्मुहुर्त।

सातों समुद्घातों में समवहत जीवों की क्षेत्र काल एवं क्रिया की प्ररूपणा- वेदना समुद्घात करने वाला समुद्घात द्वारा जिन पुद्गलों को शरीर से बाहर निकालता

है उनसे छहों दिशा में शरीर प्रमाण लम्बा चौड़ा मोटा क्षेत्र आपूरित (व्याप्त) एवं स्पृष्ट (अन्तर्मुहुर्त तक वहां रहने रूप स्पर्श) होता है। ये पुद्गल शेष क्षेत्र स्पर्श नहीं करते। एक-दो तीन समय की विग्रह गति से जीव उक्त क्षेत्र को आपूरित स्पृष्ट करता है।

वेदना-कषाय समुद्घात-जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहुर्त तक इन समुद्घातों द्वारा जीव पुद्गलों को बाहर निकालना है, यानि जिन पुद्गलों से दुःखी हुआ उन्हें बाहर फेंकता है, फेंके गये बाहर हो जाते हैं, उन पुद्गलों से प्राणभूत जीव सत्व का हनन (हिंसा) होती है, एवं वेदना, कषाय समुद्घात करने वाले जीव को कभी तीन, कभी चार, कभी पांच (चार भंग है) क्रियाएं लगती है, उन जीवों को भी वेदना समुद्घात करने वालों की अपेक्षा कभी 3-4-5 क्रियाएं लगती है। जैसे एक पुरूष को सर्प या बिच्छु ने काटा, तो पुरूष ने वेदना समुद्घात की तो सर्प या बिच्छु को तीन-चार-पांच और समुद्घात करने वाले जीव और वेदना के पुद्गलों से स्पृष्ट जीव द्वारा परम्परा से अन्य जीवों की घात होती है उन्हें भी तीन-चार-पांच क्रियाएं लगती है। वेदना और कषाय दोनों समुद्घातों में समझना।

मारणान्तिक समुद्घात-समुद्घात द्वारा जीव जो पुद्गल बाहर निकालता है, वे मोटाई, चौड़ाई में शरीर प्रमाण, लम्बाई में जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट असंख्यात योजन एक दिशा में स्पृष्ट, आपूरित करते हैं। यह क्षेत्र 1-2-3-4 समय की विग्रह गति (5 समय के इस तरह से जीव नहीं मिलते हैं) से स्पृष्ट एवं आपूरित करता है। इस समुद्घात में जघन्य उत्कृष्ट अन्तर्मुहुर्त काल लगता है। इसे प्रक्रिया से बाहर निकले पुद्गलों प्राण-सत्वादि का हनन प्राण व्यपरोपण तथा उससे 3-4-5 क्रियाएं लगना पूर्ववत् कहना। नारकी जीव मोटाई चौड़ाई में शरीर प्रमाण, लम्बाई में जघन्य एक हजार योजन साधिक उत्कृष्ट असंख्यात योजन का क्षेत्र एक दिशा का स्पृष्ट आपूरित क्षेत्र 1-2-3 समय बाकी बोल समुच्चय की तरह समझना। देवता, तिर्यंच पंचेन्द्रिय, मनुष्य का समुच्चय की तरह कहना। विग्रह गति में अन्तर 1-2-3 समय कहना। पांच स्थावर समुच्चय की तरह कहना।

वैक्रिय समुद्घात-समुच्चय जीव वैक्रिय समुद्घात करके मोटाई चौड़ाई शरीर प्रमाण लम्बाई में जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग उत्कृष्ट संख्यात योजन क्षेत्र एक दिशा-विदिशा में 1-2-3 समय विग्रह गति से स्पृष्ट आपूरित करता है। शेष क्षेत्र काल का स्पर्श नहीं करते। जघन्य उत्कृष्ट अन्तुर्मुहुर्त लगता है। अन्य जीव हनन आदि वेदना की तरह समझना। नारकी और तिर्यंच पंचेन्द्रिय में समुच्चय जीव की तरह कहना, किन्तु

लम्बाई में जघन्य अंगुल के संख्यातवे भाग उत्कृष्ट संख्यात योजन एक दिशा कहना। देवों के 13 दंडक मनुष्य भी समुच्चय की तरह किन्तु लम्बाई में जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग उत्कृष्ट संख्यात योजन एक दिशा-विदिशा कहना। वायुकाय भी समुच्चय की तरह, किन्तु एक दिशा कहना।

तैजस समुद्घात- समुच्चय जीव और 15 दंडक (13 देवता, 1 मनुष्य 1 तिर्यंच पंचेन्द्रिय) वैक्रिय समुद्घात की तरह कहना, विशेष कि इसमें लम्बाई जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग कहना और तिर्यंच पंचेन्द्रिय में एक दिशा कहना।

आहारक समुद्घात-समुच्चय जीव और आहारक का वैक्रिय की तरह कहना किन्तु लम्बाई में जघन्य अंगुल के असंख्यावे भाग कहना और एक दिशा कहना।

67. केवली समुद्घात (प्रज्ञापना सूत्रपद 36वां)-केवली समुद्घात करने वाले भवितात्मा अणगार के चरम समय के निर्जरापुद्गल अति सुक्ष्म (चोस्पर्शी) होते है, सारे लोक को स्पर्शते हैं। छद्मस्थ उन्हें आंख, नाक, रसन, स्पर्शन से नहीं देख सकता सामान्य-विशेष भी नहीं जानता देखता है। जैसे समस्त द्वीपों समुद्रों के बीच यह जम्बू द्वीप छोटा, गोलाकार, तेल के पूए समान, रथ के पहिए के चक्र समान, कमल कर्णिका, पूर्ण चंद्र जैसा गोलाकार है, एक लाख योजन लम्बा चौड़ा (316,227 योजन तीन कोस 128 धनुष्य साढ़े तेरह अंगुल झाझेरी) है। शीघ्र गति वाला देव तीन चुटकी बजावे उतने समय में इसकी 21 परिक्रमा करले, वह डिब्बी में सुगंधित पदार्थ लेकर सुगंध बिखेरे (ये पुद्गल अष्ट स्पर्शी होते है) फिर भी छद्मस्थ उसे नहीं जान सकता तो चार स्पर्शी पुद्गल अति सुक्ष्म होते हैं, उन्हें नहीं जान देख सकता।

केवली समुद्घात का कारण-केवली भगवान के चार अघाति कर्म होते हैं, जब आयु कर्म के प्रदेश सबसे थोड़े रह जाते हैं और शेष तीन वेदनीय नाम गोत्र के प्रदेश अधिक होते हैं, तब बंधन और स्थिति को सम करने हेतु समुद्घात करते हैं। सभी नहीं करते। जिनके विषम हो वे ही करते हैं। आत्मा को मोक्ष की ओर अभिमुख करना आवर्जीकरण है यथा योग्य कर्मों की उदीरणा आदि करके उदयावलिका में प्रक्षेपण (डालना) करने, शुभ योगों के व्यापार द्वारा स्वयं को मोक्ष के साथ जोड़ना आवर्जीकरण है, यह सभी केवली अवश्य करते हैं । यह आवश्यकरण कहलाता है। जो समुद्घात करने वाले होते हैं। वे पहले आवर्जीकरण करते हैं, फिर समुद्घात करते हैं। आवर्जीकरण का समय असंख्यात समय प्रमाण अन्तर्मुहुर्त है।

केवली समुद्घात की प्रक्रिया-केवली समुद्घात में आठ समय लगते हैं- योग

1 समय	दंड रचना-दंड रूप में आत्म प्रदेश (ऊपर से नीचे लोक पर्यंत)	औदारिक योग
2 समय	कपाट रचना-कपाट रूप दीवाल रूप	औदारिक मिश्र
3 समय	पूरित मंथान-सम किनारे वाला घनरूप लोक प्रमाण	कार्मण
4 समय	पूरित लोक- विषम किनारे वाला घन रूप लोक प्रमाण	कार्मण
5 समय	लोक साहरण- समघन रूप लोक	कार्मण
6 समय	मंथान साहरण- कपाट रूप संस्थान	औदारिक मिश्र
7 समय	कपाट साहरण- दंड रूप संस्थान	औदारिक मिश्र
8 समय	दण्ड साहरण- शरीरस्थ हो जाते है।	औदारिक योग.

आठवें समय में दण्ड साहरण और शरीररस्थ में दो क्रियाएं हो जाती है, संहरण रहित पूर्ववत् शरीरावस्था हो जाती है।

केवली समुद्घात में कर्म प्रकृत्तियों के क्षपण की प्रक्रिया- केवली भगवान के नाम कर्म की 80 (शुभ 52-अशुभ की 28) वेदनीय की दो (साता-असाता) गोत्र की दो (उच्च, नीच) आयु की मनुष्यायु ये 85 कर्म प्रकृतियां सत्ता में रहती है। समुद्घात के समय **प्रथम समय** में अशुभ नाम कर्म की 28 असाता वेदनीय नीच गोत्र इन 30 प्रकृत्तियों की स्थिति के असंख्यात खंड और अनुभाग के अनंत खंड करके एक-एक खंड शेष रखकर अन्य सभी खंडों का क्षय करते हैं। **दूसरे समय** में शुभ नाम कर्म की 52, सातावेदनीय, उच्च गौत्र इन 54 प्रकृत्तियों की स्थिति के असंख्यात खण्ड अनुभाग के अनंत खंड करके एक-एक खंड रख शेष का क्षय। **तीसरे समय** में खंड स्थिति के असंख्य खंड और अनुभाग के अनंत खंड करके एक-एक खंड रख शेष का क्षय। इसी तरह **चौथे पांचवें समय** में भी यही प्रक्रिया करके क्षय करते हैं। **छठे समय** में स्थिति और अनुभाग के खंड के असंख्यात-असंख्यात खण्ड करके ये खण्ड आयु के बराबर खंड कर देते हैं और एक-एक खंड का क्षय कर देते हैं। (स्थिति अनुभाग आयु)। **सातवे आठवें समय** में यावत् मुक्त हों तब तक एक-एक खंड स्थिति, अनुभाग और एक समय आयुष्य का क्षय करते रहते हैं।

केवली समुद्घात में योगों की प्रवृति-केवली समुद्घात में मन-वचन योग का व्यापार नहीं होता, मात्र काय योग की ही प्रवृति होती है। इसमें भी औदारिक, औदारिक

मिश्र और कार्मण की ही होती है शेष चार की नहीं। पहले आठवें में औदारिक योग की। दूसरे छठे, सातवें में औदारिक मिश्र। तीसरे चौथे पांचवे में कार्मण। केवली समुद्घात करके निर्वाण नहीं हो जाता, सभी दुःखों से मुक्त नहीं हो जाते किन्तु समुद्घात से निवृत्त होते हैं। सत्य मन, वचन, काय योग में प्रवृतते हैं, उठते बैठते सोते हैं, देवों के प्रश्नों के उत्तर वचन योग से देते हैं, मनोयोग से मनः पर्यवज्ञानी, अणुत्तर विमानवासी देवों के उत्तर देते हैं, काया से गमनागमन संयमाचारी संबंधी प्रक्रियाएं करते हैं। केवली समुद्घात के बाद अन्तर्मुहुर्त (आधापौन घन्टा) तक योगों की प्रवृति के बाद अयोगी बनते हैं।

मोक्ष प्राप्ति का क्रम-तेरहवें गुण स्थान के अन्त में सूक्ष्म क्रिया अप्रतिपाति नामक शुक्ल ध्यान के तीसरे चरण में क्रमशः जघन्य योग वाले पर्याप्त संज्ञी पंचेन्द्रिय के मनोयोग से असंख्यात गुण हीन मनोयोग का प्रतिसमय विरोध करते हुए असंख्यात समयों में सम्पूर्ण मनोयोग का निरोध करते हैं। इसके बाद जघन्य योग वाले द्वीन्द्रिय के वचन योग से असंख्यात गुण हीन वचन योग का प्रति समय निरोध करते असंख्यात समयों में सम्पूर्ण वचन योग का निरोध करते हैं। इसके बाद प्रथम समयोत्पन्न जघन्य योग वाले सूक्ष्म निगोद जीव के काय योग से असंख्यात गुण हीन काय योग का प्रति समय निरोध करते असंख्य समय में सम्पूर्ण काय योग का निरोध करते हैं। अयोगी बनते हैं।

शैलेषीकरण-योगों के सम्पूर्ण निरोध होने के बाद शैलेषी अवस्था प्राप्त होती है सम्पूर्ण निष्प्रकंप आत्म प्रदेश हो जाते हैं। उनकी स्थिति पांच ह्रस्व अक्षर अ ई उ ऋ लृ जितने असंख्यात समय प्रमाण होती है एवं वेदनीयादि चार अघाती कर्मों को भोगने हेतु गुण-श्रेणी की रचना करते हैं। असंख्यात गुण श्रेणियों से तीन कर्मों की असंख्यात कर्म स्कंधों की प्रदेश और विपाक से निर्जरा कर चरम समय में चारों कर्मांशों को एक साथ क्षय कर देते हैं । कर्म क्षय होते ही औदारिक तैजस कार्मण इन तीनों शरीरों का पूर्णतया सदा के लिए त्याग कर देते हैं। यहां जितने आकाश प्रदेशों को अवगाह कर रहे हुए है, उतने ही आकाश प्रदेशों का ऊपर ऋजु श्रेणी से अवगाहते हुए अस्पृश्यमान गति से (दूसरे समय और प्रदेश का स्पर्श न करते हुए नहीं रूकते हुए) एक समय की अविग्रहगति से ऊपर सिद्ध गति में जाकर साकार उपयोग केवल ज्ञान उपयोग से

उपयुक्त सिद्ध बुद्ध मुक्त होते हैं। जिस प्रकार अग्नि से जले बीज से पुनः अंकुर उत्पन्न नहीं होते उसी प्रकार कर्म बीज जल जाने से सिद्ध पुनः जन्म ग्रहण नहीं करते।

जहा दड्ढाणं बीयाणं, न जायंति पुणंकुरा ।

कम्म बीएसु दड्ढेसु, न जायंति भवंकुरा ।।

सिद्ध भगवान सदा के लिए अशरीरी, जीव घन (घनीभूत जीव प्रदेश वाले) दर्शन ज्ञान से उपयुक्त, कृतकृत्य, नीरज, निष्कम्प, वितिमिर (कर्म अंधकार रहित) और विशुद्ध बने रहते हैं। सर्व दुःखों से निस्तीर्ण, जन्म जरा मरण के बंधन से मुक्त, ये सिद्ध शाश्वत अव्याबाध सुखों में सदैव सुखी रहते हैं।

विविध स्तोक संग्रह

1. **श्री नव तत्त्व**-विवेकी सम्यग्दृष्टि जीव नव तत्त्व को तथारूप धारण करते हैं-

1. **जीव तत्त्व**-व्यवहार नय से शुभाशुभ कर्मों का कर्त्ता, हर्त्ता और भोक्ता है, और निश्चय नय से ज्ञान, दर्शन (चारित्र) रूप निजगुणों का भोक्ता है, अथवा ज्ञानोपयोग, लक्षणवंत, चेतना सहित होता है।
2. **अजीव तत्त्व**-चेतना रहित, जड़ स्वभाव युक्त होता है।
3. **पुण्य तत्त्व**-जिससे शुभ कर्मों का पुण्य संचय हो तथा उदय से सुखानुभव हो।
4. **पाप तत्त्व**-जिससे अशुभ कर्म का पाप संचय हो तथा उदय से दुःखानुभव हो।
5. **आश्रव तत्त्व**-जिससे नवीन कर्म की आवक हो, शुभाशुभ कर्म उपादान हेतु हो।
6. **संवर तत्त्व**-पाँच समिति तीन गुप्ति से आश्रव निरोध हो।
7. **निर्जरा तत्त्व**-जिससे आत्मप्रदेशों से कर्मों का देश दूर हो, या पूर्व किये कर्म क्षय हो, तपादि से देश रूप से कर्मादि की निर्जरा करना।
8. **बंध तत्त्व**-नवीन कर्म ग्रहण करके आत्मा के साथ उनका बंध करना, क्षीरनीरवत्।
9. **मोक्ष तत्त्व**-आत्मप्रदेशों से सर्वथा कर्म क्षय होना।

इन नव तत्वों में जीव-अजीव ज्ञेय, (जानने योग्य) पुण्य, संवर, निर्जरा, मोक्ष ये चार उपादेय (ग्रहण करने योग्य) पाप, आश्रव और बंध ये तीन सर्वथा हेय (त्यागने योग्य) है। नव तत्वों का रूपी, अरूपी, ज्ञेय, हेय, उपादेय इस प्रकार-

क्रम	तत्त्व	रूपी भेद	अरूपी भेद	हेय ज्ञेय उपादेय
1	जीव	14	सिद्ध	ज्ञेय
2	अजीव	4	10	ज्ञेय
3	पुण्य	42	-	उपादेय, हेय
4	पाप	82	-	हेय
5	आश्रव	42	-	हेय
6	संवर	-	57	उपादेय
7	निर्जरा	-	12	उपादेय
8	बंध	4	-	हेय
9	मोक्ष	-	9	उपादेय

1. **जीव तत्त्व**-चैतन्य लक्षण, सदा सउपयोगी, असंख्यात प्रदेशी, सुख दुःख का ज्ञाता, वेदक, अरूपी जीव तत्व। **भेद** (1) समुच्चय जीव (2) **दो भेद**-त्रस-स्थावर या सिद्ध-संसारी। (3) **तीन भेद**-स्त्री, पुरुष, नपुंसक वेद, भव-सिद्धिक, अभव सिद्धिक, नो भव सिद्धिक नो अभव सिद्धिक। (4) **चार भेद**-नारक, तिर्यंच, मनुष्य, देव तथा चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवल दर्शनी। **पाँच भेद**-एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तथा सयोगी, मन योगी, वचन योगी, काय योगी, अयोगी। **6 भेद**-पृथ्वीकायादि 6 भेद अथवा सकषायी, चार कषायी, अकषायी। **7 भेद**-नारकी, तिर्यंच तिर्यंचणी, मनुष्य, मनुष्यणी, देव, देवी। **आठ भेद**-सलेशी, छलेशी, अलेशी। **नव भेद**-पृथ्वीकायादि पाँच, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय। **दस भेद**-एकेन्द्रियादि पाँच के पर्याप्त, अपर्याप्त। **ग्यारह भेद**-एकेन्द्रिय से चौरेन्द्रिय तक चार, नारकी, तिर्यंच, मनुष्य, भवनपति, वाणव्यंतर, ज्योतिषी, वैमानिक। **बारह भेद**-पृथ्वीकायादि 6काय के पर्याप्त, अपर्याप्त। **तेरह भेद**-6लेश्या के पर्याप्त, अपर्याप्त और अलेशी। **चौदह भेद**-एकेन्द्रिय के सूक्ष्म बादर पर्याप्त अपर्याप्ता चार, तीन विकलेन्द्रिय के पर्याप्त अपर्याप्ता, असंज्ञी और संज्ञी पंचेन्द्रिय के पर्याप्त अपर्याप्त। विस्तार से जीव के 563 भेद है।

(1) नारकी के 14 भेद-धम्मा, वंशा, शीला, अंजणा, रिठ्ठा, मघा, माघवई के गोत्र (1) रत्नप्रभा (2) शर्कराप्रभा (3) वालुकाप्रभा (4) पंकप्रभा (5) धूमप्रभा

(6) तमः प्रभा (7) तमःतमाप्रभा इन सात के पर्याप्ता अपर्याप्ता कुल 14 भेद।

क्रम	नरक	विस्तार (योजन)	पोलार	आंतरा	नरकावास
1	पहली	1,80,000	1,78,000	12	30 लाख
2	दूसरी	1,32,000	1,30,000	10	25 लाख
3	तीसरी	1,28,000	1,26,000	8	15 लाख
4	चौथी	1,20,000	1,18,000	6	10 लाख
5	पाँचवीं	1,18,000	1,16,000	4	3 लाख
6	छठी	1,16,000	1,14,000	2	99,995
7	सातवीं	1,08,000	3,000	-	5

(2) तिर्यंच के 48 भेद-स्थावर (एकेन्द्रिय) तिर्यंच के 22 भेद-पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय के सूक्ष्म बादर पर्याप्त अपर्याप्त 4x4=16 और वनस्पतिकाय के सूक्ष्म, प्रत्येक और साधारण (बादर के 2 भेद) के पर्याप्त अपर्याप्त 6 भेद = 22 भेद तीन विकलेन्द्रिय (बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौरेन्द्रिय) के पर्याप्त अपर्याप्त 3x2=6 भेद तिर्यंच पंचेन्द्रिय जलचर, थलचर, खेचर, उरपरिसर्प, भुजपरिसर्प के गर्भज सम्मुर्च्छिम इन दो-दो के पर्याप्ता अपर्याप्ता 5x2x2=20 भेद, ये कुल 48 भेद।

(3) मनुष्य के 303 भेद-15 कर्मभूमि, 30 अकर्मभूमि 56 अंतर द्वीप, ये कुल 101 भेद के गर्भज के पर्याप्त अपर्याप्त 101x2=202 और इनके सम्मुर्च्छिम 101 कुल 303 भरत, ऐरवत, महाविदेह तीन कर्मभूमि है ये जम्बूद्वीप में तीन धातकी खंड में ये तीनों के दो-दो क्षेत्र होने से 6 क्षेत्र इसी प्रकार पुष्करार्द्ध द्वीप में भी 6 क्षेत्र होने से 15 क्षेत्र हुए। कर्मभूमि में असि-मसि-कृषि आदि व्यापार होते हैं। अकर्मभूमि में ये तीनों कर्म नहीं होते 10 कल्प वृक्षों से व्यवहार चलता है। हेमवय, हैरण्यवय, हरिवास, रम्यकवास, देवकुरू उत्तरकुरू ये 6 क्षेत्र जंबूद्वीप में तथा 12-12 क्षेत्र धातकी खंड और पुष्करार्द्ध द्वीप में होते है यों कुल 30 अकर्मभूमि हुए। अंतर्द्वीप 56 है ये चुल्ल हिमवंत और शिखरी पर्वत के पास से लवण समुद्र में दोनों तरफ (पूर्व और पश्चिम दोनों तरफ से) दो-दो दाढ़ाओं जैसी (दाढ़े नहीं है, पर समझाने के लिए कहा है) श्रेणियाँ निकलती हैं, ये सभी स्वतंत्र द्वीप है, समुद्र में निकले हुए समान दूरी पर स्वनिर्मित समान आकार जैसे पर्वत से 300 योजन दूर लवण समुद्र में 300 योजन का द्वीप

ऐसे आगे 400 योजन दूर (जगती से) 400 योजन लंबा चौड़ा, यों सातवाँ द्वीप 900 योजन दूर 900 योजन लंबा चौड़ा इस प्रकार एक-एक पर्वत से 28-28 द्वीप इस प्रकार बने हैं, ये अंतर्द्वीप हैं। अकर्मभूमि समान इनका व्यवहार होता है। समुर्च्छिम मनुष्य 14 अशुचि स्थानों से उत्पन्न होते हैं।

(4) देवता के 198 भेद-10 भवनपति, 15 परमाधामी, 16 वाण व्यंतर, 10 जृंभक, 10 ज्योतिषी, 3 किल्विषी, 9 लोकांतिक, 12 देवलोक, 9 नवग्रैवेयक, 5 अणुत्तर विमान के देव इन 99 भेदों के पर्याप्ता अपर्याप्ता कुल 198 भेद है।

(2) अजीव तत्त्व-जड़ लक्षण, चैतन्य रहित होता है अजीव तत्त्व के 14 भेद है। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय इन तीन के देश, प्रदेश, स्कंध ये 9 भेद तथा अद्धासमय (काल) ये 10 भेद अरूपी अजीव के हुए। चार भेद पुद्‌गलास्तिकाय के स्कंध, देश, प्रदेश, परमाणु। ये 14 भेद हुए।

विस्तार से 560 भेद-अरूपी अजीव के 30 भेद धर्मास्तिकायादि चारों के प्रत्येक के द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, गुण ये पाँच-पाँच भेद से 4x5=20 तथा ऊपर के 10 भेद मिलाकर कुल 30 हुए। 530 भेद रूपी अजीव के इस प्रकार-

वर्ण-पाँच भेद (काला, नीला, लाल, पीला, सफेद), 2 गंध, 5 रस, 8 स्पर्श, 5 संस्थान से गुणा करने से 5x20=100 भेद।

गंध 2-भेद (सुरभिगंध, दुरभिगंध) को 5 वर्ण, 5 रस, 8 स्पर्श, 5 संस्थान से 46 भेद।

रस पाँच भेद (तीखा, कड़वा, कसायला, खट्टा, मीठा) से उपरोक्त 20 से गुणा करे 100 भेद।

स्पर्श 8 भेद (खुरदरा, कोमल, भारी, हल्का, ठंडा, गर्म, रूक्ष, स्निग्ध) के शेष 5 वर्ण, 2 गंध, 5 रस, 6 स्पर्श (खुरदरा कोमल छोड़कर) 5 संस्थान से गुणा 8x23=184 भेद।

5 संस्थान (परिमंडल, वृत्त, तिकोन, चौरस, आयत) को 20 से गुणा करने से 100 हुए 100+46+100+184+100=530 भेद + 30 ऊपर (अरूपी के) कुल 560 भेद।

(3) पुण्य तत्त्व-शुभ कर्म करके शुभ फल मिले, आत्मा को सुखानुभव हो वह पुण्य तत्त्व

नौ भेद-अन्नपुण्य, पाणपुण्य, लयणपुण्य, शयणपुण्य, वस्त्रपुण्य, मन, वचन, काय पुण्य और नमस्कार पुण्य। इन्हें विविध कर्मोदय से 42 प्रकार से भोगा जाता है।

वेदनीय कर्म-साता वेदनीय। **आयुष्य के तीन**-देवायु, मनुष्यायु, तिर्यंचायु।

नामकर्म की 37-देवगति, मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर, वैक्रिय, आहारक, तैजस, कार्मण शरीर, औदारिक, वैक्रिय, आहारक अंगोपांग, वज्र ऋषभ नाराच संहनन, समचौरस संस्थान, शुभ वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, शुभ विहायोगति, देवानुपूर्वी, मनुष्यानुपूर्वी, अगुरुलघु नाम, पराघात नाम, उच्छवास नाम, आतप नाम, उद्योत नाम, तीर्थंकर नाम, निर्माण नाम, त्रस नाम, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, शुभ-नाम, सुभग नाम, सुस्वर, आदेय, यशोकीर्ति नाम

गौत्रकी एक-उच्च गौत्र ये 42 प्रकृतियाँ।

(4) पाप तत्त्व-अशुभ करणी से अशुभ कर्म का उदय, आत्मा को दुःखानुभव हो। 18 पाप-(1) प्राणातिपात(2) मृषावाद (3) अदत्ता दान (4) मैथुन (5) परिग्रह (6) क्रोध (7) मान (8) माया (9) लोभ (10) राग (11) द्वेष (12) कलह (13) अभ्याख्यान (14) पैशून्य (15) परपरिवाद (16) रति अरति (17) माया मृषावाद (18) मिथ्या दर्शन शल्य।

पाप का फल 82 प्रकार से भोगा जाता है। 8 कर्मों की इस प्रकार-

5 ज्ञान- ज्ञानावरणीयादि पाँच ज्ञान प्राप्त नहीं हो।

दर्शनावरण-9 भेद-चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवल, निद्रा, निद्रानिद्रा, प्रचला, प्रचला प्रचला, स्त्यानगृद्धि का उदय

वेदनीय- 1 असाता वेदनीय उदय।

मोहनीय कर्म से 26-अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन इन चारों के क्रोध मान माया लोभ ये-16, तथा हास्य, रति, अरति, भय, शोक, जुगुप्सा, स्त्री वेद, पुरुष वेद, नपुंसक वेद और मिथ्यात्व मोहनीय।

आयुष्य कर्मोदय- नरकायुष्य

नाम कर्म उदय से 34-नरक, तिर्यंच गति, एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौरेन्द्रिय जाति, ऋषभ नाराच, नाराच, अर्द्ध नाराच, कीलिका, सेवार्त संहनन, न्यग्रोध परिमंडल, सादि, वामन, कुब्जक, हुण्डक संस्थान, अशुभ वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, अशुभ विहायो-गति, नरकानुपूर्वी, तिर्यंचानुपूर्वी, उपघात नाम, स्थावर नाम, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण-नाम, अस्थिर, अशुभ नाम, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय नाम, अपयश कीर्ति नाम।

गौत्र की 1-नीच गौत्र। अंतराय की 5-दानान्तराय लाभान्तराय, भोगान्तराय, उपभोगान्तराय वीर्यांतराय।

(5) आश्रव तत्त्व-अव्रत और अपच्चक्खाण से, विषय कषाय के सेवन से आत्मा रूपी तालाब में इन्द्रियादिक नाले छिद्रों द्वारा, कर्म रूप (पुण्य-पाप) जल का प्रवाह आवे, वह आश्रव तत्त्व-ये 20 प्रकार से कहे हैं। (1) मिथ्यात्व (2) अव्रत (3) प्रमाद (4) कषाय (5) अशुभ योग (6) प्राणातिपात (7) मृषावाद (8) अदत्तादान (9) मैथुन (10) परिग्रह (11 से 15) पाँच इन्द्रिय असंवर (16 से 18) मन वचन काय आश्रव (19) भण्डोपकरण (20) सूई कुशाग्र। विशेष रूप से 42 भेद भी कहे हैं-

उपरोक्त पाँच अव्रत के, 5 इन्द्रियाँ के, 4 कषाय, 3 अशुभ योग ये कुल 17 तथा 25 क्रियाएँ-काईया, अहिगरणिया, पाउसिया, पारितावणिया, पाणाइवाइया, आरंभिया, परिग्गहिया, मायावत्तिया, अपच्चक्खाणवत्तिया, मिच्छादंसणवत्तिया, दिट्ठिया, पुट्ठिया, पाडुच्चिया, सामंतोवणिवाइया, साहत्थिया, नेसत्थिया, आणवणिया, वेदारणिया, अणाभोगवत्तिया, अणवकंखवत्तिया, पेज्जवत्तिया, दोषवत्तिया, प्पउग्ग, सामुदाणिया, इरियावहिया।

(6) संवर तत्त्व-जीव रूपी तालाब में कर्म रूपी जल को व्रत, पच्चक्खाण आदि करके आने से रोके, वह संवर तत्त्व-सामान्यतया 20 भेद-(1) समकित (2) व्रत पच्चक्खाण (3) अप्रमाद (4) अकषाय (5) शुभ योग (6) जीव दया (7) सत्य वचन (8) दत्तव्रत ग्रहण (9) शील पालना (10) अपरिग्रह (11-18) पाँच इन्द्रिय 3 योग का संवर (19) भंडोपकरण उपधि की यतना (20) सूई कुशाग्र यतना से ले व रखें न करे। विशेष रूप से 57 भेद कहे हैं-

1 से 8 आठ प्रवचन माता-ईर्या, भाषा, एषणा, आदानभंडमत्तनिक्खेवणया, उच्चारपासवण खेलजल्लसिंघाण परिठावणियासमिति ये पाँच तथा मन, वचन, काय गुप्ति। **9 से 30 कुल 22 परिषह**-क्षुधा, पिपासा, शीत, उष्ण, दंसमशक, अचेल, अरति, स्त्री, चर्या, बैठना, शय्या, आक्रोश वचन, वध, याचना, अलाभ, रोग, तृणस्पर्श, मैल, सत्कार पुरस्कार, प्रज्ञा, अज्ञान, दर्शन। 10 प्रकार के **यति धर्म** (31 से 40) खंति, मुत्ति, आर्जव, मार्दव, लाघव, सच्चे, संजमे, तवे, चियाये (अकिंचण) बंभचेरवास। **41 से 52 तक 12 भावना**-अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचि, आश्रव, संवर, निर्जरा, लोक, बोधि, धर्म भावना। **53 से 57 पाँच चारित्र**-(1) सामायिक (2) छेदोपस्थापनीय (3) परिहार विशुद्धि चारित्र (4) सूक्ष्म सम्पराय (5) यथाख्यात चारित्र।

(7) निर्जरा तत्त्व-12 भेदे तपस्यादि करके देशरूप से कर्म की निर्जरा कर आत्म प्रदेश से इन्हें दूर करना निर्जरा तत्त्व है-निर्जरा के दो प्रकार द्रव्य और भाव।

द्रव्य (अकाम निर्जरा) आत्म शुद्धि के लक्ष्य के बिना, समझ बिना बाबा, जोगी, बाल तपस्वी, एकेन्द्रियादि में सम्यक्त्व बिना सहन करने से होने वाली निर्जरा।

कर्म पुद्‌गलों का दूर होना, तिर्यंचादि की बिना इच्छा सहन करने से कर्म पुद्‌गल का क्षय होना यह द्रव्य (अकाम निर्जरा है)।

भाव निर्जरा-आत्मा के शुद्ध परिणाम से, आत्म शुद्धि के आशय पूर्वक तपादि द्वारा समझ और समभाव पूर्वक सम्यक्त्व श्रद्धा से कष्ट सहन करना उससे होने वाली कर्म निर्जरा और कर्म की स्वयं की स्थिति से कर्म दूर हो, कर्म परमाणुओं को निरस करके दूर करे, तब आत्म परिणाम होता है वह भाव (सकाम) निर्जरा है। 12 प्रकार के तप करने से अनादि संबंध वाले कर्म सर्वथा छूटे यह निर्जरा है। तप से कर्मों की निर्जरा होती है, उन 12 तप के दो भेद-

6 बाह्य तप-अनशन, उणोदरी, वृत्तिसंक्षेप, रसपरित्याग, कायक्लेश, प्रतिसंलीनता।

6 आभ्यंतर तप-प्रायश्चित्त, विनय, वैयावच्च, स्वाध्याय, ध्यान, कायोत्सर्ग।

(8) बंध तत्त्व-आत्म प्रदेशों में कर्म दल क्षीर नीरवत्, लोहपिंड अग्निवत्, लोलीभूत हो जाये, बंध जाये वह बंध है। इसके चार प्रकार है-(1) **प्रकृति बंध**-इसके आठ भेद-ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयुष्य, नाम, गौत्र, अंतराय।

(2) स्थिति बंध-कर्म की अपनी-अपनी स्थिति होती है जघन्य अंतर्मुहूर्त्त उत्कृष्ट 70 क्रोड़ाक्रोड सागरोपम।

(3) अनुभाग बंध-शुभ, अशुभ, तीव्र मंद विपाक होना अनुभाग बंध है।

(4) प्रदेश बंध-परिमाण या माप होना। औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, भाषा, श्वासोच्छवास, मन और कार्मण ये आठ पुद्‌गल वर्गणाएँ हैं, इन्हें ग्रहण करता है।

कर्म	जघन्य	उत्कृष्ट स्थिति
ज्ञानावरणीय	अंतर्मुहूर्त्त	30 क्रोड़ाक्रोड़ी सागरोपम
दर्शनावरणीय	अंतर्मुहूर्त्त	30 क्रोड़ाक्रोड़ी सागरोपम
वेदनीय	2 समय	30 क्रोड़ाक्रोड़ी सागरोपम
मोहनीय	अंतर्मुहूर्त्त	70 क्रोड़ाक्रोड़ी सागरोपम
आयुष्य	अंतर्मुहूर्त्त	33 सागरोपम
नाम	आठ मुहूर्त्त	20 क्रोड़ाक्रोड़ी सागरोपम
गौत्र	आठ मुहूर्त्त	20 क्रोड़ाक्रोड़ी सागरोपम
अंतराय	अंतर्मुहूर्त्त	30 क्रोड़ाक्रोड़ी सागरोपम

(9) मोक्ष तत्त्व-जीव के संपूर्ण आत्म प्रदेशों का समस्त कर्म से छूटना, समस्त कर्म बंधन से मुक्त हो जाना, सर्व कार्य सिद्ध हो जाना, सर्व दुःख का अंत हो जाना मोक्ष तत्त्व है।

15 भेद सिद्ध होते हैं-तीर्थ सिद्ध, अतीर्थ सिद्ध, तीर्थंकर सिद्ध, अतीर्थंकर सिद्ध, गृहस्थलिंग सिद्ध, अन्यलिंग सिद्ध, स्वलिंग सिद्ध, स्त्रीलिंग सिद्ध, पुरुषलिंग सिद्ध, नपुंसकलिंग सिद्ध, प्रत्येकबुद्ध सिद्ध, स्वयंबुद्ध सिद्ध, बुद्धबोधित सिद्ध, एक सिद्ध, अनेक सिद्ध।

चार कारण से जीव मोक्ष जाता है-ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप का संयोजन होने से।

मोक्ष के 9 द्वार-सत्पद प्ररूपणा (तीनों काल मोक्ष है) द्वार, द्रव्य द्वार, क्षेत्र द्वार, स्पर्शना द्वार, काल द्वार, अंतर द्वार, भाग द्वार (समस्त जीवों के अनंतवे भाग, लोक के असंख्यातवें भाग में), भाव द्वार (क्षायिक भाव, केवलज्ञान दर्शन, क्षायिक समकित) अल्प बहुत्व द्वार (जघन्य 1 उत्कृष्ट 108)।

19 बोल वाले मोक्ष जाते हैं-त्रस, बादर, संज्ञी, वज्र ऋषभनाराच संहनन, शुक्लध्यान, मनुष्य गति, क्षायिक समकित, यथाख्यात चारित्र, पंडितवीर्य, केवलज्ञान, केवलदर्शन, भवसिद्धिक, परमशुक्ललेशी, चरम शरीरी, पर्याप्ता, अवेदी, अप्रमादी, अकषायी, स्नातक। जघन्य 2 हाथ उत्कृष्ट 500 धनुष वाला, जघन्य 9 वर्ष उत्कृष्ट करोड़ पूर्व वर्ष, कर्मभूमि में उत्पन्न मनुष्य हो, वह मोक्ष में जाता है।

2. पच्चीस बोल-(1) पहले 25 बोल साथ में 10 बोल अन्य कुल 35 बोल

1. **पहले बोले**-गति चार-नरक, तिर्यंच, मनुष्य, देव (प्रज्ञापना पद 23 उ.2)
2. **दूजे बोले**-जाति पाँच-एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौरेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय (प्र.प.23/2)
3. **तीजे बोले**-काया छः पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय, वायुकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय (ठाणांग 6, दशवैकालिक 4)

4. **चौथे बोले**-इन्द्रिय पाँच-श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, स्पर्शेइन्द्रिय (प्रज्ञापना पद 15, ठाणांग 5)
5. **पाँचवें बोले**-पर्याप्ति 6-आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छवास, भाषा और मन पर्याप्ति (भगवती श. 3 उ.1, प्रज्ञापना पद 28)
6. **छठे बोले-प्राण दस**-श्रोत्रेन्द्रिय बल प्राण, चक्षुइन्द्रिय बल प्राण, घ्राणेन्द्रिय बल प्राण, रसनेन्द्रिय बल प्राण, स्पर्शनेन्द्रिय बल प्राण, मन बल प्राण, वचन बल प्राण, काय बल प्राण, श्वासोच्छवास बल प्राण, आयुष्य बल प्राण (ठाणांग सूत्र 10)
7. **सातवें बोले**-शरीर पाँच-औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, कार्मण (प्रज्ञापना 21, ठाणांग 5)
8. **आठवें बोले**-योग पन्द्रह-सत्य मनोयोग, असत्य मनोयोग, मिश्र मनयोग, व्यवहार मनयोग, सत्यवचन योग, असत्य वचन योग, मिश्र वचन योग, व्यवहार वचन योग, औदारिक शरीर काययोग, औदारिक मिश्र काययोग, वैक्रिय काय योग, वैक्रिय मिश्र काय योग, आहारक काय योग, आहारक मिश्र काययोग, कार्मण काययोग (भग.श. 25/1 प्रज्ञा. पद 16)
9. **नवमें बोले**-उपयोग 12-मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यव ज्ञान, केवल ज्ञान, मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान, विभंग ज्ञान, चक्षु दर्शन, अचक्षु दर्शन, अवधि दर्शन, केवल दर्शन (प्रज्ञा. 29)
10. **दसवें बोले**-कर्म आठ-ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयुष्य, नाम, गौत्र, अंतराय (प्रज्ञापना पद 23, उत्तरा. सूत्र अ. 33)
11. **ग्यारहवें बोले**-गुणस्थान 14-मिथ्यात्व, सास्वादन, मिश्र, अविरति सम्यग् दृष्टि, देशविरति सम्यग्दृष्टि, प्रमत्त संयत, अप्रमत्त संयत, निवृत्ति बादर, अनिवृत्ति बादर, सूक्ष्म सम्पराय, उपशांत मोहनीय, क्षीण मोहनीय, सयोगी केवली, अयोगी केवली (समवायांग 14)
12. **बारहवें बोले**-पाँच इन्द्रिय के 23 विषय, 240 विकार (प्रज्ञा. 15)

श्रोत्रेन्द्रिय	3 विषय	12 विकार	3 शब्द × 2 शुभाशुभ × 2 रागद्वेष
चक्षुइन्द्रिय	5 विषय	60 विकार	5 वर्ण × 3 सचित्तादि×2 शुभाशुभ × 2 रागद्वेष
घ्राणेन्द्रिय	2 विषय	12 विकार	2 गंध × 3 सचित्तादि × 2 राग द्वेष
रसनेन्द्रिय	5 विषय	60 विकार	5 रस × 3 सचित्तादि ×2 शुभाशुभ× 2 रागादि
स्पर्शनेन्द्रिय	8 विषय	96 विकार	8 स्पर्श × 3 सचित्तादि × 2 शुभा. × 2 रागादि

13. **तेरहवें बोले**-मिथ्यात्व 10(25) जीव को अजीव श्रद्धे तो, अजीव को जीव श्रद्धे तो, धर्म को अधर्म श्रद्धे तो, अधर्म को धर्म श्रद्धे तो, साधु को असाधु श्रद्धे तो, असाधु को साधु श्रद्धे तो, संसार मार्ग को मोक्ष मार्ग श्रद्धे तो, मोक्ष मार्ग को संसार मार्ग श्रद्धे तो, 8 कर्म से मुक्त को अमुक्त श्रद्धे तो, अमुक्त को मुक्त श्रद्धे तो। इसमें 15 भेद और जोड़ने से 25 प्रकार का भी होता है-अभिग्राहिक, अनाभिग्राहिक, अभिनिवेशिक, सांशयिक, अनाभोग, लौकिक, लोकोत्तर, कुप्रावचन, जिनमार्ग से कम, जिनमार्ग से अधिक, जिनमार्ग से विपरीत, अविनय, अकिरिया, अज्ञान, आशातना मिथ्यात्व। (ठाणांग 10, आवश्यक सूत्र)
14. **चौदहवें बोले**-छोटी नव तत्त्व के 115 बोल-**जीव के 14**-सूक्ष्म एकेन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौरेन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय इन 7 के पर्याप्त अपर्याप्त (समवायांग 14, भग.श. 15)। **अजीव के 14 भेद**-धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय इन तीन के स्कंध, देश, प्रदेश ये 9 और काल ये 10 तथा पुद्गलास्तिकाय के स्कंध, देश, प्रदेश, परमाणु पुद्गल, ये 4 भेद कुल 14 भेद (उत्तराध्ययन अ. 36)

पुण्य के 9 भेद-अन्न, पाण, लयन, शयन, वस्त्र, मन, वचन, काय, नमस्कार पुण्य (ठाणांग 9)

पाप के 18 भेद-अठारह पाप स्थानक प्राणातिपात से मिथ्यादर्शन तक (आवश्यक सूत्र)

आश्रव के 20 भेद-मिथ्यात्व, अव्रत, प्रमाद, कषाय, योग (अशुभ), प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रिय, मन, वचन, काया (इन 18 को खुला छोड़ना) भंडोपकरण अयतना, शुचिकुसग्ग (समवा. 5, ठाणांग 5)

संवर के 20 भेद-समकित, प्रत्याख्यान, अप्रमाद, अकषाय, शुभ योग, पाँच व्रत, पाँच इन्द्रिय, तीन योग (पूर्ववत्) का संवर, भंडोपकरण की यतना, शुचिकुसग्ग यतना से रखे (प्रश्नव्याकरण, ठाणांग 10)

निर्जरा के 12 भेद-अनशन, ऊणोदरी, वृत्ति संक्षेप, रस परित्याग, कायक्लेश, प्रतिसंलीनता, प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, ध्यान, कायोत्सर्ग (भगवती शतक 25/7 उत्तरा. 30, औपपातिक सूत्र)

बंध के 4 भेद-प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेशबंध (ठाणांग 4)

मोक्ष के 4 भेद-ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप (ठाणांग, नवतत्व)

15. **पन्द्रहवें बोले**-आत्मा 8-द्रव्य, कषाय, योग, उपयोग, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, वीर्य आत्मा (भग. 12/10)
16. **सोलहवें बोले**-दंडक 24-सात नारकी का एक दंडक, 10 भवनपति के 10 दंडक, 5 स्थावर के पाँच, तीन विकलेन्द्रिय के तीन, तिर्यंच पंचेन्द्रिय का एक, मनुष्य का एक, वाण व्यंतर का एक, ज्योतिषी का एक, वैमानिक देवों का एक ये 24 दंडक (ठाणांग 1, भग.श. 24)
17. **सतरहवें बोले लेश्या 6**-कृष्ण, नील, कापोत, तेजो, पद्म, शुक्ल (प्रज्ञा.पद 17, उत्तरा. 34)
18. **अठारहवें बोले** दृष्टि तीन-सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि, मिश्रदृष्टि (ठाणांग 3, प्रज्ञा. 19)
19. **उन्नीसवें बोले**-ध्यान चार-आर्त्त, रौद्र, धर्म, शुक्ल ध्यान (भग.श. 25/7 ठाणांग 4, उत्तरा.)
20. **बीसवें बोले**-6 द्रव्य के 30 बोल (ठाणांग 5, उत्तरा. 28)

छ द्रव्य के नाम	द्रव्य	क्षेत्र से	काल से	भाव से	गुण से
धर्मास्तिकाय	एक	लोक प्रमाण	अनादि अनंत	अरूपी	चलन सहाय-पानी में मछली रूप
अधर्मास्तिकाय	एक	लोक प्रमाण	अनादि अनंत	अरूपी	स्थिर सहाय, पथिक को छाया का
आकाशास्तिकाय	एक	लोकालोक प्रमाण	अनादि अनंत	अरूपी	आकाश में विकास-भीत में खील, दूध में पतासा
काल	अनंत	अढ़ाई द्वीप प्रमाण	अनादि अनंत	अरूपी	वर्तना-कपड़ा और केंची
जीवास्तिकाय	अनंत	लोक प्रमाण	अनादि अनंत	अरूपी	उपयोग-चन्द्रमा की कला का
पुद्गलास्तिकाय	अनंत	लोक प्रमाण	अनादि अनंत	रूपी	सड़न गलन-बादलों का

21. **इक्कीसवें बोले**-राशि दो-जीव राशि, अजीव राशि (ठाणांग 2, समवायांग 2, उत्तरा. 36)
22. **बाईसवें बोले**-श्रावक के 12 व्रत भांगा 49 (भग.श. 8 उ. 5, हरिभद्रीय आवश्यक अ. 1 भगवती सूत्र)

निरपराधी त्रस जीव को नहीं मारे, स्थावर की मर्यादा करे, बड़ा झूठ नहीं बोले, बड़ी चोरी नहीं करे, पर स्त्री का त्याग, स्व स्त्री की मर्यादा, परिग्रह की मर्यादा, दिशा की मर्यादा, 26 बोल की मर्यादा 15 कर्मादान का त्याग, अनर्थ दंड का त्याग, प्रतिदिन विशुद्ध सामायिक करे, 14 नियम धारण करे, प्रतिपूर्ण पौषध करे, श्रमण निर्ग्रंथों को प्रतिदिन 14 प्रकार का निर्दोष दान बहरावें। एक करण एक योग से 9 भंग, एक करण दो योग (12) से 9 भंग, एक करण तीन योग (13) से 3 भंग। दो करण एक योग (21) से 9, दो करण दो योग (22) से 9, दो करण तीन योग (23) से 3 भंग। तीन करण 1 योग से (31) से (3) भंग 32 से (3) भंग 33 से एक भंग, यों कुल 21+21+7=49 भंग।

23. **तेवीसवें बोल**-साधु के पाँच महाव्रत-इनके भंग-तीन करण तीन योग से पहले व्रत की 5 एकेन्द्रिय शेष 4 इन्द्रिय 9×9=81, दूसरे की 4 क्रोध लोभ भय हास्य ×9 (नवकोटि 3×3) से 36, तीसरे की अल्प, बहु, सूक्ष्म, स्थूल, सचेत अचेत 6×9=54, चौथे की देव मनुष्य तिर्यंच 3×9=27, पाँचवें की अल्प बहु सूक्ष्म स्थूल सचेत अचेत 6×9=54 कुल 252 भंग (दशवै. 4/ठाणांग 5)
24. **चोबीसवें बोले**-प्रमाण चार-प्रत्यक्ष, अनुमान, आगम, उपमान (अनुयोग द्वार) अथवा भांगा 49, जो 22वें बोल में दिये गये हैं।
25. **पच्चीसवें बोले**-चारित्र पाँच-सामायिक, छेदोपस्थापनीय, परिहार विशुद्धि, सूक्ष्म संपराय, यथाख्यात चारित्र (ठाणांग 5)

इनके साथ 10 बोल उपयोगी बोल जोड़ने से-(1) **सात नय**-नैगम, संग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ़, एवंभूत नय (समवायांग सूत्र 7)।

(2) **निक्षेप चार**- नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव निक्षेप (अनुयोग द्वार)।

(3) **समकित पाँच**-उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक, सास्वादन, वेदक।

(4) **रस नव**-श्रृंगार, वीर, करूण, हास्य, रौद्र, भयानक, अद्भुत, विभत्स, शांत रस।

(5) **भावना बारह**-अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचि, आश्रव, संवर, निर्जरा, लोक स्वरूप, बोधि, धर्म भावना।

(6) **अनुयोग चार**-द्रव्यानुयोग, गणितानुयोग, चरणकरणानुयोग, धर्मकथानुयोग।

(7) **तत्त्व तीन**-देव, गुरु, धर्म।

(8) **समवाय पाँच**-काल, स्वभाव, नियत, कर्म, पुरुषाकार पराक्रम (उद्यम)।

(9) **पाखंडी के 363 भेद**-क्रियावादी के 180, अक्रियावादी 84, विनयवादी 32, अज्ञानवादी 67.

(10) **श्रावक के 21 गुण**-अक्षुद्र (तुच्छवृत्ति नहीं), यशवंत, सौम्य प्रकृति, लोकप्रिय, अक्रूर, पापभीरू, श्रद्धावंत, चतुर, लज्जावान, दयावंत, माध्यस्थ दृष्टि, गंभीर, गुणानुरागी, धर्मोपदेशक, न्यायपक्षी, शुद्ध विचारक, मर्यादावान, विनयशील, कृतज्ञ, परोपकारी, सत्कार्य में सदा सावधान।

3. जीवधड़ा-अनेक सूत्रों से संकलित जीवधड़ा को पहले 27 द्वार से भेद, संख्या नाम बताये हैं, बाद में 563 जीवों की मार्गणाएँ बताई है। 27 द्वार-

1. **जीव द्वार**-समुच्चय 563 भेद-14 नरक, 48 तिर्यंच, 303 मनुष्य, 198 देवता।
2. **गति द्वार**-नरक में 14 (7 पर्याप्त 7 अपर्याप्त), तिर्यंच में-22 एकेन्द्रिय, 6 विकलेन्द्रिय, 20 तिर्यंच पंचेन्द्रिय, 10 तिर्यंचनी (5 संज्ञी के पर्याप्त अपर्याप्त), मनुष्य में 303 (संज्ञी के 101 पर्याप्त+अपर्याप्त+सम्मुर्च्छिम), मनुष्यनी के 202 (संज्ञी के पर्याप्त अपर्याप्त) देवगति में 198 (10 भवनपति, 15 परमाधार्मिक, 16 वाणव्यंतर, 10 जृभंक, 10 ज्योतिषी, 12 देवलोक, 3 किल्विषी, 9 लोकान्तिक, 9 ग्रैवेयक, 5 अणुत्तर विमान के पर्याप्त अपर्याप्ता) देवी में 128 (25 भवनपति आदि, 26 व्यंतरादि, 10 ज्योतिषी, 2 देवलोक, 1 किल्विषी के पर्याप्ता अपर्याप्ता 64x2) सिद्ध गति में भेद नहीं होते।
3. **इन्द्रिय द्वार**-सइन्द्रिय 563-एकेन्द्रिय में 22, (पृथ्वीकाय 4, अप्काय 4, तेउकाय 4, वायुकाय 4, वनस्पतिकाय 6) बेइन्द्रिय 2, तेइन्द्रिय के 2, चौरेन्द्रिय के 2, पंचेन्द्रिय में 535 (नारकी 14, तिर्यंच 20, मनुष्य 303, देवता 198) अनिन्द्रिय 15 (कर्मभूमि के 13वें 14वें गुणस्थान वाले)। श्रोत्रेन्द्रिय में 535 (पंचेन्द्रियवत्) चक्षुइन्द्रिय में 537 (दो चक्षुइन्द्रिय बढ़े) घ्राणेन्द्रिय में 539 (दो तेइन्द्रिय बढ़े) रसनेन्द्रिय में 541 (बेइन्द्रिय बढ़े), स्पर्शेन्द्रिय में 563 सभी जीव के भेद। श्रोत्रेन्द्रिय के अलद्धिया में 43-एकेन्द्रिय 22, विकलेन्द्रिय 6, कर्मभूमि पर्याप्त 15 । चक्षुइन्द्रिय के अलद्धिया में 41-एकेन्द्रिय 22, बेई तेई. के 4, कर्मभूमि पर्याप्ता 15 (13वें 14वें गुण) घ्राणेन्द्रिय अलद्धिया में 39 (पूर्वोक्त में तेइन्द्रिय के 2 कम)।

रसनेन्द्रिय के अलद्धिया 37 पूर्वोक्त में से बेइन्द्रिय के 2 कम।
स्पर्शेन्द्रिय के अलद्धिया 15 कर्मभूमि के पर्याप्ता (13वें 14वें गुणस्थानवर्ती)

4. **काय द्वार**-सकाय 563-एकेन्द्रिय में (स्थावरकाय) 22, त्रसकाय 541, अकाय सिद्ध।
5. **योग द्वार**-सयोगी 563-मनयोगी 212 (7 नरक, 5 संज्ञी ति.पं., 101 मनुष्य 99 देव), वचन योगी 220 (उपरोक्त में तीन विकलेन्द्रिय और असंज्ञी ति.पं. बढ़े),

काययोगी 563 सभी। मन वचन के 212, व्यवहार भाषा 220, औदारिक योग 351 (303 मनुष्य+48 तिर्यंच) औदारिक मिश्र 247 (वायु का पर्याप्त 1+22 तिर्यंच के अपर्याप्त+5 संज्ञी ति.पं. पर्याप्त+101 संज्ञी मनुष्य अपर्याप्त+101 सम्मुर्च्छिम मनुष्य अपर्याप्त+15 कर्मभूमिज पर्याप्त), वैक्रिय योग 233 (14 नारकी, 5 सन्नी ति.पं.+1 वायु पर्याप्त+15 कर्मभूमि पर्याप्त 198 देव) वैक्रिय मिश्रयोग 219 (14 नारकी+6 तिर्यंच+184 देव (198 में से नौ ग्रैवेयक, 5 अणुत्तर छोड़ना) आहारक योग 15 (कर्मभूमि मनुष्य), आहारक मिश्रयोग 15, कार्मण योग में 347 (7 नारकी, 24 तिर्यंच, समु. मनुष्य 101, संज्ञी मनुष्य 101 के अपर्याप्त 99 देव के अपर्याप्त 15 कर्मभूमि पर्याप्त-13वें गुणस्थान) अयोगी में 15 (14 गुणस्थान की अपेक्षा)।

6. **वेद द्वार**-सवेदी 563, पुरुष वेद-410 (संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय 10, संज्ञी मनुष्य 202, देव 198) स्त्री वेद में 340 (ति.पं. 10, मनुष्य 202, देव (दूसरे तक) 128) नपुंसक वेद में 193 (नारकी 14, तिर्यंच 48, समु. मनु. 101, कर्मभूमि के पर्याप्ता अपर्याप्ता 30=193) एकांत पुरुष वेद में 70 (देवलोक 3 से 12 में 10, किल्विषी 2 (2-3) लोकांतिक 9, ग्रैवेयक 9, अणुत्तर में 5 इन 35 के पर्या. अपर्या.) एकांत नपुंसक वेद में 153 (नारकी 14, तिर्यंच 38 (संज्ञी छोड़) समु. मनु अपर्याप्त 101), एक वेद में 223 (नारकी 14, तिर्यंच 38, समु. मनुष्य 101, देव तीन से सर्वार्थ. तक 70), दो वेद में 300 (मनुष्य युगलिया 86 के पर्या. अपर्या. देव 128 भवनपति से दूसरे देव तक 64x2) तीन वेद में 40 (संज्ञी तिर्यंच के अपर्या. 10 और 15 कर्मभूमि के पर्याप्त- अपर्याप्त), अवेदी में 15-कर्मभूमि के पर्याप्त।
7. **कषाय द्वार**-सकषायी 563 (चारों में) अकषायी 15 कर्मभूमि के (11 से 14 गुणस्थान)

8. **लेश्या द्वार**-सलेशी 563-कृष्ण लेश्या में 459 (5-6-7 नरक के पर्या. अपर्या. ये 6, तिर्यंच 48, मनुष्य 303, देव 102-भवनपति-व्यंतर 51 के पर्या. अपर्या.) नील लेश्या में 459 (कृष्ण लेश्या जैसे) कापोत लेश्या 459 (कृष्ण लेश्या की तरह परन्तु यहाँ नरक के 1-2-3 में से) तेजो लेश्या 343 (पृथ्वी पानी वन. के अपर्याप्त-3, संज्ञी ति.पं. 10, संज्ञी मनुष्य के पर्याप्त अपर्याप्त 202, देव 128-64 के पर्या. अपर्या.) पद्म लेश्या में 66 (संज्ञी तिर्यंच 10, कर्मभूमि मनुष्य 30, देव 26-9 लोकांतिक, दूसरे किल्विषी, 3-4-5 देवलोक इन 13 के पर्या. अपर्या.) शुक्ल लेश्या 84 (10 संज्ञी तिर्य., 30 कर्मभूमि मनुष्य, 44 देव (छठे से सर्वार्थसिद्ध 22x2), एक लेश्या में 106 (10 नारकी तीसरी पाँचवीं छोड़ 5x2), देव 96 (10 ज्योतिषी, 3 किल्विषी, 12 देवलोक, 9 लोकान्तिक, 9 ग्रैवेयक, 5 अणुत्तर इन 48 के पर्याप्त अपर्या.) दो लेशी में 4 (तीसरी पाँचवीं नरक ×2), तीन लेशी में 136 (एकेन्द्रिय 19 (पृथ्वी पानी वनस्पति छोड़), 6 विकलेन्द्रिय, 10 असंज्ञी ति.पं. 101 समु. मनुष्य अपर्याप्त), चार लेशी में 277 (पृथ्वी पानी वनस्पति के 3 अपर्याप्त, 86 युगलिक के पर्या. अपर्याप्ता 172 तथा 51 देव भवन. वाण. के पर्याप्त अपर्याप्त ×2) पाँच लेशी नहीं होते। छः लेशी में 40 (10 तिर्यंच संज्ञी पं., 30 कर्मभूमि मनुष्य)। एकांत कृष्ण लेशी 4 (छठी सातवीं नरकों के×2), एकांत नील लेशी 2 (चौथी नरक के×2) एकांत कापोत लेशी 4 (1-2 नरक के×2), एकांत तेजोलेशी 26 देव (10 ज्यो., दो देवलोक (1-2) पहला किल्विषी के×2), एकांत पद्म लेशी में 26 देव (तीन से पांच देवलोक, 9 लोकांतिक, दूसरे किल्विषी के ×2), एकांत शुक्ललेशी में 44 (छठे से सर्वार्थसिद्ध 22 के ×2) अलेशी 15 कर्मभूमि 14वें गुण.।

9. **सम्यक्त्व द्वार**-सम्यग्दृष्टि में 283 (13 नारकी (सातवीं के अपर्या छोड़), 10 तिर्यंच पं. संज्ञी, 3 विकले. के अपर्याप्त, 5 असंज्ञी तिर्यंच के अपर्या., 90 मनुष्य (15 कर्मभूमि 30 कर्मभूमि के पर्याप्त अपर्याप्त), 162 देव (15 परमाधामी 3 किल्विषी, इनके पर्याप्ता अपर्या. छोड़)

मिथ्यादृष्टि-553 (नारकी 14, तिर्यंच 48, मनुष्य 303, देव 188 (5 अणुत्तर के प. अप. छोड़)

मिश्रदृष्टि 103 (नरक के पर्याप्त 7, 5 संज्ञी ति. के पर्याप्त, 15 कर्मभूमि मनुष्य के पर्याप्त, देव 76 (99 में से 15 परमाधामी, 3 किल्विषी, 5 अणुत्तर छोड़), एकांत सम्यग्दृष्टि में 10 (5 अणुत्तर विमान×2) एकांत मिथ्यादृष्टि में 280- (1 सातवीं नरक के अपर्याप्त, 30 तिर्यंच-22 एकेन्द्रिय 3 विकले. 5 असं ति. के पर्याप्त), 101 समु. मनु. अपर्याप्त, 112 मनुष्य (56 अंतर्द्वीपा के पर्या. अपर्या.) 36 देव (15 परमाधामी 3 किल्विषी केx2) एक दृष्टि में 290 (एकांत समदृष्टि 10, मिथ्यादृष्टि 280), दो दृष्टि में 170 (6 नरक अपर्याप्त, 5 संज्ञी तिर्य. अपर्या., 5 असंज्ञी तिर्य. के अपर्या.-3 विकलेन्द्रिय के अपर्या., 15 कर्मभूमि के अपर्या. 30 अकर्मभूमि के पर्या. अपर्या., 76 देव के अपर्याप्ता (99 में से 15 परमाधामी 3 किल्विषी, 5 अणुत्तर के अप. छोड़कर) तीन दृष्टि में 103 मिश्र दृष्टिवत्। **सास्वादन सम्यक्त्व**-213 (कर्म ग्रंथ भाग 2 में नरकानुपूर्वी का उदय न होने से सास्वादन समकित में नैरयिक के अपर्याप्त के भेद नहीं लिये हैं वहाँ 207 भेद लिये हैं।) (13 नरक सातवीं के अपर्या. छोड़, 10 संज्ञी तिर्यंच, 5 असंज्ञी तिर्यंच और तीन विकले. के अपर्याप्त, 30 कर्मभूमि के 15x2, देव 152 में (15 परमाधामी, 3 किल्विषी 5 अणुत्तर इनके पर्याप्ता अपर्याप्ता छोड़) वेदक सम्यक्त्व में 103 (मिश्रदृष्टिवत्) **उपशम सम्यक्त्व में 205-** 7 नरक के पं., 5 सं.ति.के.प., 15 कर्मभूमिज प, 111 देव (10 भ. 26 वाण. 10 ज्यो इन सबके पर्याप्त तथा 12 दे. 9 लोका. 9 ग्रै. 5 अनु.=35 के प. अप. ये 138 भी मिलते हैं) 13 नरक (सातवीं के अपर्या. छोड़) 10 संज्ञी तिर्यंच, 30 मनुष्य कर्मभूमि के पर्या. अपर्या., 152 देव सास्वादनवत्) **क्षयोपशम सम्य.** में 275 (13 नारकी, 10 तिर्यंच, 90 मनुष्य (कर्म+अकर्म के पर्या. अपर्या.), 162 देव (198 में 15 परमाधामी 3 किल्विषी केx2 छोड़) **क्षायिक सम्यक्त्व** में 262 (8 नरक 1 से 4 केx2, तिर्यंच 2 स्थलचर के पर्या. अपर्या., 90 मनुष्य (15+30 केx2) देव 162 (क्षयोपशमवत्)। (35 वैमानिक देवों के पर्या. अपर्या. 70 भेद भी मिलते हैं।)

10. **ज्ञान द्वार**-समुच्चय ज्ञान में 283 मतिश्रुत ज्ञान 283 (सम्यगदृष्टिवत्) अवधि ज्ञान में 210 (13 नारकी, सातवीं के अपर्या छोड़), 5 संज्ञी तिर्यंच पर्या., 30 मनुष्य (15x2 कर्मभूमि) 162 देव क्षयोपशमवत्। मनःपर्यवज्ञान 15 कर्मभूमि के पर्या., केवलज्ञान में 15 पूर्ववत्, समुच्चय अज्ञान और मतिश्रुत अज्ञान में 553 (563 में से अणुत्तर विमान के 10 कम) विभंग ज्ञान 222

(14 नारकी, 5 संज्ञी तिर्यंच पर्या., 15 कर्मभूमि पर्याप्त, 188 देव) (अणुत्तर छोड़)।

11. **दर्शन द्वार**-चक्षुदर्शन 537 (चक्षु इन्द्रियवत्) अचक्षु दर्शन 563, अवधि दर्शन में 247 (14 नारकी, 5 संज्ञी तिर्यंच पर्या., 30 मनुष्य कर्मभूमि के पर्या. अपर्या., 198 देव) केवलदर्शन में 15 कर्मभूमि के पर्याप्ता।

12. **संयत द्वार**-समुच्चय संयत-15, कर्मभूमि पर्या., सामायिक, सूक्ष्म संपराय, यथाख्यात तीनों में 15 उपरोक्त, छेदोपस्थापनीय और परिहार विशुद्धि में 10 (भरत ऐरवत के पर्याप्ता) संयतासंयत 20 (5 संज्ञी तिर्यंच, 15 कर्मभूमि के पर्याप्ता)। असंयत-563 (समुच्चय), नो संयत नो असंयत नो संयता संयत नहीं।

13. **उपयोग द्वार**-साकारोपयोग अनाकारोपयोग में 563

14. **आहारक द्वार**-आहारक 563, अनाहारकों में 347 (7 नरक, 24 तिर्यंच, 101 संज्ञी मनुष्य के इन तीनों के अपर्याप्ता), 101 असंज्ञी मनुष्य के अपर्याप्ता, 15 कर्मभूमि के पर्याप्ता (13वें 14वें गुण. वाले), 99 देवों के अपर्याप्त।

15. **भाषक द्वार**-भाषक में 220 (7 नरक+5 संज्ञी तिर्यंच+5 असंज्ञी तिर्यंच+3 विकलेन्द्रिय+101 मनुष्य संज्ञी, 99 देव इन सभी के पर्याप्त) अभाषक में 358 (7 नरक+22 एकेन्द्रिय+3 विकले.+5 संज्ञी तिर्यंच+5 असंज्ञी ति.पं.+101 संज्ञी मनु.+101 असंज्ञी मनु. 99 देव इन सभी के अपर्याप्ता+15 कर्मभूमि अयोगी पर्याप्ता)।

16. **परित्त द्वार**-संसारपरित्त 563, अपरित्त-553 (अणुत्तर 10 छोड़े), कायपरित्त 559 (सूक्ष्म और साधारण वनस्पति के पर्याप्त अपर्याप्त छोड़कर) काय अपरित में 4 (बाकी बचे 4), नो परित नो अपरित-नहीं।

17. **पर्याप्ति द्वार**-पर्याप्त में 231 (नरक 7, तिर्यंच 24, मनुष्य 101, देव 99) अपर्याप्त में 332 (231+101 सम्मुर्च्छिम मनुष्य इनके अपर्याप्ता) नो पर्याप्त नो अपर्याप्त नहीं-

18. **सूक्ष्म द्वार**-सूक्ष्म 10 (5 स्थावर के पर्याप्त-अपर्याप्त) बादर 553 (सूक्ष्म छोड़कर) नो सूक्ष्म नो बादर-नहीं।

19. **सन्नी द्वार**-संज्ञी 424 (नरक 14, तिर्यंच संज्ञी 10, मनुष्य 202, देव 198) असंज्ञी में 191 (प्रथम नरक के अपर्याप्त, 38 तिर्यंच संज्ञी 10 छोड़कर, 101 समु. मनु. अपर्याप्त, 51 देव (भवनपति, व्यंतर के अपर्याप्त) नो सन्नी नो असन्नी 15 कर्मभूमि के।

20. **भव्य द्वार**-भव्य में 563, अभव्य 553 परित्तवत्। नो भव्य नो अभव्य-नहीं।

21. **चरम द्वार**-चरम 563, अचरम 553 परित्तवत्।

22. **संहनन द्वार**-वज्र ऋषभ नाराच में 212 (10 तिर्यंच 202 मनुष्य संज्ञी) मध्य के चार संहनन 40-(10 संज्ञी तिर्यंच, 30 मनुष्य 15 कर्मभूमि×2) सेवार्त्त संहनन् 179 (48 तिर्यंच, 101 असंज्ञी मनुष्य अपर्याप्त, 30 कर्मभूमि के दोनों पर्या. अपर्या.)।

23. **संस्थान द्वार**-समचतुरस्त्र संस्थान में 410 (10 तिर्यंच, 202 मनुष्य (संज्ञी) 198 देव), मध्य के चार में 40 (मध्य संहननवत्) हुण्डक संस्थान 193 (14 नारकी, 48 तिर्यंच 101 समुर्च्छम मनुष्य अपर्याप्त, 30 मनुष्य (कर्मभूमि के दोनों)।

24. **क्षेत्र द्वार**-एक भरत में 51 (48 तिर्यंच, भरत के मनुष्य तीनों पर्या., अपर्या., समु.), पाँच भरत में 63 (48 तिर्यंच 15 मनुष्य (5×3 भरत) एक ऐरवत में 51 (भरतवत्) पाँच एरवत में 63 (भरतवत्) एक महाविदेह में 57 (48 तिर्यंच 9 मनुष्य महाविदेह, देवकुरू, उत्तरकुरू तीनों के तीनों प्रकार के) पाँच महाविदेह में 93 (48 तिर्यंच 45 मनुष्य) (महाविदेह देवकुरू उत्तरकुरू 5x3x3) जंबूद्वीप में 75 (तिर्यंच 48, मनुष्य 27 (भरत एक, महाविदेह 1, एरावत एक 6 अकर्म भूमि के तीन-तीन) लवण समुद्र में 216 (तिर्यंच 48, 168 मनुष्य (56 अंतर्द्वीप के×3), धातकी खंड के 102 (48 तिर्यंच 54 मनुष्य (2 महाविदेह, 2 भरत, 2 ऐरवत, 12 अकर्म भूमि केx3) कालोदधि समुद्र 46 तिर्यंच (48 में दो बादर तेउ छोड़कर) पुष्करार्द्ध द्वीप में 102 धातकी खंडवत्। अढ़ाई द्वीप में 351 (तिर्यंच 48, मनुष्य 303) अढ़ाई द्वीप बाहर 108 (46 तिर्यंच, बादर तेउ के 2 छोड़) 62 देव (16 व्यंतर, 10 जृंभक, 5 ज्योतिषी अचर इनके पर्याप्त अपर्याप्ता), अधोलोक में 115 (नारकी 14, तिर्यंच 48, 3 मनु. (सलिलावती और वप्रा विजय की अपेक्षा से तीनों भेद) तिर्च्छा लोक 423 (48 तिर्यंच, 303 मनुष्य, 72 देव (26 वाण, 10 ज्यो. के पर्या. अपर्या.) ऊर्ध्वलोक में 122 (तिर्यंच 46, देव वैमानिक 76) सिद्धशिला में 12 (10 तिर्यंच स्थावर पाँच सूक्ष्म के पर्याप्त अपर्याप्त, बादर पृथ्वी के पर्याप्त अपर्याप्त) सिद्धशिला के ऊपर 7वीं नरक के नीचे और लोक के चरमांत में 12 (10 तिर्यंच सिद्धशिलावत्, 2 बादर वायु के पर्याप्त अपर्या.)।

25. **शाश्वत् द्वार**-शाश्वत् में 250 [7 नरक पर्या., 43 तिर्यंच (5 संज्ञी तिर्यंच के अपर्याप्ता छोड़) 101 संज्ञी मनुष्य पर्याप्ता, 99 देव के पर्याप्ता] अशाश्वत-393

(7 नरक, 5 संज्ञी तिर्यंच, 101 संज्ञी मनुष्य, 99 देव के इन सभी के अपर्याप्त असंज्ञी मनुष्य 101 के अपर्याप्त)।

26. **अमर द्वार**-अमर में 192 (7 नरक, 86 युगलिक, 99 देव तीनों के अपर्याप्त) मरने वालों में 371 (7 नरक पर्या., 48 तिर्यंच, 101 संज्ञी मनुष्य पर्या., 101 असंज्ञी मनुष्य अपर्याप्त 15 कर्मभूमि अपर्याप्त, 99 देव पर्याप्त)

27. **गर्भज द्वार**-गर्भज-212 (10 तिर्यंच संज्ञी, 101 संज्ञी मनुष्य अपर्याप्त 101 संज्ञी मनु. पर्याप्त) नो गर्भज में 351 (14 नारकी, 38 तिर्यंच (संज्ञी तिर्यंच 10 छोड़ना), 101 समु. मनु. अपर्याप्त, 198 देव)।

4. 563 जीवों की 563 मार्गणाएँ-563 जीवों में से चारों गति में जितने जीव जहाँ-जहाँ होते है, उनकी 563 मार्गणाएँ-

क्रम	जीवों के भेद 563 जीव	नरक 14	तिर्यंच 48	मनुष्य 303	देव 198
1	अधोलोक में केवली	0	0	1	0
2	निश्चय एक भवावतारी	0	0	0	2
3	तेजोलेशी एकेन्द्रिय	0	3	0	0
4	पृथ्वीकाय	0	4	0	0
5	मिश्रदृष्टि तिर्यंच	0	5	0	0
6	ऊर्ध्वलोक की देवी	0	0	0	6
7	नरक में पर्याप्ता	7	0	0	0
8	दो योगी तिर्यंच में	0	8	0	0
9	ऊर्ध्वलोक नो गर्भज तेजोलेशी	0	3	0	6
10	एकांत सम्यक् दृष्टि	0	0	0	10
11	वचनयोगी चक्षु इं. तिर्यंच	0	11	0	0
12	अधोलोक गर्भज	0	10	2	0
13	वचनयोगी तिर्यंच	0	13	0	0
14	अधोलोक वचनयोगी औदारिक शरीर में	0	13	1	0
15	केवली	0	0	15	0
16	ऊर्ध्व. पंचे. तेजो लेश्या	0	10	0	6
17	समदृष्टि घ्राणे. तिर्यंच	0	17	0	0
18	समदृष्टि तिर्यंच में	0	18	0	0
19	ऊर्ध्वलोक में तेजो लेश्या में	0	13	0	6
20	मिश्रदृष्टि गर्भज	0	5	15	0
21	औदारिक शरीर से वैक्रिय वाले	0	6	15	0
22	एकेन्द्रिय जीवों में	0	22	0	0
23	अधोलोक मिश्रदृष्टि	7	5	1	10
24	घ्राणेन्द्रिय तिर्यंच	0	24	0	0
25	अधो. वचनयोगी देव	0	0	0	25
26	त्रस तिर्यंच में	0	26	0	0
27	ऊर्ध्व. शुक्ल लेशी अभाषक	0	5	0	22
28	बादर तिर्यंच एक संहनन का	0	28	0	0
29	अधो. त्रस औदारिक	0	26	3	0
30	एकांत मिथ्यात्वी तिर्यंच	0	30	0	0
31	अधो. पुरुषवेद भाषक	0	5	1	25
32	पद्मलेशी मिश्रदृष्टि	0	5	15	12
33	पद्मलेशी वचनयोगी में	0	5	15	13
34	ऊर्ध्व. एकांत मिथ्यात्वी	0	28	0	6
35	अवधि दर्शन औदा. शरीर	0	5	30	0
36	ऊर्ध्व एकांत नपुंसक	0	36	0	0
37	अधो. पंचे. नपुंसक	14	20	3	0
38	अधो. मनोयोगी	7	5	1	25
39	अधो. एकांत असंज्ञी	0	38	1	0
40	औदारिक शुक्ल लेशी में	0	10	30	0
41	ऊर्ध्व. तिर्यंच शाश्वता	0	41	0	0
42	शुक्ल लेशी वचन योगी	0	5	15	22
43	ऊर्ध्व. में मनयोगी	0	5	0	38
44	शुक्ल लेशी देवता में	0	0	0	44
45	कर्मभूमि मनुष्य	0	0	45	0
46	अधो. वचनयोगी	7	13	1	25
47	ऊर्ध्व. शुक्ल लेशी अवधिज्ञानी	0	5	0	42

48	अधो. त्रस अभाषक	7	13	3	25
49	ऊर्ध्व शुक्ल लेशी अव. दर्शनी	0	5	0	44
50	ज्योतिषी की आगत में	0	5	45	0
51	अधो. औदारिक शरीर में	0	48	3	0
52	ऊर्ध्व. शुक्ल समदृष्टि	0	10	0	42
53	अधो. एकांत नपुंसक वेद	14	38	1	0
54	ऊर्ध्व. शुक्ल लेशी	0	10	0	44
55	अधो. बादर नपुंसक	14	38	3	0
56	तिर्च्छा. मिश्रदृष्टि में	0	5	15	36
57	अधो. पर्याप्ता	7	24	1	25
58	अधो. अपर्याप्ता	7	24	2	25
59	कृष्ण लेशी मिश्रदृष्टि	3	5	15	36
60	अकर्म संज्ञी मनुष्य	0	0	60	0
61	ऊर्ध्व. अनाहारक	0	23	0	38
62	अधो. एकांत मिथ्यात्वी	1	30	1	30
63	ऊर्ध्व. अधो. देव मरने वाले	0	0	0	63
64	पद्मलेशी समदृष्टि	0	10	30	24
65	अधो. तेजो लेशी	0	13	2	50
66	पद्मलेशी में	0	10	30	26
67	अधो. नो गर्भज प्र.श. शरीरी मरने वाले	7	34	1	25
68	तेजो. मिश्रदृष्टि	0	5	15	48
69	ऊर्ध्व. बादर शाश्वत	0	31	0	38
70	अधो. अभाषक	7	35	3	25
71	अधो. अवधि दर्शन	14	5	2	50
72	तिर्च्छा. देवता	0	0	0	72
73	अधो. बादर मरने वाले	7	38	3	25
74	तिर्च्छा नो गर्भज शाश्वता	0	38	0	36
75	ऊर्ध्व. अवधिज्ञान	0	5	0	70
76	ऊर्ध्व. देवता	0	0	0	76
77	अधो. चक्षु इं. नो गर्भज	14	12	1	50

78	ऊर्ध्व. नो गर्भज समदृष्टि	0	8	0	70
79	ऊर्ध्व. शाश्वत	0	41	0	38
80	धातकी खंड त्रस	0	26	54	0
81	देव समदृष्टि पर्याप्ता	0	0	0	81
82	शुक्ल लेशी समदृष्टि	0	10	30	42
83	अधो. मरने वाले	7	48	3	25
84	शुक्ल लेशी जीवों में	0	10	30	44
85	अधो. कृष्ण लेशी त्रस	6	26	3	50
86	ऊर्ध्व. पुरुष वेद	0	10	0	76
87	ऊर्ध्व. घ्राणे. समदृष्टि	0	17	0	70
88	ऊर्ध्व. समदृष्टि	0	18	0	70
89	अधो. चक्षुइन्द्रिय	14	22	3	50
90	मनुष्य सम्यगदृष्टि	0	0	90	0
91	अधो. घ्राणेन्द्रिय	14	24	3	50
92	ऊर्ध्व त्रस मिथ्यात्वी	0	26	0	66
93	अधो. त्रस	14	26	3	50
94	देव मिथ्यात्वी पर्याप्त	0	0	0	94
95	नो गर्भ. अभाषक समदृष्टि	6	8	0	81
96	ऊर्ध्व. पंचेन्द्रिय	0	20	0	76
97	अधो. कृष्णलेशी बादर	6	38	3	50
98	धातकी खंड प्रत्ये. शरीरी	0	44	54	0
99	वचनयोगी देवता	0	0	0	99
100	ऊर्ध्व. प्र.श. बादर मिथ्यात्वी	0	34	0	66
101	वचनयोगी मनुष्य	0	0	101	0
102	ऊर्ध्व. त्रस	0	26	0	76
103	अधो. नो गर्भज	14	38	1	50
104	एकांत मिथ्यात्व शाश्वत में	0	30	56	18
105	अधो. बादर में	14	38	3	50
106	मनोयोगी गर्भज में	0	5	101	0
107	अधो. कृष्ण लेशी	6	48	3	50

108	औदा. शरी. समदृष्टि में	0	18	90	0
109	कृष्णलेशी वैक्रि .श. नो गर्भज	6	1	0	102
110	ऊर्ध्व बादर प्रत्येक शरीर	0	34	0	76
111	अधो. प्रत्येक शरीर	14	44	3	50
112	ऊर्ध्व. मिथ्यात्वी	0	46	0	66
113	वचनयोगी घ्राणे. औदारिक	0	12	101	0
114	औदारिक वचनयोगी	0	13	101	0
115	अधोलोक में	14	48	3	50
116	मनुष्य अपर्या. मरने वाला	0	0	116	0
117	क्रियावादी समोसरण नोपकर्मी आयुष्य अमर में	6	0	30	81
118	ऊर्ध्व. प्रत्येक शरीरी में	0	42	0	76
119	घ्राणे. मिश्रयोग शाश्वत में	7	12	15	85
120	एकांत असंज्ञी अपर्याप्त	0	19	101	0
121	विभंग ज्ञान मरने वाला	7	5	15	94
122	कृष्णलेशी स्त्रीवेद वैक्रिय श.	0	5	15	102
123	तीन शरीर और औदा. शाश्वता	0	37	86	0
124	लवण समुद्र घ्राणे. अपर्या.	0	12	112	0
125	लवण समुद्र में तेजो लेशी	0	13	112	0
126	मरने वाला गर्भज जीवों में	0	10	116	0
127	वैक्रिय श. मरने वालो में	7	6	15	99
128	देवी में	0	0	0	128
129	एकांत असंज्ञी बादर	0	28	101	0
130	लवण समुद्र त्रस मिश्रयोगी	0	18	112	0
131	मनुष्य नपुंसक वेद	0	0	131	0
132	शाश्वता मिश्रयोगी	7	25	15	85
133	मनयोगी समदृष्टि असंख्य भव वाला	7	5	45	76
134	बादर औदारिक शाश्वत में	0	33	101	0
135	प्र. शरी. एकांत असंज्ञी	0	34	101	0
136	तीन लेशी औदा. शरीर	0	35	101	0

137	क्रियावादी अशाश्वत	6	5	45	81
138	मनयोगी समदृष्टि में	7	5	45	81
139	औदा. श. नो गर्भज	0	38	101	0
140	कृष्णलेशी अमर	3	0	86	51
141	एकांत नपुं. प्र.श. बादर	14	26	101	0
142	पंचे. समदृष्टि अपर्याप्ता	6	10	45	81
143	एकांत नपुं. बादर	14	28	101	0
144	नो गर्भज शाश्वत	7	38	0	99
145	अपर्या. समदृष्टि	6	13	45	81
146	त्रस नो गर्भज एकांत मिथ्यात्वी	1	8	101	36
147	लवण समुद्र के अभाषक में	0	35	112	0
148	स्त्रीवेद वैक्रिय शरीर में	0	5	15	128
149	संज्ञी एकांत मिथ्यात्वी	1	0	112	36
150	तिर्च्छा. वचनयोगी	0	13	101	36
151	तिर्च्छा. पंचे. नपुंसक	0	20	131	0
152	तिर्च्छा. पंचे. शाश्वत	0	15	101	36
153	एकांत नपुं. वेद	14	38	101	0
154	तिर्च्छा. चक्षु इं. शाश्वत	0	17	101	36
155	तिर्च्छा. प्रत्येक बादर पर्याप्ता	0	18	101	36
156	तिर्च्छा. बादर पर्याप्ता	0	19	101	36
157	मनुष्य एकांत मिथ्या. अपर्या.	0	0	157	0
158	नो गर्भ. एकांत मिथ्या. बादर	1	20	101	36
159	तिर्च्छा. प्र.श. पर्याप्ता	0	22	101	36
160	तिर्च्छा. कृष्णलेशी समदृष्टि	0	18	90	52
161	तिर्च्छा. पर्याप्ता	0	24	101	36
162	देवता समदृष्टि	0	0	0	162
163	स्त्रीवेद अवधि दर्शन	0	5	30	128
164	प्र.श. नो गर्भज एकांत मिथ्या.	1	26	101	36
165	पंचेन्द्रिय नपुंसक वेद	14	20	131	0
166	अभाषक मरने वाला	0	35	131	0

167	कृष्ण लेशी घ्राणे. वचनयोगी	3	12	101	51
168	कृष्ण लेशी वचनयोगी	3	13	101	51
169	तिर्च्छा. नो गर्भज कृष्ण. त्रस	0	16	101	52
170	तेजोलेशी वचनयोगी	0	5	101	64
171	नो गर्भज कृष्ण. त्रस मरने वाला	3	16	101	51
172	कृष्ण. स्त्रीवेद समदृष्टि	0	10	90	72
173	तेजोलेशी अभाषक	0	8	101	64
174	नो गर्भज कृष्ण. अपर्या.	3	19	101	51
175	औदा.श. चार लेशी	0	3	172	0
176	लवण समुद्र त्रस एकांत मिथ्या.	0	8	168	0
177	तिर्च्छा. पंचे. समदृष्टि	0	15	90	72
178	तिर्च्छा. चक्षु इ. समदृष्टि	0	16	90	72
179	तिर्च्छा. समुच्चय नपुंसक वेद	0	48	131	0
180	तिर्च्छा. समदृष्टि	0	18	90	72
181	नो गर्भज चक्षु इं. समदृष्टि	13	6	0	162
182	नो गर्भज घ्राणे. समदृष्टि	13	7	0	162
183	नो गर्भज समदृष्टि	13	8	0	162
184	मिश्रयोगी देव वैक्रि.श.	0	0	0	184
185	कृष्णलेशी समदृष्टि	5	18	90	72
186	नीललेशी समदृष्टि	6	18	90	72
187	अभाषक मनुष्य एक संस्थानी	0	0	187	0
188	विभंगज्ञानी देवता	0	0	0	188
189	तिर्च्छा. नो गर्भज त्रस	0	16	101	72
190	लवण समुद्र चक्षु इन्द्रिय में	0	22	168	0
191	तिर्च्छा. कृष्ण. नो गर्भज	0	38	101	52
192	लवण समुद्र घ्राणे.	0	24	168	0
193	समुच्चय नपुंसक वेद	14	48	131	0
194	लवण समुद्र त्रस जीवों	0	26	168	0
195	समदृष्टि वैक्रिय श.	13	5	15	162
196	तेजो. समदृष्टि	0	10	90	96

197	एक वेदी चक्षु इन्द्रिय	14	12	101	70
198	एकांत मिथ्या. अभाषक	1	22	157	18
199	नो गर्भज वैकि. मिश्रयोगी	14	1	0	184
200	वचनयोगी तीन शरीर	7	8	86	99
201	एक वेदी त्रस	14	16	101	70
202	नो गर्भज विभंग ज्ञानी	14	0	0	188
203	नो गर्भज वै.श. मिथ्यात्वी	14	1	0	188
204	एकांत मिथ्यादृष्टि तीन श. मरने वाला	0	29	157	18
205	एकांत मिथ्यादृष्टि मरने वाला	0	30	157	18
206	लवण समुद्र बादर	0	38	168	0
207	मनयोगी मिथ्यात्वी में	7	5	101	94
208	घणा भाव वाला अवधिज्ञान (विशिष्ट अव.)	13	5	30	160
209	समुच्चय संख्यात काल त्रस मरने वाला	1	26	131	51
210	अवधिज्ञान में	13	5	30	162
211	तिर्च्छा. नो गर्भज	0	38	101	72
212	मनयोगी जीवों में	7	5	101	99
213	एकांत मिथ्यात्वी मनुष्य में	0	0	213	0
214	मिथ्यात्वी वैक्रि. मिश्रयोगी	14	6	15	179
215	औदारिक तेजो लेश्या में	0	13	202	0
216	लवण समुद्र में	0	48	168	0
217	वचनयोगी पंचेन्द्रिय	7	10	101	99
218	त्रस वैक्रिय मिश्र में	14	5	15	184
219	वैक्रिय मिश्र में	14	6	15	184
220	वचनयोगी में	7	13	101	99
221	अचरम बादर पर्याप्ता	7	19	101	94
222	पंचेन्द्रिय शाश्वत	7	15	101	99
223	वैक्रिय मिथ्यात्वी	14	6	15	188
224	चक्षुइन्द्रिय शाश्वत	7	17	101	99
225	प्र.श. बादर पर्याप्ता	7	18	101	99
226	औदा.श. अपर्याप्ता	0	24	202	0

227	नो गर्भज बादर अभाषक	7	20	101	99
228	त्रस शाश्वत	7	21	101	99
229	प्रत्येक शरीरी पर्याप्ता	7	22	101	99
230	त्रस औदा.श. अभाषक	0	13	217	0
231	पर्याप्त जीवों में	7	24	101	99
232	पंचे. औदा. मिश्रयोगी	0	15	217	0
233	वैक्रिय शरीर	14	6	15	198
234	औदा. मिश्रयोगी घ्राणे.	0	17	217	0
235	औदा. मिश्रयोगी त्रस	0	18	217	0
236	मनुष्य की आगति नो गर्भज में	6	30	101	99
237	औदा.श. पंचे. मरने वाला	0	20	217	0
238	प्र.श. बादर शाश्वत	7	31	101	99
239	समदृष्टि मिश्रयोगी	13	18	60	148
240	शाश्वत बादर	7	33	101	99
241	प्र.श. नो गर्भज मरने वाला	7	34	101	99
242	बादर औदा. मिश्रयोगी	0	25	217	0
243	औदा. एकांत मिथ्यात्वी	0	30	213	0
244	तीन शरीर नो गर्भज मरने वाला	7	37	101	99
245	समुच्चय असंज्ञी त्रस	1	21	172	51
246	प्र.श. शाश्वत में	7	39	101	99
247	अवधि दर्शन में	14	5	30	198
248	तिर्यक पंचेन्द्रिय अपर्याप्ता	0	10	202	36
249	तिर्यक चक्षु इन्द्रिय अपर्याप्ता	0	11	202	36
250	भव्य सिद्धि शाश्वत में	7	43	101	99
251	तिर्यक त्रस अपर्याप्ता	0	13	202	36
252	औदा. अभाषक	0	35	217	0
253	मिश्रयोगी मरने वाला	7	30	131	85
254	स्त्रीवेद मिश्रयोगी में	0	10	116	128
255	पंचे. एकांत मिथ्यात्वी	1	5	213	36
256	चक्षुइ. एकांत मिथ्यात्वी	1	6	213	36

257	घ्राणे. एकांत मिथ्यात्वी	1	7	213	36
258	त्रस एकांत मिथ्यात्वी	1	8	213	36
259	धर्मदेव की आगत घ्राणे.	5	24	131	99
260	पंचे. तीन शरीरी समदृष्टि	13	10	75	162
261	कृष्ण लेशी अशाश्वत	3	5	202	51
262	पुरुषवेदी समदृष्टि	0	10	90	162
263	प्र.श. समुच्चय असंज्ञी	1	39	172	51
264	तिर्यक कृष्णलेशी स्त्रीवेद	0	10	202	52
265	औदा.श. मरने वाला	0	48	217	0
266	पंचे. कृष्णलेशी अनाहारी	3	10	202	51
267	चक्षुइं. कृष्णलेशी अनाहारी	3	11	202	51
268	एक दृष्टि त्रसकाय	1	8	213	46
269	तिर्यक् कृष्णलेशी मरने वाला	0	26	217	26
270	बादर एकांत मिथ्यात्वी	1	20	213	36
271	मनुष्य आगति के मिथ्यात्वी में	6	40	131	94
272	मनुष्य की आगत प्र.शरी.	6	36	131	99
273	नील लेशी एकांत मिथ्यात्वी	0	30	213	30
274	कृष्णलेशी एकांत मिथ्यात्वी	1	30	213	30
275	क्रियावादी समोसरण में	13	10	90	162
276	मनुष्य की आगति में	6	40	131	99
277	चार लेश्या वाला में	0	3	172	102
278	तिर्यक बादर अभाषक में	0	25	217	36
279	चक्षुइं. समदृष्टि अनेक भवी	13	16	90	160
280	पंचेन्द्रिय समदृष्टि	13	15	90	162
281	चक्षुइन्द्रिय समदृष्टि	13	16	90	162
282	घ्राणे. समदृष्टि में	13	17	90	162
283	त्रसकाय समदृष्टि में	13	18	90	162
284	तिर्च्छा. पुरुष वेद	0	10	202	72
285	चक्षुइं. एक संस्थान औदा.	0	12	273	0
286	एक दृष्टि प्रत्येक शरीरी में	1	26	213	46

287	तिर्यक तेजोलेशी में	0	13	202	72
288	तीन शरीरी मनुष्य में	0	0	288	0
289	त्रस एक संस्थान औदा.	0	16	273	0
290	एक दृष्टि वाला जीवों में	1	30	213	46
291	तिर्यक् कृष्णलेशी मरने वाला	0	48	217	26
292	ज.अंत.उ. दो सागर एक संठाण मरने वाला	2	38	187	65
293	चक्षु.इं. कृष्णलेशी मरने वाला	3	22	217	51
294	नो गर्भज की आगत में कृष्ण-त्रस में	0	26	217	51
295	घ्राणे. कृष्णलेशी मरने वाला	3	24	217	51
296	एकांत संज्ञी में	13	5	131	147
297	त्रस कृष्णलेशी मरने वाला	3	26	217	51
298	पंचे. अपर्या. एक संस्थानी	7	5	187	99
299	चक्षु इं. अपर्या. एक संस्थानी में	7	6	187	99
300	स्त्रीवेद एक संस्थानी में	0	0	172	128
301	एक संस्थानी औदा. बादर	0	28	273	0
302	घ्राणे. एक संस्थानी अचरम मरने वाला	7	14	187	94
303	मनुष्य में	0	0	303	0
304	नो गर्भज पंचे. मिश्रयोगी में	14	5	101	184
305	समदृष्टि आगत कृष्णलेशी बादर में	3	34	217	51
306	तिर्यक घ्राणे. मिश्रयोगी	0	17	217	72
307	तिर्यक त्रस मिश्रयोगी	0	18	217	72
308	अशाश्वता मिथ्यात्वी में	7	5	202	94
309	समदृष्टि आगत एक संस्थानी त्रस में	7	16	187	99
310	औदा. तीन शरीरी एक संस्थानी	0	37	273	0
311	औदा. एक संस्थानी	0	38	273	0
312	नो गर्भज की आगति कृष्ण.प्र. शरीरी	0	44	217	51
313	अशाश्वत में	7	5	202	99
314	कृष्णलेशी स्त्रीवेद में	0	10	202	102
315	प्र.शरी. कृष्णलेशी मरने वाला	3	44	217	51
316	त्रस अनाहारी अचरम	7	13	202	94

317	नो गर्भज घ्राणे. मिथ्यात्वी	14	14	101	188
318	श्रोत्रेन्द्रिय अपर्याप्ता में	7	10	202	99
319	कृष्णलेशी मरने वाला	3	48	217	51
320	तीन शरीरी स्त्रीवेद	0	5	187	128
321	त्रस अपर्याप्ता	7	13	202	99
322	बादर अनाहारी अचरम	7	19	202	94
323	नो गर्भज पंचेन्द्रिय में	14	10	101	198
324	तीन श. त्रस मिथ्यात्वी मरने वाला	7	21	202	94
325	औदा. चक्षुइन्द्रिय	0	22	303	0
326	मिथ्याती एक संस्थानी मरकर	7	38	187	94
327	नो गर्भज घ्राणे.	14	14	101	198
328	बादर अभाषक अचरम	7	25	202	94
329	औदा. त्रस	0	26	303	0
330	औदा. एकांत भव धारणी देह	0	42	288	0
331	नो गर्भज बादर मिथ्यात्वी	14	28	101	188
332	त्रस मिथ्यात्वी एकांत संख्यात काल की स्थिति वाला	7	24	207	94
333	चक्षुइं. मिथ्यात्वी एकांत संख्यात काल की स्थिति वाला	7	20	207	99
334	तिर्यक अधो. की स्त्री में	0	10	202	122
335	घ्राणे. एकांत संख्यात काल की स्थिति का	7	22	207	99
336	कार्मण योग त्रस	7	13	217	99
337	नो गर्भज प्र.श. अचरम में	14	34	101	188
338	अभाषक अचरम में	7	35	202	94
339	ऊर्ध्व. तिर्य. के मरने वाले	0	48	217	74
340	नो गर्भज बादर तीन शरीरी में	14	27	101	198
341	औदा. बादर में	0	38	303	0
342	घ्राणे. में मिथ्यात्वी मरने वाले	7	24	217	94
343	तेजोलेश्या वाला जीवों में	0	13	202	128
344	त्रस मिथ्या. मरने वाले	7	26	217	94

345	तीन शरीरी मिथ्या. मरने वाले	7	42	202	94
346	प्र.श.ज.अं.उ.16 सागर मरने वाले	5	44	217	80
347	अनाहरक जीवों में	7	24	217	99
348	बादर अभाषक	7	25	217	99
349	त्रसपणे मरने वाले	7	26	217	99
350	नो गर्भज तीन शरीरी	14	37	101	198
351	औदा. शरीरी में	0	48	303	0
352	ज.अं.उ.17 सागर स्थि. में मरने वाले	6	48	217	81
353	नो गर्भज गति के त्रस तीन शरीरी में	2	21	228	102
354	मिथ्या. एकांत संख्यात स्थिति में	7	46	207	94
355	तिर्च्छा. पंचे. एक संस्थानी	0	10	273	72
356	बादर मिथ्यात्वी मरने वाले में	7	38	217	94
357	सम्य. आगति के बादर में	7	34	217	99
358	अभाषक में	7	35	217	99
359	तिर्यक् घ्राणे. एक संस्थानी	0	14	273	72
360	ऊर्ध्व. तिर्यक पुरुष वेद में	0	10	202	148
361	तिर्यक् त्रस एक संस्थानी	0	16	273	72
362	प्र.श. मिथ्या. मरने वाले में	7	44	217	94
363	सम्य. आगति में	7	40	217	99
364	नो गर्भज गत के बादर तीन शरीरी	2	32	228	102
365	ज.अं.उ.29 सागर स्थिति मरने वाले	7	48	217	93
366	मिथ्यात्व में मरने वाले	7	48	217	94
367	प्र.श. मरने वाले	7	44	217	99
368	पुरुष एक संस्थानी अनेक भव वाला	0	0	172	196
369	अधो. तिर्य. चक्षु. मिश्रयोगी	14	16	217	122
370	कृष्णलेशी संख्यात स्थिति वाला	3	48	217	102
371	समुच्चय मरने वाले में	7	48	217	99
372	तिर्यक् कृष्ण. तीन शरीरी में	0	32	288	52
373	तिर्यक् बादर एक संस्थानी में	0	28	273	72
374	बादर कृष्ण. एकांत भव धारणी शरीर में	3	32	288	51

375	तिर्यंक पंचे. कृष्णलेशी	0	20	303	52
376	एक संस्थानी मिश्र योगी पंचे. अनेरिया	0	5	187	184
377	तिर्यक् चक्षु. कृष्णलेशी में	0	22	303	52
378	भुजपरि. की जाति के पंचे. संज्ञी	4	10	202	162
379	तिर्यक् घ्राणे. कृष्णलेशी	0	24	303	52
380	पुरुष तीन शरीरी अचरम में	0	5	187	188
381	तिर्यक् त्रस कृष्णलेशी	0	26	303	52
382	तिर्य. तीन शरीरी कृष्ण.	0	42	288	52
383	तिर्य. एक संस्थानी	0	38	273	72
384	संज्ञी एक संस्थानी	14	0	172	198
385	नो गर्भज की गत के बादर में	2	38	243	102
386	अधो.तिर्य.बा.प्र. भवधारणी अवगाहना	7	30	288	61
387	ऊर्ध्व.ति. त्रस मिथ्या एकांत भवधारणी देह में	0	21	288	78
388	अधो. में तिर्यक एकांत भवधारणी देह बादर में	7	32	288	61
389	संज्ञी अभवी तीन श. अ. तिर्यंच में	14	0	187	188
390	पुरुष वेद तीन शरीर	0	5	187	198
391	पंचे. कृष्णलेशी एक संस्थानी	6	10	273	102
392	तिर्यक बादर तीन शरीरी में	0	32	288	72
393	तिर्यक बादर कृष्णलेशी	0	38	303	52
394	संज्ञी अभव्य तीन शरीरी	14	5	187	188
395	तिर्यक पंचेन्द्रिय में	0	20	303	72
396	पुरुष वेदी मिथ्यादृष्टि ज.अं.उ. 28 सागर की स्थिति में	0	10	202	184
397	तिर्यक चक्षुइन्द्रिय में	0	22	303	72
398	अधो. में तिर्यक एकांत भवधारणी देह में	7	42	288	61
399	तिर्यक् घ्राणेन्द्रिय में	0	24	303	72
400	अभव्य पुरुष वेद में	0	10	202	188
401	तिर्यक् त्रस जीवों में	0	26	303	72

402	तिर्यक् तीन शरीरी	0	42	288	72
403	तिर्यक् कृष्णलेश्या	0	48	303	52
404	समु.संज्ञी असं. भव वाला अ. तिर्यंच	14	0	202	188
405	उर परि. की गत का चक्षु.इ. मिश्रयोगी में	10	16	217	162
406	उर परि. की गत का घ्राणे. मिश्रयोगी	10	17	217	162
407	बादर प्र.कृष्ण. एक संस्थानी	6	26	273	102
408	तिर्यक् एकांत छद्मस्थ	0	48	288	72
409	बादर कृष्ण एक संस्थानी में	6	28	273	102
410	पुरुष वेद में	0	10	202	198
411	तिर्यक् प्र. शरीरी बादर में	0	36	303	72
412	स्त्री की गत का संज्ञी मिथ्यात्व में	12	10	202	188
413	प्रशस्त लेश्या में	0	13	202	198
414	संज्ञी मिथ्यात्वी में	14	10	202	188
415	प्र.श.कृष्ण. एक संस्थानी	6	34	273	102
416	अप्रशस्तलेशी तीन श.बा. एक संस्थानी	14	27	273	102
417	स्त्री की गत कृष्ण. एक संस्थानी	4	38	273	102
418	प्र.बादर एक संस्थानी एकांत भवधारणी देह में	7	25	273	113
419	कृष्णलेशी एक संस्थानी में	6	38	273	102
420	मिश्रयोगी बादर एकांत असंयम में	14	20	202	184
421	स्त्री की गत का अप्रशस्त लेशी प्र.श. एक संस्थानी में	12	34	273	102
422	स्त्री की गत का संज्ञी में	12	10	202	198
423	प्र.श. मिश्रयोगी एकांत असंयम में	14	23	202	184
424	समुच्चय संज्ञी में	14	10	202	198
425	मिश्रयोगी एकांत अपच्चक्खाणी	14	25	202	184
426	कृष्णलेशी बादर प्र. तीन शरीरी	6	30	288	102
427	अप्रशस्त लेशी एक संस्थानी में	14	38	273	102
428	कृष्णलेशी बादर तीन शरीर	6	32	288	102
429	कृष्णलेशी बादर एकांत असंयम में	6	33	288	102

430	स्त्रीगत के त्रस मिश्रदृष्टि अनेक भवी	12	18	217	183
431	स्त्री की गत के त्रस मिश्र	12	18	217	184
432	त्रस मिश्रयोगी संख्या. भव वाला	14	18	217	183
433	त्रस मिश्रयोगी	14	18	217	184
434	कृष्ण प्र. तीन शरीरी में	6	38	288	102
435	मिश्रयोगी बादर मिथ्यात्वी	14	25	217	179
436	बा. तीन शरीरी अप्रशस्त लेशी	14	32	288	102
437	बा. एकांत अपच्चखाणी अप्रशस्त लेशी	14	33	288	102
438	कृष्णलेशी तीन शरीरी में	6	42	288	102
439	कृष्णलेशी एकांत अपच्चक्खाणी	6	43	288	102
440	मिश्रयोगी बादर	14	25	217	184
441	अधो. तिर्यक के चक्षुइं. तीन शरीरी	14	17	288	122
442	प्र. तीन शरीरी अप्रश. लेशी में	14	38	288	102
443	प्र. मिश्रयोगी में	14	38	288	102
444	प्र. एकांत भवधारणी देह अनेक भवी	7	38	288	111
445	अधो.ति. तीन शरीरी त्रस में	14	21	288	122
446	अप्र. लेश्या तीन शरीरी	14	42	288	102
447	एकांत असंयम अप्रश. लेशी	14	43	288	102
448	एकांत भव. देह बहुत भव वाला	7	42	288	111
449	स्त्री गत के एकांत भव.धा.देह	6	42	288	113
450	भवसिद्धि के एकांत भव.धा.देह	7	42	288	113
451	उरपरि. की गत कृष्ण.प्र. शरीरी	2	44	303	102
452	भुजपरि. की गत का अधो.तिर्य. प्रत्येक तीन शरीरी	4	38	288	122
453	स्त्री की गत कृष्ण.प्र. शरीरी	4	44	303	102
454	ऊर्ध्व. तिर्यक एकांत छद्मस्थ पंचेन्द्रिय बहुत भवों वाला	0	20	288	146
455	कृष्णलेशी प्रत्येक शरीरी	6	44	303	102
456	अधो.ति. तीन शरीरी बादर	14	32	288	122
457	अप्रशस्त लेशी बादर	14	38	303	102

458	ऊर्ध्व.ति. के एकांत छद्मस्थ चक्षु.	0	22	288	148
459	ऊर्ध्व.ति. के एक संस्थानी में	0	38	273	148
460	ऊर्ध्व.ति. के एकांत छद्मस्थ घ्राणे.	0	24	288	148
461	अधो.ति. के चक्षु इन्द्रिय में	14	22	303	122
462	अधो.ति. के बादर एकांत छद्मस्थ	14	38	288	122
463	अधो.ति. के घ्राणे. में	14	24	303	122
464	स्त्रीगत के अधो.तिर्य. तीन शरीरी	12	42	288	122
465	अधो.ति. के त्रस	14	26	303	122
466	अधो.ति. के तीन शरीरी	14	42	288	122
467	अप्रशस्त लेश्या में	14	48	303	102
468	ऊर्ध्व.ति. तीन शरीरी बादर	0	32	288	148
469	ऊर्ध्व.ति. एकांत असंयम बादर	0	33	288	148
470	अधो.ति. छद्मस्थ स्त्रीगति में	12	48	288	122
471	ऊर्ध्व. पंचेन्द्रिय में	0	22	303	148
472	अधो.ति. एकांत छद्मस्थ	14	48	288	122
473	ऊर्ध्व.ति. चक्षुइन्द्रिय में	0	22	303	148
474	ऊर्ध्व.ति. एकांत छद्मस्थ बादर	0	38	288	148
475	ऊर्ध्व.ति. घ्राणे.	0	24	303	148
476	ऊर्ध्व.ति. तीन शरीरी अनेक भव वाला	0	42	288	146
477	ऊर्ध्व.ति. त्रस में	0	26	303	148
478	ऊर्ध्व.ति. तीन शरीरी में	0	42	288	148
479	ऊर्ध्व.ति. एकांत असंयम में	0	42	288	148
480	ऊर्ध्व.ति. एकांत छद्मस्थ प्र. शरीरी	0	44	288	148
481	स्त्रीगति के अधो.ति. प्रत्येक शरीरी	12	44	303	122
482	ऊर्ध्व. तिर्च्छा. एकांत छद्मस्थ अनेक भव वाला	0	48	288	146
483	अधो.ति. प्रत्येक शरीरी में	14	44	303	122
484	ऊर्ध्व. तिर्च्छा. एकांत छद्मस्थ	0	48	288	148
485	स्त्री की गत के अधोतिर्यक में	12	48	303	122
486	भुज परि. की गत के तीन श. बादर	4	32	288	162

487	अधो तिर्च्छा लोक में	14	48	303	122
488	खेचर गति के तीन शरीरी बादर में	6	32	288	162
489	ऊर्ध्व तिर्च्छा. बादर में	0	38	303	148
490	स्थलचर गत के तीन शरीरी बादर	8	32	288	162
491	खेचर गत के पंचेन्द्रिय में	6	20	303	162
492	उरपरि. गत के तीन शरीरी बादर	10	32	288	162
493	ऊर्ध्व.तिर्च्छा.प्र.श. अनेक भवों वाला	0	44	303	146
494	खेचर गत के प्र. तीन शरीरी	6	38	288	162
495	ऊर्ध्व.ति.प्र. शरीरी में	0	44	303	148
496	भुजपरि. गत के तीन शरीरी में	4	42	288	162
497	खेचर गत के त्रस में	6	26	303	162
498	खेचर गत के तीन शरीरी में	6	42	288	148
499	ऊर्ध्व तिर्च्छा लोक में	0	48	303	148
500	स्थलचर गत के तीन शरीरी	8	42	288	162
501	त्रस एक संस्थानी	14	16	273	198
502	उरपरि. गत के 3 शरीरी	10	42	288	162
503	संज्ञी तिर्यंच गत के घ्राणे.	14	24	303	162
504	खेचर गति के एकांत छद्मस्थ	6	48	288	162
505	संज्ञी तिर्यंच की गत के त्रस	14	26	303	162
506	संज्ञी तिर्यंच की गत के 3 शरीरी	14	42	288	162
507	अंतरद्वीप के पर्या. के अलद्धिया	14	48	247	198
508	उरपरि. तिर्यंच गत के एकांत सकषायी में	10	48	288	162
509	थलचर तिर्यंच गत के प्र.श.बा.	8	36	303	162
510	तिर्यंचणी गत के एकांत सयोगी	12	48	288	162
511	एक संस्थानी प्र.श. बादर	14	26	273	198
512	तिर्यंच गत एकांत सयोगी में	14	48	288	162
513	एक संस्थानी मिथ्यात्वी में	14	38	273	188
514	मध्य जीवों को स्पर्शने वाले एकांत छद्मस्थ चक्षुइं. में	14	22	288	190
515	तिर्यंचणी गत के बादर में	12	38	303	162

516	मध्य जीवों की स्पर्शना वाले एकांत छद्मस्थ घ्राणे. में	14	24	288	190
517	एक संस्थान स्त्री गत के प्र.श.	12	34	273	198
518	पंचे. में एकांत छद्मस्थ अनेक भवी	14	20	288	196
519	घ्राणे. एकांत छद्मस्थ असंयम	14	19	288	198
520	पंचेन्द्रिय एकांत छद्मस्थ	14	20	288	198
521	एक संस्थानी घणा भवा वाला	14	38	273	196
522	एकांत सकषाय चक्षुइं. में	14	22	288	198
523	एक संस्थानी में	14	38	273	198
524	एकांत सकषायी घ्राणे.	14	24	288	198
525	पंचे. मिथ्यात्वी में	14	20	303	188
526	एकांत सकषायी त्रस में	14	26	288	198
527	तिर्यंच गत में	14	48	303	162
528	एकांत छद्मस्थ बादर मिथ्यात्वी	14	38	288	188
529	स्त्री की गत के त्रस मिथ्यात्वी में	12	26	303	188
530	स्त्री की गत के तीन शरीरी बादर एकांत सकषायी में	12	32	288	198
531	स्त्री के गत के पंचे. संख्यात भव वाला	12	20	303	196
532	तीन शरीरी बादर में	14	32	288	198
533	एकांत असंयम बादर में	14	33	288	198
534	एकांत छद्मस्थ अभवी प्र. शरीरी	14	44	288	188
535	पंचेन्द्रिय जीवों में	14	20	303	198
536	स्त्री की गत के बादर एकांत सकषायी	12	38	288	198
537	स्त्री की गत के घ्राणे. में	12	24	303	198
538	एकांत छद्मस्थ बादर में	14	38	288	198
539	घ्राणेन्द्रिय में	14	24	303	198
540	स्त्री की गत के तीन शरीरी में	12	42	288	198
541	त्रस जीवों में	14	26	303	198
542	तीन शरीरी एकांत छद्मस्थ	14	42	288	198
543	एकांत असंयम में	14	43	288	198

544	प्र.श. एकांत छद्मस्थ में	14	44	288	198
545	सम्य. तिर्यंच के अलद्धिया में	14	30	303	198
546	एकांत छद्मस्थ अनेक भव वाला	14	48	288	196
547	स्त्री की गत प्र.श. मिथ्यात्वी में	12	44	303	188
548	एकांत छद्मस्थ में	14	48	288	198
549	मिथ्यात्वी प्रत्येक शरीरी में	14	44	303	188
550	सम्य. नारकी के अलद्धिया में	1	48	303	198
551	स्त्री की गत के मिथ्यात्वी	12	48	303	198
552	एकेन्द्रिय पर्याप्त का अलद्धिया	14	37	303	198
553	मिथ्यात्वी	14	48	303	188
554	नवग्रैवेयक के पर्या. अलद्धिया में	14	48	303	189
555	जीवों का मध्यभेद स्पर्शने वाले	14	48	303	190
556	नरक पर्याप्ता का अलद्धिया में	7	48	303	198
557	स्त्री की गत का प्र. शरीरी में	12	44	303	198
558	तिर्यंच पं. वैक्रिय का अलद्धिया में	14	43	303	198
559	प्रत्येक शरीरी में	14	44	303	198
560	तेजो. एकेन्द्रिय का अलद्धिया में	14	45	303	198
561	बहुत भव वाले जीवों में	14	48	303	196
562	एके. वैक्रिय शरीरी अलद्धिया	14	47	303	198
563	सर्व संसारी जीवों में	14	48	303	198

5. बल का अल्प बहुत्व-समस्त जीवों का बल का अल्प बहुत्व प्राचीन प्रतियों के आधार से लिया गया है पूर्व-पूर्व के जीवों से आगे के जीवों का बल उनसे गुणाकर समझें-

1	सूक्ष्म निगोद के अपर्याप्ता का	सबसे अल्प
2	बादर निगोद के अपर्याप्ता का	असंख्यात गुणा
3	सूक्ष्म निगोद के पर्याप्ता का	असंख्यात गुणा
4	बादर निगोद के पर्याप्ता का	असंख्यात गुणा
5	सूक्ष्म पृथ्वीकाय अपर्याप्ता	असंख्यात गुणा
6	सूक्ष्म पृथ्वीकाय पर्याप्ता	असंख्यात गुणा

7	बादर पृथ्वीकाय अपर्याप्ता	असंख्यात गुणा
8	बादर पृथ्वीकाय पर्याप्ता	असंख्यात गुणा
9	बादर वनस्पतिकाय अपर्याप्ता	असंख्यात गुणा
10	बादर वनस्पतिकाय पर्याप्ता	असंख्यात गुणा
11	तनुवाय पर्याप्ता	असंख्यात गुणा
12	घनोदधि पर्याप्ता	असंख्यात गुणा
13	घनवायु पर्याप्ता	असंख्यात गुणा
14	कुंथुवा का बल	असंख्यात गुणा
15	लीख का बल	पाँच गुणा
16	जूं का बल	दस गुणा
17	कीड़ी मकोड़ा का बल	बीस गुणा
18	माखी (मक्षिका) का बल	पाँच गुणा
19	डांस मच्छर का बल	दस गुणा
20	भंवरा का बल (भ्रमर)	बीस गुणा
21	तीड़ का बल	पचास गुणा
22	चिड़िया	साठ गुणा
23	कबूतर	पन्द्रह गुणा
24	कौआ	सौ गुणा
25	मुर्गा	सौ गुणा
26	सांप	हजार गुणा
27	मोर	पाँच सौ गुणा
28	बंदर	हजार गुणा
29	बकरा	सौ गुणा
30	गाडर (मेंढ़ा) का बल	हजार गुणा
31	मनुष्य (पुरुष) का बल	सौ गुणा
32	वृषभ का बल	बारह गुणा
33	अश्व का बल	दस गुणा
34	पाड़ा का बल (भैंसा)	बारह गुणा
35	हाथी का बल	पाँच सौ गुणा
36	सिंह का बल	पाँच सौ गुणा

37	अष्टापद का बल	दो हजार गुणा
38	बलदेव का बल	दस हजार गुणा
39	वासुदेव का बल	दो हजार गुणा
40	चक्रवर्ती का बल	दो हजार गुणा
41	व्यंतर देव का बल	क्रोड़ हजार गुणा
42	नवनिकाय भवनपति का बल	असंख्य गुणा
43	असुरकुमार देव का बल	असंख्य गुणा
44	तारा देव का बल	असंख्य गुणा
45	नक्षत्र देव का बल	असंख्य गुणा
46	ग्रह देवों का बल	असंख्य गुणा
47	व्यंतर इन्द्र का बल	असंख्य गुणा
48	नवनिकाय के इन्द्र का बल	असंख्य गुणा
49	असुरकुमार के इन्द्र का बल	असंख्य गुणा
50	ज्योतिषी के इन्द्र का बल	असंख्य गुणा
51	वैमानिक देवों का बल	असंख्य गुणा
52	वैमानिक के इन्द्र का बल	असंख्य गुणा
53	तीनों के देवेन्द्रों से भी तीर्थंकर की कनिष्ट अंगुली का बल	अनंत गुणा

6. धर्म सम्मुख होने के कारण-(1) नीतिमान् हो, नीति धर्म की माता है (2) हिम्मतवान् हो, कायरों से धर्म नहीं होता (3) धैर्यवान् हो, आतुरता से धर्म नही होता (4) बुद्धिमान् हो (5) सत्य वचन बोलने वाला हो (6) निष्कपट हो, स्फटिक के समान स्वच्छ हृदयी हो (7) विनयवान् हो (8) गुणग्राही हो स्व आत्मश्लाघा (स्वप्रशंसा) न करे (9) प्रतिज्ञा का पालनकर्ता हो (10) दयावान्, परोपकारी हो (11) सत्य धर्म का पक्षधर हो (12) जीतेन्द्रिय हो, कषाय की मंदता हो (13) आत्म कल्याण की दृढ़ इच्छा हो (14) तत्त्व विचार में निपुण हो (15) गुरु आदि का उपकार न भूले।

7. मार्गानुसारी के 35 बोल-(1) न्यायोपार्जित द्रव्य रखे (2) सात कुव्यसन का त्यागी (3) अभक्ष्य का त्यागी (4) गुण परीक्षा से संबंध जोड़े (5) पाप भीरू (6) देशहितकर वर्तन वाला (7) परनिन्दा त्यागी (8) अति प्रकट अति गुप्त बहुत द्वार वाले मकान में न रहे (9) सद्गुणी की सोबत (10) बुद्धिमान् (11) कदाग्रही न हो

(सरल हो) (12) सेवाभावी (13) विनयी (14) भय स्थान त्यागे (15) आय-व्यय का हिसाब रखे (16) उचित वस्त्राभूषण पहने (17) स्वाध्याय करे (18) अजीर्ण में भोजन नहीं करे (19) योग्य समय भूख लगे तब पथ्य, मित्त, नियमित भोजन करे (20) समय का सदुपयोग करे (21) तीन पुरुषार्थ (धर्म अर्थ काम) में विवेकी (22) समयज्ञ (द्रव्य क्षेत्र काल भाव) हो (23) शांत प्रकृति वाला (24) ब्रह्मचर्य का ध्येय समझने वाला (25) सत्यव्रत धारी (26) दीर्घ दृष्टि (27) दयालु (28) परोपकारी (29) कृतज्ञ (30) आत्म प्रशंसक न हो, न करावे (31) विवेकी योग्य-अयोग्य समझे (32) लज्जवान् हो (33) धैर्यवान् हो (34) षट्रिपु (क्रोध मान माया लोभ राग द्वेष) का नाशक (35) जीतेन्द्रिय हो, ये 35 गुणधारी हो वह नैतिक, धार्मिक, जैन जीवन के योग्य होता है।

8. मोक्ष के 23 बोल-(1) मोक्ष की अभिलाषा रखने से (2) उग्र तपश्चर्या करने से (3) गुरु मुख से सूत्र सिद्धांत सुनने से (4) आगम सुनकर तद्नुसार प्रवृत्ति करने से (5) पाँचों इन्द्रिया वश में करने से (6) छ काया की रक्षा करने से (7) साधु-साध्वियों को आहारादि समय पर दान देने की भावना से (8) सद्ज्ञान पढ़ने-पढ़ाने से (9) निदान रहित व्रत पच्चक्खाण करने से (10) दस प्रकार की वैयावृत्य करने से (11) कषाय रहित होने से (12) शक्ति सहित क्षमा करने से (13) पापों की आलोचना करने से (14) व्रत शुद्ध पालने से (15) अभयदान सुपात्रदान देने से (16) शुद्ध मन से ब्रह्मचर्य पालने से (17) पाप रहित मधुर वचन बोलने से (18) संयम के शुद्ध पालन से (19) धर्म ध्यान-शुक्ल ध्यान ध्याने से (20) प्रतिमाह छः पौषध करने से (21) उभय काल आवश्यक (प्रतिक्रमण) करने से (22) पिछली रात्रि धर्म जागरण कर, तीन मनोरथ आदि चिंतन करने से (23) मरण समय आलोचनादि कर पंडित मरण मरने से।

9. परम कल्याण के 40 बोल-40 बोलों में से एक अथवा अधिक बोलों का सेवन करने से जीव का परम कल्याण होता है। यहाँ गुण, दृष्टांत और सूत्र की साक्षी से समझाया है-

क्र.	गुण	दृष्टान्त	सूत्र की साक्षी
1	समकित का निर्मल पालन करने से	श्रेणिक महाराज	ठाणांग सूत्र
2	निदान रहित तपश्चर्या से	तामली तापस	भगवती सूत्र
3	तीनों योग निश्चल करने से	गजसुकुमार मुनि	अंतगड़ सूत्र
4	समभाव से क्षमा करने से	अर्जुन माली	अंतगड़ सूत्र
5	पाँच महाव्रत निर्मल पालने से	गौतम स्वामी	भगवती सूत्र
6	प्रमाद त्याग अप्रमादी होने से	शैलक राजर्षि	ज्ञाताधर्म कथा सूत्र
7	इन्द्रिय दमन करने से	हरिकेशी मुनि	उत्तराध्ययन सूत्र
8	मित्रों से माया कपट न करने से	मल्लिनाथ के मित्र (पूर्वभव)	ज्ञाताधर्म कथा सूत्र
9	धर्म चर्चा करने से	केशी-गौतम	उत्तराध्ययन सूत्र
10	सत्य धर्म पर श्रद्धा करने से	वरूण नागनत्तुआ का मित्र	भगवती सूत्र
11	जीवों पर करूणा करने से	मेघकुमार हाथी भव में	ज्ञाताधर्म कथासूत्र
12	सत्य बात निःशंक कहने से	आनंद श्रावक	उपासक दसांग
13	कष्टों में भी व्रत में दृढ़ता से	अंबड़ के 700 शिष्य	उववाई सूत्र
14	शुद्ध मन शील पालने से	सुदर्शन सेठ	सुदर्शन चरित्र
15	परिग्रह की ममता छोड़ने से	कपिल ब्राह्मण	उत्तरौध्ययन सूत्र
16	उदारभाव सुपात्र दान देने से	सुमुख गाथापति	विपाक सूत्र
17	व्रत से डिगते को स्थिर करने से	राजीमति	उत्तराध्ययन सूत्र
18	उग्र तपस्या करने से	धन्नामुनि	अनुत्तरोववाई
19	अग्लान भाव से वैयावच्च करने से	पंथक मुनि	ज्ञाताधर्म कथासूत्र
20	सदा अनित्य भावना भाने से	भरत चक्रवर्ती	जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति
21	अशुभ परिणाम रोकने से	प्रसन्न चन्द्र राजर्षि	श्रेणिक चरित्र/महावीर च.
22	सत्यज्ञान पर श्रद्धा रखने से	अर्हन्नक श्रावक	ज्ञाताधर्म कथासूत्र
23	चतुविर्ध संघ की वैयावच्च से	सनत्कुमार चक्री पूर्वभव में	भगवती सूत्र
24	चढ़ते भावे मुनि सेवा करने से	बाहुबली पूर्वभव में	ऋषभदेव चारित्र
25	शुद्ध अभिग्रह करने से	पाँच पांडव	ज्ञाताधर्म कथासूत्र
26	धर्म दलाली करने से	श्रीकृष्ण वासुदेव	अंतगड़ सूत्र
27	सूत्रज्ञान की भक्ति करने से	उदायन राजा	भगवती सूत्र
28	जीवदया पालन करने से	धर्मरूचि अणगार	ज्ञाताधर्म कथासूत्र
29	व्रत स्खलन होते ही सावधान हो तो	अरणक मुनि	आवश्यक सूत्र
30	आपत्ति के समय धैर्य रखने से	खंदक ऋषि के 500 शिष्य	भवगती सूत्र
31	जिनराज की भक्ति करने से	प्रभावती राणी	ग्रंथ में से/ भगवती सूत्र
32	प्राणों की परवाह न कर जीव दया पालने से	मेघरथ राजा	शांतिनाथ चारित्र
33	छती शक्ति क्षमा करने से	परदेशी राजा	रायप्रश्नीय सूत्र
34	सगे भाई का मोह त्यागने से	राम बलदेव	63 श्लाघा पुरुष चरित्र

35	देवादि के उपसर्ग सहने से	कामदेव श्रावक	उपासक दशांग
36	देवगुरु वंदन में निर्भिक होने से	सुदर्शन सेठ	अंतगड़ सूत्र
37	चर्चा में वादियों को परास्त करने से	मंडूक श्रावक	भगवती सूत्र
38	निमित्त मिलने पर शुभ भावना से	आर्द्रकुमार	सूत्रकृतांग सूत्र
39	एकत्व भावना भाने से	नमि राजर्षि	उत्तराध्ययन सूत्र
40	विषयों में गृद्धता न रखने से	जिनरक्षित-जिनपाल	ज्ञाता धर्म कथासूत्र

10. चवदह रज्जू लोक-लोक असंख्यात क्रोड़ाक्रोड़ी योजन विस्तार में है, इसमें पंचास्तिकाय भरी हुई है, अलोक में आकाश के अलावा कुछ नहीं है, लोक का प्रमाण बताने के लिए राज या रज्जू संज्ञा (माप) है। यह राज यानि रज्जू का मतलब है 3, 81, 12, 970 मण का एक भार, इस प्रकार के एक हजार भार का वजन वाला (कल्पनाशील) एक गोला, जिसको उठाकर नीचे की ओर फेंके, वह गोला 6 मास, 6 दिन, 6 प्रहर, 6 पल में जितना नीचे आवे, उतना क्षेत्र एक रज्जू कहलाता है, ऐसा 14 रज्जू लंबा (ऊँचा) यह लोक है। राज के 4 प्रकार-घन राजू (लंबाई-चौड़ाई, मोटाई में एक-एक राजू) प्रतर राजू (घनराजू का चौथा भाग) सूचिराजू (प्रतर राजू का चौथा भाग) खंडराजू (सूचि राजू का चौथा भाग) **अधोलोक**-अधोलोक 7 राजू झाझेरा जाडाई में हैं, इसमें एक-एक राजू जाड़ी ऐसी 7 नरक है, इनका विस्तार इस प्रकार है-

नरक का नाम	जाड़ी राजू	चौड़ी राजू	घन राजू	प्रतर राजू	सूचि राजू	खंड रज्जू
रत्नप्रभा	1	1	1	4	16	64
शर्कराप्रभा	1	2½	6¼	25	100	400
बालुकाप्रभा	1	4	16	64	256	1024
पंकप्रभा	1	5	25	100	400	1600
धूम्रप्रभा	1	6	36	144	576	2304
तमःप्रभा	1	6½	42¼	179	676	2704
तमःतमाप्रभा	1	7	49	196	784	3136
योग	7	32	175½	702	2808	11232

तिर्च्छालोक-1800 योजन जाड़ाई में एक राजू विस्तार वाला तिर्च्छालोक है, जिसमें असंख्यात द्वीप, समुद्र (मनुष्य तिर्यंच के स्थान) और ज्योतिषी देव है, तिर्च्छा और ऊर्ध्व लोक मिलाकर 7 राजू माठेरा (कुछ कम) है। **ऊर्ध्वलोक**-समभूमि से 1½ राजू ऊपर में पहला दूसरा देवलोक, उससे 1 राजू ऊपर तीसरा चौथा देवलोक, उसमें 3/4 (पोना) राजू ऊपर पाँचवाँ, उससे 1/4 (पाव) रज्जू ऊपर छठा वहाँ से पाव रज्जू ऊपर सातवाँ, उससे पाव राजू ऊपर आठवाँ उससे 1/2 रज्जू ऊपर नवमाँ दसवाँ

उससे आधा रज्जू ऊपर ग्यारवाँ बारहवाँ देवलोक है, उससे एक रज्जू ऊपर नवग्रैवेयक उससे एक रज्जू ऊपर पाँच अणुत्तर विमान है उसका यंत्र इस प्रकार-

स्थान	जाड़ाई	विस्तार	घनराजू	प्रतर राजू	सूचिराजू	खण्डराजू
समभूमि से ऊपर	½	1	½	2	8	32
वहाँ से	½	1½	1+1/8	4½	18	72
वहाँ से	¼	2	1	4	16	64
पहला दूसरा देवलोक से	¼	2½	1½+1/16	6¼	25	100
वहाँ से	½	3	4½	18	72	288
3-4 देवलोक से	½	4	8	32	128	512
पाँचवाँ देवलोक	¾	5	18¾	75	300	1200
छठा देवलोक	¼	5	6¼	25	100	400
सातवाँ देवलोक	¼	4	4	16	64	256
आठवाँ देवलोक	¼	4	4	16	64	256
9-10 देवलोक	½	3	4½	18	72	288
11-12 देवलोक	½	2½	3+1/8	12½	50	200
वहाँसे	¼	2½	1½+1/16	6¼	25	100
9 ग्रैवेयक	¾	2	3	12	48	192
वहाँ से	½	1½	1+1/8	4½	18	72
5 अणुत्तर विमान	½	1	½	2	8	32
	7	44½	63½	254	1016	4064

ऊर्ध्वलोक 63½ घनरज्जू और संपूर्ण लोक के 343 घनराजू प्रमाण है।

11. दो करोड़ इक्यानवे लाख शरीर-84 लाख जीव योनि में 2 करोड़ 91 लाख शरीर होते हैं-

पृथ्वी, पानी, अग्निकाय के 7X3 लाख में तीन शरीर (औदा.तै.का.)×3	=63 लाख शरीर
वायुकाय 7 लाख में 4 शरीर (वैक्रिय बढ़ा)	=28 लाख शरीर
प्रत्येक वनस्पति 10 लाख, साधारण वन. 14 लाख=24 लाख×3 शरीर	=72 लाख शरीर
कुल 52 लाख एकेन्द्रिय में तीन विकलेन्द्रिय के 6 लाख तीन शरीर (औदा.तै.कार्म.)	163 लाख शरीर 6×3=18 लाख शरीर
नारकी देव 8 लाख तीन-तीन शरीर (वैक्रिय, तैज.कार्म.)	8×3=24 लाख शरीर
तिर्यंच 4 लाख में 4 शरीर (वायुकायवत्)	4×4=16 लाख शरीर
मनुष्य 14 लाख में 5 शरीर	14×5=70 लाख शरीर
कुल शरीर	**2,91,00,000**

12. दो करोड़ इन्द्रिय -पृथ्वीकाय की 7 लाख, अप्काय की 7 लाख, तेउकाय की 7 लाख, वायुकाय की 7 लाख, प्रत्येक वनस्पति की 10 लाख, साधारण वनस्पतिकी 14 लाख, ये 52 लाख एकेन्द्रिय की। दो लाख बेइन्द्रिय की 4 लाख (रसन, स्पर्शन) 2 लाख तेइन्द्रिय की 6 लाख (स्पर्शन, रसन, घ्राण) 2 लाख चौरेन्द्रिय की (चक्षु बढ़ी) 8 लाख ये 18 लाख हुए। नरक की 4x5=20 लाख, देवता की 20 लाख, तिर्यंच पंचेन्द्रिय की 5x4=20 लाख, 14 लाख मनुष्य की 70 लाख इन्द्रियाँ ये कुल 52+18+60+70 लाख =2 करोड़ इन्द्रियाँ हुईं।

13. व्यवहार समकित के 67 बोल-विविध सूत्र ग्रंथ से इनके 12 द्वार से 67 बोल इस प्रकार-

(1) श्रद्धान चार-श्रद्धा गहरी बने, शिथिल, विचलित न हो (1) परमार्थ संस्तव-परमार्थ का परिचय, 9 तत्वों का ज्ञान (2) सुदृष्ट परमार्थ सेवन-परमार्थ के जानकार ज्ञानी की सेवा, (3) व्युत्पन्न वर्जन-सम्यक्त्व का वमन किया उससे दूर रहना (4) कुदर्शन वर्जन-कुतीर्थियों से दूर।

(2) लिंग तीन-यह सम्यक्त्वी की पहचान है (1) श्रुतानुराग-अरिहंत वाणी में, आगम में अनुरक्त (2) धर्मानुराग-रूचिसहित भगवद् वाणी ग्रहण करना (3) देवगुरु वैयावच्च अरिहंत वाणी से हर्ष।

(3) विनय दस-1 से 5-अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, स्थविर भगवंतों की विनय करे (6) कुल (गुरु भ्राता) का (7) गण (सारे गच्छ) का (8) चतुर्विध संघ का (9) साधार्मिक का (10) क्रियावान् की विनय भक्ति करे। सेवा भक्ति करे।

(4) शुद्धि तीन-मन, वचन और काया से अरिहंत भगवान का ध्यान, गुणगान, वंदन, नमस्कार करें।

(5) लक्षण पाँच-यह आभ्यंतर पहचान है (1) सम-शत्रु मित्र में, त्रस स्थावर में, अनुकूल-प्रतिकूल अवसर में, अनंतानुबंधी क्रोधादि उदय में न आने देना, सामायिक इत्यादि करना।

(2) संवेग-वैराग्य, मोक्ष की अभिलाषा, धर्म मोक्ष में रूचि, मोक्षार्थ धर्म क्रिया करना।

(3) निर्वेद-आरंभ परिग्रह से निवृत्त होना, पाप भोग संसार में अरूचि होना।

(4) अनुकंपा-सभी जीवों पर दया, दुःखी देख दया करना, वेदना मृत्यु से बचाना।

(5) आस्था-देव गुरु धर्म में आस्था, जिन वचनों पर श्रद्धा, उपसर्ग से चलित न होना।

(6) दूषण पाँच-सम्यक्त्व को दूषित करने वाले अतिचार (1) शंका-जिनवाणी में शंका या श्रद्धा कम होना। (2) कांक्षा-अन्य धर्म की इच्छा या अन्य धर्म में जाना। (3) विचिकित्सा-धर्म में घृणा या धर्म फल में संदेह करना। (4) पर पाखंडी प्रशंसा-अन्य धर्म की स्तुति करना (5) पर पाखंडी परिचय करना।

(7) भूषण पाँच-सम्यक्त्व को पुष्ट करते हैं, अलंकृत करते हैं-(1) जिनशासन में निपुण होना (2) जिनशासन की प्रभावना करे, गुण प्रकटावें (3) जिनशासन के चारों तीर्थों साधु साध्वी श्रावक श्राविका की सेवा भक्ति करें। (4) अन्यों को धर्म में स्थिर करे, जिनमार्ग में चतुर बनें (5) जिन प्रवचनों का आदर, गुणवानों का सत्कार करें।

(8) प्रभावना आठ-धर्म की महिमा बढ़े, अजैन प्रभावित हो, जैन बनें (1) सूत्रज्ञान से-जितने सूत्र उपलब्ध है, पढ़े, अन्य जीवों को प्रतिबोध दें, जिनशासन की प्रभावना करें। (2) धर्मकथा से-धर्मकथा, व्याख्यान वाचना आदि (3) वाद चर्चा से-अन्य मतियों से दृष्टांतपूर्वक वाद करके धर्म दीपावें, (4) निमित्त ज्ञान से-3 काल, का ज्ञाता होवे (5) गद्य-पद्य रचना से-कविताएँ, ग्रंथ आदि बनाकर (6) विकट त्याग से-चक्रवर्ती आदि संपन्न पुरुष दीक्षा लेकर प्रभावना करें (7) विकट शील से-ब्रह्मचर्यादि का खंध विशाल सभा में लेकर अन्यों की रूचि बढ़ाए (8) विकट तप से-कठिन तपस्या करके धर्म की प्रभावना करे।

(9) आगार छः-कभी किसी परिस्थितिवश सम्यक्त्व प्रवृत्ति न कर, अन्य प्रवृत्ति करनी पड़े-(1) राजा का दवाब, (2) देव का दवाब (3) जाति का (4) माता पिता गुरु का (5) बलवान का (6) आजीविका सुख से न चले, इस कारण वश सम्यक्त्व के लिए छः आगार की छूट।

(10) यतना छः-मिथ्यात्व प्रवृत्ति से जितना बचाव हो सके प्रयत्न (1) आलाप-मिथ्यात्वी से आलाप अकारण न करे, सम्यक्त्वी से बिना बुलाए भी ज्ञान चर्चा करे संबोधन यतना (2) संलाप-मिथ्यात्वी से विशेष भाषण न करें, सम्यग दृष्टि से अवश्य करें, यतनापूर्वक (3) दान-मिथ्यात्वी को गुरुबुद्धि से दान न दे (अनुकम्पा दान की मनाई नहीं है) धर्मबुद्धि से न दे। (4) मान-मिथ्यात्वी को आदर सत्कार न दें, सम्यक्त्वी को अवश्य दे। (5) वंदना-गुरु भक्ति से मिथ्यात्वी को वंदना नहीं करे (6) नमस्कार-गुरु भक्ति पूर्वक मिथ्यात्वी को नमस्कार न करें।

(11) भावना छः:-ये मान्यताएँ हैं-(1) जीव है, जीव लक्षण चेतना है, शरीर भिन्न है। (2) जीव नित्य है-शाश्वत है अनादि अपर्यवसित है (3) जीव आठ कर्म का कर्त्ता है। (4) जीव आठ कर्मों का भोक्ता है (5) मोक्ष है, भव्य जीव कर्म क्षय कर मोक्ष जाता है। (6) मोक्ष का उपाय-सम्यक् ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप है।

(12) स्थान छः:-धर्म में सम्यक्त्व का स्थान (1) धर्म रूपी वृक्ष की सम्यक्त्व रूपी जड़ है। (2) धर्मरूपी नगर का सम्यक्त्व रूप कोट, किला है (3) धर्मरूपी भवन की सम्यक्त्व नींव है। (4) धर्म रत्न की सम्यक्त्व तिजोरी है (5) धर्मरूपी माल की सम्यक्त्व रूपी दुकान है (6) धर्मरूपी भोजन का सम्यक्त्व रूपी थाल है। ये 67 बोल सम्यक्त्व के हैं।

14. सम्यक्त्व के 12 द्वार-विविध ग्रंथों के आधार से चार प्रकार के सम्यक्त्व के प्राप्त होने के 12 द्वार से वर्णन है-नाम, लक्षण, आवण, पावण, परिमाण, उच्छेद, स्थिति, अंतर, निरंतर, आकर्ष, क्षेत्र स्पर्शना, अल्प बहुत्व द्वार, वर्णन इस प्रकार-

1	द्वार नाम	क्षायिक समकित	उपशम समकित	क्षयोपशमिक	वेदक
2	लक्षण	अनंतानुबंधी 4+दर्शन त्रिक, इन 7 का क्षय करे	7 प्रकृतियों का उपशमन करे	7 प्रकृतियों में 5-2 6-1 या 4-3 का क्षय और उपशय करें	6 का क्षय, उपशम या क्षयोपशम करे, समकित मोह को वेदे
3	आवण	मात्र मनुष्य भव में आवे	चारों गति में आवे, उपजे	चारों गति में आवे	चारों गति में आवे
4	पावण	चारों गति पावे	चारों गति में पावे-मिले	चारों गति में पावे	चारों गति में पावे
5	परिमाण	अनंत (सिद्ध भग. आश्री)	असंख्यात	असंख्यात	असंख्यात
6	उच्छेद	कभी नहीं उच्छेद	होता है	होता है	होता है
7	स्थिति	सादि अनंत	जघन्य उत्कृष्ट अ.र्मुहूर्त	ज.अं.उत्कृष्ट 66 सागर साधिक	ज. 1 समय उत्कृष्ट 66 सागर साधिक
8	अंतर	नहीं पड़ता	ज.अं. उत्कृष्ट देशोन अर्द्ध पुद्गल परावर्तन	उपशम समकितवत्	उपशम सम. वत्
9	निरंतर	आठ समय तक निरंतर आवे	आव. के असं. भाग जितने समय निरं. आवे	उपशम समकितवत्	उपशम सम. वत्
10	आकर्ष	एक भव में जघ. उत्कृष्ट एक बार मात्र आवे	एक भव में ज. 1 बार उ. 2 बार, अनेक भव में ज. 2 बार उत्कृष्ट 5 बार	एक भव में ज. 1 बार उ. प्रत्येक हजार बार, अनेक भ. में ज. 2 उत्कृष्ट असंख्यात बार	क्षायोपशमिकवत्

11	क्षेत्र स्पर्शना	संपूर्ण लोक स्पर्श केवली समुद्घात आश्री	देशोन 7 रज्जू लोक स्पर्श	उपशम सम. वत्	उपशम सम. वत्
12	अल्प बहुत्व द्वार	4 अनंतगुण सिद्ध आश्री	1 अल्प	2 असंख्यात गुण	3 विशेषाधिक

15. सिद्ध सुख के ग्यारह दृष्टांत-दृष्टांतों से भी अनंतगुणा सुख सिद्ध भगवान को है-(1) आरोग्यार्थी को रोग मिटने से जो सुख मिलता है (2) जीव को बड़ी घात टलने से जो सुख मिलता है (3) साहुकार को धन मिलने से जो सुख मिलता है (4) अनाथ वृद्ध माता को पुत्र मिलते जो सुख मिलता है। (5) चक्रवर्ती को स्त्रीरत्न मिलते जो सुख मिलता है (6) योगी को संतोष के साथ छाछ रोटी खाते जो सुख हो (7) भूखे प्यासे को अरण्य में पानी मिलते जो सुख मिले (8) बालक को माँ की गोद में स्तनपान से जो सुख मिले, (9) दीक्षार्थी को दीक्षा की अनुमति मिलते जो सुख मिले (10) आजन्म बंदी को मुक्ति मिलने से जो सुख मिले, (11) जन्मांध को दिव्य नैत्र मिलने पर जो सुख मिलता है, उससे भी अनंतगुणा सुख सिद्ध भगवान को है।

16. 84 लाख जीवयोनि का थोकड़ा-84 लाख जीवयोनि को निम्नांकित 31 द्वारों से समझाया है जीव के 563 भेदों में कुल 84 लाख जीव योनियों को विस्तारपूर्वक इन्द्रियादि रूप से कहाँ कितने भेद पाते हैं, उनका विवरण इस प्रकार-

क्र.	द्वार के नाम	भेद	विवरण
1	जीव द्वार भेद	84 लाख 563	पृथ्वी अप. तेउ. वायु प्रत्येक वन., साधारण वन. = 7+7+7+7+10+14 = 52 लाख (एकेन्द्रिय के 22 भेद) **52 लाख** बे. ते. चौ. 2+2+2=6 लाख 6 लाख (विकलेन्द्रियों के 6 भेद) **6 लाख** देवता, नरक, ति.पं., मनुष्य 4+4+4+14 **26 लाख** 26 लाख (पंचेन्द्रिय के 535 भेद कुल 563 भेद) **84 लाख**
2	इन्द्रिय द्वार	5	52 लाख में एक स्पर्शेन्द्रिय, 6 लाख में दो तीन और चार इन्द्रिय (विकले.), 26 लाख में 5 इंद्रियां होती है।
3	गुणस्थान	14	52 लाख में (पहला मिथ्यात्व), छ लाख में 2 (1, 2), देव नरक के 8 लाख में 4 गुणस्थान (1 से 4), 4 लाख तिर्यंच पंचेन्द्रिय में 5 गुण स्थान (पाँचवाँ बढ़ा), 14 लाख मनुष्य में 14 गुणस्थान पूरे।
4	योग 15	3	52 लाख में 1 काय और 15 योगों में से वायुकाय में पाँच, बाकी 45 लाख में 3 योग। 6 लाख विकलेन्द्रिय में 2 (काय, वचन) 26 लाख में 3 योग (मन वचन काया) (देव नरक में योग 11, ति. में योग 13, मनुष्य में 15 योग)

5	वेद	3	52 स्था.+6 विक.+4 नरक=62 लाख में 1 नपुंसकवेद, 4 लाख देव में 2 (स्त्री, पुरुष) तिर्य. 4+मनुष्य 14=18 लाख में 3 (स्त्री, पुरुष, नपुंसक)
6	कषाय	25	52+6 विक.+4 नरक=62 लाख में=23 (स्त्री पुरुष छोड़) 4 लाख देवों में=24 (नपुंसक छोड़) ति.4+14 मनु.=18 लाख में 25
7	लेश्या	6	पृ.पा. प्रत्येक वन.=24 लाख में 4 लेश्या (1 से 4), ते. वायु, सा.वन.+विकले+नरक=38 लाख में 3 लेश्या (1 से 3), देव+तिर्यंच+मनुष्य=22 लाख में 6 लेश्या
8	ज्ञान द्वार	5	52 लाख ज्ञान नहीं, 6 लाख (विक.) 2 (मतिश्रुत), देव, नरक, तिर्यंच 12 लाख में 3 (1 से 3 अवधि तक) मनुष्य 14 लाख में 5 ज्ञान
9	अज्ञान	3	52+6 वि.=58 लाख में 2 अज्ञान (1, 2) 26 लाख में तीन अज्ञान
10	दर्शन	4	52+2+2=56 (एके.बे.तेइ.) लाख में 1 अचक्षु। 2 लाख चौइ. में 2 दर्शन (चक्षु अचक्षु), नरक देव तिर्यंच के 12 लाख में 3 दर्शन (अवधि बढ़ा), 14 लाख मनुष्य में चार दर्शन
11	सन्नी		52+6=58 लाख असन्नी है 26 लाख सन्नी असन्नी दोनों है।
12	असन्नी		उपरोक्तानुसार
13	साता असाता		84 लाख को साता-असाता दोनों उपजे
14	पर्याप्ति	6	एके. 52 लाख में 4 (1 से 4), बेइ. 6 लाख में 5, पंचे. 26 लाख में 6 पर्याप्ति
15	प्राण	10	एके. 52 लाख में 4 प्राण, बेइ. से चौरे. तक क्रमशः (6, 7, 8), असन्नी मनुष्य में 9 (मन छोड़), 26 लाख में 10 प्राण
16	ध्यान	4	52+6 (विकले. तक) ध्यान नहीं, 4+4+4 न+दे+ ति.पं. में=12 में 3 ध्यान (शुक्ल छोड़), 14 लाख मनुष्य में चार ध्यान
17	उपयोग	12	52 लाख में तीन उपयोग, बे+ते 4 लाख में 5 उपयोग, 2 लाख चौइन्द्रिय में 6 उपयोग, नरक+देव+ति.पं. 12 लाख में 9 उपयोग, 14 लाख मनु. 12
18	दृष्टि	3	52 लाख में मिथ्यादृष्टि, 6 लाख विकलेन्द्रिय में 2 दृष्टि (सम, मिथ्या), 26 लाख पंचेन्द्रिय में तीन दृष्टि
19	आत्मा	8	52 लाख में 6 (ज्ञान चारित्र नहीं), 6+4+4+4=18 लाख में 7 (चारित्र कम), 14 लाख मनुष्य में 8 आत्मा
20	मरण	2	84 लाख में दोनों मरण
21	समुद्घात	7	7+7+7+10+14+6=51 लाख में 3 (1 से 3) 7 लाख वायु में+4 नरक=11 लाख में चार, 4 लाख देव +4 लाख ति.पं. में 5 (1 से 5), 14 लाख मनु. में 7
22	शरीर	5	7+7+7+10+14=45 लाख में तीन (औ.ते.का.), 4 लाख नरक, 4 लाख देव में तीन (वै.ते.का.) 1 लाख वायु में+4 ति.प.=11 लाख में चार (वै.औ.तै.का.), 14 लाख मनुष्य में पाँच
23	संहनन्	6	52+6=58 लाख में 1 अंतिम, 4 लाख नरक+4 लाख देव में संहनन नहीं, 4 लाख तिपं.+14 लाख मनुष्य में 6 संहनन।
24	संस्थान	6	52+6+4+4=66 लाख में 1 (देव में समचतु. बाकी में हुण्डक) तिप. 4+मनुष्य 14=18 लाख में 6 संस्थान

25	वर्ण	20	84 लाख में 20 वर्ण पावे (पृ. पीला, अप्. लाल, ते. सफेद+वायु हरा, वन. काला)
26	संज्ञा	4	84 लाख में 4 संज्ञा
27	समोसरण	4	क्रियावादी, अक्रियावादी, अज्ञानवादी, विनयवादी। 52 लाख में 2(2, 3), 6+4+4+4=18 लाख में 3 (1 से 3), 14 लाख मनुष्य में चार
28	भाव	5	औदारिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षयोपशमिक, पारिणामिक। 52+6+4+4+4=70 लाख में भाव 3 (1 से 3), 14 लाख मनुष्य में 5 भाव
29	हेतु	57	25 कषाय+5 मिथ्यात्व+15 योग+12 अव्रत=57 7+7+7+10+14=45 लाख में 39 (23+1+3+12) 7 लाख वायुकाय में 41 (23+1+5+12) 6 लाख विकले. में 40 (23+1+4+12) 4 लाख नरक में हेतु 51 (23+5+11+12) 4 लाख देवता में हेतु 52 (24+5+11+12) 4 लाख ति.पंचे. में हेतु 55 (25+5+13+12) 14 लाख मनुष्य में हेतु 57 (25+5+15+12)
30	कुलकोड़ी एक करोड़ साढ़े सत्तानवे लाख **1 क्रोड़ 97½ लाख**		7 पृथ्वी. में 12 लाख कुलकोड़ी — जलचर में 12½ लाख कुलकोड़ी 7 अप्. में 7 लाख कुलकोड़ी — थलचर में 10 लाख कुलकोड़ी 7 तेउ. में 3 लाख कुलकोड़ी — खेचर में 12 लाख कुलकोड़ी 7 वायु में 7 लाख कुलकोड़ी — उरपुर 10 लाख कुलकोड़ी 24 वन. में 28 लाख कुलकोड़ी — भुजपर 9 लाख कुलकोड़ी 2 बेइं. में 7 लाख कुलकोड़ी — 4 लाख नरक में 25 लाख कुलकोड़ी 2 तेइं. में 8 लाख कुलकोड़ी — 4 लाख देवता में 26 लाख कुलकोड़ी 2 चौ. में 9 लाख कुलकोड़ी — 14 लाख मनुष्य में 12 लाख कुलकोड़ी
31	पदवी	23	7 एके. रत्न+7 पंचे. रत्न+9 बड़ी पदवी=23 7 लाख पृथ्वीकाय में 7 पदवी (45 लाख में नहीं) 4+4+6+14 लाख में 1 पदवीं (सम्यक् दृष्टि) 4 लाख तिर्यंच में 4 पदवी (हाथी, घोड़ा, श्रावक, समदृष्टि) 14 लाख मनुष्य में 14 पदवी (9 बड़ी+5 पंचेन्द्रिय)

7 एकेन्द्रिय रत्न-चक्र, छत्र, चर्म, दंड, खड्ग, मणि, कागणी। 7 पंचेन्द्रिय रत्न-हाथी, घोड़ा, श्रीदेवी, सेनापति, गाथापति, बढ़ई, पुरोहित। 9 बड़ी पदवी-तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव, केवली, साधु, श्रावक, सम्यग्दृष्टि, मांडलिक राजा।चक्रवर्ती बलदेव की दोबार, वासुदेव की तीन बार, आहारक लब्धि 4 बार पाँचवीं में मोक्ष।

17. बत्तीस आगम पर दस द्वार-32 आगम सूत्रों पर 10 द्वार से वर्णन है नाम, विषय, गाथा, उपधान (आयंबिल), अनुयोग द्वार, कालिक, उत्कालिक, अंग-उपांग, शरीर, अंग, अध्ययन, वर्ष, अध्ययन द्वार, ये 10 द्वारों इस प्रकार-

सूत्रनाम	विषय द्वार	गाथाएँ	उपधान	अनुयोग	कालिक	अंग	शरीरांग	अध्य. वर्ष	अध्य. द्वार
आचारांग	आचार	2500	50	चरण करण	कालिक	अंग	पैर	3 वर्ष बाद	2 श्रुत स्क./25अ.
सूयगडांग	जैन अजैन दर्शन	2100	30	द्रव्यानु.	कालिक	अंग	पैर	4 वर्ष बाद	2 श्रुत./23अ.
ठाणांग	1 से 10 सं.	3770	18	द्रव्यानु.	कालिक	अंग	जंघा	4 वर्ष बाद	10 अध्य.
समवायांग	1 से कोटि सं.	1667	3	द्रव्यानु.	कालिक	अंग	जंघा	8 वर्ष बाद	1 अध्य.
भगवती	व्याख्या तत्त्व निरूपण	15752	186	द्रव्यानु.	कालिक	अंग	उरू	8 वर्ष बाद	41 शतक
ज्ञाताधर्म कथा	दृष्टांत, धर्मकथा	5500	33	कथानु.	कालिक	अंग	उरू	10 वर्ष बाद	19 अध्य.
उपासक दशा	10 श्रावक	812	14	कथानु.	कालिक	अंग	पेट	-	10 अध्य.
अंतगड़ दशा	90 मोक्षगामी जीव	900	12	कथानु.	कालिक	अंग	छाती	-	10 वर्ग/90अ.
अणुत्तरोववाई	अणुत्तर विमानोत्पन्न	292	7	कथानु.	कालिक	अंग	बाहु	-	3 वर्ग/33अ.
प्रश्नव्याकरण	आश्रव संवर	1250	14	चरणा.	कालिक	अंग	बाहु	3 वर्ष दीक्षा बाद	10 द्वार
विपाकसूत्र	पाप, पुण्य फल	1216	24	कथानु.	कालिक	अंग	गला	-	20 अध्य.
औपपातिक	समोसरण, तपादि	1200	3	कथानु.	उत्का.	उपांग	पैर	-	2 अधि
राजप्रश्नीय	केशी-प्रदेशी वर्णन	2078	3	कथानु.	उत्का.	उपांग	पैर	-	पूर्व-उत्तरा.
जीवाभिगम	जीव-अजीव वर्णन	4700	3	द्रव्यानु.	उत्का.	उपांग	जंघा	8 वर्ष	बा. प्रतिपत्ति
प्रज्ञापना	36 पद जीवाजीव	7787	3	द्रव्यानु.	उत्का.	उपांग	जंघा	10 वर्ष	36 पद
जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति	जंबूद्वीप, आरे	4146	10	गणिता.	कालिक	उपांग	उरू	-	7 वक्षस्कार
चंद्र प्रज्ञप्ति	चंद्र, ज्योतिषी	2200	3	गणिता.	कालिक	उपांग	उरू	11 वर्ष	20 प्राभृत
सूर्य प्रज्ञप्ति	सूर्य नक्षत्रादि	2200	3	गणिता.	उत्का.	उपांग	उरू	11 वर्ष	20 प्राभृत
निरयावलिका	कोणिकादि नरक	1109	7	कथानु.	कालिक	उपांग	पेट	-	10 अध्य.
कप्पवंडसिया	असदाचरण साध्वी	-	7	कथानु.	कालिक	उपांग	छाती	-	10 अध्य.
पुप्फिया	आराधक विराधक	-	7	कथानु.	कालिक	उपांग	बाहू	-	10 अध्य.
पुप्फ चूलिया	विराधक साध्वियां	-	7	कथानु.	कालिक	उपांग	बाहु	-	10 अध्य.
वह्नि दशा	नेमि. देवगामी जीव	-	7	कथानु.	कालिक	उपांग	गला	-	12 अध्य.
उत्तराध्ययन	वीरप्रभु अं. देशना	2000	29	चारों	कालिक	मूलसूत्र	पैर	1 वर्ष	36 अध्य.
दशवैकालिक	साधुआचार	700	15	चारों	कालिक	मूलसूत्र	पैर	1 वर्ष	10 अध्य.
नंदीसूत्र	पाँच ज्ञान	700	3	चरण	उत्का.	मूलसूत्र	पैर	4 वर्ष	-
अनुयोग द्वार	नय निक्षेप प्ररूपण	1600	8	करणानु	उत्का.	मूलसूत्र	पैर	4 वर्ष	-
दशाश्रुत स्कंध	10 चित्त समाधि	1835	3	द्रव्या.	उत्का.	छेदसूत्र	पैर	5 वर्ष	10 दशा
वृहत्कल्प	साधुकल्पाकल्प	473	3	द्रव्या.	उत्का.	छेदसूत्र	पैर	5 वर्ष	6 उद्दे.
व्यवहारसूत्र	पाँच व्यवहार	600	3	चरण	उत्का.	छेदसूत्र	पैर	5 वर्ष	10 उद्दे.
निशीथसूत्र	प्रायश्चित्त	815	10	करणानु	उत्का.	छेदसूत्र	पैर	5 वर्ष	20 उद्दे.
आवश्यकसूत्र	6 आवश्यक	125	-	चरण	उत्का.नो का नो उत्का.	आवश्यक	पैर	-	6 अध्य.

विशेष-11 अंगसूत्र गाथा 35759, बारह उपांगसूत्र गाथा 25387, चार मूलसूत्र गाथा 5399, चार छेदसूत्र गाथा 3718, आवश्यक सूत्र 125, कुल गाथाएँ कही 70363 लिखी मिलती है, यहाँ दर्शाये चार्ट में उपांग, छेद और आवश्यक सूत्र की गाथाओं की संख्याँ में फर्क आता है फिर भी सुत्तागम प्रमाण से 72000 गाथाएँ होती हैं।

18. चवदह पूर्व का यंत्र (नंदीसूत्र तथा समवयांग सूत्र)-तीर्थ प्रवर्तन समय तीर्थंकर भगवान गणधरों को अर्थ का जो सर्वप्रथम उपदेश फरमाते हैं, अथवा गणधर जिनको उसे सूत्र रूप में प्रथम गुंथन करते हैं, वे पूर्व है 14 पूर्वों का कर्त्ता पाँचवें गणधर श्री सुधर्मा स्वामी है-उन पूर्वों की विषय-वस्तु आदि इस प्रकार है-

क्र.	पूर्व का नाम	पद सं.	वत्थु	चूल वत्थु	स्याही हस्ती	विषय वर्णन
1	उत्पाद पूर्व	1 क्रोड़	10	4	1	सर्व द्रव्य पर्याय गुण उत्पाद ध्रौव्य नाश
2	अग्रणीय पूर्व	70 लाख	14	12	2	सर्व द्रव्य गुण पर्या. का विशेष परिणाम, अल्पबोध
3	वीर्य प्रवाद	60 लाख	8	8	4	सर्वजीवों के वीर्य आदि वर्णन
4	आस्तिनास्ति प्रवाद	1 क्रोड़	18	10	8	अस्तिनास्ति स्वरूप (पंचास्ति.) स्यादवाद
5	ज्ञान प्रवाद	2 क्रोड़	12	0	16	पाँच ज्ञान का विवेचन, दर्शन स्व., विषय चूलिका
6	सत्य प्रवाद	26 क्रोड़	2	0	32	सत्य संयम वर्णन
7	आत्म प्रवाद	1 क्रोड़ 80 लाख	16	0	64	नय, प्रमाण, दर्शन सहित आत्म स्वरूप
8	कर्म प्रवाद	84 लाख	30	0	128	कर्म की प्रकृति, स्थिति आदि
9	प्रत्याख्यान प्रवाद	1 क्रोड़ 1 हजार	20	0	256	प्रत्याख्यान का प्रतिपादन
10	विद्यानु प्रवाद	26 करोड़	15	0	512	विद्या के अतिशयों आदि
11	अवंध्य पूर्व	1 क्रोड़	12	0	1024	ज्ञान तप संयम का शुभाशुभ फल
12	प्राणायु पूर्व	9 क्रोड़	13	0	2048	भेद सहित प्राणादि वर्णन
13	क्रिया विशाल	12 क्रोड़	30	0	4096	क्रिया, छेद क्रिया का व्याख्यान, विवेचन
14	लोक बिंदुसार	96 लाख	25	0	8192	बिंदु में लोक स्वरूप, सर्वअक्षर सन्निपात

विशेष-14 पूर्व में पद संख्या 84 क्रोड़ 40 लाख 1 हजार (मतांतर से इसमें कई जगह फर्क है) वत्थु (अध्ययन) 225 है, चूल वत्थु (चूलिका समाप्ति पर सार शेष कथन) 34 और स्याही हस्ति (अंबाड़ी सहित हाथी, जितनी स्याही में डूबे, उससे एक पूर्व लिखा जाये) 16383 हाथी प्रमाण स्याही चाहिए, ऐसी धारणा है।

19. आहार के 106 दोष (आचारांग, सूत्रकृतांग, निशीथसूत्र)-मुनि 106 दोष टालकर गोचरी करते हैं-आचारांग, सूत्रकृतांग निशीथ से 42 दोष-

गवेषणा के 16 उद्गम दोष-(1) आधाकर्मी (2) औद्देशिक (3) पूतिकर्म (4) मिश्रजात (5) स्थापना (6) प्राभृतिका (7) प्रादुष्करण (8) क्रीत (9) प्रामीत्य (10) परिवर्तित (11) अभिहृत (12) उद्भिन्न (13) मालापहृत (14) अच्छेद्य (15) अनिसृष्ठ (16) अध्यवपूरक।

16 उत्पादना के दोष (1) धात्री (2) दूति (3) निमित्त (4) आजीव (5) वनीपक (6) चिकित्सा (7) क्रोध (8) मान (9) माया (10) लोभ (11) पूर्व पश्चात् संस्तव (12) विद्या (13) मंत्र (14) चूर्ण (15) योग (16) मूल कर्म।

ग्रहणैषणा के 10 दोष (1) संकित (2) म्रक्षित (3) निक्षिप्त (4) पिहित्त (5) साहरित्त (6) दायक (7) उन्मिश्र (8) अपरिणत (9) लिप्त (10) छर्दित

आवश्यक सूत्र में बताये पाँच दोष (श्रमण सूत्र) (1) गृहस्थ के द्वार खुलवाना (2) गाय कुत्तों आदि के लिए बनाया लेना (3) देव, देवी, बलि के लिए बनाया लेना (4) बिना देखी चीज लेना (5) रस लोलुपता से निमंत्रण मिलने से लेना।

परिभोगैषणा के पाँच दोष- (1) संयोजना (2) अप्रमाण (3) इंगाल (4) धूम (5) अकारण। ये 47 दोष

श्री उत्तराध्ययन में बताये दो दोष-(1) स्वजनों से ही ले, अन्यों में से नहीं ले (2) बिना कारण ले

1. **आहार करने के छः कारण-**

वेयण वेयावच्चे, इरियट्ठाए य संजमट्ठाए।
तह पाणवत्तियाए, छट्ठं पुण धम्म चिन्ताए।। (उत्तरा. 26 गा. 33)

(1) क्षुधावेदना शांति हेतु (2) आचार्यादि की वैयावच्च हेतु (3) ईर्या समिति पालन हेतु (4) संयम निर्वाह हेतु (5) जीवों की रक्षा, स्वरक्षा हेतु (6) धर्मचिंतन करने हेतु।

2. **आहार छोड़ने के छः कारण-**

आयंके उवसग्गे, तितिक्खया बंभचेर-गुत्तीसु।
पाणिदया तवहेउं, सरीर-वोच्छेयणट्ठाए।। (उत्तरा. 26 गा. 35)

(1) रोगादि होने से (2) उपसर्ग आने से (3) ब्रह्मचर्य रक्षार्थ (4) जीवों की रक्षा हेतु (5) तप करने हेतु (6) संलेखना संथारा हेतु।

गृहीत आहार को 12 कारण से परठे-(1) आधा कर्मी (2) औद्देशिक (3) मिश्रजात (4) पूतिकर्म (5) सूर्योदय पूर्व लिया (6) सूर्यास्त बाद लाया या बचा हुआ

(7) दो कोस उपरांत का (8) प्रथम प्रहर में लिया चौथे प्रहर में रहा हुआ (9) प्रासुक पानी में अप्रासुक गिर गया हो (10) नवदीक्षित का लाया हुआ (11) शय्यातर का हो (12) साधु निमित्त खरीदा हो, तो भगवान की आज्ञा है परठने की।

दशवैकालिक में 23 दोष-(1) नीचे दरवाजे में होकर जाकर गोचरी करना (2) अंधेरे में गोचरी करना (3 से 6) बकरा बकरी, बच्चा बच्ची, कुत्ता, बछड़े आदि को उल्लंघन कर गोचरी जाना (7) अन्य प्राणी को उल्लंघ कर जाना (8) जानकर सचित्तादि लेना (9) दान की लेना (10) पुण्य के लिए बनायी लेना (11) भिखारी के लिए बनाया लेना (12) अन्य साधुओं का बनाया लेना (13) राजपिंड (14) शय्यातर पिंड (15) नित्य पिंड (16) सचित स्पर्शित लेना (17) दानशाला से (18) तुच्छ वस्तु लेना (19) सचित से हाथ धोया हो (20) अभक्ष्य (21) अप्रतीतिकारी, दुराचारी से लेना (22) गृहस्थ के मना करने पर भी लेना (23) मदिरादि वस्तु महादोष।

आचारांग के 8 दोष-(1) मेहमानों के लिए हो (2) मांसादि (3) पुण्यार्थ में से (4) जिमनवार से लेना (5) भिखारी आदि हो वहाँ से लेना (6) भूमिगृह में से लाया लेना (7) फूँक देकर बहोराया लेना (8) पंखादि से ठंडा किया लेना।

श्री भगवतीसूत्र में बताये 12 दोष-(1) संयोग दोष (2) द्वेष दोष (3) राग (4) प्रमाणाधिक खाये तो (5) कालातिक्रम दोष (6) मार्गातिक्रम दोष (7) सूर्योदय पूर्व, पश्चात् आहार करे तो (8) दुष्काल अटवी में दानशाला का ले (9) दुष्काल में गरीबों का ले (10) ग्लान रोगी आदि का ले (11) अनाथों का ले (12) आमंत्रण का ले।

प्रश्न व्याकरण सूत्र में बताये पाँच दोष-(1) आहार का रूपांतर जैसे-बूँदी के-लड्डू बनाना (2) आहार पर्याय बदलाना मुनि हेतु दही का रायता, छाछ (3) मुनि स्वयं के हाथ से ले (4) अंदर गृह से लाकर देना (5) आहार की याचना करना।

निशीथ में बताये 6 दोष-(1) इसमें क्या है? ऐसा पूछकर याचना करना (2) अनाथ, मजदूर से दीनता से ले (3) अन्यतीर्थी की भिक्षा में से ले (4) पासत्था (शिथिलाचारी) से याचना (5) जैन मुनि की दुर्गंच्छा (बुरा बताए) करने वाले से ले (9) शय्यात्तर से ले, उसकी दलाली से ले।

दशाश्रुत स्कंध में बताये 2 दोष-(1) बालक के लिए (2) गर्भवती के लिए बनाया ले।

बृहत्कल्प में बताया एक दोष-चारों प्रकार का आहार रात्री रखकर दूसरे दिन भोगे।

इनमें 42+5+2+23+8+12+5+6+2+1=106 दोष (मांडला के 5 गोचरी 101)।

20. दस प्रकार के पच्चक्खाण (ठाणांग 10) दस प्रकार के पच्चक्खाण बताये हैं (1) नवकारसी (2) पोरसी (3) पुरिमड्ढ (4) एकासणा (5) एकलठाणा (6) आयंबिल (7) तिविहार उपवास चौविहार उपवास (अभत्तठं) (8) दिवस चरिम (सूर्यास्त समय चौविहार) (9) नीवि (10) अभिग्रह।

21. चौभंगी पचास (ठाणांग 4 ठाणा) यहाँ पचास तरह के चार-चार से वस्तु निरूपण दिया गया है-(1) चार प्रकार का घड़ा-(1) अमृत का घड़ा-अमृत का ढ़कना (2) अमृत का घड़ा-विष का ढ़कना (3) विष का घड़ा-अमृत का ढंकना (4) विष का घड़ा-विष का ढ़ंकना।

(2) चार जात के फूल-(1) फूल सुगंध भी रूप भी (गुलाब) (2) सुगंध है रूप नहीं (बोरसली) (3) रूप है सुगंध नहीं (रोहिड़े का फूल) (4) रूप नहीं सुगंध भी नहीं (आकड़ा, धतूरा का फूल।)

(3) चार प्रकार के श्रावक-(1) साधु को माता पिता समान (2) भाई-बंधु समान (3) भाई समान (4) शौक (सौतन) समान (4) चार प्रकार के करंडिये तीर्थंकर समान, गणधर समान, अन्य दर्शनी, जंत्रमंत्र करने वाला। (5) चार कषाय-नारकी में क्रोध, मनुष्य में मान, तिर्यंच में माया, देवता में लोभ (6) चार अजीर्ण-तप का, ज्ञान का, काम का, पेट का (7) चार प्रकार का वृक्ष परिवार सहित-शाली का वृक्ष, वैसा परिवार (आदिनाथ, चक्रवती भरत), शाली का वृक्ष एरंडा परिवार (गर्गाचार्य, शिष्य) एरंडा का वृक्ष शालि का परिवार (इंगाल मर्दनाचाय, शिष्य), एरंडा का वृक्ष एरंडा का परिवार (कालशौकरिक कसाई उसका परिवार) (8) चार प्रकार के मेघ-गाजे पर बरसे नहीं, बरसे पर गाजे नहीं, गाजे और बरसे, गाजे भी नहीं बरसे भी नहीं (दान और अभिमान पर घटाना) (9) चार प्रकार के मेघ-काल में बरसे अकाल में नहीं, अकाले बरसे काले नहीं, काले भी बरसे अकाले भी बरसे, काले नहीं अकाले भी नहीं बरसे (जरूरीयात और दान पर कहना) (10) चार प्रकार के मेघ-क्षेत्र में बरसे, खार में नहीं, खार में बरसे क्षेत्र में नहीं, दोनों में बरसे, दोनों में नहीं बरसे (सुपात्र-कुपात्र दान) (11) चार प्रकार के मेघ-एक बार बरसे 10 हजार वर्ष तक निपजे (संयति राजा, गजसुकुमाल एक प्रवचन सुन दीक्षा), एक बार बरसे हजार वर्ष निपजे (परदेशी राजा केशी श्रमण का प्रवचन सुन श्रावक बने) एक बार बरसे दस वर्ष निपजे (श्रेणिक

वचन सुन समकिति बने), एक बार बरसे एक बार धान निपजे (पाँचवाँ आरा के जीव सुनते रहते हैं)

(12) चार प्रकार के बल-तपस्या का बल है आहार का नहीं, आहार का बल-तप का नहीं, आहार का बल-तप का भी बल, आहार का बल नहीं-तप का बल नहीं (रोगी)

(13) चार प्रकार का गोला-मक्खन का (तुरंत पिघले), लाख का गोला (आग के पास रखे तो पिघले), लकड़ी का गोला (आग में डाले तो) मिट्टी का गोला (पक जाय परन्तु पिघले नहीं)।

(14) चार प्रकार के पुरुष-प्रिय धर्मी परन्तु दृढ़धर्मी नहीं, प्रिय धर्मी नहीं पर दृढ़धर्मी। प्रियधर्मी भी दृढ़धर्मी भी न प्रियधर्मी न दृढ़धर्मी।

(15) चार प्रकार के पुरुष-बाहर उजला अंदर कपट, बाहर मेला अंदर साफ, बाहर से साफ अंदर से भी साफ, बाहर मेला अंदर भी मेला।

(16) चार प्रकार के पुत्र-पिता से अधिक (आदिनाथ भरत), पिता से हीन (भरत के पुत्र), पिता तुल्य (आदित्य जशा का पुत्र), पिता के लिए कलंक (कुंडरीकवत्)।

(17) चार प्रकार के रोग-देखने में दुष्ट वेदना कम (मेदस्वी), देखने में दुष्ट नहीं वेदना बहुत (कंठ माल) देखने में दुष्ट वेदना भी बहुत (पेटशूल) देखने दुष्ट नहीं वेदना भी नहीं (शून्य चित्त रोग)।

(18) चार प्रकार की दीक्षा-सिंह के समान ले-सिंह समान पाले (भरतचक्री), सिंहवत् ले शियालवत् पाले (कुंडरीक), शियाल की तरह ले सिंहवत् पाले (अंगार मर्दनाचार्य के शिष्यवत्), शियालवत् ले शियालवत् पाले (कालकाचार्य के शिष्यवत्)।

(19) चार प्रकार का स्नेह-सूंठ के तारणा का तार टूटे पर संधे नहीं, बाँस की छाल जैसे टूटे पर कुछ संधे, ऊन की डोर जैसे टूटे तो विशेष संधे, चमड़े का तार टूटते भी देर लगे संधते भी देर लगे।

(20) चार प्रकार के पुरुष-स्व अवगुण देखे दूसरों के नहीं, दूसरों के देखे स्वयं के नहीं, स्वयं के भी देखे अन्यों के भी देखे, दोनों के दोष नहीं देखे।

(21) चार प्रकार वाला देव गति से आया समझना-उदारचित्त, सुस्वरकंठ, धर्मानुरागी, देव गुरु भक्त।

(22) चार प्रकार का तिर्यंच से आया समझे-अनाड़ी, असंतोषी, कपटी, मूर्ख की सेवा और भूख बहुत लगती हो।

(23) चार प्रकार का मनुष्य से आया-विनीत, निर्लोभी, दयालु धर्मात्मा, सभी का प्यारा।

(24) चार प्रकार का नरक से आया-क्रोधी, मूर्ख, दया रहित, झगड़ालू।

(25) चार प्रकार किल्विषी से आया-तीर्थंकर अवगुणवाद, धर्म का, आचार्य, उपाध्याय, चतु. संघ का अवगुण बोले।

(26) चार प्रकार के जीव धर्म नहीं प्राप्त करे-अहंकारी, क्रोधी, रोगी, प्रमादी।

(27) चार वस्तु लोक में सरीखी-उडू विमान, सीमंतक नरकावास, मनुष्य क्षेत्र, सिद्धशिला (45 लाख योजन)।

(28) एक लाख योजन के चार-सातवीं नरक, पालक विमान (पहला देव.) जंबूद्वीप, सर्वार्थसिद्ध विमान।

(29) चार प्रकार के फल-बाहर कठिन अंदर पोला (नारियल), बाहर पोचा अंदर कठिन (बोर), अंदर पोचा बाहर पोचा (द्राक्ष), अंदर बाहर कठिन (सुपारी)।

(30) चार प्रकार के पुरुष-ऊपर कठोर-अंदर नरम (माता-पिता), ऊपर मीठा-अंदर कपटी (दुश्मन), ऊपर से मीठा-अंदर से हितैषी (साधु मुनि) ऊपर कटुक बोले-अंदर खोटा विचारे (पापी)।

(31) चार प्रकार की उपमा-छती को अछती की उपमा (नगर देवलोक समान), अछती को छती की (छाछ दूध जैसी) अछती को अछती की उपमा (पल्य की उपमा) छती को छती की (गुड़ शक्कर जैसा)।

(32) चार प्रकार की निर्जरा-बहुत वेदना थोड़ी निर्जरा (सातवीं नारकी) थोड़ी वेदना बहुत निर्जरा (साधु) बहुत वेदना घणी निर्जरा (पडिमाधारी, जिनकल्पी), थोड़ी वेदना थोड़ी निर्जरा (अणुत्तर)।

(33) चार स्थान कषाय वासा-क्रोध-कपाल में, मान-गर्दन में, माया-हृदय में, लोभ-सर्वांग में।

(34) चार प्रकार की अक्कल-जागे तो चोर भागे, क्षमा से क्लेश जाय, उद्यम करे दरिद्रता जाय, भगवान की बात से पाप जाय।

(35) चार प्रकार के जीव-दुःख सुख जाणे वेदे, (चारों गति के), जाणे पण वेदे नहीं-(सिद्ध), वेदे पर जाणे नहीं (असंज्ञी), जाणे नहीं वेदे नहीं (शुद्ध या अजीव)।

(36) चार प्रकार के पुरुष-कर्मों का अंत करे करावे (तीर्थंकर), कर्मों का अंत करे करावे नहीं-प्रत्येक बुद्ध आदि कर्म अंत नहीं करे दूसरे का करावे-अचरम शरीरी आचार्यादि, कर्म का अंत नहीं करे नहीं करावे कालिकाचार्य आदि।

(37) चार प्रकार के आचार्य-देश आराधक सर्व आराधक अंदर बाहर दोनों परिषह जीते, अंदर के परिषह जीते बाहरी न जीते देश विराधक सर्व आराधक, बाहर के जीते अंदर नहीं जीते देश आराधक सर्व विराधक, दोनों नहीं जीते देश से और सर्व से विराधक।

(38) चार प्रकार के चपल-स्थानक, चपल-कहीं भी बैठे, गति चपल ऊँट की तरह चले, भाषा चपल-बक-बक करे, भाव चपल-एक काम भी पूरा नहीं करे दूसरा करने लगे, ज्ञान नहीं आता।

(39) चार प्रकार के पुरुष कम (थोड़ा) पर दुःख दुखिया थोड़ा, परोपकारी थोड़ा, गुणग्राही थोड़ा, गरीब साथ में स्नेह रखे थोड़ा।

(40) चार प्रकार का गरणा-धरती का गरणा ईर्या समिति, मति का गरणा शुभ ध्यान, वाणी का गरणा निर्वद्य भाषा, पाणी का गरणा मोटा कपड़ा (जाड़ा)।

(41) चार प्रकार का साधु-स्वयं का पोषण अन्य का नहीं (जिनकल्पी), स्वयं का न करे अन्य का करे-परोपकारी साधु, स्वयं का करे अन्य साधु का न करे-सामान्य साधु, स्वयं का न करे अन्य का भी न करे-संथारा वाला साधु या दरिद्री।

(42) चार दिशाओं में चार पुरुष-पूर्व में भोगी बहुत, पश्चिम में शोगी बहुत, उत्तर में जोगी घणा, दक्षिण में रोगी घणा।

(43) चार पछेवड़ी साध्वी रखे-(1) दो हाथपना की स्थानक में ओढ़े, (2) दूसरी दो हाथपना की स्थंडिल जाते ओढ़े (3) तीन हाथपना की गोचरी जाते ओढ़े, (4) चार हाथपना की समोसरण जाते ओढ़े।

(44) चार प्रकार के पुरुष-साधु वेष छोड़े पर जिनाज्ञा रूप धर्म न छोड़े (कारण विशेष), साधु वेश न छोड़े जिनाज्ञा धर्म छोड़े (जमाली), दोनों न छोड़े (साधु), दोनों छोड़े (कुंडरीक)।

(45) चार प्रकार का आहार परठना-द्रव्य से आधाकर्मादिक, क्षेत्र से दो कोस उपरांत, काल से चौथा प्रहर का, भाव से अपथ्यकारी (कडवा तूंबा जैसा)।

(46) चार प्रकार की अंतक्रिया-भरत महाराज की तरह, मरूदेवी माता, गजसुकुमार, सनत्कुमार चक्रवर्ती चारों मोक्ष में गये। अंतक्रिया करके।

(47) चार प्रकार की स्त्री-शीलगुण सहित वस्त्रादि सहित (सीतावत्), शीलगुण सहित वस्त्रादि रहित (राजीमती गुफावत्), शील रहित वस्त्र सहित (व्याभिचारिणी), शील रहित वस्त्र रहित (वैश्या, वस्त्र रहित फोटो पड़ाने वाली)।

(48) चार प्रकार का आहार परठना-परठते समय कोई मनुष्य दूर से आवे देखे-अशुद्ध, दूर से आवे देखे नहीं-अशुद्ध, कोई आता नहीं देखे जरूर वह भी-अशुद्ध, कोई आवे नहीं देखे नहीं-शुद्ध।

(49) चार अंग मोक्ष प्राप्ति का-मनुष्यभव, सिद्धांत सुनने की प्रीति, धर्म पर पूर्ण श्रद्धा, धर्म कार्य में बल (पुरुषार्थ, वीर्यता)।

(50) मोक्ष के चार द्वार-ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप।

22. ध्यान चार (ठाणांग ठाणा 4, उववाई सूत्र) आर्त्त रौद्र धर्म शुक्ल, चार ध्यान इस प्रकार-

1	भेद 4	आर्त्त ध्यान	रौद्र ध्यान	धर्म ध्यान	शुक्ल ध्यान
2	पाये 4 (प्रकार)	(1) अमनोज्ञ वस्तु का संयोग चिंतन मनोज्ञ का वियोग चिंतन रोगादि अनिष्ट का वियोग परभव सुख के लिए निदान	हिंसा में आनंद माने झूठ में आनंद माने चोरी में आनंद माने कारागृह में फँसाने पाप में आनंद	तीर्थंकर आज्ञा का चिंतन आश्रव कारणों का चिंतन शुभाशुभ विपाक का चिंतन लोक संस्थान का चिंतन	उत्पाद व्यय ध्रौव्य चिंतन द्रव्य, शब्द भाव एक योग 13वें गुण. काय निरोध 14वें में सूक्ष्म क्रिया निरोध
3	लक्षण चार	चिंता शोक करना अश्रुपात करना आक्रंद करना छाती माथा कूटना	छोटी बात अति क्रोध बड़ी बात अत्यंत क्रोध अज्ञानता से द्वेष आजीवन द्वेष	तीर्थंकर की आज्ञा रूचि निसर्ग से रूचि उपदेश रूचि आगम सिद्धांत रूचि	देव उपसर्ग से अचलित धर्म में ग्लान नहीं बने शरीर आत्मा भिन्न-2 शरीर अशरण एवं त्याग
4	अवलंबन चार	आर्त्त रौद्र पतन रूप है आलंबन नहीं	आलंबन नहीं	वाचना, पृच्छना, परावर्तना, धर्मकथा अनुप्रेक्षा स्वाध्याय का भेद है यही ध्यान बन जाता है	क्रोध नहीं क्षमा, निर्लोभता, संतोष, निष्कपटता, सरलता, अहंकार रहित

धर्म ध्यान की चार अनुप्रेक्षाएं-एकत्वपन का विचार, भव परिग्रह की अनित्यता का विचार, संसार में कोई शरण नहीं अशरण विचार, संसार परिवर्तन स्थिति का विचार करना।

शुक्ल ध्यान की चार अनुप्रेक्षा-संसार परिभ्रमण की अनंतता का विचार, वस्तुओं के विविध परिणमनों का विचार, संसार देह भोगों की अशुभता का विचार, राग-द्वेष से

होने वाले दोषों का विचार करना, कर्मबंध हेतु छोड़ सयंम तप में रमण करे।

शुक्ल ध्यान के चार पाये-

1	सविचार	3 योग	8 से 10 गुणस्थान	1 पदस्थ-पंच परमेष्ठी का ध्यान
2	अविचार	1 योग	11, 12 गुण.	2 पिंडस्थ-अपनी आत्मा का ध्यान
3	सूक्ष्म क्रिया.	1 काय योग	13वाँ अंतिम चरण	3 रूपस्थ-अरिहंत के 12 गुण का ध्यान
4	समुच्छिन क्रिया.	अयोगी	14वें से	4 रूपातीत-अनाकार सिद्ध प्रभु का ध्यान

23. अस्वाध्याय (असज्जाय) (ठाणांग 4, 10, निशीथ उ.19) 34 अस्वाध्याय इस प्रकार

अंतरिक्ष (आकाश) संबंधी 10 अस्वाध्याय

क्र.	नाम	अर्थ, विषय विवरण	काल मर्यादा
1	उल्कापात	तारा आकाश से गिरे तो	1 प्रहर
2	दिग्दाह	दिशादाह (ऊपर प्रकाश नीचे अंधेरा)	जब तक रहे
3	गर्जित	मेघ गर्जना हो तो (आर्द्रा से स्वाति नक्षत्र तक को छोड़कर)	2 प्रहर
4	विद्युत	बिजली चमके तो (आर्द्रा से स्वाति नक्षत्र तक को छोड़कर)	1 प्रहर
5	निर्धात	(आर्द्रा से घोर गर्जन स्वाति नक्षत्र तक को छोड़कर)	8 प्रहर
6	यूपक	बालचंद्र शुक्ल पक्ष की एकम, बीज, तीज की रात	प्रथम प्रहर तक
7	यक्षा दिप्त	यक्षादि चित्र दिखे	जब तक दिखे
8	धूमिका	कोहरा	जब तक रहे
9	मिहिका	ओले गिरे (झांकल)	जब तक रहे
10	रज उद्घात	धूल बरसे	जब तक बरसे

औदारिक शरीर संबंधी 10 अस्वाध्याय-11 से 13-अस्थि मांस शोणित पड़े हो तो (14) अशुचि सामन्त-दुर्गंध आवे या दिखाई दे तब तक (15) श्मशान सामंत-श्मशान भूमि 100 हाथ नजदीक तक (16) चन्द्रोपराग-चन्द्रग्रहण-अल्पग्रास 4 प्रहर, खंडग्रास 8 प्रहर, पूर्ण हो तो 12 प्रहर (ग्रहण प्रारंभ से) (17) सूर्योपराग-सूर्य ग्रहण-अल्पग्रास 8 प्रहर, खंडग्रास 12 प्रहर, पूर्ण हो तो 16 प्रहर तक।

(18) पतन-राजमरण-राजा की मृत्यु तथा नये राजा की घोषणा तक (19) राजव्युद्ग्रह-युद्ध स्थान के नजदीक युद्ध चले तब तक (20) उपाश्रय सामन्त औदारिक शरीर-उपाश्रय में मृत कलेवर (पंचेन्द्रिय का) तिर्यंच का 60, मनुष्य का 100 हाथ दूरी तक।

काल संबंधी अस्वाध्याय 14-(21 से 30) आषाढ़, भादवा, आसोज, कार्तिक, चेत्र की पूनम और उसके बाद की एकम की दिन रात्रि। (31 से 34) प्रभात, मध्याह्न, संध्या, मध्य रात्रि इन चार संधी काल में 1-1 मुहूर्त। ये 34 अस्वाध्याय टालकर एवं खुल्ले मुँह न बोलना, लाइट या दीपक आदि के उजाले में नहीं वांचना। हुताशनी या धुलेटी की भी असज्जाय मानते हैं।

24. तेतीस बोल (समवायांग तथा उत्तरा. 31 वे अ.) (1) **पहले बोले**-असंयम एक। **दूसरे बोले**- बंधन दो-राग, द्वेष। **तीसरे बोले**-दण्ड तीन-मन, वचन, काया। गुप्ति 3-मन, वचन, काय, शल्य तीन-माया, निदान, मिथ्यादर्शन, गर्व तीन-ऋद्धि रस, साता, विराधना तीन-ज्ञान दर्शन चारित्र। **चौथे बोले**- कषाय चार, संज्ञा चार, कथा चार, ध्यान चार। **पाँचवें बोले**- पाँच क्रिया (कायिकी आदि), काय गुण पाँच (शब्दादि) महाव्रत पाँच, समिति पाँच, प्रमाद पाँच (मद, विषय, कषाय, निद्रा, विकथा)।

छठे बोले- छः काया, लेश्या छः। **सातवें बोले**- सातभय, (इहलोक, परलोक, आदान, अकस्मात्, आजीविका, अपयश, मरण भय)। **आठवें बोले**-मद 8-जाति, कुल, बल, रूप, तप, लाभ, सूत्र और ऐश्वर्य। **नवमें बोले**- ब्रह्मचर्य की नव गुप्ति, नव वाड़। **दसवें बोले**- दस प्रकार यति धर्म, दस प्रकार समाचारी। **ग्यारहवें बोले**- श्रावक की 11 प्रतिमाएँ-दर्शन, व्रत, सामायिक, पौषध, कायोत्सर्ग, ब्रह्मचर्य, सचित त्याग, आरंभ त्याग, प्रेष्य त्याग, उद्दिष्ट भक्त त्याग, श्रमण भूत प्रतिमा। **बारहवें बोले**- भिक्षु की 12 प्रतिमाएँ। **तेरहवें बोले**- क्रिया स्थान तेरह-अर्थ दंड, अनर्थ दंड, हिंसा, अकस्मात्, दृष्टि विपर्यास, मृषावाद, अदत्तादान, अध्यात्म, मान, मित्र, माया, लोभ, ईर्यापथिक दण्ड क्रिया।

चौदहवें बोले- जीव के 14 भेद। **पन्द्रहवें बोले**-15 परमाधार्मिक देव।

सोलहवे बोले- सुत्रकृतांग के 16 अध्ययन। **सत्रहवें बोले**- सत्रह प्रकार का संयम **अठारवें बोले**- ब्रह्मचर्य के 18 प्रकार मन वचन काया से भोगे नहीं, भोगावे नहीं, अनुमोदे नहीं, औदारिक शरीर+वैक्रिय शरीर 9+9=18. **उन्नीसवें बोले**- ज्ञातासूत्र के 19 अध्ययन। **बीसवें बोले**- असमाधि के बीस स्थानक।

इक्कीसवें बोले- इक्कीस सबल दोष। **बावीसवें बोले**- परिषह 22। **तेवीसवें बोले**- सूत्रकृतांग के 23 अध्ययन (16+7) **चौबीसवें बोले**-देवता के 24 प्रकार (भवनपति 10, व्यंतर 8, ज्योतिषी 5, वैमानिक 1) **पच्चीसवें बोले**- पाँच महाव्रत की पच्चीस भावना। छब्बीसवें बोले 26 अध्ययन-10, दशाश्रुत स्कंध, 6 वृहत् कल्प, 10 व्यवहार

सूत्र। **सत्ताइसवें बोले**-साधु के 27 गुण-5 महाव्रत, 5 इन्द्रिय निग्रह, 4 कषाय विजय, भाव सत्य, करण सत्य, योग सत्य, क्षमा वैराग्य, मनः समाधारणता, वचन और काय समाधारणता, ज्ञान, दर्शन, चारित्र सम्पन्नता, वेदना, मरण सहिष्णुता। **अठाइसवें बोले**-आचार कल्प 28 एक से 5 महीने तक एक महीने के बाद पाँच-पाँच दिन बढ़ाना, अनुपघातिक, कृत्स्न, अकृत्स्न (अपूर्ण) **उनतीसवें बोले**-पाप सूत्र 29. **तीसवें बोले** महामोहनीय कर्म बांधने के तीस स्थान। **इकतीसवें बोले**- सिद्ध भगवान के 31 गुण (आठ कर्म की 31 प्रकृतियाँ)। **बत्तीसवें बोले**- योग संग्रह 32. **तेतीसवें बोले** आशातना तेतीस।

25. गुणस्थानक (जीव स्थानक) (समवायांग 14) संसारी जीवों के सद्गुण-दुर्गुण, उत्कर्ष-अपकर्ष अवस्था के वर्गीकरण तथा मोह और योग के भाव अभाव को गुणस्थान कहते हैं। गुणस्थान 14 है, जिन्हें यहाँ विभिन्न 29 द्वारों से समझाया है-

(1)-(2) नामद्वार, लक्षण द्वार-(1) मिथ्यात्व गुणस्थानक-वीतराग भगवान की वाणी में श्रद्धा न हो, न्यून अधिक विपरीत प्ररूपे। वह 363 पाखंडी मतों का सूत्रकृतांग में वर्णन है, संसार परिभ्रमण करे।

भगवतीसूत्र श.1 उ.3 में 13 बोल शंकाकंखा वेदता है।

(2) सास्वादन सम्यक्त्व-सम्यक्त्व वमन कर देने पर मात्र आस्वादन शेष रहा है, बेइन्द्रिय को अपर्याप्तावस्था में रहता है, पर्याप्त होने पर मिट जाता है, संज्ञी को पर्याप्तावस्था में भी होता है। (जीवाभिगम साक्षी से) उत्कृष्ट देशोन अर्द्ध पुद्गल परावर्तन संसार काल शेष रहता है।

(3) मिश्र गुणस्थान-कुछ समकित कुछ मिथ्यात्व दोनों मिश्र हो, आयुष्य कर्म नहीं बंधे, काल भी नहीं करे वहाँ से पहले या चौथे में जाकर ही बंधादि करता है। श्रीखंड (दही और शक्कर मिश्र) चौथे से गिरता है तब तीसरे (दूसरे) में जाता है उसका फल परिणाम चौथे जैसा समझना यह भी देशोन अर्द्ध पुद्गल परावर्तन में संसार पार उतरता है। पहले से चौथे में जाते भी तीसरा स्पर्शता है।

(4) अविरति सम्यक् दृष्टि गुणस्थान-अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ तथा मोहनीय समकित, मिथ्यात्व और मिश्र मोहनीय इन सात प्रकृतियों में से उदय में आवे उन्हें क्षय, सत्ता में हो उन्हें उपशमावे वह क्षयोपशम समकित है, सातों को ढ़ंक दे वह उपशम और सातों का क्षय कर दे वह क्षायिक (जीवन में एक ही बार) क्षयोपशम

असंख्याता बार, उपशम 5 बार आती है। वेदक समकित एक बार आती है (एक समय)। चौथे गुणस्थानवर्ती अप्रत्याख्यानावरण के उदय से श्रद्धा होते हुए भी 18 पापों से देश विरत भी नहीं होता। जघन्य तीसरे भव (क्षपक उसी भव) उत्कृष्ट 15 भवों से मोक्ष जाता है। यह सात बोल का बंध नहीं करता नरक गति, तिर्यंच गति, तीन देव (भवनपति व्यंतर ज्योतिषी) दो वेद (स्त्री, नपुंसक)।

(5) देश विरति (श्रावक) गुणस्थान-उपरोक्त सात प्रकृतियों का तथा अप्रत्याख्यानावरण चौक मिलाकर कुल 11 प्रकृतियों का क्षयोपशम करे, श्रावक के 12 व्रत, 11 प्रतिमा आदि करे, जीवादिक नौ तत्वों का जानकर होता है, संलेखना संथारा भी करता है, एक भव में 2 से 9 हजार बार आ सकता है। जघन्य तीन, उत्कृष्ट 15 भवों (7 वैमानिक 8 मनुष्य भव) से मोक्ष जावे। अल्पारंभी, अल्पपरिग्रही, शीलवान्, सुव्रती, सम्यग्मार्गी, सुपात्र, आराधक, जैनमार्ग प्रभावक है।

(6) प्रमत्त संयत गुणस्थान-पूर्व की 11 प्रकृतियों तथा प्रत्याख्यानावरणीय चतुष्क इन 15 प्रकृतियों का क्षयोपशम होने से पापजनक व्यापारों से निवृत्त होकर प्रमत्त संयत कहलाते हैं, साधुपना एक भव में उत्कृष्ट 900 बार आ सकता है, जघन्य उसी भव उत्कृष्ट 15 भव से मोक्ष जाता है, जघन्य (उसी भव में) पहले देवलोक उत्कृष्ट अणुत्तर विमान में आराधक बनकर जा सकता है। 17 भेदे संयम, 12 भेदे तप करे। योग, कषाय, वचन, दृष्टि में चपलता का अंश है, उत्तमता से करते हुए भी प्रमाद रहता है, कृष्णादि लेश्या, अशुभ योग परिणमता है।

(7) अप्रमत्त संयत गुणस्थान-

मद्य विषय कषाया निद्रा विकहा, पंचमा भणिया।
एए पंच पमाया, जीवा पाडंति संसारे।।

पाँच प्रमाद का सेवन नहीं करते, वे अप्रमत्त संयत मुनि होते है। जीवादि नौ पदार्थ, द्रव्य क्षेत्र काल भाव तथा नवकारसी यावत् छः मासी तप ध्यान करे। जाने स्पर्शे। जघन्य उसी भव उत्कृष्ट 15 भव से मुक्ति। गति प्रायः कल्पातीत 9 गैवेयक अणुत्तर में जाते हैं।

(8) निवृत्ति बादर गुणस्थान-निवृत्ति और बादर भिन्न अध्यवसाय, त्रिकालवर्ती सभी जीवों के भिन्न-भिन्न अध्यवसाय होते हैं। पूर्व की 15 प्रकृतियों तथा हास्यादि 6 मिलाकर 21 प्रकृतियों का क्षय या उपशय करते हैं, यहाँ जीव श्रेणी करता है उपशम या क्षपक। क्षपक वाला क्षयकर 9-10-12 गुणस्थान में चढ़ता है, उपशम श्रेणी वाला

10 से 11वें तक चढ़कर गिरता है हीयमान परिणाम हो जाते हैं। क्षपक वाला अप्रतिपाति होकर वर्द्धमान परिणामों में चढ़ता है। इसे अपूर्वकरण गुणस्थान भी कहते हैं, शुक्ल ध्यान प्राप्ति, अनंत विशुद्धि लिये अपूर्व परिणाम होने से स्थिति घात, रस घात, गुणश्रेणी, गुण संक्रमण, अपूर्व स्थिति बंध ये पाँच कार्य अपूर्व होते हैं। यह श्रेणी पूर्व में नहीं करता है। जघन्य उसी भव मोक्ष या उत्कृष्ट तीसरे भव मोक्ष जाता है।

(9) अनिवृत्ति बादर गुणस्थान-ऊपर की 21 तथा संज्वलन त्रिक (क्रोध मान माया) तथा वेदत्रिक (स्त्री पुरुष नपुंसक) इन 27 प्रकृतियों का क्षय या उपशय करे, अध्यवसायों से अभिन्नता होती है, जघन्य उसी भव (क्षय) उत्कृष्ट तीसरे भव (उपशम) मोक्ष और अगर काल करे तो अणुत्तर में जाता है।

(10) सूक्ष्म संपराय गुणस्थान-27 प्रकृतियों का क्षय या उपशम (संज्वलन लोभ छोड़) करता है, संज्वलन लोभ के सूक्ष्म खंडों का उदय रहता है जघन्य उसी भव उत्कृष्ट तीन भव में मोक्ष।

(11) उपशांत मोहनीय गुणस्थान-इसमें कषाय उपशांत रहती है ढ़की हुई अग्नि की तरह सूक्ष्म लोभ का उदय होता है। यहाँ उपशमन करने वाला ही आता है, काल करे तो अणुत्तर में, गिरे तो 8वें गुणस्थान में जाकर पुनः उपशम श्रेणी करे, कोई छठे तक जाकर गिरकर काल करके नवग्रैवेयक तक जावे। 7 से 10 गुणस्थान वाला अणुत्तर में जाता है, पहले गुणस्थान तक जाने वाला नरक, निगोद भी जाये। उपशम श्रेणी वाला गिरता ही है।

(12) क्षीण मोहनीय गुणस्थान-मोहनीय की 27+1 संज्वलन लोभ ये 28 प्रकृतियाँ क्षय हो जाती है, मोहनीय कर्म का सर्वथा क्षय हो जाने से, जीव यथाख्यात चारित्री, वीतरागी, भाव निर्ग्रंथ, वर्द्धमान परिणामी, अपड़िवाई होकर अंतर्मुहूर्त पर्यंत इस गुणस्थान में रहता है। क्षपक श्रेणी, क्षायिक भाव, क्षायिक समकित, यथाख्यात चारित्र, करण सत्य, भाव सत्य, जोग सत्य, अमायी, अकषायी, वीतरागी, भाव निर्ग्रंथ, संपूर्ण संवुड, संपूर्ण भवितात्मा, महातपस्वी, महाअमोही, अविकारी, महाज्ञानी, महाध्यानी, वर्द्धमान परिणामी अप्रतिपाति बनता है, यहाँ काल नहीं करता है, पुनर्भव नहीं करे। पाँच ज्ञानावरणीय, नव दर्शनावरणीय, पाँच अंतराय कर्म प्रकृति क्षय करके तेरहवें गुणस्थान में प्रथम समय केवल ज्योत प्रगट होती है।

(13) सयोगी केवली गुणस्थान-चारों घाती कर्म क्षय होने पर केवल ज्ञान की प्राप्ति होती है, तेरहवें गुणस्थान में मन वचन काया के योगों की प्रवृत्ति है। **मन की**-अनुत्तर और नव ग्रैवेयक के देवों का समाधान यहाँ से देते हैं, वे देव यहाँ नहीं आते। **वचन की**-द्वादशांगी वाणी रूप भव्य जीवों को प्रतिबोध देते हैं, उत्तर देते हैं। काय से विहार, गोचरी, स्थंडिल भूमि की प्रवृत्ति होती है। यहाँ 10 बोल पाये जाते हैं-क्षायिक समकित, शुक्ल ध्यान, यथाख्यात चारित्र, केवलज्ञान, केवलदर्शन, अनंतदान, अनंत लाभ, अनंत भोग, उपभोग, अनंत वीर्य लब्धि होती है। यहाँ योग निरोध कर शुक्ल ध्यान के तीसरे पाये से चौदहवें गुणस्थान का आरोहण करते हैं।

(14) अयोगी केवली गुणस्थान-शुक्ल ध्यान के चौथे पाये समुच्छिन्न क्रिया सूक्ष्म बादर सभी योगों का निरोध होने पर इस गुणस्थान की प्राप्ति होती है अडोल, अचल स्थिर अवस्था प्राप्त कर शैलेषीवत् रहकर 5 लघु अक्षर (अ इ उ ऋ लृ) प्रमाण समय में शेष 4 अघाति कर्म क्षय कर 10 में से 3 बोल कम (सलेशी, सयोगी, शुक्ल लेशी कम) 7 बोल होते हैं, उन सभी को क्षीण कर एरंड बीजवत् बंधन (शरीर) मुक्त हो समश्रेणी 1 समय मात्र में विग्रह गति रहित ऋजु गति से साकारोपयोग में सिद्ध क्षेत्र में जाकर सिद्ध होते हैं।

8वाँ गुणस्थान	9वाँ गुणस्थान	10वाँ गुणस्थान (अंतर)
क्षपक, उपशमक श्रेणी प्रारंभ	श्रेणी पूर्व की चालू है	श्रेणी पूर्व की चालू है
15 प्रकृतियाँ क्षीण/उपशांत	21 क्षीण/उपशांत	27 क्षीण/उपशांत
हास्यादि 6 क्षय/उपशम	3 वेद, 3 कषाय/क्षय/उपशम	लोभ का क्षय/उपशम
बादर कषाय है संज्वलन 4	बादर कषाय है, संज्वलन 4	सूक्ष्म लोभ मात्र है
तीनों परिणाम है परिणाम में भिन्न	तीनों परिणाम है भिन्नता नहीं	हीयमान वर्द्धमान दो है भिन्नता नहीं
अंतर	**11वाँ गुणस्थान**	**12वाँ गुणस्थान अंतर**
प्रकृतियाँ	मोहनीय की 28 उपशांत/7 का उदय	28 प्रकृतियाँ क्षीण, ज्ञाना-दर्श. अंत क्षय
समकित	औपशामिक क्षायिक दोनों/उपशम श्रेणी	क्षायिक/क्षपक श्रेणी
चारित्र	औपशामिक यथाख्यात	क्षायिक चारित्र
उपमा	राख से ढ़की अग्निवत् मोहनीय	जल से बुझी क्षीण
गति	11वें काल करे अणुत्तर (9, 8, 7 में)	काल नहीं करता
गिरना	11 से 10, 7 यों पहले तक गिर सकता है	पतित नहीं होता क्षपक श्रेणी 13-14 जाये
स्थिति	ज. 1 समय (काल करे तो) उ.अं.मु.	ज.उ. अंतर्मुहूर्त
भव	11वें के 3 आराधक के 15/देशोन अ.पु.	भव नहीं, उसी भव मोक्ष
संहनन	पहले तीन	पहला
सत्ता निर्जरा	8 कर्म की	7 कर्म की

अंतर	13वाँ गुणस्थान	14वाँ गुणस्थान
योग	सयोगी, सलेशी	अयोगी, अलेशी
ध्यान	ध्यानांतरिका, शुक्ल ध्यान तीजा पाया	शुक्ल ध्यान चौथा पाया
ज्ञान	केवलज्ञान, दर्शन नवीनोत्पन्न	दोनों पूर्वोत्पन्न धारे हुए
कर्मोदय	अंतिम समय तक 4 अघाति कर्म है	अंतिम समय में चारों का क्षय
समुद्घात	केवली समुद्घात संभव है	नहीं
भाषकादि	भाषक, अभाषक दोनों	अभाषक है
स्थिति	ज.अं., उत्कृष्ट देशोन क्रोड़ पूर्व वर्ष	5 लघु अक्षर

(3) स्थिति द्वार-प्रथम गुणस्थान में तीन भंग अनादि अनंत (अभवी) अनादि सांत (भवी) सादि सांत

पहला गुणस्थान	अंतर्मुहूर्त	तीसरे भंग की स्थिति उत्कृष्ट देशोन अर्द्ध पु.प.
दूसरे गुणस्थान	1 समय	छ आवलिका
तीसरा, बारहवाँ	अंतर्मुहूर्त	अंतर्मुहूर्त
चौथे की	अंतर्मुहूर्त	33 सागर झाझेरी
पाँचवाँ, तेरहवाँ	अंतर्मुहूर्त	देशोन क्रोड़ पूर्व
छठा	1 समय	देशोन क्रोड़ पूर्व
7 से 11 तक	1 समय	अंतर्मुहूर्त

14वें की पाँच लघु अक्षर, सिद्ध भगवान सादि अनंत।

(4) क्रिया द्वार-पहले, तीसरे में 24 (ईर्यापथिकी छोड़) क्रिया, दूसरे चौथे में 23 (मिथ्याव. छूटा)। पाँचवें में 22 (अव्रत छूटा) छठे में 21 (परिग्रह वत्तिया कम), 7 से 10 में 20 (आरंभिया कम) 11-12-13 में एक इर्यापथिकी, 14वें में करण वीर्य है क्रिया नहीं, सिद्ध में नहीं।

(5) सत्ता द्वार-ग्यारहवें गुणस्थान तक 8 कर्म की सत्ता, 12वें 7 कर्म, 13वें 14वें में 4 अधाति कर्म की सत्ता, सिद्ध में नहीं।

(6) बंध द्वार-एक से सात गुणस्थान (तीसरा छोड़) 7 या 8 बांधे। तीसरे, आठवें, नवमें में 7 बांधे (आयुष्य नहीं) 10वें में 6 (आयु, मोह कम) 11वें से 13वें में एक साता वेदनीय, 14वें में अबंध, सिद्ध में अबंध योग नहीं।

(7) उदय द्वार-दसवें गुणस्थान तक 8 का, ग्यारवें, बारहवें में 7 का तेरहवें, चौदहवें में 4 का उदय।

(8) उदीरणा द्वार-छठे गुणस्थान तक (तीसरा छोड़) 7 या 8, 6 की। तीसरे में 8 की। सात, आठ, नौवे में 6 की करे (आयु, वेद छोड़) 10वें में 6 या 5 (मोह भी छोड़े 5 में), ग्यारहवें में 5 की ऊपरवत्, 12वें में 5 या 2 (दो करे तो नाम गौत्र, पाँच ऊपरवत्) 13 में दो की या नहीं भी करे, 14वें में उदीरणा नहीं करते, सिद्ध में कर्म ही नहीं है।

(9) निर्जरा द्वार-10वें तक 8 कर्म की निर्जरा, 11वें 12वें में 7 की, 13वें 14वें में चार अधातिया कर्म की।

(10) भाव द्वार-औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, पारिणामिक ये पाँच भाव है। गति, कषाय आदि कर्मोदय से क्रोधादि भाव औदयिक, कर्म उपशमन से **औपशमिक**, क्षय से केवलज्ञानादि, **क्षयोपशम** से मति ज्ञानादि, स्वभाव से रहे- जीवत्व, भव्यत्व, अभव्यत्व आदि **पारिमाणिक** भाव है।

प्रथम तीन गुणस्थान में	3	औदयिक, क्षायोपशमिक, पारिणामिक
चार से 7 गुणस्थान में	4	औदयिक, क्षायो. औप., पारि.
8 से 11 गुणस्थान में	5	उपशम श्रेणी वाले को पाँच
8 से 12 गुणस्थान में	4	क्षपक श्रेणी वाले को चार (औप. छोड़)
13वाँ 14वाँ गुणस्थान में	3	औदयिक, क्षायिक, पारिणामिक
सिद्ध भगवान	2	क्षायिक, पारिणामिक

(11) कारण द्वार-कर्मबंध के पाँच कारण, मिथ्यात्व, अव्रत, प्रमाद, कषाय, योग। प्रथम व तीसरे गुणस्थान में पाँच, दूसरे, चौथे में चार (मिथ्यात्व कम) पाँचवें, छठे में तीन (अव्रत भी कम) सात से 10 में 2 (प्रमाद भी छूटा) 11 से 13 में योग रहा, 14वें में कर्मबंध नहीं होते योग भी नहीं, सिद्ध भगवान अबंधक है शरीर ही नहीं है।

(12) परिषह द्वार-चार कर्म उदय से 22 परिषह होते हैं। **ज्ञानावरण से दो**-प्रज्ञा, अज्ञान।

वेदनीय से 11-क्षुधा, तृषा, शीत, उष्ण, दंशमशक, चर्या, शय्या, वध, रोग, तृणस्पर्श, जलमैल।

मोहनीय से 8-दर्शन, अचेल, अरति, स्त्री, निषद्या, आक्रोश, याचना, सत्कार पुरस्कार। **अंतराय से 1**-अलाभ परिषह। 9 गुणस्थान तक 22, दस से बारह में 14 (मोह के 8 कम) 13वें 14वें में 11 वेदनीय के। सिद्ध भगवान में परिषह नहीं अव्याबाध सुख है।

(13) आत्मा द्वार-आत्मा 8 है पहले, तीसरे में 6 (ज्ञान, चारित्रात्मा कम) दूसरे, चौथे, पाँचवें में सात (चारित्रात्मा कम) छठे से 10वें तक सभी, 11 से 13वें तक सात (कषायात्मा कम) 14वें में 6 (कषाय, योगात्मा कम) सिद्ध में 4 ज्ञान, दर्शन, द्रव्य, उपयोग।

(14) जीव में द्वार-14 भेद जीव के-पहले गुणस्थान में सभी, दूसरे गुणस्थान में 6 (विकले. तीन, असंज्ञी ति.प. के अपर्याप्ता, संज्ञी पंचेन्द्रिय के पर्या. अपर्या.) तीसरे गुणस्थान में 1 संज्ञी पं. के पर्याप्ता, चौथे गुणस्थान में 2 (संज्ञी पं. के पर्या. अपर्या.) पाँचवें गुणस्थान से आगे एक संज्ञी पंचे. के पर्या.। सिद्ध में भेद नहीं।

(15) गुणस्थान द्वार- गुणस्थान के लक्षण विशेषताएँ

1 से 4 गुण.	5वें में	6 से 14 गुणस्थान	विशेषता	गुण. स्थान	विशेषता में गुणस्थान सं.
असंयत	संयता संयत	संयत	शाश्वत गुण.	6	1, 4, 5, 6, 13
अप्रत्याख्यानी	प्रत्या. प्रत्याख्यानी	प्रत्याख्यानी	अमर गुण.	3	3, 12, 13
अविरत	विरता विरत	विरत	अप्रतिपाति गुण.	3	12, 13, 14
असंवृत	संवृता संवृत	संवृत	अनाहारक गुण.	5	1, 2, 4, 13, 14
अपंडित	बाल पंडित	पंडित	वाटे वहता गुण.	3	1, 2, 4
अजागृत	सुप्त जागृत	जागृत	तीर्थंकर न स्पर्शे	5	1, 2, 3, 5, 11
अधर्मी	धर्मी धर्मी	धर्मी	उसी भवमोक्ष जाने वाले	8	4, 7, 8, 9, 10, 12, 13, 14
अधर्म व्यवसायी	धर्मा धर्म व्यवसायी	धर्म व्यवसायी	तीर्थंकर नाम के बंधक	5	4 से 8

(16) (17) योग द्वार-योग 15 **उपयोग द्वार**- उपयोग 12

	योग			उपयोग	
1, 2, 4थे गुण. में	13	आहारक, आह. मिश्र छोड़कर	पहले तीसरे में	6	3 अज्ञान 3 दर्शन
तीसरे में	10	4 मन 4 वचन 1 औ.1 वै.	2, 4, 5वें में	6	3 ज्ञान 3 दर्शन
5वें में पाँचवें में	12	आहा. आहा. मिश्र, कार्मण छोड़	6 से 12वें तक	7	4 ज्ञान 3 दर्शन
छठे में	14	कार्मण छोड़कर	13वें 14वें में	2	केवलज्ञान केवलदर्शन
7वे में	11	औ.मि., वै.मि., आ.मि. कार्मण छोड़			
8 से 12 में	9	4 मन, 4 वचन 1 औद.	सिद्ध में	2	केवलज्ञान केवलदर्शन
13वें में	5/7	2 मन 2 वचन 1 औ./2 औ. 1 का.			
14वें में	0	योग निरोध			

(18) लेश्या द्वार-छठे गुणस्थान तक सभी प्रशस्त अप्रशस्त, सातवें में तीन प्रशस्त (तेजो, पद्म, शुक्ल) 8 से 12 तक एक शुक्ल लेश्या 13वें में परम शुक्ल, 14वें में अलेशी।

(19) हेतु द्वार-5 मिथ्यात्व, 25 कषाय, 15 योग, 12 अव्रत (छ काय, 5 इंद्रिय, 1 मन) ये 57 हेतु है।

पहले गुण. में	55	आहारक, आहारक मिश्र कम
दूसरे गुण. में	50	उपरोक्त में 5 मिथ्यात्व छूटे
तीसरे में	43	अनंतानुबंधी चार, औदारिक मिश्र, वैक्रिय मिश्र, कार्मण ये सात उपरोक्त से कम
चौथे में	46	ऊपर के अतिरिक्त औदा. मिश्र, वै. मिश्र कार्मण भी जुड़े
पाँचवें में	40	उपरोक्त में से अप्रत्याख्यान चतुष्क, त्रस की अविरति, कार्मण कम
छठे गुण. में	27	14 योग 13 कषाय (संज्वलन चतुष्क नौ नो कषाय)
7-8 गुण. में	22	औदा. मिश्र, वैक्रिय, वैक्रिय मिश्र, आहारक, आहा. मिश्र छूटे 27 में से
नवमें गुण.	16	22 में से 6 हास्यादि कम
10वें गुण में	10	9 योग और संज्वलन लोभ
11वें 12वें गुण.	9	4 मन, 4 वचन, 1 औदारिक
13वें गुण.	5/7	सत्य मन, व्य. मन, सत्य भाषा, व्य. भाषा, औदारिक, औ. मिश्र, कार्मण (और पाँच) हो तो (औदा. मिश्र, कार्मण छोड़ना)
14वें में	-	कोई हेतु नहीं।

(20) मार्गणा-आने जाने के मार्ग गुणस्थान में आगति-गति के गुणस्थान इस प्रकार

	आगति	गति
पहले गुण. में	पाँच-2, 3, 4, 5, 6 से आ सकता है	चार-3, 4, 5, 7 में जा सकते है
दूसरा गुण. में	तीन-4, 5, 6	एक-पहला
तीसरा गुण. में	चार-1, 4, 5, 6	चार-गिरे तो पहला, चढ़े तो 4, 5, 7
चौथा गुण. में	नौ-1, 3, 5 से 11	पाँच-चढ़े तो पांचवा, सातवाँ, गिरे तो 3, 2, 1
पाँचवें गुण. में	चार-1, 3, 4, 6	पाँच-चढ़े सातवाँ, गिरे 4, 3, 2, 1
छठे गुण. में	एक सातवाँ	छ-चढ़े सातवाँ, गिरे 5, 4, 3, 2, 1
सातवें गुण. में	छ-1, 3, 4, 5, 6, 8	तीन-चढ़े आठवाँ, गिरे तो छठा काल करे चौथा
आठवें गुण. में	दो-7, 9	तीन-चढ़े नवां, गिरे 7वाँ, काल करे चौथा
नवें गुण. में	दो-8, 10	तीन चढ़े दसवाँ, गिरे 8वाँ, काल करे चौथा
दसवें गुण. में	दो-9, 11	चार चढ़े 11-12, गिरे नवां, काल चौथा में
ग्यारवें गुण. में	एक 10वाँ	दो-गिरे दसवाँ, काल करे तो चौथा
बारहवें गुण. में	एक 10वाँ	एक-13वाँ
तेहरवां गुण. में	एक 12वाँ	एक-14वाँ
चौदहवां गुण. में	एक 13वाँ	एक-मोक्ष

(21) ध्यान द्वार-तीसरे तक दो ध्यान आर्त्तध्यान रौद्रध्यान, चौथे पाँचवें में तीन धर्म ध्यान बढ़ा, छठे में दो आर्त्त, धर्मध्यान, 7वें में धर्मध्यान, 8 से 13 में शुक्ल ध्यान, 14वें में परम शुक्ल, सिद्ध ध्यानातीत।

(22-23) दण्डक द्वार, जीव योनि द्वार-24 दंडक, 84 लाख जीव योनि इस प्रकार-

पहले गुण. में	24	सभी 24 दंडक	84 लाख	जीव योनि
2रे गुण.	19	पाँच स्थावर कम	32 लाख	एके. 52 लाख छूटे
3-4 में	16	पाँच स्था. तीन विकले. कम	26 लाख	छ लाख विकले. भी छूटे
5वें में	2	संज्ञी ति.पं., संज्ञी मनुष्य	18 लाख	4 लाख ति.पं. 14 लाख मनुष्य
6 से 14 गुण.	1	संज्ञी मनुष्य	14 लाख	मनुष्य की
सिद्ध भग.	0	दंडक नहीं	0	जीवयोनि मुक्त

(24) निमित्तकारण द्वार-चौथे गुणस्थान तक दर्शन मोह निमित्त से होते है, पाँच से 12 गुणस्थान चारित्र मोह से होते है, 13वें 14वाँ गुणस्थान योग से होता है, सिद्ध में कोई निमित्त नहीं होता।

(25) चारित्र द्वार-चार गुणस्थान तक कोई चारित्र नहीं, पाँचवें में देश चारित्र। छठे सातवें में तीन (सामायिक, छेदो., परिहार) चारित्र, आठवें, नवमें में दो (सामा. छेदो.) दसवें में सूक्ष्म संयम ग्यारवें में यथाख्यात (औपशमिक) 12, 13, 14वें में एक यथाख्यात क्षायिक, सिद्ध में नहीं।

(26) आकर्ष द्वार-एक भव अनेक भव की अपेक्षा आकर्ष इस प्रकार-

गुणस्थान	एकभव अपेक्षा		अनेक भवों की अपेक्षा	
	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य	उत्कृष्ट
पहला	सादिसांत	तीसरे भंग की अपेक्षा		
दूसरा	एक बार	2 बार	दो बार	पाँच बार
3, 4, 5 गुण.	एक बार	पृथकत्व हजार बार	दो बार	असंख्यात बार
6, 7 गुण.	एक बार	पृथकत्व सौ बार	दो बार	पृथकत्व हजार बार
8, 9, 10	एक बार	4 बार	दो बार	9 बार
ग्यारहवाँ	एक बार	2 बार	दो बार	4 बार
12, 13, 14	एक बार	1 बार	-	-

(27) समकित द्वार-पहले, तीसरे में एक भी सम्यक्त्व नहीं, दूसरे में सास्वादन, चार से सात में चार (उप. क्षायो. क्षायि. वेदक) आठ से 10 में 2 (उपशम, क्षायिक) 11वें में उपशम 12वें से 14वें में एक क्षायिक, सिद्ध में क्षायिक।

(28) अंतर द्वार-पहले गुण. में तीसरे भंग का अंतर, जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट 66 सागर झाझेरी दो से ग्यारवें गुणस्थान में ज. अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट देशोन अर्द्धपुद्गल

परावर्तन। 12-13-14 में अंतर नहीं है, सिद्ध में आता वापस नहीं जाता।

(29) अल्प बहुत्व द्वार-

गुणस्थान	अल्प बहुत्व	कम अधिक के कारण
11वें गुण. वाले	सबसे कम	1 समय में उपशम श्रेणी वाले 54 जीव
12वें 14वें गुण. वाले	संख्याता गुना	1 समय में क्षपक श्रेणी वाले 108 जीव
8, 9, 10वें	संख्याता गुना	1 समय में पृथकत्व 100 जीव
13वें	संख्याता गुना	1 समय में पृथकत्व करोड़ जीव
7वें	संख्याता गुना	1 समय में पृथकत्व 100 करोड़ जीव
6ठे	संख्याता गुना	1 समय में पृथकत्व हजार क्रोड़ जीव
5वें	असं. गुणा	दूसरे से तीसरे गुण. की स्थिति असं. गुणा अधिक है
दूसरे	असं. गुणा	सास्वादन समकित चारों गति में होती है
तीसरे	असं. गुणा	असंख्यात सन्नी तिर्यंच भी श्रावक व्रती होते हैं
चौथे गुण.	असं. गुणा	तीसरे से चौथे गुण. की स्थिति अधिक है
सिद्ध	अनंतगुणा	सिद्ध अनंतगुणा होते हैं
पहले गुण. वाले	अनंतगुणा	साधारण वनस्पति के जीव सिद्धों से भी अनंतगुणा होते हैं, वे मिथ्यात्वी होते हैं

26. तीर्थंकर के चौतीस अतिशय (समवायांग 34) (1) तीर्थंकर के नख, केश बढ़े नहीं, सुशोभित रहे (2) निरोगी (3) लोही मांस खीरवत् (4) श्वासोच्छवास सुगंधी (5) आहार निहार अदृश्य (6) आकाश में धर्म चक्र (7) आकाश में तीन छत्र (8) दो चामर बींजे (9) आकाश में पादपीठ सहित सिंहासन चले (10) इन्द्रध्वज चले (11) तीर्थंकर की अवगाहना से 12 गुणा ऊँचा अशोक वृक्ष (12) भामंडल (13) विषम भूमि सम हो (14) काँटे उल्टे हो जाये (15) छः ऋतु अनुकूल हो (16) वायु अनुकूल (17) देव अचित पुष्प वर्षा करे (18) अशुभ पुद्‌गल नाश (19) सुगंधित वर्षा (20) शुभ पुद्‌गल प्रकटे (21) योजनगामी वाणी (22) अर्द्धमागधी में देशना (23) सर्व सभा अपनी भाषा में समझे (24) जन्म वैर, जाति वैर शांत (25) अन्य मति देशना सुने विनय करे (26) प्रतिवादी निरूत्तर हो पच्चीस योजन तक नीचे का कोई उपद्रव न हो (27) महामारी प्लेग न हो (28) तीड़, मच्छर आदि उपद्रव न हो (29) स्वचक्र को भय नहीं (30) अन्य सैना का भय नहीं (31) अतिवृष्टि न हो (32) अनावृष्टि न हो (33) दुष्काल न हो (34) पूर्व के उपद्रव शांत हो। 2-3-4-5 जन्म से, 12वाँ तथा 21 से 34 ये 15 अतिशय केवलज्ञान के बाद, बाकी 15 देवकृत होते हैं।

27. तीर्थंकर नाम के 20 कारण (श्री ज्ञाता अध्य. 8) (1) अरिहंत भगवान के गुण कीर्तन करने से (2) सिद्ध भगवान के गुणानुवाद से (3) आठ प्रवचन माता की आराधना से (4) गुणवंत गुरु का गुणगान करने से (5) स्थविर के गुणगान से (6) बहुश्रुत के गुणानुवाद से (7) तपस्वी के गुणगान करने से (8) अर्जित ज्ञान का बारंबार चिंतन करने से (9) सम्यक्त्व निर्मल पालने से (10) विनय करने से (7, 10, 134 विनय) (11) उभयकाल प्रतिक्रमण करने से (12) व्रत पच्चक्खाण निर्मल पालने से (13) शुभ ध्यान (धर्म, शुक्ल) ध्याने से (14) 12 प्रकार के तप से निर्जरा करने से (15) दान देने से (अभयदान सुपात्रदान) (16) वैयावच्च (सेवा) करने से (17) चतुर्विध संघ की सेवा से (18) नवीन तत्त्व ज्ञान सीखने से (19) सूत्र सिद्धांत की सेवा भक्ति करने से (20) मिथ्यात्व का नाश कर समकित उद्योत (प्रवचन) करने से, जीव अनंतानंत कर्म खपावे, तथा उत्कृष्ट रसायन आवे तो तीर्थंकर नामकर्म का बंध होता है।

28. ब्रह्मचर्य की 32 उपमा (प्रश्न व्याकरण अध्य. 9) (1) ज्योतिषी में चन्द्र समान (2) खानों में स्वर्ण खान समान (3) रत्नों में वैडूर्य रत्न (4) आभूषणों में मुकुट (5) वस्त्रों में क्षेम युगल (तीर्थंकर का देवदूष्य) (6) चंदन में गोशीर्ष (7) फूलों में अरविंद कमल (8) औषधिश्वर में चुल्ल हेमवंत (9) नदियों में सीता, सीतोदा (10) समुद्रों में स्वयंभूरमण (11) पर्वतों में मेरू (12) हाथियों में ऐरावत (13) चतुष्पदों में केसरीसिंह (14) भवनपति में धरणेन्द्र (15) सुवर्णकुमार में वेणु देवेन्द्र (16) देवलोक में ब्रह्मलोक (17) सभाओं में सौधर्म सभा (18) स्थिति में सर्वार्थ सिद्ध देवों की (19) दानों में अभयदान (20) रंगों में किरमची (21) संस्थानों में समचउरंस (22) संहनन में वज्रऋषभ नाराच (23) लेश्या में शुक्ल (24) ध्यानों में शुक्ल (25) ज्ञान में केवलज्ञान (26) क्षेत्रों में महाविदेह (27) साधुओं में तीर्थंकर (28) गोल पर्वतों में रूचक (29) वृक्षों में सुदर्शन (30) वन में नंदन वन (31) ऋद्धि में चक्रवर्ती (32) योद्धा में वासुदेव जैसे प्रधान।

29. बारह प्रकार के तप (उववाई सूत्र) तप के 12 प्रकार है 6 बाह्य, 6 आभ्यंतर

बाह्य तप-(1) **अनशन**-अनशन के दो भेद इत्वरिक-मर्यादित समय के लिए आहार त्याग इसके 14 भेद-एक से सात उपवास, पंद्रह दिन, एक मास से छ मास तक। प्रथम तीर्थंकर के शासन में 12 मास, बीच के 22 तीर्थंकरों के शासन में 8 मास, अंतिम

तीर्थंकर के शासन में 6 मास उपवास करने का सामर्थ्य होता है। यावत्कथिक-इसके तीन भेद पादपोपगमन-वृक्ष की कटी डाली की तरह निश्चल, स्थिर रहकर, बिना हलचल के प्रतिक्रमण की जरूरत नहीं, चारों आहार त्याग, वैयावच्च न करावे इसके दो भेद व्याघात, सिंहादि का उपद्रव आने से करना जैसे सुकोशल, गजसुकुमाल आदि। निर्व्याघात-निरूपद्रव मृत्यु समय नजदीक जानकर करना। भक्त प्रत्याख्यान-जीवन पर्यंच तीन या चार आहार का त्याग करके संथारा करना, संस्कार, हलन चलन, प्रतिक्रमणादि करे, वैयावच्च भी करावे, व्याघात-उपद्रव आवे तो तीन चार आहार त्याग कर पच्चक्खाण करे जैसे अर्जुन माली के उपद्रव से सुदर्शन ने किया। निर्व्याघात-उपद्रव न आवे तो भी जाव जीव तीन चार आहार त्याग करे। इंगित मरण-जाव जीव चार आहार का त्याग करे, संस्कार, हलन चलन, प्रतिक्रमण जरूर करे, दिशा मर्यादा करे, विहार न करे इसके भी व्याघात, निर्व्याघात दो भेद यो अनशन के 20 भेद।

(2) ऊणोदरी तप-दो भेद-**द्रव्य ऊणोदरी**-इसके दो भेद उपकरण द्रव्य-वस्त्र, पात्र और देह उपयोगी सामग्री जरूरत से कम रखे, भोगे तीन भेद वस्त्र, पात्र, इष्ट वस्तु **भक्तपान ऊणोदरी**-इसके 6 प्रकार 32 कवल का पूरा आहार पोन ऊणोदरी 8 कवल ले, आधी से अधिक 12 कवल, आधी 16 कवल ले, आधी से ओछी 20 कवल, पाव ऊणोदरी 24 कवल ले, एक कवल की ऊणोदरी 31 कवल ले ये 6 भेद, **भावऊणोदरी**-क्रोध, मान, माया, लोभ, कलह, झगड़ा ये 6 कम करे ये ऊणोदरी 15 भेद।

(3) वृत्ति संक्षेप (भिक्षाचर्या) तप-इसके 30 भेद है, द्रव्य (अमुक वस्तु), क्षेत्र (अमुक घर से) काल (समय, महीना, दिन), भाव (अमुक रंग वस्त्रादि अभिग्रह), बरतन से निकाला, नहीं निकाला, उसी बरतन से उसी जगह दूसरी जगह, उसमें से एक चम्मच निकाला हो, परोसा आहार से लेना, ठंडा करके वापस रख लेना, अन्य के लिए लाया लेना, दूसरे स्थान पर रखा लेना, प्रशंसा या निंदा किया लेना (पानी ठंडा है पण खारा है), किसी के भेजना है उसमें से लेना, अचित से भरे हाथों से लेना, अचित से भरे (लिप्त) न हो, बहराने के लिए ले उसमें से लेना, अज्ञात कुल से (बिना बताये), मौन रहकर मौन दे तो लेना, दिखने वाला ले, न दिखने वाला से ले, कोई पूछे कि क्या दूँ तो ले, बिना पूछे ले, तिरस्कार/अवहेलना करे तो ले, सादा आहार ले, रात का या ठंडा ले, भोजन करने बैठे उसी में से ले, प्रमाण सहित गिनकर ले, शुद्ध मसाला रहित शंकादि दोष रहित ले, एक धार में लें।

(4) रस परित्याग तप-9 प्रकार है, विगय रहित, प्रणीत रस (रस झरते) का त्याग, आयंबिल करे, ओसामण और उसमें पड़े चावल ले, नीरस, बिना बगार किये ले, रसहीन पुराना ले, हल्का चणा, दाल आदि ले, भोजन के बाद बचे उसमें से ले, रूक्ष या अप्रिय लगे वैसा ले।

(5) काय क्लेश तप-13 प्रकार है-एक आसन, एक प्रकार से खड़ा रहे, एक आसन बैठना, उकडू आसन बैठना, वीरासन से बैठना, पलांठी से बैठना, लकड़ी जैसा लंबा होकर सोना (स्थिर), आड़ी लकड़ी पैर-सिर जमीन पर बाकी अद्धर सोना, ठंडी गरमी में आतापना लेना, शरीर कपड़ा आदि से न ढ़के, खुजाले नहीं, थूकना नहीं, अंग विभूषा नहीं करना।

(6) प्रतिसंलीनता तप-13 भेद है-1 से 5 इन्द्रिय संलीनता इन्द्रिय विषयों पर राग-द्वेष नहीं करे, 6 से 9 कषाय प्रतिसंलीनता चारों कषाय से निर्लिप्त रहे संतोष, सरलता रखे, 10 से 12 योग प्रतिसंलीनता-तीनों योगों को उन्मार्ग से रोके। 13वाँ विविक्त शयनासन प्रतिसंलीनता-स्त्री, पशु, नपुंसक रहित उद्यान, चैत्य, देवालय, दुकान, वखार, श्मसान, उपाश्रय आदि स्थान में रहे, पाट, बाजोट, बिछोना वस्त्र पात्रादि प्रासुक ग्रहण करे। ये 13 भेद। बाह्य तप के कुल 20+15+30+9+13+13=100 भेद होते हैं।

आभ्यंतर तप-(1) **प्रायश्चित्त तप**- व्रतों में लगे अतिचार, दोषों की विशुद्धि प्रायश्चित्त से होती है, इसके 10 भेद है-(1) गुरु आदि के सम्मुख आलोचना करे (2) प्रतिक्रमण करे (3)आलोचना प्रतिक्रमण दोनों करे (4) ज्ञानपूर्वक दोषित वस्तु त्याग करे (5) 10-20-30-40 लोगस्स का कायोत्सर्ग करे (6) एकासन आयंबिल यावत् छ मासी तप करे (7) पाँच से (दिन) लेकर छ माह तक की दीक्षा घटाये (8) नई दीक्षा ले सबसे छोटा बने (9) प्रायश्चित तप जब तक न करे तब तक साधु समुदाय से बाहर रखे तथा नई दीक्षा न दे (10) साधु वेश उतार छ माह तक गृहस्थ रूप साथ में रहे फिर नई दीक्षा ले (वज्रऋषभ नाराच संहनन और 14 पूर्वी को ही 9 और 10वाँ प्रायश्चित देते हैं)। उक्त 10 भेद, 10 प्रतिसेवना (प्रायश्चित लेना) 10 प्रायश्चित देने वाले के गुण, 10 प्रायश्चित लेने वाला का गुण, 10 प्रायश्चित का दोष (लेते समय लगते दोष) यों 50 भेद होते है।

(2) **विनय तप**- 7 भेद हैं **ज्ञानविनय**-पाँच ज्ञान तथा ज्ञानी की आशातना नहीं करनी, उनका बहुमान, गुण कीर्तन करना, विनयपूर्वक विधि सहित ज्ञान प्राप्त करना। **दर्शन विनय**-दर्शन, दर्शनवान् की भक्ति बहुमान करना सुश्रुषा विनय, अनाशातना विनय दो भेद।

सुश्रुषा विनय 10 भेद- गुरुजनों को देख खड़ा होना, उनके लिए आसन लाना, आसन बिछाना, सत्कार करना, सन्मान करना, विधि युक्त वंदन करना, हाथ जोड़ खड़ा रहना, गुरु आवे तो सम्मुख जाना, सेवा करना, गुरु जावे तो पहुँचाने जाना।
अनाशातना विनय के 45 भेद- अरिहंत, अरिहंत प्ररूपित धर्म, आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, कुल, गण, संघ, क्रियावान, सांभोगिक और पाँच ज्ञान इन 15 की आशातना नहीं करनी, इनकी भक्ति करनी, इन 15 के गुणों की स्तुति करना, ये 45 भेद।
(3) **चारित्र विनय-** इसके 5 भेद सामायिक, छेदोपस्थापनीय, परिहार विशुद्धि, सूक्ष्म संपराय, यथाख्यात इन पाँच चारित्रवान का विनय करना।
(4) **मन विनय-** दो भेद प्रशस्त और अप्रशस्त मन विनय। प्रशस्त के 12 भेद-असावद्य, निष्क्रिय, अकर्कश, मधुर, कोमल, करूणामय, अनाश्रवी, अछेदकारी, अभेदकारी, अपरितापकारी, दयालु, साताकारी मन प्रवर्तन करना।
अप्रशस्त मन विनय उपरोक्त 12 बोल विरूद्ध अप्रशस्त मन विनय ये 24 भेद हैं।
5 **वचन विनय-** दो भेद-प्रशस्त अप्रशस्त मन की तरह 24 भेद है।
6 **काय विनय-** दो भेद-प्रशस्त अप्रशस्त काय विनय। प्रशस्त के 7 भेद-यतना से चले, खड़ा रहे, बैठे, सोये, उल्लंघन, बार-बार उल्लंघ करे, सर्व इन्द्रियों काय की प्रवृत्ति यतना से करे। अप्रशस्त-उपरोक्त 7 बोल विरूद्ध अयतना से करे। ये 14 भेद।
7. **व्यवहार विनय-** 7 भेद-गुरुजन, सत्पुरुषों के पास बैठे, गुरु आदि की आज्ञा माने, सेवा करे, कृतज्ञतापूर्वक सेवा करे, रोगी, वृद्ध, गुरु की चिंता उनके दुःख दूर करे, देश काल अनुरूप प्रभु की आज्ञा प्रमाणे उचित प्रवृत्ति करे, निंद्य प्रवृत्ति न करे, अनुकूल कार्य करे। ये कुल 5+55+5+24+24+14+7=134 भेद विनय तप के हुए।
(3) **वैयावच्च तप-** आहार, पाणी, औषध आदि से सेवादि करे इसके 10 भेद-आचार्य, उपाध्याय, नवदीक्षित, रोगी, तपस्वी, स्थविर, स्वधर्मी, कुल, गण, संघ 10 की वैयावच्च करें।
(4) **स्वाध्याय तप-** आत्मोपयोगी ज्ञान प्राप्त करने हेतु मर्यादा पूर्वक शास्त्रों का पठन पाठन करना, इसके 5 भेद-वाचना-सूत्रादि की वाचना लेनी, पृच्छना-शंका समाधान का निर्णय करना, परियट्टणा-प्राप्त किया ज्ञान पुनरावर्तन करना, अनुप्रेक्षा-सूत्र, अर्थ का चिंतन करना, धर्मकथा-परिषद् में 4 प्रकार की धर्मकथा कहनी। आक्षेपनी-मोक्ष नजदीक करे, विक्षेपनी-संसार से दूर करे, संवेगनी-वैराग्य भाव बढ़ाये, निर्वेदनी-विषय विकार से दूर करें।

(5) ध्यान तप-किसी एक विषय पर मन एकाग्र करना ध्यान है 4 ध्यान के 48 भेद है। आर्त्तध्यान के 4 पाये, 4 लक्षण, रौद्रध्यान के 4 पाये, 4 लक्षण, धर्मध्यान के 4 पाये, 4 लक्षण, 4 आलंबन, 4 अनुप्रेक्षा, ये 16 तथा शुक्लध्यान के 4 पाये, 4 लक्षण, 4 आलंबन, 4 अनुप्रेक्षा, ये (विशेष चार ध्यान थोकड़ा देखे) 8+8+16+16=48 भेद।
(6) कायोत्सर्ग (व्युत्सर्ग) तप-दो भेद **द्रव्य कायोत्सर्ग**-व्युत्सर्ग यानि आत्मा से अलग पदार्थ का त्याग। इसके 4 भेद-शरीर ममत्व त्याग, संप्रदाय ममत्व त्याग, वस्त्र पात्रादि उपकरण ममत्व त्याग, आहार पानी ममत्व त्याग। **भाव कायोत्सर्ग**-आत्मा से भिन्न भावों का त्याग, तीन भेद-**कषाय कायोत्सर्ग**-4 कषाय त्याग, **संसार कायोत्सर्ग**-चार गति में जाने के कारण बंध करना, **कर्म कायोत्सर्ग**-8 कर्मबंध कारण जान त्याग करना, ये 7 भेद हैं **आभ्यंतर तप** के 50+134+10+5+48+7=254 भेद होते हैं। यों कुल 12 तप के 20+15+30+9+13+13+50+134+10+5+48+7=354 भेद होते हैं।
30. लघु दण्डक (जीवा जीवाभिगम सूत्र प्रथम प्रतिपत्ति) 24 दंडक वर्ती जीवों का वर्णन है-

नेरइया असुराई, पुढ़वाई बेइंदियादओ चेव।
पंचिंदिय-तिरिय-नरा, वंतर-जोइसिय-वैमाणी।।1।।

सात नारकी का एक दंडक, दस भवनपति के दस दंडक, पृथ्वीकायादि पाँच स्थावर के पाँच, तीन विकलेन्द्रिय के तीन, व्यंतर देवों का एक, पाँच ज्योतिषी देवों का एक, वैमानिक का एक ये 24 दण्डक हुए।

सरीरोगाहण-संघयण-संठाण, कसाय तह य हुंति सन्नाओ।
लेसिंदिय-समुग्घाए, सन्नी वेए य पज्जत्ती।।1।।
दिट्ठि दंसण-नाणे, जोगुवओगे तहा किमाहारे।
उववाय ठिई समुग्घाय, चवण गइरागई चेव।।2।।

(1) शरीर (2) अवगाहना (3) संहनन (4) संस्थान (5) कषाय (6) संज्ञा (7) लेश्या (8) इन्द्रिय (9) समुद्घात (10) संज्ञी (11) वेद (12) पर्याप्ति (13) दृष्टि (14) दर्शन (15) ज्ञान (16) योग (17) उपयोग (18) आहार (19) उपपात (20) स्थिति (21) समोहया-असमोहया मरण (22) च्यवन (23) गति-आगति (24) प्राण (25) योग, द्वार है।
(1) शरीर द्वार-शीर्यत इति शरीरं, सड़े, गले, बिखरे वह शरीर है, संसारी जीव इसमें रहते हैं, ये पाँच हैं-औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, कार्मण। औदारिक शरीर स्थूल पुद्गलों से बनते हैं, शेष वैक्रिय आदि क्रमशः सूक्ष्म सूक्ष्मतर पुद्गलों से बनते हैं।

(2) अवगाहना द्वार-जीवों की अपने शरीर की लंबाई या ऊँचाई या उत्कृष्ट अवगाहन क्षेत्र औदारिक की ज.अंगुल. के असंख्यातवाँ भाग उत्कृष्ट एक हजार योजन, वैक्रिय की उत्कृष्ट 500 धनुष, आहारक की उत्कृष्ट एक हाथ (ज. मुंड हाथ), तैजस कार्मण की उत्कृष्ट 14 राजू लोक प्रमाण (केवली समुद्घात) विशेष सभी जीवों की अपनी-अपनी प्राप्त अवगाहना।

(3) संहनन द्वार-हड्डियों की रचना, हड्डियों की विशेष शक्ति संहनन है। वज्रऋषभ नाराच संहनन दोनों ओर से मर्कट बंध द्वारा जुड़ी दो हड्डियों पर तीसरी पट्टी आकृति वाली हड्डी का चारों और से वेष्टन और उन पर तीनों को भेदने वाली कील (वज्र) हो। ऋषभ नाराच में कील (वज्र) नहीं होता, नाराच में वेस्टन पट्टी भी नहीं होती, अर्द्ध नाराच में मर्कट बंध भी एक ओर होता है, कीलिका में हड्डियाँ कील से जुड़ी हो, सेवार्त्तक-हड्डियाँ एक-दूसरे से जुड़ी होती है, तथा सदा चिकने पदार्थों तेल मालिश आदि की अपेक्षा रहती है।

(4) संस्थान द्वार-शरीर की शुभाशुभ आकृति (नाम कर्मोदय से) पाँव से सिर तक शोभायमान और पलाथी आसन से बैठे तो चारों कोण सम लगे समचतुरस्त्र संस्थान है, जिसमें नाभि से ऊपर का शोभायमान हो, न्यग्रोध (निगोह) परिमंडल। जिसमें ऊपर का विपरीत लक्षण नीचे का शोभायमान हो वह सादि संस्थान। जिसमें पेट लक्षणयुक्त बाकी शरीर, हाथ, पाँव आदि हीन हो वामन संस्थान। जिसमें हाथ-पाँव मुख उत्तम हो, हृदय पेट पीठ आदि हीन हो वह कुब्जक (कूबड़ा) संस्थान। जिसमें सभी अवयव अशुभ हो (मृगा लोढ़ा) जैसे वह हुंडक संस्थान है।

(5) कषाय द्वार-क्रोध, मान, माया, लोभ चार है। मोहकर्म के उदय जन्य परिणाम।

(6) संज्ञा द्वार-चार आहार, भय, मैथुन, परिग्रह संज्ञा। कर्म जन्य जीवों की आकांक्षा से।

(7) लेश्या द्वार-6 लेश्याएँ कृष्ण, नील, कापोत, तेजो, पद्म, शुक्ल। जीव को स्वाभाविक या प्रेरित परिणाम।

(8) इन्द्रिय द्वार-जीव को जीवन के लिए विशिष्ट साधन द्रव्येन्द्रियाँ, उपयोग में लेने का क्षयोपशम भावेन्द्रिया है ये दोनों 5-5 है श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, स्पर्शनेन्द्रिय।

(9) समुद्घात द्वार-वेदनादि से मूल शरीर छोड़े बिना आत्मप्रदेशों को शरीर से कुछ क्षण बाहर निकालना, ये 7 हैं-वेदनीय, कषाय, मारणांतिक, वैक्रिय, तैजस्, आहारक, केवली समुद्घात।

(10) सन्नी द्वार-जिसके मन हो संज्ञी, मन नहीं हो असंज्ञी।

(11) वेद द्वार-नाम कर्मोदय से शरीर के स्त्री, पुरुष, नपुंसक-चिह्न द्रव्य वेद, मोह कर्मोदय से विषय भोग अभिलाषा भाव वेद। तीन भेद है-स्त्री, पुरुष, नपुंसक वेद।

(12) पर्याप्ति द्वार-प्राप्त शरीर में कार्य क्षमता की उपलब्धि हो जाना। आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा और मन पर्याप्ति क्रमशः अंतर्मुहूर्त में प्राप्त हो जाती है।

(13) दृष्टि द्वार-तत्त्व विचारणा में जीव को शुद्धाशुद्ध समझ दृष्टि है। तीन भेद-सम्यक्, मिथ्या, मिश्र।

(14) दर्शन द्वार-दर्शनावरण कर्म क्षयोपशम से सामान्य प्रतिभास प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष देखने की क्षमता। इसके 4 प्रकार है- चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवलदर्शन है।

(15) ज्ञान द्वार-विवक्षित पदार्थ के विशेष धर्म को जानना, ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से जीव का आत्म प्रकाश। मतिज्ञान आदि 5 इसके प्रकार है, जिसे सम्यक् समझ होती है उसे होता हैं, और जिसकी समझ मिथ्या होती है उन्हें मिथ्या ज्ञान (अज्ञान) होता है मति अज्ञान, श्रुत अज्ञान, विभंग ज्ञान।

(16) योग द्वार-मन वचन और काया की प्रवृत्ति को योग कहते हैं। विवक्षा से 15 प्रकार है 4+4+7=15.

(17) उपयोग द्वार-ज्ञान-दर्शन में होती हुई आत्म प्रवृत्ति उपयोग है, साकारोपयोग अनाकारोपयोग ये सभी दंडकों में होते हैं, विस्तार से 12 भेद हैं- ज्ञानोपयोग 5, अज्ञानोपयोग 3, दर्शनोपयोग 4, ये 12 हुए। इनका क्रमिक बदलाव होता रहता है, छद्मस्थों में अंतर्मुहूर्त केवली में 1-1 समय।

(18) आहार द्वार-जीव चारों ओर से 6 दिशा से 288 प्रकार के पुद्गलों का आहार करता है।

(19) उपपात द्वार-पूर्वभव से जीव आकर उत्पन्न हो, उसे उपपात कहते हैं। परिमाण 1-2-3 यावत संख्यात, असंख्यात, अनंता है।

(20) स्थिति-जीव की पूरे भव की छोटी या बड़ी उम्र जघन्य अ.मु. उत्कृष्ट 33 सागरोपम।

(21) मरण द्वार-ईलिका गति से मरण समोहया और गेंद जैसे, बंदूक की गोली जैसे उछलकर एक साथ प्रदेश निकले असमोहया मरण। मारणांतिक समुद्घात करके या नहीं करके मरे वह मरण है।

(22) (उद्वर्त्तन द्वार) च्यवन द्वार-वर्तमान भव छोड़कर अन्य भव की पर्याय ग्रहण करे वह च्यवन, परिमाण 1-2-3 यावत् संख्य असंख्य अनंता है।

(23) गति आगति द्वार-जीव मरकर भवांतर में जाता है वह गति है गति चार है- नरक, देव, तिर्यंच, मनुष्य। सिद्ध गति में जाता है, परन्तु आता नहीं आने की 4 गति समझें। 24 से आवे, 24 में जावे, मोक्ष में जावे।

(24) प्राण द्वार-आधारभूत पदार्थों के साथ जीव किसी शरीर से बंधा रहे वे प्राण है ये 10 हैं-श्रोत्रेन्द्रिय बलप्राण, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसनेन्द्रिय, स्पर्शनेन्द्रिय बलप्राण, मन, वचन, काय बल प्राण, श्वासोच्छ्वास, आयुष्य बल प्राण।

(25) योग द्वार-जिससे आत्म प्रवृत्ति हो वे योग है मन वचन काय तीन योग है।

नारकी और देवों पर 25 द्वार-सात नारकी का एक, देवता के 13, ये वैक्रिय के 14 दंडक है-

(1) शरीर-तीन शरीर वैक्रिय, तैजस, कार्मण।

(2) अवगाहना-प्रथम नरक की जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट पौने आठ धनुष और 6 अंगुल है, दूसरी नरक की उत्कृष्ट साढ़े पंद्रह धनुष 12 अंगुल ऐसे आगे-आगे क्रमशः उत्कृष्ट दुगुनी-दुगुनी होती है सातवीं नरक की 500 धनुष उत्कृष्ट होती है। उत्तर वैक्रिय करे तो जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग, उत्कृष्ट अपनी-अपनी अवगाहना की दुगुनी। देवों में भवनपति से दूसरे देवलोक तक जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट सात हाथ। तीसरे चौथे में 6, पांचवे छठे में 5 हाथ, सातवें आठवें में 4 हाथ, नौवे से 12वें तक 3 हाथ, नव ग्रैवेयक में दो, अणुत्तर में एक हाथ अवगाहना। उत्तर वैक्रिय करे तो जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग, उत्कृष्ट एक लाख योजन (12वें देवलोक तक)। आगे के देव ग्रैवेयक, अणुत्तर वैक्रिय नहीं करते।

(3) संहनन-संहनन नहीं, नारकी में अशुभ पुद्गल, देवों में शुभ पुद्गल।

(4) संस्थान-नारकी में भवधारणीय उत्तर वैक्रिय में एक हुंडक, देवों में समचतुरस्र, वैक्रिय में विविध।

(5) (6) कषाय-संज्ञा-चारों कषाय, चारों संज्ञा 14 दंडकों में पाई जाती है।

(7) लेश्या-पहली दूसरी नरक में कापोत, तीसरी में कापोत, नील, चौथी में नील, पाँचवीं में नील, कृष्ण, छठी में कृष्ण, सातवीं में महाकृष्ण लेश्या। भवनपति व्यंतर में 4 लेश्या, ज्योतिषी पहले दूसरे देव में तेजो, पाँचवें तक पद्म, नवग्रैवेयक तक शुक्ल अणुत्तर में परम शुक्ल लेश्या।

(8) इन्द्रिय-14 दंडकों में पाँचों इन्द्रियाँ।

(9) समुद्घात-नारकी में चार, देवों में पाँच होती है, नवग्रैवेयक+अणुत्तर में भी पाँच की क्षमता परंतु तीन करते हैं, वैक्रिय, तैजस नहीं करते।

(10) सन्नी-पहली नारकी, भवनपति, व्यंतर में सन्नी असन्नी, अन्यत्र सभी सन्नी उत्पन्न होते हैं।

(11) वेद-नारकी में एक नपुंसक। भवनपति से दूसरे देवलोक तक दो स्त्री वेद पुरुष वेद, आगे पुरूष वेद।

(12) पर्याप्ति-नरक में छ, देवों में पाँच (भाषा मन एक साथ पूर्ण होती है)।

(13) दृष्टि-नारकी तथा 12वें देवलोक तक तीन दृष्टि, नवग्रैवयक में दो (सम, मिथ्या) अणुत्तर में सम्यक् दृष्टि।

(14) दर्शन-14 दंडकों में तीन दर्शन चक्षु, अचक्षु, अवधि दर्शन।

(15) ज्ञान-नरक और देवों में तीन ज्ञान (मतिश्रुत अवधि) अज्ञान में भवनपति से नवग्रैवेयक तथा नारकी में तीन अज्ञान, 15 परमाधामी 3 किल्विषी में 3 अज्ञान ही होते हैं, अणुत्तर में 3 ज्ञान होते हैं।

(16) योग-14 दंडक में 11 योग मन के 4 वचन के 4 काया के 3 (औदारिक आहारक के दो-दो छोड़)।

(17) उपयोग-नारकी और देवों में नवग्रैवेयक तक 9 (3 ज्ञान, 3 अज्ञान, 3 दर्शन) पाँच अणुत्तर में 6 (3 अज्ञान कम) होते हैं। परमाधामी किल्विषी में 6 (3 ज्ञान कम) होते हैं।

(18) आहार-14 दंडकों में नियमा छ दिशा का 288 प्रकार पुद्गलों का।

(19) उपपात-नारकी और देवों में आठवें देवलोक तक 1-2-3 उत्कृष्ट संख्य असंख्यात उपजे, नवमें देवलोक से सर्वार्थसिद्ध तक जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट संख्याता उत्पन्न होते हैं।

(20) **स्थिति**-समुच्चय नारकी जघन्य दस हजार उत्कृष्ट 33 सागरोपम, इसी प्रकार देवों की भी है।

स्थान	जघन्य	उत्कृष्ट
पहली नरक	10 हजार वर्ष	1 सागरोपम
दूसरी	1 सागर	3 सागर
तीसरी	3 सागर	7 सागर
चौथी	7 सागर	10 सागर
पाँचवी	10 सागर	17 सागर
छठी	17 सागर	22 सागर
सातवीं	22 सागर	33 सागरोपम
असुरकुमार देव	10 हजार वर्ष	1 सागरोपम (उत्तर दिशा में झाझेरी)
व्यंतर देव	10 हजार वर्ष	1 पल्योपम
ज्योतिषी देव	पाव पल्य	1 पल्य 1 लाख वर्ष
पहला देवलोक	एक पल्य	2 सागर
दूसरा देवलोक	एक पल झाझेरी	2 सागर झाझेरी
तीसरा देवलोक	2 सागर	7 सागर
चौथा देवलोक	2 सागर झाझेरी	7 सागर झाझेरी
पाँचवाँ देवलोक	7 सागर	10 सागर
छठा देवलोक	10 सागर	14 सागर
सातवाँ देवलोक	14 सागर	17 सागर

आगे आठवें देवलोक की जघन्य 17 उत्कृष्ट 18 सागर इससे आगे 9 ग्रैवेयक तक एक-एक सागर बढ़ाते हुए नवमें ग्रैवेयक की जघन्य 30 सागर उत्कृष्ट 31 सागर और चार अणुत्तर की 31 सागर उत्कृष्ट 33 सागर, सर्वार्थ सिद्ध विमान की अजघन्य अनुत्कृष्ट 33 सागर। असुरकुमार देवी की उत्कृष्ट साढ़े तीन पल्य, 9 भवनपति देवी की पोनापल्य, इनके देवों की डेढ़ पल्य। उत्तर के असुरकुमार देवी की साढ़े चार पल्य, 9 भवनपति देव की देशोन दो पल इनकी देवी की देशोन एक पल। व्यंतर देवी की अर्द्ध पल्य। चन्द्र देवी आधापल 50 हजार वर्ष चन्द्रदेव की उत्कृष्ट एक पल एक लाख वर्ष। सूर्य देव की एक पल एक हजार वर्ष, देवी की आधा पल पाँच सौ वर्ष। ग्रह देव की एक पल देवी की आधा पल, नक्षत्र देव की आधा पल, देवी की पाव पल झाझेरी। तारा

देव की जघन्य पल का आठवाँ भाग उत्कृष्ट पाव पल झाझेरी, देवी की उत्कृष्ट पल का आठवाँ भाग झाझेरी। पहले देवलोक की परिग्रहीता देवी की उत्कृष्ट 7 पल, अपरिग्रहीता देवी की उत्कृष्ट 50 पल की, दूसरे देवलोक की परिग्रहीता देवी की उत्कृष्ट 9 पल अपरिग्रहीता देवी की उत्कृष्ट 55 पल्य की।

(21) **मरण**-14 दंडक दोनों मरण मरते हैं। समोहया, असमोहया।

(22) **च्यवन**-नारकी, भवनपति से आठवें देवलोक तक जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट संख्य, असंख्याता च्यवे, नवमें से सर्वार्थसिद्ध तक 1-2-3 उत्कृष्ट संख्याता च्यवे।

(23) **गति-आगति**-पहली से छठी नारकी तक दो गति से आवे दो में जावे (तिर्यंच मनुष्य) दो दंडक से आवे दो में जावे। सातवीं नारकी में दो से आवे, एक (तिर्यंच) में जावे। भवनपति से दूसरे देवलोक तक दो से आवे दो में जावे (तिर्यंच, मनुष्य) दंडक से दो से आवे पांच में जावे (पृथ्वी, पानी, वनस्पति बढ़े) तीसरे से आठवें देवलोक तक प्रथम नरकवत्। नवमें देव लोक से सर्वार्थसिद्ध तक एक से आवे एक में जावे (मनुष्य का एक दंडक)।

(24) **प्राण**-14 दंडक में 10 प्राण।

(25) **योग**-14 दंडक में 3 योग।

औदारिक के दस दंडक-

पाँच स्थावर असन्नी मनुष्य-

(1) **शरीर**-चार स्थावर और असन्नी मनुष्य में औदारिक, तैजस, कार्मण तीन शरीर वायु में वैक्रिय बढ़ा।

(2) **अवगाहना**-चार स्थावर असन्नी मनुष्य की अवगाहना ज. अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट अंगुल के असंख्यातवें भाग (जघन्य से उत्कृष्ट बड़ा) तथा वनस्पतिकाय की उत्कृष्ट एक हजार योजन (कमल नाल की अपेक्षा)।

(3 से 6) **संहनन**-एक सेवार्त्तक **संस्थान**-एक हुण्डक **कषाय**-चारों **संज्ञा**-चारों पाई जाती है।

(7) **लेश्या**-बादर पृथ्वी, बादर पानी, प्रत्येक वनस्पति के अपर्याप्तों में चार लेश्या प्रथम चार। शेष सभी एकेन्द्रिय और असन्नी मनुष्य में तीन कृष्ण, नील, कापोत।

(8) **इन्द्रिय-पाँचों**-इन्द्रियाँ पावे असन्नी मनुष्य में, पाँच स्थावर में एक स्पर्शेन्द्रिय पावे।

(9) समुद्घात-चार स्थावर असन्नी मनुष्य में प्रथम तीन, वायुकाय में चार (वैक्रिय बढ़ा)।

(10) सन्नी-असन्नी है।

(11) वेद-सभी नपुंसक है।

(12) पर्याप्ता-स्थावर में चार-आहार शरीर इन्द्रिय श्वासोच्छवास, असन्नी मनुष्य चौथी के अपर्याप्ता में मरे।

(13) दृष्टि-मिथ्या दृष्टि।

(14) दर्शन-अचक्षु स्थावरों में, असन्नी मनुष्य में दो चक्षु, अचक्षु दर्शन।

(15) ज्ञान-2 अज्ञान।

(16) योग-चार स्थावर असन्नी मनुष्य में तीन औदारिक के दो, एक कार्मण/वायुकाय में पाँच वैक्रिय दो बढ़े।

(17) उपयोग-पाँच स्थावर में तीन (दो अज्ञान अचक्षु दर्शन) असन्नी मनुष्य में चार (चक्षु दर्शन बढ़ा)।

(18) आहार-पाँच स्थावर 288 भेद व्याघात तीन, चार, पाँच दिशा, निर्व्याघात छः दिशा, असन्नी नियमा 6 दिशा।

(19) उपपात-चार स्थावर जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट संख्य असंख्य उपजे, वनस्पति में उत्कृष्ट अनंत उपजे, त्रस की अपेक्षा चार स्थावर की तरह, असन्नी भी 1-2-3 उत्कृष्ट संख्य असंख्य उपजे।

(20) स्थिति-सभी की जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पृथ्वीकाय 22000 वर्ष, अप्काय 7000 वर्ष, तेउकाय तीन दिन रात्रि, वायुकाय 3000 वर्ष, वनस्पतिकाय 10 हजार वर्ष, असन्नी मनुष्य अंतर्मुहूर्त है।

(21) मरण-दोनों प्रकार के मरण।

(22) च्यवन-19वें द्वार की तरह कहना।

(23) गति आगति-

स्थान	आवे	जावे
पृथ्वी पानी वन.	तीन गति से आवे, 23 दंडक से (नरक छूटा) आवे	2 गति 10 दंडक औदारिक में जावे
तेउवायु	2 गति 10 दंडक औदा.	1 तिर्यंच गति 9 दंडक
असन्नी मनुष्य	दो गति आठ दंडक (तेउवायु छूटा)	2 गति 10 दंडक में जावे औदारिक

(24) प्राण-स्थावर में चार (स्पर्शन, काय, श्वासो., आयु.) असन्नी मनुष्य में कुछ कम आठ (पाँच इन्द्रिय, काय, आयु, श्वास)।

(25) योग-काययोग।

तीन विकलेन्द्रिय और असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय-(1) शरीर तीन।

(2) अवगाहना-जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट-बेइन्द्रिय 12 योजन, तेइन्द्रिय 3 गाऊ, चौरेन्द्रिय 4 गाऊ। असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय में उत्कृष्ट जलचर 1000 योजन, स्थलचर-प्रत्येक गाऊ, खेचर प्रत्येक धनुष, उरपरिसर्प प्रत्येक योजन, भुजपरिसर्प प्रत्येक धनुष (2 से 9)।

(3) संहनन-सेवार्त्तक संहनन् **(4) संस्थान**-एक हुण्डक **(5) कषाय** चारों **(6) संज्ञा**-चारों

(7) लेश्या-तीन लेश्या प्रथम तीन

(8) इन्द्रिय-बेइन्द्रिय में दो (रसन, स्पर्शन) तेइन्द्रिय में तीन (घ्राण बढ़ी) चौरेन्द्रिय में चार (चक्षु बढ़ा) असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय में पाँचों इन्द्रियाँ पाई जाती हैं

(9) समुद्घात-तीन वेदनीय कषाय मारणांतिक।

(10) सन्नी-सभी असन्नी

(11) वेद-नपुंसक वेद

(12) पर्याप्ति-पाँच पर्याप्ति (मन छोड़कर)

(13) दृष्टि-दो सम्यक्, मिथ्या।

(14) दर्शन-बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय अचक्षु। चौरेन्द्रिय असन्नी ति.पं. में दो चक्षु अचक्षु दर्शन।

(15) ज्ञान-दो ज्ञान (मति, श्रुत) दो अज्ञान (मति, श्रुत)

(16) योग-चार व्यवहार वचन योग, औदारिक के दो काययोग, कार्मण काययोग।

(17) उपयोग-बेइन्द्रिय तेइन्द्रिय में पाँच (दो ज्ञान, दो अज्ञान, अचक्षु दर्शन) चौरेन्द्रिय असन्नी ति.पं. में 6 (2 अज्ञान, 2 अज्ञान, 2 दर्शन)

(18) आहार-288 प्रकार के पुद्‌गल नियमा छ दिशा का आहार।

(19) उपपात-एक समय में जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट संख्यात असंख्यात उपजे।

(20) स्थिति-जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट-बेइन्द्रिय 12 वर्ष, तेइन्द्रिय 49 अहोरात्रि, चौरेन्द्रिय 6 महीने। असन्नी ति.पं. में जलचर करोड़ पूर्व, स्थलचर 84 हजार वर्ष,

खेचर 72 हजार वर्ष, उर परिसर्प 53 हजार वर्ष, भुजपरिसर्प 42 हजार वर्ष (जघन्य अंतर्मुहूर्त सभी जगह समझें)।

(21) मरण-दोनों प्रकार के मरण मरे।

(22) च्यवन-उपपात जैसा वर्णन।

(23) गति आगति-तीन विकलेन्द्रिय दो गति से आवे दो में जावे (दंडक 10 औदारिक), असन्नी ति.पं. दो से आवे (10 दंडक औदा.) चार गति में जावे 22 दंडक (ज्योतिषी वैमानिक छोड़) में जावे।

(24) प्राण-बेइन्द्रिय में छ-रसन, स्पर्शन, वचन, काय, श्वासोच्छ्वास और आयुष्य बल प्राण। तेइन्द्रिय में सात (घ्राणेन्द्रिय बल प्राण बढ़ा) चौरेन्द्रिय में आठ (चक्षुरिन्द्रिय बल प्राण बढ़ा) असन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय में प्राण नव (श्रोत्रेन्द्रिय बल प्राण बढ़ा)।

(25) योग-दो वचन का योग।

सन्नी तिर्यंच पंचेन्द्रिय-(1) शरीर-चार औदारिक, वैक्रिय, तैजस कार्मण।

(2) अवगाहना-जघन्य सर्वत्र अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट-जलचर-1000 योजन स्थलचर-6 गाऊ, खेचर-प्रत्येक धनुष, उरपरिसर्प-1000 योजन, भुजपरिसर्प-प्रत्येक गाऊ वैक्रिय शरीर करे तो जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग उत्कृष्ट प्रत्येक सौ (200 से 900) योजन।

(3) संहनन-छहों **(4) संस्थान**-छहों **(5) कषाय**-चारों **(6) संज्ञा**-चारों **(7) लेश्या**-छहों **(8) इन्द्रिय**-पाँचों **(9) समुद्घात**-पाँच (आहारक, केवली छोड़) **(10) सन्नी**-सन्नी है। **(11) वेद**-तीनों **(12) पर्याप्ति**-छहों **(13) दृष्टि**-तीनों **(14) दर्शन**-तीन चक्षु, अचक्षु, अवधि दर्शन **(15) ज्ञान**-तीन ज्ञान, तीन अज्ञान **(16) योग**-13 चार मन, चार वचन पाँच काया (आहारक दो कम) **(17) उपयोग**-9 (3 ज्ञान, 3 अज्ञान, 3 दर्शन) **(18) आहार**-288 प्रकार के नियमा छ दिशा का आहार।

(19) उपपात-एक समय में जघन्य 1-2-3 यावत् संख्याता असंख्याता उपजे।

(20) स्थिति-जघन्य अंतर्मुहूर्त (सर्वत्र) उत्कृष्ट-जलचर-एक करोड़ पूर्व, स्थलचर-तीन पल्य, खेचर-पल्योपम के असंख्यातवें भाग, उरपरिसर्प-एक करोड़ पूर्व, भुजपरिसर्प-एक करोड़ पूर्व।

(21) मरण-दोनों प्रकार के मरण **(22) च्यवन**-उपपातवत् **(23) गति**-चारों गति 24 दंडक में आवे-जावे।

(24) प्राण-दसों प्राण **(25) योग**-तीनों योग पावे।

गर्भज मनुष्य-(1) शरीर-पाँचों **(2) अवगाहना**-जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट तीन गाऊ/छ आरों की अपेक्षा-पहले आरे की लगते आरे देशोन तीन गाऊ, तीन गाऊ पूरी, पहले आरे की उतरते-देशोन दो गाऊ, दो गाऊ पूरी। दूसरा आरा लगते-देशोन दो गाऊ-दो गाऊ पूरी उतरते-देशोन एक गाऊ एक गाऊ पूरी। तीसरा आरा लगते देशोन एक गाऊ एक गाऊ पूरी, उतरते 500 धनुष देश ऊणी, 500 धनुष पूरी। चौथा आरे लगते 500 धनुष उतरते सात हाथ। पाँचवाँ आरा लगते सात हाथ उतरते एक हाथ। छठा आरा लगते एक हाथ उतरते मूंड हाथ। उत्सर्पिणी काल के आरे में अवगाहना इससे विपरीत समझें। उत्तर वैक्रिय करे तो जघन्य अंगुल के संख्यातवें भाग उत्कृष्ट एक लाख योजन झाझेरी।

(3) संहनन-छहों **(4) संस्थान**-छहों **(5) कषाय**-चारों कषाय, अकषायी भी **(6) संज्ञा**-चारों, नो संज्ञो. **(7) लेश्या**-छहों, अलेशी भी **(8) इन्द्रिय**-पाँचों, अनिन्द्रिय भी **(9) समुद्घात**-सातों **(10) सन्नी**-सन्नी है, नो सन्नी नो असन्नी भी। **(11) वेद**-तीनों, अवेदी भी **(12) पर्याप्ति**-छहों **(13) दृष्टि**-तीनों **(14) दर्शन**-चारों ही **(15) ज्ञान**-पाँच ज्ञान, तीन अज्ञान **(16) योग**-पन्द्रह और अयोगी भी। **(17) उपयोग**-बारह **(18) आहार**-छहों दिशा से नियमा 288 प्रकार का, अनाहारक भी **(19) उपपात**-जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट संख्याता उपजे।

(20) स्थिति-गर्भज मनुष्य की जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट तीन पल्योपम। छ आरों से उत्कृष्ट इस प्रकार-

पहला आरा लगते जघन्य 3 पल देशोन, 3 पल पूरी, उतरते देशोन दो पल, 2 पल पूरी। दूसरा आरा लगते जघन्य 2 पल देशोन, 2 पल पूरी, उतरते देशोन एक पल, एक पल पूरी। तीसरा आरा लगते जघन्य 1 पल देशोन, 1 पल पूरी, उतरते देशोन क्रोड़ पूर्व, क्रोड़ पूर्व पूरी। चौथा आरा लगते जघन्य एक क्रोड़ पूर्व उतरते 100 वर्ष झाझेरी। पाँचवाँ लगते झाझेरी 100 वर्ष झाझेरी उतरते 20 वर्ष। छठा लगते 20 वर्ष उतरते 16 वर्ष। उत्सर्पिणी में इससे विपरीत समझे। **(21) मरण**-दोनों मरण **(22) च्यवन**-1-2-3 उत्कृष्ट संख्यात **(23) गति आगति**-चार गति से आवे 22 दंडक से, पाँच गति (मोक्ष में) जावे 24 दंडक तथा मोक्ष। **(24) प्राण**-दसों ही **(25) योग**-तीनों और अयोगी भी।

युगलिक मनुष्य-युगलियों के भेद 86 है-5 हैमवत, 5 हैरण्यवत, 5 हरिवास, 5 रम्यक्वास, 5 देवकुरु, 5 उत्तरकुरू और 56 अंतरद्वीपा ये 86 भेद-**(1) शरीर**-तीन औदारिक, तैजस्, कार्मण।

(2) **अवगाहना**-पाँच हेमवत पाँच हैरण्यवत	जघन्य देशोन एक गाऊ उत्कृष्ट एक गाऊ
हरिवास रम्यकवास 10 क्षेत्रों में	जघन्य देशोन दो गाऊ उत्कृष्ट दो गाऊ
देवकुरू उतरकुरू 10 क्षेत्रों में	जघन्य देशोन तीन गाऊ उत्कृष्ट तीन गाऊ
56 अंतरद्वीपा	जघन्य आठ सौ धनुष (देशोन) पूरी 800 धनुष

(3) संहनन-एक वज्रऋषभ नाराच **(4) संस्थान**-एक समचतुरस्त्र **(5) कषाय** चारों **(6) संज्ञा** चारों **(7) लेश्या** चार (प्रथम) **(8) इन्द्रिय** पाँचों **(9) समुद्घात** तीन (प्रथम) **(10) सन्नी** सन्नी है **(11) वेद** दो स्त्री, पुरुष **(12) पर्याप्ति**-छहों **(13) दृष्टि**-30 अकर्म भूमि में दो सम्यक् और मिथ्यादृष्टि, 56 अंतरदीपा में एक मिथ्यादृष्टि। **(14) दर्शन**-दो चक्षु अचक्षु **(15) ज्ञान**-अकर्मभूमि 30 में दो ज्ञान दो अज्ञान, अंतरद्वीपों में 2 अज्ञान **(16) योग**-ग्यारह (4 मन 4 वचन 3 काया औदारिक के 2 कार्मण एक) **(17) उपयोग**-30 अकर्मभूमि में 6 (ज्ञान 2, अज्ञान 2, दर्शन 2) अंतरद्वीपा में 4 (2 अज्ञान, 2 दर्शन)

(18) आहार-288 बोलों का 6 दिशा नियमा से **(19) उपपात**-जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट संख्यात होते है।

(20) स्थिति-हैमवत हैरण्यवत में एक पल्योपम, हरिवास रम्यकवास में 2 पल्य, देवकुरू उत्तरगुरू में तीन पल्योपम। 56 अंतरद्वीपों में पल्य के असंख्यातवें भाग जघन्य कुछ न्यून उत्कृष्ट पूर्ण।

(21) मरण-दोनों प्रकार के **(22) च्यवन**-उपपातवत्

(23) गति आगति-86 युगलिया दो गति से आवे दो दंडक तिर्यंच पं., मनुष्य तथा एक देवगति में जावे इनमें से 30 अकर्मभूमि 13 दंडक में जावे देवता के, 56 अंतरद्वीपा 11 दंडक में भवनपति, व्यंतर में।

(24) प्राण-दसों **(25) योग**-तीनों।

तिर्यंच युगलियों का परिज्ञान-तिर्यंच में दो प्रकार के होते है, खेचर और स्थलचर। जलचर आदि तीन में नहीं होते। अवगाहना स्थलचर की जघन्य अनेक धनुष उत्कृष्ट 6 कोस खेचर की जघन्य, उत्कृष्ट अनेक धनुष। स्थिति-स्थलचर की जघन्य एक करोड़ पूर्व साधिक उत्कृष्ट 3 पल्योपम, खेचर की जघन्य एक करोड़ पूर्वसाधिक उत्कृष्ट पल्योपम का असंख्यातवाँ भाग शेष सभी द्वार मनुष्य युगलिये के समान होते हैं।

सिद्ध भगवान (1) शरीर-अशरीरी है **(2) अवगाहना**-जघन्य 1 हाथ 8 अंगुल मध्यम चार हाथ 16 अंगुल, उत्कृष्ट 333 धनुष 32 अंगुल (पूर्व मनुष्य भव की अवगाहना का दो तिहाई भाग) **3 से 7** संहनन नहीं, संस्थान नहीं, अकषायी है, संज्ञा नहीं नो संज्ञोपयुक्त, लेश्या नहीं अलेशी है। **8 से 11** इन्द्रिय नहीं अनिन्द्रिय हैं, समुद्घात नहीं, सन्नी नहीं नो सन्नी नो असन्नी, वेद नहीं अवेदी हैं। **12 से 16** नो पर्याप्त नो अपर्याप्त है, सम्यगदृष्टि है, केवलदर्शन, केवलज्ञान पावे, योग नहीं अयोगी है **17 से 19** उपयोग दो केवलज्ञान केवलदर्शन, आहारक नहीं अनाहारक, उपपात जघन्य 1-2-3 उत्कृष्ट 108 सिद्ध। **20** एक सिद्ध अपेक्षा सादि अपर्यवसित सभी सिद्ध भगवंतों की अपेक्षा अनादि अपर्यवसित स्थिति। **21 से 23** मरण नहीं, च्यवन नहीं, आगति एक मनुष्य गति (एक मनुष्य दंडक) गति नहीं। **24-25** द्रव्य प्राण नहीं भाव प्राण 4 (ज्ञान, दर्शन अव्याबाध सुख, चैतन्य बोध), योग नहीं अयोगी है।

31. चार प्रकार के देव (जीवाभिगम सूत्र)-25 भवनपति (10 भवनपति 15 परमाधामी) ये 26 (व्यंतर वाण व्यंतर 16 तथा 10 जृंभक ये 26) 10 ज्योतिषी (5 चर 5 अचर) तथा वैमानिक (12 देवलोक, 9 लोकान्तिक, 3 किल्विषी, 9 नवग्रैवेयक, पाँच अणुत्तर ये 38 वैमानिक देव) ये 99 देवता का वर्णन

द्वार	भवनपति देव	व्यंतर देव	ज्योतिषी देव	वैमानिक देव
1 नाम	असुरकुमार से स्तनित कुमार 10 भवनपति, अंब अंबरीश आदि 15 परमाधामी ये कुल 25	पिशाच भूत से गंधर्व आठ, आणपन्नी आदि आणजृंभक से आदि 8 अवियत तक 10 जृंभक ये 26	सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र तारा-ये पाँच चर, पाँच अचर, ये 10	सौधर्म, ईशान से अच्युत ये 12 देवलोक, सारस्वत आदि 9 लौकांतिक, तीन पल्लिया आदि तीन किल्विषी, भद्र सुभद्रआदि 9 नवग्रैवे. , विजय से सर्वार्थ सिद्ध पाँच अणुत्तर ये 38 देव
2 वासा	पहली नरक के 12 अंतरों में से नीचे के 10 अंतरों में	रत्नप्रभा के ऊपर 1000 यो. में 100-100 ऊपर नीचे का छोड़ 800 यो. में 8 व्यंतर, ऊपर के 100 में ऊपर नीचे 10-10 यो. छोड़कर 80 यो. आठ (9 से 16) वाणव्यंतर, 10 जृंभक रहते है।	समभूमि से 790 यो. ऊपर से 110 यो. तक (45 लाख यो. में) 790 तारा 800 सूर्य 880 सूर्य 884 चन्द्र 888 नक्षत्र 891 शुक्र 894 वृहद 897 मंगल 900 शनि	ज्योतिषी से असंख्य क्रोड़ा क्रोड़ी यो. ऊपर देव विमानावास

3 राजधानी	अरूणवर द्वीप समुद्रों में उत्तर में बलिचंचा, दक्षिण में चमरचंचा (बलिंद्र, चमरेन्द्र क्रमशः)	तिर्च्छालोक के द्वीप समुद्रों में प्रायः 12 हजार यो. की रत्नमय राजधानी	तिर्च्छालोक में असंख्य राजधानियाँ	अपने-अपने देवलोक में है, शक्रेन्द्र, ईशानेन्द्र अनेक लोकपाल आदि की तिर्च्छालोक में भी
4 सभा	प्रत्येक इंद्र की पाँच सभा-उत्पात, अभिषेक, अलंकार, व्यवसाय, सौधर्म	भवनपतिवत्	भवनपतिवत्	पाँच-पाँच सभाएँ
5 भवन संख्या	4 करोड़ 6 लाख दक्षिण 3 करोड़ 66 लाख उत्तर में कुल 7,72,00,000 भवन 7 करोड़ 72 लाख	व्यंतरों के असंख्य नगर है	असंख्यात ज्योतिषी विमान	8497023 विमानावास
6 वर्ण	काला, सफेद, पीला, 3 लाल, सफेद, लाल, नीला, पीला	श्याम, काला, श्याम, सफेद, नीला, सफेद, 2 श्याम	तारा पाँच वर्णा, शेष चार सुवर्ण	
7 वस्त्र	लाल, नीला, सफेद, 4 नीला, सफेद, संध्याराग, सफेद	2 नीला, पीला, नीला, 2 पीला, 2 श्याम क्रमशः	सभी वर्ण के सुंदर कोमल	
8 चिह्न (ध्वज पर)	चूड़ामणि, नागफण, गरूड़, वज्र, कलश, सिंह, हाथी, घोड़ा, मगर, वर्द्धमान क्रमशः	कदंब, सुलक्षवृक्ष, बड़, स्कंदक, अशोक, चंपक, नागवृक्ष, टिम्बरू, क्रमशः	चंद्र-मृग, सूर्य-7 मुखी घोड़ा मंगल-गेंड़ा, बुध-सिंह गुरु-हाथी, शुक्र-अश्व शनि-महिष	मृग, महिष, सूअर (वराह) सिंह, बकरा, मेंढ़क, अश्व, हस्ति, सर्प, गरूड़,
9 इन्द्र	दक्षिण — उत्तर 1 चमरेंद्र — बलींद्र 2 धरणेन्द्र — भूतानेन्द्र 3 वेणुदेव — वेणुदाली 4 हरिकांत — हरिशिख 5 अग्निशिख — अग्निमाणव 6 पूर्णेन्द्र — विशिष्टेन्द्र 7 जलकांत — जलप्रभ 8 अमितगति — अमितवाहन 9 वेलंब — प्रभंजन 10 घोष — महोघोष	दक्षिण — उत्तर कालेन्द्र — महाकाल सुरूपेन्द्र — प्रतिरूप पूर्णभद्र — मणिभद्र भीम — महाभीम किन्नर — किंपुरुष सत्पुरुष — महापुरुष अतिकाय — महाकाय गीत रति — गीत यश सनिहित — सामान्य धाता — विधाता ऋषि — ऋषिपाल ईश्वर — महेश्वर सुवत्स — विशाल हास्य — हास्य रति श्वेत — महाश्वेत पंतग — पतंगपति	सभी इंद्र हैं परंतु क्षेत्र अपेक्षा एक चंद्र इंद्र एक सूर्य इंद्र है।	12 देवलोक में 10 इंद्र है। 1 से 8 तक आठ, 9-10 का एक 11-12 का एक इंद्र यों दस इंद्र है। आगे सभी अहमिंद्र है।

10. सामानिक	चमरेन्द्र के 64 हजार बलीन्द्र के 60 हजार, शेष इंद्रों के 6-6 हजार	सभी इंद्रों के चार-चार हजार	प्रत्येक इंद्र के चार-चार हजार सामानिक	84 हजार, 80 हजार, 72 हजार, 70 हजार, 60 हजार 50 हजार, 40 हजार, 30 हजार 20 हजार, 10 हजार (1 से 12 देव.)
11 आत्म रक्षक देव	चमरेन्द्र- 256000 बलीन्द्र - 240000 शेष के 24-24 हजार लोकपाल-चार-चार त्रायस्त्रिशंक-33-33	सभी इंद्रों के 16-16 हजार नहीं होते नहीं होते	सभी के 16-16 हजार नहीं नहीं	3 लाख 36 हजार, 3 लाख 20 हजार, 2 लाख 88 हजार 2 लाख 80 हजार, 2 लाख 40 हजार, दो लाख, एक लाख साठ हजार, एक लाख बीस हजार, अस्सी हजार, 40 हजार (1 से 12 देव.)
12 अनीक (सेना)	सात प्रकार की सेना-हाथी घोड़ा महल, पैदल, गंधर्व नृतक आदि चमरेंद्र के 81 लाख28 हजार, बलीन्द्र के 76लाख 20 हजार, शेष 18 इंद्र के 35लाख 56 हजार देव	सात प्रकार की सेवा प्रत्येक में 5 लाख आठ हजार देव	प्रत्येक इंद्र के सात प्रकार की। प्रत्येक में 5 लाख अस्सी हजार देव	प्रत्येक इंद्र के सात प्रकार की सेना, सामानिक देवों से 127 गुणा सेना सभी देव की समझें
13 देवी	चमरेन्द्र-बलीन्द्र के 5-5 अग्र महिषी प्रत्येक के 8000 देवी प्रत्येक के आठ हजार वैक्रिय रूप कुल 32 क्रोड़ वैक्रिय रूप, शेष 18 इंद्रों के 6-6 X6000 देवी परिवार प्रत्येक 6 हजार वैक्रिय रूप कुल 21 क्रोड़ 60 लाख वै. रूप	प्रत्येक इन्द्र के चार-चार देवी प्रत्येक के एक हजार का परिवार एक-एक हजार वैक्रिय रूप करे प्रत्येक देवी	प्रत्येक के 4-4 देवी प्रत्येक के चार-चार हजार का परिवार प्रत्येक 4 हजार वैक्रिय रूप करे प्रत्येक देवी	शक्रेन्द्र के और इशानेन्द्र के 8-8 देवी, प्रत्येक देवी के 16 हजार देवी परिवार, 16 हजार प्रत्येक देव के, 16 हजार वैक्रिय रूप 2,04,80,00,000 2 अरब 4 करोड़ अस्सी लाख का वैक्रिय रूप दूसरे देवलोक सेआगे देवियाँ नहीं होती

14.परिषद 3	आभ्यंतर	मध्य	बाह्य	आभ्यं.	संख्या	स्थिति	आभ्यं	देव सं.	देवी सं.	आभ्यं	देव	देवी
चमर देव	24000	28000	32000	देव	8 हजार	½ पल	देव	8 हजार	100 देवी	पहला देव	12 हजार	700
स्थिति	ढ़ाई पल	2 पल	डेढ़ पल	देवी	100	¼ झा.	-	-	-	मध्य	14 हजार	600
देवी	350	300	250	मध्य देव	10 ह.	½न्यून	मध्य	10 हजार	100 देवी	बाह्य	16 हजार	500
स्थिति	डेढ़ पल	1 पल	आधा पल	देवी	100	¼	बाह्य	12 हजार	100 देवी	दूसरा देव आभ्यं.	10 हजार	900
बलीन्द्र देव	20000	24000	28000	बाह्यदेव	12 ह.	¼ झा.						
स्थिति	3½ पल	3 पल	2½ पल	देवी	100	न्यून पल				मध्य	12 हजार	800
देवी	450	400	350							बाह्य	14 हजार	700
स्थिति	2½ पल	2 पल	1½ पल							**आ.** (3से12)	**म.**	**बा.देव**
9 देव दक्षिण	60000	70000	80000							8000	10000	12 हजार
स्थिति	½पल सा.	½पल	½ पलन्यू.							6000	8000	10 हजार
देवी	175	150	125							4000	6000	2 हजार

स्थिति	½ पल न्यू.	¼प.सा.	¼ पल.							2000	4000	6 हजार
9 देव उत्तर	50000	60000	70000							1000	2000	4 हजार
स्थिति	1 पल न्यून	½प.सा.	½पल							500	1हजार	2 हजार
देवी	225	200	175							250	500	1 हजार
स्थिति	½पल	½प.न्यू.	¼ पल सा.							125	250	500
										तीसरे और आगे देवीयां नहीं होती तीन परिषद के देव होते है ऊपर भुजब		
15परिचारणा		मन, रूप, शब्द, स्पर्श, काय पाँच प्रकार, मनुष्य वत् भोग भोगे देवी के साथ			पांच प्रकार भवनपतिवत्		पाँच प्रकार मनुष्यवत्		1-2 में पाँच प्रकार, 3-4 में चार प्रकार, 5-6 में तीन प्रकार 7-8 में दो मन शब्द, 9 से 12 में मन परिचारणा, आगे नही एक भी नहीं।			

16 वैक्रिय	चमरेंन्द्र-देवी से पूरा जंबूद्वीप पूरे, असं.द्वीप भरने की शक्ति है, भरे नहीं/बलीन्द्र साधिक जंबू भरे असं. द्वीप भरने की शक्ति है, भरे नहीं, शेष 18 देवेन्द्र पूरा भरे, सं. जंबूद्वीप द्वीप भरने की शक्ति है, रे नहीं/ सामानिक, त्राय. लोकपाल की भी इन्द्रवत् काल 15 दिन	जंबूद्वीप भरकर रूप बनावे, संख्याता द्वीप भरने की शक्ति है	संपूर्ण जंबूद्वीप भरा है, संख्याता द्वीप भरने की शक्ति है इन्द्र, सामानिक, देवियों में भी शक्ति है।	शक्रेन्द्र-2 जंबू, ईशानेन्द्र 2 जंबू झाझेरा, सनत्कुमार 4 जंबू, माहेन्द्र 4 जाझोरा बहमेन्द्र 8 जंबू, लांतकेन्द्र 8 जंबू झाझेरा, सहस्त्रेंद्र 16 झा. प्राणतेद्र 32 जंबू, अच्युतेन्द्र 32 जंबू झा., लोकपाल त्राय. देवियाँ, भी इन्द्रवत् शक्ति है, परन्तु करे नहीं
17 अवधि	असुरकुमार-ज. 25 योजन, ऊँचे पहले देवलोक, नीचे तीसरी नरक, तिर्च्छे असंख्य द्वीप समुद्र जाने देखे/शेष 9 देवेन्द्र-25 यो., ऊँचे ज्यो. तक, नीचे पहली नरक, तिर्च्छे संख्यात द्वीप स. देखे जाने	जघन्य 25 यो., ऊँचे ज्योतिषी, नीचे पहली नरक, तिर्च्छे संख्यात द्वीप समुद्र जाने देखे	तिर्च्छा जघन्य संख्यात द्वीप समुद्र, ऊपर स्वयं की ध्वजा तक नीचे पहली नरक देखे जाने	सभी देव ज.अं. के असं. भाग, ऊपर स्वयं की पताका, तिर्च्छे पल की आयु वाला संख्यात द्वीप समुद्र, सागर वाला असं. देखे, 1-2 नीचे पहली नरक, 3-4 दूसरी, 5-6 तीसरी, 7-8 चौथी, 9 से 12 पाँचवीं, ग्रैवेयक छठी अणुत्तर 7वीं नरक, सर्वार्थ सिद्ध के देव संभिन्न लोक नाली देखें
18 सिद्ध	मनुष्य होकर 1 समय में 10 जीव, तथा देवियों से 5 जीव मोक्ष जा सकते है।	देवों से-1 समय में 10 तथा देवियों से 1 समय में 5 जीव मनुष्य बन कर मोक्ष जा सकते हैं।	देवों से मनुष्य बन 1 समय में 10, देवियों से 20 जीव मोक्ष जा सकते हैं।	देवों से मनुष्य बन 108 तथा देवियों से 20 जीव एक समय में सिद्ध हो सकते हैं।
19 उत्पन्न	समस्त जीव प्राण भूत सत्व देव देवी पणे अनंत बार उपजे हैं।	भवनपतिवत् अनंत बार	भवनपतिवत्	9 ग्रैवेयक तक अनंत बार, 4 अणुत्तर में 2 बार, सर्वार्थ सिद्ध में 1 बार एक भव में मोक्ष जाये

20 सुख	अबाधित मानुषी सुखों से अनंतगुणा सुख	अबाधित मानुषी सुखों से अनंतगुणा सुख	भवनपतिवत्	भवनपतिवत्
21 भव	व्यंतर की तरह	ज. 1-2-3 यावत् अनंता भव संसार भ्रमण करे	व्यंतर की तरह	ज. 01-2-3 यावत संख्या, असंख्य, अनंत करे, करे तो

ज्योतिषी देव के अन्य विवरण में विमान वर्णन-इनके विमानों की जाड़ाई, चौड़ाई, वाहकदेव चन्द्रविमान की-चौड़ाई 56/61 योजन, जाड़ाई इससे आधी, विमान वाहक देव 16000 देव मांडला फिरने का दक्षिणायन से उत्तरायण मार्ग 510 योजन, उसमें से 330 योजन लवण समुद्र में, 180 योजन जंबूद्वीप में है, 15 मांडला है उसमें से 10 लवण में, 5 जंबूद्वीप में है। चन्द्र मांडला का अंतर 35 और इकसठिया 30 भाग योजन है। चन्द्र की गति कर्क सक्रांत 1 मुहूर्त में 5073 और एक योजन का 13725 का 754 भाग यो. और मकर संक्रांति में 5125 और 13725 का 6990वां भाग योजन है। ताप जंबूद्वीप में 2 चंद्र, लवण समुद्र में 4, धातकी खंड में 12, कालोदधि में 42, पुष्करार्द्धद्वीप में 72 चंद्र है यो मनुष्य क्षेत्र में 172 चन्द्र है, आगे पिछली संख्या को तीन गुणा कर, उसके पहले की संख्या जोड़नी-(धातकी) के 12x3=36+4 लवण+2 जंबू=42 कालोदधि में हुए, इसी तरह जोड़ते जाये। प्रत्येक चन्द्र के 28 नक्षत्र, 88 ग्रह और 66975 क्रोड़ा क्रोड़ तारा परिवार होता है। सबसे मंद गति चंद्र की होती है, चन्द्र महात्रृद्धि संपन्न देव है, संख्या में सबसे कम चन्द्र (चन्द्र-सूर्य बराबर) है। विरह पड़े तो जघन्य 6 मास, उत्कृष्ट 42 मास ग्रहण विरह पड़े। सूर्य विमान-चौड़ाई 48/61 योजन, जाड़ाई, इसकी आधी 24/61, 16 हजार देववाहक, मांडला 510 योजन 330 समुद्र में, 180 जंबू में। 184 मांडला 119 लवण में 65 जंबू में, गति कर्क संक्रांति में एक मुहूर्त में (आसाढ़ पूनम) 5251 और 61 का 29वां भाग क्षेत्र, मकर संक्रांत में 1 मुहूर्त (पोष पूनम) 5305 और 61 का 29वां क्षेत्र। ताप क्षेत्र कर्क सं. 97256 और 61 का 22वां भाग उगता सूर्य 47263 और 61 का 21वां यो. दूर से दिखता है, मकर संक्रांत ताप क्षेत्र 63663 और 61 का 16वां, उगता सूर्य 31831 और एक योजन का 61.5 का 38 यो. दूर से दिखता है। सूर्य मांडला अंतर 2 योजन निर्व्याघात अपेक्षा जं. 500 धनुष उत्कृष्ट 2 गाऊ है। संख्या चन्द्र देव समान समझें, परिवार चन्द्र समान, चन्द्र से तीव्र गति, सूर्य ग्रहण का विग्रह हो तो जघन्य 6 मास उत्कृष्ट 48 वर्ष।

ग्रह नक्षत्र तारा विमान-दो गाऊ। ग्रह विमान, एक गाऊ नक्षत्र विमान, आधा गाऊ तारा की विमान का चौड़ाई जाड़ाई विमानों से आधी। स्फटिक रत्नमय हैं। ग्रह विमान 8 हजार, नक्षत्र विमान 4 हजार, तारा विमान दो हजार देव उठाते हैं पूर्व में सिंहरूप, पश्चिम में वृषभ, उत्तर में अश्व, दक्षिण में हाथी रूप रहते है। ग्रह के 8 मांडला-6 समुद्र 2 जंबू, जंबूद्वीप में निषध और नीलवंत पर्वत पर है, नक्षत्र गति सूर्य से शीघ्र, ताराकी नक्षत्र से शीघ्र।

अंतर-व्याघात अपेक्षा 266 यो. (250 यो. निषध, नीलवंत+8 योजन पूर्व+8 योजन पश्चिम दूरी) उत्कृष्ट दूरी 10000 मेरू (योजन)+1121+1121 दूर पूर्व पश्चिम-12242 योजन अंतर आलोक से 1111 योजन दूर। मंडल अपेक्षा 44880 योजन अंदर का मंडल, 45330 योजन बाहरी मंडल का अंतर है।

वैमानिक देव-संस्थान 1 से 4 तथा 9 से 12 इन 8 देवलोकों का अर्द्ध चंद्राकार, 5 से 8 इन 4 देवलोकों का एवं 9 नौ ग्रैवेयक का पूर्ण चंद्रकार, चार अणुत्तर तिकोना, सर्वार्थसिद्ध गोल चंद्राकार। विमान और पृथ्वी पिंड रत्नमय है। पहला दूसरा देवलोक घनोदधि आधार, 3-4-5 देवलोक घनवायु आधार, 6-7-8 देवलोक तनवाय आधार, शेष विमान आकाश के आधार पर।

विमान	पृथ्वीपिंड	विमान ऊँचाई	विमान संख्या	प्रतर	वर्ण	लोकपाल	त्रायस्त्रिंशक
1-2	2700 योजन	500 योजन	32/28 लाख	13	5	4-4	33-33
3-4	2600 योजन	600-600	12/8 लाख	12	4	4-4	33-33
5	2500 योजन	700 योजन	4 लाख	6	3	4	33
6	2500 योजन	700 योजन	50 हजार	5	3	4	33
7	2400 योजन	800 योजन	40 हजार	4	2	4	33
8	2400 योजन	800 योजन	6 हजार	4	2	4	33
9-10	2300 योजन	900 योजन	400	4	1	4	33
11-12	2300 योजन	900 योजन	300	4	1	4	33
9 ग्रैवे.	2200 योजन	1000 योजन	318	9	1	नहीं	नहीं
5 अणु.	2100 योजन	1100 योजन	5	1	1	नहीं	नहीं

विमान का विस्तार कितने ही विमानों का चार भाग के असंख्याता योजन का, कितने ही विमानों का एक भाग संख्यात का विस्तार है, सर्वार्थसिद्ध विमान एक लाख योजन का है।

तीर्थकरों के कल्याण समय मृत्युलोक में विमान से देव आते हैं उनके नाम-पालक, पुष्पक, सुमाणस, श्रीवत्स, नंदीवर्तन, कामगम, मणोगम, प्रियगम, विमल, सर्वतोभद्र।

पुण्य क्षय- व्यंतर देव जितने पुण्य को हंसी कौतुहल में 100 वर्ष में क्षय करे, उतने पुण्य 9 नवनिकाय देव 200 वर्ष, असुरकुमार 300 वर्ष, ग्रह नक्षत्र तारा 400 वर्ष, चंद्र सूर्य 500 वर्ष, पहले दूसरे देवलोक के देव 1000 वर्ष, 3-4 देव. 2000 वर्ष, 5-6 देव. 3000 वर्ष, 7-8 देव. 4000 वर्ष, 9 से 12 देव. 5000 वर्ष, नवग्रैवेयक पहली त्रिक 1 लाख वर्ष, दूसरी त्रिक 2 लाख वर्ष, तीसरी त्रिक 3 लाख वर्ष, चार अणुत्तर के देव 4 लाख वर्ष, सर्वार्थसिद्ध के देव 5 लाख वर्ष में इतने पुण्य का क्षय करते हैं।

अल्प बहुत्व द्वार- सबसे थोड़ा अणुत्तर विमानदेव उतरते क्रम 9वें देवलोक तक संख्यात गुणा, 8 से 2 दूसरे देव. तक असंख्यात गुण, दूसरे की देवी संख्यात गुणी, पहले देव संख्यात गुणी, देवी संख्यात गुणी।

32. लवण समुद्र (जीवा जीवाभिगम प्रतिपत्ति-3) जंबूद्वीप के चारों और घेरा डाले दो लाख योजन चक्रवाल विष्कंभ का लवणसमुद्र है। इसकी परिधि 15, 81, 138 योजन साधिक है। चारों तरफ पद्मवर वेदिका और वनखंड है, चारों दिशा में क्रमशः विजय, वैजयंत, जयंत, अपराजित द्वार है। पानी का स्वाद खारा, कटुक, अमनोज्ञ है, उसमें उत्पन्न जीवों के सिवाय अपेय हैं स्वाद के आधार पर लवण समुद्र नाम है, चूड़ी की तरह गोल है। 95000 योजन का ढ़ाल वाला गोतीर्थाकार है, नाव के आकार का 95000 योजन तक उतरता ढाल मध्य में 10,000 योजन समतल फिर चढ़ता ढाल है। ऊँचाई और गहराई को एक लक्षित करे तो छीप संपुट आकार बनता है। अश्वस्कंध जैसा, जगती और धातकी खंड के पास नीचा, बीच में ऊँचा होता जाता है। 16000 योजन ऊँची 10000 योजन चौड़ी जलशिखा, भवनाकार (वलभीकार) है। गहराई 1000 योजन, ऊँचाई 16 हजार योजन, कुल प्रमाण 17000 योजन है। अन्य समुद्र 1000 योजन गहरे है, लवण समुद्र क्रमशः गहरा है गोतीर्थ समान।

लवण समुद्र के समतल भाग में (मध्य में) चारों दिशा में एक-एक पाताल कलश है पूर्व में बड़वामुख, दक्षिण में केतुक, पश्चिम में यूपक, उत्तर में ईश्वर नाम है। ये एक लाख योजन गहरा है जो प्रथम नरक के पाथड़ों तक गया है, ये मूल में दस हजार योजन चौड़ा, बीच में एक लाख योजन ऊपर घटते-घटते मुँह पर 10000 योजन चौड़ा है, ठीकरी एक हजार योजन मोटी है, तीन भाग है नीचे के तीसरे भाग (33333 और एक योजन का तीसरा भाग) में वायु, मध्य में वायु और जल तथा ऊपरी भाग में जल है।

अनुक्रम से काल, महाकाल, वेलंब, प्रभंजन ये 4 देव रक्षक है। इनके अतिरिक्त चार पाताल कलशों के बीच में 1971-1971 यों कुल 7884 लघु पाताल कलश है नीचे 100 योजन मध्य में हजार योजन ऊपर 100 यो. चौड़ाई, दस योजन ठीकरी है वज्र रत्नमय ठीकरी है, वायु, वायुजल, जल उपरोक्त प्रकार है। इनमें स्वभाव से बहुत अप्कायिक जीव चयापचय करते रहते हैं।

जलशिखा-समभाग में 10000 योजन में 16000 योजन ऊँचा जाता है, जल का स्वभाव ऊर्ध्व गमन न होते हुए भी हमेशा रहती है, उसे दगमाला भी कहते है, इससे लवण समुद्र के दो भाग हो जाते है, जंबू तरफ, घातकी खंड तरफ। भरती-पाताल कलशों लघु पाताल कलशों में नीचे रही वायु क्षुभित होती है, तब वायु ऊपर आने का प्रयास करती है, पाणी को धक्का मारती है पानी ऊपर उछालती है, 16000 योजन ऊँची जलशिखा दो गाऊ (आधा योजन) ऊपर जाने से लवण समुद्र में खलभलाटी मचती है यह पानी जंबू ओर धातकी खंड में फैलता है जिससे हम भरती (ज्वार) कहते है, खल भलाट रूकती है, उसे ओट (भाटा) कहते हैं। प्रायः दिन में दो बार, आठम, चौदस, पूनम, अमावस विशेष भरती-ओट आती है। लवण समुद्र में जलवृद्धि को वेलंधर, अनुवेलंधर देव निरंतर 42000 देव जंबू तरफ से 72000 देव धातकी खंड तरफ से तथा 60000 देव ऊपर से दबाते है, जो नागकुमार देव ऐसा न करे तो एक सपाटे में अनेक नगर जलमग्न हो सकते है। अनादि सिद्ध, चतुर्विध संघ प्रभाव से और वेलंधरों के प्रयास से ऐसा नहीं होता। लवण समुद्र में 4 चंद्र 4 सूर्य, 112 ग्रह, 352 नक्षत्र, 267900 क्रोड़ा क्रोड़ तारा है, निरंतर भ्रमण करते रहते हैं। लवण समुद्र के अधिष्ठाता देव सुस्थित नामक व्यंतर देव है। अन्य समुद्रों में बरसात नही होती, लवण समुद्र में बरसात होती है।

33. अढ़ाई द्वीप क्षेत्र (जीवाभिगम् प्रतिपत्ति 3)-मध्यलोक में अढ़ाई द्वीप और दो समुद्र प्रमाण क्षेत्र अढ़ाई द्वीप कहते है, इसमें मनुष्य रहने से मनुष्य क्षेत्र, समय प्रवर्तन होने से समय क्षेत्र भी कहते है। असंख्याता द्वीप समुद्रों के एकदम मध्य में जंबूद्वीप है, उसे घेरा डाले लवण समुद्र है, उसके घेरा डाले धातकी खंड, उसे घेरे हुए कालोदधि समुद्र है, उसके चारों ओर पुष्कर द्वीप है, जिसमें मनुष्यों की मर्यादा करते मानुषोत्तर पर्वत है। अतः आभ्यंतर और बाह्य पुष्काराद्ध द्वीप दो भाग हुए अंदर का भाग आभ्यंतर पुष्करद्वीप बाह्य भाग पुष्कर समुद्र की ओर है। ये अढ़ाई

द्वीप चार-चार द्वार, पद्मवर वेदिका, वनखंड- मय है, पृथ्वीमय, जलमय, जीवमय, पुद्गलमय है। अढ़ाई द्वीप क्षेत्र 45 लाख योजन लंबा चौड़ा है, 1 लाख का जंबू, 2 लाख लवण (2 पूर्व 2पश्चिम=4 लाख यो.) उसके दुगने विष्कंभ का 4 लाख चक्रवाल विष्कंभ का धातकी खंड (4+4=8 लाख) उसके दुगुने विष्कंभ का 8 लाख यो. का कालोदधि समुद्र (8+8=16 लाख यो.) तथा उसके चारों तक 16 लाख योजन का पुष्कर द्वीप है, आधा भाग मनुष्य क्षेत्र में होने से 8 लाख (8+8=16 लाख योजन) योजन यों 1+4+8+16+16=45 लाख योजन हुआ। संस्थान थाली आकार है। इसमें मनुष्य रहने के 101 स्थान क्षेत्र है, 15 कर्मभूमि+30 अकर्मभूमि+56 अंतद्वीप=101 क्षेत्र है। जंबू के बीचोंबीच मेरू पर्वत एक लाख योजन ऊँचा है। जंबूद्वीप में मेरू के दक्षिण में भरत क्षेत्र है, उत्तर में एरवत क्षेत्र है। भरत की मर्यादा चुल्ल हिमवंत और ऐरवत की मर्यादा शिखरी पर्वत करते हैं। चुल्ल हिमवान के उत्तर में हैमवय, शिखरी के दक्षिण में हैरण्यवत, हेमवय की मर्यादा महाहिमवंत, और हैरण्यवत की रूक्मि पर्वत करते है वहाँ हरिवास, रम्यक्वास क्षेत्र है इनकी मर्यादा रूप निषध और नीलवंत पर्वत है, इनके बीच महाविदेह क्षेत्र है वहाँ मेरू के दक्षिण में देवकुरू, उत्तर में उत्तरकुरू क्षेत्र है। जंबूद्वीप में मनुष्यों के 9 क्षेत्र हैं, भरत, ऐरवत, महाविदेह (कर्मभूमि) तथा 6 उपरोक्त हैमवयादि अकर्मभूमि है। **धातकी खंड**-चूड़ी आकार है उत्तर दक्षिण में ईषुकार पर्वत है, इससे पूर्व पश्चिम दो भाग हो गये। पूर्व पश्चिम में एक-एक 84 हजार योजन ऊँचा सर्वांग 85 हजार योजन ऊँचा मेरू पर्वत है दो पर्वत है यहाँ मनुष्य रहने के स्थान जंबू से दुगुने हैं। 6 कर्म+12अकर्म=18 क्षेत्र हैं। पुष्करार्द्ध द्वीप में भी धातकी खंड की तरह दो मेरू 6 कर्म+12 अकर्म=18 क्षेत्र हैं।

छप्पन अंतरद्वीप- चूल्ल हिमवान् और शिखरी के पूर्व पश्चिम में लवण समुद्र में विदिशा में क्रमशः 7-7 अंतर्द्वीप है 7x4=28+28=56 अंतरद्वीप है। ये कुल 9+18+18+56=101 क्षेत्र हुए। कर्मभूमि 15, अकर्मभूमि 30, अंतर्द्वीप 56 हुए।

सूर्यचंद्र-132 चंद्र 132 सूर्य (2+4+12+42+72=132) प्रत्येक चंद्र सूर्य के 28 नक्षत्र, 88 ग्रह, 66975 क्रोड़ा क्रोड़ तारा है। अढ़ाई द्वीप में ज्योतिषी देव गमन करते हैं उसी गति से दिन रात होते हैं, जंबूद्वीप में दो सूर्य सामने-सामने होते हैं, इसी प्रकार दो चंद्र भी सामने-सामने होते हैं, भरत ऐरवत में प्रकाश (दिन) तब महाविदेह पूर्व पश्चिम में रात होती है। इसी आधार से रात दिन वर्ष आदि काल होता है।

मनुष्य क्षेत्र में-बादल वर्षादि होती है, भरती ओट आती है, बादर अग्नि होती है, उत्तम पुरुष होते हैं।

34. असंख्य द्वीप-समुद्र-(जीवाभिगम प्रतिपत्ति-3) मध्य लोक (तिर्च्छा लोक) एक रज्जू लंबा, एक रज्जू चौड़ा, 1800 योजन की ऊँचाई है। असंख्याता द्वीप समुद्र है, अढ़ाई उद्धार सागरोपम में जितना समय है, उतने द्वीप समुद्र मध्य लोक में है। सबसे मध्य में जम्बू द्वीप है, उसके चारों तरफ दुगुनी विष्कंभ चक्रवाल से लवण समुद्र 2 लाख योजन, धातकी खंड 4 लाख योजन, यों आगे-आगे द्वीप समुद्र एक दूसरे से दुगुना दुगुना विस्तार वाले हैं। उनमें कुण्डल द्वीप-कुण्डल समुद्र तक द्वीप समुद्र संख्यात योजन विस्तार वाले, संख्यात योजन परिधि वाले, रूचक द्वीप-रूचक समुद्र से स्वयंभू रमण समुद्र तक द्वीप समुद्र असंख्यात योजन विस्तार वाले, असंख्यात योजन परिधि वाले है। ये द्वीप समुद्र पृथ्वीमय, जलमय, जीवमय, पुद्गलमय है, प्रत्येक द्वीप समुद्र के चार-चार द्वार, पद्मवरवेदिका, वनखंड, पर्वत, कूट, जलस्थान है, दो-दो अधिष्ठायक देव है नित्य शाश्वत है अनिमित्तक है। असंख्य द्वीप समुद्र गोलाकार है, जंबूद्वीप गोल थाली आकार है बाकी चूड़ी आकार है।

द्वीप	अधिष्ठायक देव	समुद्र	अधिष्ठायक देव
जंबूद्वीप	अनादृत	लवणसमुद्र	सुस्थित देव
धातकी खंड	सुदर्शन, प्रियदर्शन	कालोदधि समुद्र	काल, महाकाल
पुष्कर द्वीप	पद्म, पुंडरीक	पुष्कर समुद्र	श्रीधर, श्रीप्रभ
वरूणवर द्वीप	वरूण, वरूणप्रभ	वरूणवर समुद्र	वारूणी, वरूणाकांत
क्षीरवर द्वीप	पुंडरीक, पुष्करदंत	क्षीरवर समुद्र	विमल, विमलप्रभ
घृतवर द्वीप	कनक, कनकप्रभ	घृतवर समुद्र	कांत, सुकांत
क्षोदवर द्वीप	सुप्रभ, महाप्रभ	क्षोदवर समुद्र	पूर्णभद्र, मणिभद्र
नंदीश्वर द्वीप	कैलास, हरिवाहन	नंदीश्वर समुद्र	सुमनस, सोमनसभद्र
अरूण द्वीप	अशोक, वीतशोक	अरूण समुद्र	सुभद्र, सुमनभद्र
अरूणवर द्वीप	अरूणवरभद्र, अरूणवर महाभद्र	अरूणवर समुद्र	अरूणवर, अरूणमहावर
अरूणवरावभास द्वीप	अरूणवरभासभद्र, अरूणवमहाराव भासभद्र	अरूणवराव भास समुद्र	अरूणवराव भासवर, अरूण महावराव भासवर

इस प्रकार आगे अरूणद्वीप से सूर्यद्वीप तक त्रिप्रत्यवतार है, कुंडल, कुंडलवर, कुंडलवरावभास, रूचक, रूचकवर, रूचकवरावभास, हार हारवर, हारवरावभास। अधिष्ठापक देव के नाम द्वीप जैसे भद्र, महाभद्र और समुद्र के लिए वर, महावर शब्द

जोड़ें। लोक में जितने भी शुभ नाम, वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, पृथ्वी, रत्न, निधि, द्रह, नदी, पर्वत, क्षेत्र, विजय, कूट, नक्षत्र, चंद्र, सूर्य आदि है सभी नाम के द्वीप समुद्र हैं। जंबूद्वीप नामक असंख्य द्वीप है, अंत के 5 द्वीप एक-एक नाम वाले देव, नाग, भूत, यक्ष, भूत अंत में स्वयंभू रमण समुद्र है।

लवण समुद्र का खारा, कालोदधि, पुष्कर, स्वयंभूरमण का स्वाभाविक जल, क्षीर समुद्र का दूध, घृतवर का घी, वरूण समुद्र मदिरा, शेष का इक्षुरस जैसा स्वाद है। लवण समुद्र में 500 योजन, कालोदधि में 700, स्वयंभूरमण में 1000 योजन अवगाहना वाले जलचर जीव है। लवण समुद्र को छोड़ कही भी भरती ओट नहीं होती। अन्य समुद्रों में जलशिखा नहीं है, सभी समान (लवण छोड़) 1000 योजन गहरे है। 45 लाख योजन में ही 101 क्षेत्रों में मनुष्य रहते है, आगे कहीं भी नहीं। वहाँ संहरण करके ले गये, मनुष्यादि भी मरते नहीं हैं, वापस यहाँ आकर मरते हैं, अढ़ाई द्वीप से बाहर तिर्यंच होते हैं। अढ़ाई द्वीप से बाहर ज्योतिषी देव गमनागमन नहीं करते स्थिर रहते हैं। अढ़ाई द्वीप से आगे सूर्यचन्द्रादि संख्या बढ़ती जाती है संख्याता असंख्याता होते हैं (संख्याता योजन में संख्याता, असंख्याता योजन विस्तार में असंख्याता होते हैं)।

35. निगोद (जीवाभिगम प्रतिपति 5) जैन धर्म का पारिभाषिक शब्द है दो प्रकार-निगोद, निगोद जीव। अनंत जीवों का आश्रय रूप स्थान निगोद, उनमें रहे अनंत जीव निगोद जीव। निगोद के शरीर और जीवों के 2 प्रकार-सूक्ष्म, बादर। सूक्ष्म निगोद लोक में ठूँस-ठूँस कर भरे हैं, शरीर दिखते नहीं। सूक्ष्म निगोद 2 प्रकार-अव्यवहार राशि, व्यवहार राशि।

अव्यवहार राशि-जो जीव अनादि काल से सूक्ष्म निगोद रूप है, कभी जिन्होंने अन्यत्र जन्म मरण नहीं किये वे जीव दो प्रकार के-अनादि अनंत-अनादि काल से अव्यवहार राशि में हैं अनंत काल तक वहीं रहेंगे, बाहर निकलने नहीं है। अनादि सांत-अनादि काल से हैं, और काल लब्धि योग से बाहर निकलेंगे, मनुष्य में से एक जीव मुक्त होता है, तब अव्यवहार राशि से एक जीव बाहर निकलता है। अव्यवहार राशि में निगोद के जीव ही होते हैं।

व्यवहार राशि-चारों गति में जन्म मरण करने वाले जीव व्यवहार राशि के होते हैं। कभी कोई जीव पुनः परिभ्रमण करते सूक्ष्म निगोद में भी जन्मे, परंतु व्यवहार राशि का निगोद कहलाता है, सादि सांत स्थिति है।

बादर निगोद-निगोद जीवों के असंख्य शरीर साथ में मिलें तब कभी दृष्टिगोचर होते हैं, कभी नहीं होते हैं वे बादर निगोद है आलू, प्याज, मूला, गाजर, लीलन, फूलन ये बादर निगोद है।

निगोद जीव-लोक में असंख्य प्रतर है, एक-एक में असंख्य श्रेणी है, एक-एक श्रेणी में असंख्य गोलक है, एक-एक गोलक में असंख्य निगोद शरीर है, एक-एक शरीर में अनंत जीव है। उन अनंत जीवों का मूल स्थूल औदारिक शरीर एक ही होता है वे जीव (1) एक ही शरीर में रहते हैं। (2) एक ही समय आहार करते हैं (3) एक साथ श्वासोच्छवास लेते हैं, कोई क्रिया स्वतंत्र नहीं होती। अनंत जीवों का शरीर होते हुए भी उनके अध्यवसाय, कर्म, कर्मबंध स्वतंत्र होते हैं। निगोद का आयुष्य अल्प जघन्य उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है, एक मुहूर्त में 65536 जन्म मरण कर सकते हैं, एक श्वास में 17 भव होते हैं, इतना अल्प आयुष्य है। निगोद की कायस्थिति अनंतकाल की है, वहाँ गया जीव अनंतकाल (अढ़ाई पुद्गल परावर्तन) निगोद में रह सकता है। बाद में प्रत्येक वनस्पति में जाता है। एक स्पर्शेन्द्रिय होती है, अत्यंत अल्प विकसित चेतना होती है गाढ़तम कर्म उदय से अक्षर के अनंतवे भाग जितनी चेतना होती है। एक शरीर में अनंत जीव होने से साधारण वनस्पति भी कहते हैं (1) मूल स्कंध कंद, त्वचा, शाखा, प्रवाल पुष्प फल बीज को भेदते समचक्रकार दिखे (2) स्कंधादि के मध्यवती सार भाग की अपेक्षा छाल जाड़ी हो (3) पर्व-गाँठ को तोड़ने से वहाँ जल कण व्याप्त हो, (4) दूध सहित दूध रहित पत्तों की नसें न दिखे। ये लक्षण साधारण वनस्पति के है। कोई भी बीज ऊगे तब कोंपल अनंत कायिक होती है, वे फिर विकसित होती है, वे प्रत्येक या साधारण वनस्पति है। सुई की नोक पर अनंत जीव होते है, अतः कंदमूल के वपराश में जीव हिंसा का दोष है।

36. छः आरे का वर्णन (श्री जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति) 20 क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम का एक कालचक्र होता है। इसके 2 भाग है-अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी ये दोनों 10-10 सागरोपम के होते हैं। प्रत्येक में 6-6 आरे होते हैं **अवसर्पिणी काल**-जिस काल में अवगाहना, आयुष्य, पुण्य, शुभ वर्ण, गंध, रस स्पर्श आदि घटते जाये वह अवसर्पिणी काल है। इसमें 6 आरे हैं-(1) **सुषम सुषमा**-युगल काल है, एक ही जोड़ा होता है, अन्य परिवार नहीं, रूप लावण्य सौभाग्यवान होते हैं। असि मसि कसि नहीं होते, 10 कल्पवृक्षों से युगलों की आवश्यकता पूर्ति होती है, तिर्यंच युगलों में भी सिंह, रींछ,

व्याघ्र आदि में वैर नहीं होता। युगलिक का आयु छ मास शेष रहे तब एक युगल को साथ में जन्म देते है, और 49 दिन रात पालना करते है, उनकी अपूर्ण आयु नहीं होती, छ मास रहते आयुबंध होता है, साथ में ही छींक उबासी आती है, साथ में ही मरते हैं, देवगति में जाते हैं पहला आरा चार क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम का होता है।

दूसरा आरा सुषमा-प्रथमवत् जानना यह आरा 3 क्रोड़ा क्रोड़ सागरोपम का होता है। पुत्र पुत्री पालना 64 दिन की होती है, शेष ऊपरवत्।

तीसरा आरा सुषम दुषमा-तीसरे आरे में बहुत काल तक युगलिया काल रहता है परन्तु धीरे-धीरे कम होती जाती है, अनंतगुणहीन होती जाती है। आरे की दो क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम की स्थिति होती है। युगल काल तक एक देवगति, उसके बाद युगल काल समाप्त होने पर जीव पाँच गति में जाते है। युगलिक संतति पालन 79 दिन करते है। इस आरे के अंतिम में (66 लाख करोड़, 66 हजार करोड़, 66 करोड़, 66 लाख, 66 हजार, 666 सागरोपम बीत जाने पर 15 कुलकर होते है, उनके बाद तीसरे आरे के 84 लाख पूर्व 3 वर्ष साढ़े आठ मास शेष रहे तब (सर्वार्थसिद्ध विमान से 33 सागरोपम आयु पूर्ण कर) प्रथम तीर्थंकर का जन्म होता है। असि मसि कसि चालू होती है, कलायें आदि एवं गणित आदि व्यवहार ज्ञान शुरू होता है। प्रथम चक्रवर्ती भी इस आरे में होते है।

चौथा दुषम सुषमा- 42000 हजार वर्ष कम एक क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम का होता है। सुख थोड़ा दुःख अधिक होता है। 11 चक्रवर्ती, 23 तीर्थंकर, 9 बलदेव, 9 वासुदेव, 9 प्रतिवासुदेव होते हैं। चौथे आरे में जन्म पाँचवें आरे में मोक्ष में जाते हैं। आरा लगते 5 गति उतरते 4 गति होती है। चौथे आरे के 3 वर्ष साढ़े आठ मास शेष रहते अंतिम तीर्थंकर मोक्ष चले जाते हैं। 10 बोलों का विच्छेद ज्ञान 3, चारित्र 3, पुलाकलब्धि, आहारक शरीर, उपशम और क्षपक श्रेणी।

पाँचवाँ दुःखमा आरा- 21000 वर्ष का होता है, कंटकादि विशेष होते है, भूमि कठोर होती है, समरसता, मधुरता थोड़ी होती है, वर्षा हो तो अन्न निपजे अन्यथा नहीं, खेत की एक पाली पर बरसे, दूसरी पर नहीं बरसे, एक सींग (गाय) भींजे दूजा सूखा रहे, आचार्यों ने ऐसे 32 बोल बताये जो इस ओर की विशेषताओं से प्रेरित हैं, इस आरे में ज्ञान क्रमशः विच्छिन्न होता जायेगा, दशवैकालिक के 4 अध्ययन रहेंगे (कहीं दशवै. उत्तरा. आचारांग, आवश्यक ये 4 सूत्र रहेंगे ऐसा भी) कहते हैं। 4 जीव एक

भवावतारी बनेंगे। अंत में संवर्तक, महासवर्तक आंधी से सब नष्ट हो जायेगा। प्रथम प्रहर में जैन धर्म नष्ट होगा, अन्य मिथ्यात्वी धर्म दूसरे पहर में, राजनीति तीसरे पहर में, बादर अग्नि चौथे पहर में नष्ट हो जायेगी। अंत तक 4 गति होगी।

छठा आरा दुषम दुषमा- अत्यंत दुःखमय 21000 वर्ष का होगा, पंचम आरे के जीवित मनुष्य पशुओं को भरत क्षेत्र के अधिष्ठाता देव गंगा सिंधु नदी के किनारे 72 बिलों में (तीन मंजिल के) रखेंगे। भयंकर भूख, प्यास, तीव्र ठंडक, भीषण गर्मी होगी 63 बिलों में मनुष्य, 6 में पशु, तीन में पक्षी होंगे। मनुष्यादि का शरीर बेड़ोल, दुर्गंध युक्त, भयंकर रोगग्रस्त होगा, निर्लज मर्यादा रहित होंगे, सम्यक्त्व, धर्म से भ्रष्ट होंगे। दुःख से दिन पूर्ण करेंगे।

उत्सर्पिणी काल-अवसर्पिणी की तरह 6 आरे है। यहाँ नाम विपरीत क्रम से चलते है पहला आरा दुषम दुषमा 21000 वर्ष का अवसर्पिणी के छठे जैसा होता है। दूसरा आरा दुषमा शुरू होने पर 7-7 दिन से वर्षा होती है 49 दिन बाद 50वें दिन बिलों से मनुष्य बाहर आते है, उत्सव जैसा माहौल होता है, वनस्पति देख मांसाहार नहीं करने का निर्णय लेते हैं। यह दूसरा आरा 21000 वर्ष होता है। तीसरा आरा 42000 वर्ष कम एक क्रोड़ा क्रोड़ सागरोपम का होता है, इसमें 23 तीर्थंकर 11 चक्रवर्ती आदि होते हैं। चौथे आरे के 3 वर्ष साढ़े आठ माह बीतने पर 24वें तीर्थंकर का जन्म होता है 84 लाख पूर्व का आयुष्य होता है, एक चक्रवर्ती भी होता है। 24वें तीर्थंकर मोक्ष जाने के बाद राजधर्म, चारित्र धर्म विच्छेद होगा, चौथे आरे के शेष भाग तथा पाँचवें छठे आरे में युगलिक होते हैं, कल्पवृक्ष से व्यवहार पूर्ण होता है।

37. खण्डा जोयण (जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति)

खंडा जोयण वासा, पव्वय कूडा तित्थ सेढ़ीओ।
विजय, दह, सलिलाओ, पिंडअे होई संगहणी।।

एक लाख योजन लंबा चौड़ा जंबूद्वीप में 10 द्वार-खंड, योजन, वास, पर्वत, कूट, तीर्थ, तीर्थ श्रेणी, विजय, द्रह नदियां ये 10 द्वार है। 1 लाख योजन इस प्रकार-

क्रम	क्षेत्र नाम द्वीप उत्तर दक्षिण	खंड	योजन-कला	क्रम	क्षेत्र नाम पूर्व पश्चिम	योजन
1	भरत क्षेत्र	1	526-6	1	मेरू पर्वत की चौड़ाई	10000
2	चुल्लहिमवंत पर्वत	2	1052-12	2	पूर्वभद्र शाल वन	22000
3	हेमवय क्षेत्र	4	2105-5	3	पूर्व आठ विजय	17702
4	महाहेमवंत पर्वत	8	4210-10	4	पूर्व 4 वक्षस्कार पर्वत	2000
5	हरिवास क्षेत्र	16	8421-1	5	पूर्व तीन अंतर नदी	375
6	निषिध पर्वत	32	16842-2	6	सीतामुख बन	2923
7	महाविदेह क्षेत्र	64	33684-4	7	पश्चिम भद्रशाल वन	22000
8	नीलवंत पर्वत	32	16842-2	8	पश्चिम विजय	17702
9	रम्यकवास क्षेत्र	16	8421-1	9	पश्चिम 4 वक्षस्कार पर्वत	2000
10	रूकमी पर्वत	8	4210-10	10	पश्चिम तीन अंतर नदी	375
11	हैरण्यवत क्षेत्र	4	2105-5	11	पश्चिम सीतामुख वन	2923
12	शिखरी पर्वत	2	1052-12	12		
13	एरवत क्षेत्र	1	526-6	13		
		190	1,00,000			1,00,000

जंबूद्वीप की परिधि 3,16,227 योजन, 3 गाउ, 128 धनुष, साढ़े तेरह अंगुल, 1 जव, 1 जूं, 1 लीक, 6 बालाग, 1 व्यवहार परमाणु जितनी है। चारों तरफ कोट (जगती) 1 पद्मवर वेदिका 1 वनखंड, 4 दरवाजा है। खंड करे तो 190 खंड हो सकते हैं, (19 कला= 1 योजन)। **योजन-**अगर योजन के समचोरस खंड करे तो 7 अरब, नब्बे करोड़, 56 लाख, 94 हजार, 150 होने पर 3515 धनुष 60 अंगुल शेष रहे। **वास-**मनुष्य रहने के सात और दस स्थान-तीन भरत, ऐरवत, महाविदेह, अकर्मभूमि के 4 हैमवय, हैरण्यवत, हरिवास, रम्यकवास यों 7 हुए और 10 गिनने हो तो महाविदेह के 4 (पूर्व, पश्चिम, देवकुरू, उत्तरकुरू) करने से 10 होते हैं। विजय वैजयंत जयंत अपराजित ये 4 द्वार है। प्रत्येक द्वार की 8 योजन ऊँचा 54 योजन चौड़ाई है।

क्षेत्र विस्तार-भरत क्षेत्र अर्द्ध चंद्रकार है 6 खंड है इसी प्रकार ऐरवत क्षेत्र हैं, महाविदेह में पूर्व-पश्चिम 16-16 विजय है-

क्षेत्र	दक्षिण-उत्तर चौड़ाई	बाहु योजन कला	जीवा योजन-कला	धनुष पीठ योजन-कला
दक्षिण भरत	238-3	-	9748-12	9766-1
उत्तर भरत	238-3	1892-7½	14471-6	14528-11
हेमवय	2105-5	6755-3	37674-16	38740-10
हरिवास	8421-1	13361-6	73901-17	84016-4

महाविदेह	33684-4	33767-7	100000	158113-16
देवकुरू	11842-2	-	53000	60418-12
उत्तरकुरू	11842-2	-	53000	60418-12
रम्यकवास	8421-1	13361-6	73901-17	84016-4
हैरण्यवय	2105-5	6755-3	37674-16	38740-10
दक्षिण ऐरवत	238-3	1892-7½	14471-6	14528-11
उत्तर ऐरवत	238-3		9748-12	9766-1

पर्वत द्वार-269 पर्वत शाश्वत है 200 कंचन पर्वत (देवकुरू में 5 द्रह उत्तरकुरू में 5 द्रह उन द्रहों के दोनों किनारों पर 10-10 कंचनगिरी पर्वत है। 34 दीर्घ वैताढ्य, 16 वक्षस्कार, 6 वर्षधर, 4 गजदंता, 4 वृतवैताढ्य, 4 चित्त विचित्रादि और एक मेरू पर्वत ये 269 पर्वत है।)

पर्वत के नाम	गहराई	ऊँचाई	विस्तार (योजन-कला)
200 कंचनगिरी	25 योजन	100 योजन	100 योजन
34 दीर्घ वैताढ्य	25 गाउ	25 योजन	50 योजन
16 वक्षस्कार पर्वत	500 गाउ	500 योजन	500 योजन
चुल्ल हिमवंत/शिखरी	25 योजन	100 योजन	1052-12
महाहिमवंत/रूक्मी	50 योजन	200 योजन	4210-10
निषध और नीलवंत	100 योजन	400 योजन	16842-2
4 गजदंत पर्वत	125 योजन	500 योजन	30209-6
4 वृत्त वैताढ्य	250 योजन	1000 योजन	1000 योजन
चित्र, विचित्र, यमग, समग पर्वत	250 योजन	1000 योजन	1000 योजन
मेरूपर्वत (जंबू के बीच)	1000 योजन	99000 योजन	10090 योजन 10/11भाग

मेरू पर्वत पर चार वन है-भद्रशाल वन पूर्व पश्चिम 22000 योजन, उत्तर दक्षिण 250 योजन मेरू से 50 योजन चारों दिशा में। नंदन वन-भद्रशाल से 500 योजन ऊपर वलयाकार 500 योजन विस्तार में। सौमनस वन-नंदन वन से 62500 योजन ऊपर 500 योजन वलायाकार विस्तार में। पंडक वन-सौमनस से 36000 योजन ऊपर 494 योजन चूड़ी आकार में मेरू की 12 योजन की चूलिका को लिपटकर है।

कूट द्वार-467 कूट पर्वतों पर तथा 58 कूट क्षेत्रों में कुल 525 कूट है।

स्थान (पर्वत/क्षेत्र)	कूट संख्या	ऊँचा योजन	मूल विस्तार	ऊँचा विस्तार (शिखर पर)
चूल हेमवंत पर	11	500	500	250
महा हेमवंत पर	8	500	500	250
निषिध पर्वत पर	9	500	500	250
नीलवंत पर्वत पर	9	500	500	250
रूक्मी पर्वत पर	8	500	500	250
शिखरी पर्वत पर	11	500	500	250
वैताढ्य 34×29	306	25 गाउ	25 गाउ	12½ गाउ
वक्षस्कार 16X4	64	500	500	250
विद्युत प्रभा गजदंता पर	9	500	500	250
माल्यवंता गजदंता पर	9	500	500	250
सौमानस गजदंता पर	7	500	500	250
गंधमादन गजदंता पर	7	500	500	250
मेरू के नंदनवन में	9	500	500	250
पर्वतों पर	467			
भद्रशाल वन में	8	500	500	250
देवकुरू में	8	8	8	4 यो.
उत्तरकुरू में	8	8	8	4
चक्रवर्ती विजय विजय में	34	8	8	4
क्षेत्र में कूट	58			
पर्वत पर 467 कूट				
क्षेत्र में 58 कूट				
525 कूट				

तीर्थ द्वार-32 महाविदेह, 1 भरत, 1 एरावत ये 34 विजयों में तीन-तीन लौकिक तीर्थ है, मागध, वरदाम, प्रभास। यहाँ चक्रवर्ती अठ्ठम् तप करते हैं, जन्माभिषेक में देव तीर्थंकर का जलाभिषेक करने जल लाते हैं।

श्रेणी द्वार-विद्याधरों तथा देवों की 136 श्रेणी है 34 वैताढ्य पर 4-4 श्रेणी है।

विजय द्वार-महाविदेह की 32 विजय प्रत्येक 16592 योजन 2 कला दक्षिणोत्तर लंबी,

2212¾ योजन पूर्व पश्चिम है। 1 भरत, 1 ऐरवत यों 34 विजयों में 34 चक्रवर्ती हो सकते हैं इनमें दीर्घ वैताढ्य पर्वत, तमस्त्र गुफा, खंड प्रपात गुफा, राजधानी, नगरी, कृतमाली देव, नटमाली देव, ऋषभकूट, गंगा, सिंधु नदी ये सभी 34-34 होते हैं-ये सभी शाश्वत है। पूर्व विदेह में 16 विजय-सीता नदी के उत्तर में 8 (कच्छ, सुकच्छ, महाकच्छ, कच्छावती, आवर्त, मंगलावर्त, पुष्कलावर्त्त, पुष्कलावती विजय) दक्षिण में 8 (वच्छ, सुवच्छ, महावच्छ, वच्छवती, रम्य, रम्यक, रमणिय, मंगलावती विजय) इसी प्रकार पश्चिम विदेह में भी 16 सीतोदा के उत्तर में 8 (पद्म, सुपद्म, महापद्म, पद्मावती, शंख, कुमुद, नलिन, सलीलावती विजय) दक्षिण किनारे 8 (वप्र, सुवप्र, महावप्र, वप्रावती, वल्गु, सुवल्गु, गंधील, गंधीलावती विजय)।

द्रह द्वार-6 वर्षधर पर्वतों पर 6 तथा देवकुरू उत्तरकुरू में पाँच-पाँच द्रह है।

द्रह (कुंड) नाम	पर्वत नाम	लंबाई योजन	चौ. योजन	गहराई यो.	देवी	कमल (कमल)
पद्म द्रह	चुल हिमवंत	1000	500	10	श्रीदेवी	1,20,50,120
महापद्म द्रह	महा हिमवंत	2000	1000	10	ह्री	2,41,00,240
तिगच्छ द्रह	निषिध	4000	2000	10	धृति	4,82,00,480
केसरी द्रह	नीलवंत	4000	2000	10	कीर्ति	4,82,00,480
महापुंडरीक द्रह	रूक्मी	2000	1000	10	बुद्धि	2,41,00,240
पुंडरीक द्रह	शिखरी	1000	500	10	लक्ष्मी	1,20,50,120
10 द्रह	जमीन पर	1000	500	10	10 देव	2,41,00,240
					कुल-	19,28,01,920

देवकुरू के 5-निषध, देवकुरू, सूर्य, सुलस, विद्युत्प्रभ।

उत्तरकुरू के 5-नीलवंत, उत्तरकुरू, चंद्र, ऐरवत, मालवंत।

नदी द्वार-14,70,000 नदियाँ है, ये 78 नदियों का परिवार है-

नदी	पर्वत से	कुंड से	निकलता गहरी	निक. विस्तार	समुद्र प्रवेश में गहरी	समुद्र प्रवेश विस्तार	नदियों का परिवार
गंगा	चुल्ल हिमवंत	पद्म	½ गाऊ	6¼ यो.	1¼ यो.	62½ यो.	14,000
सिंधु	चुल्ल हिमवंत	पद्म	½ गाऊ	6¼ यो.	1¼ यो.	62½ यो.	14,000
रोहिता	चुल्ल हिमवंत	पद्म	1 गाऊ	12½ यो.	2½ यो.	125 यो.	28,000
रोहितांसा	महा हेमवंत	महा पद्म	1 गाऊ	12½ यो.	2½ यो.	125 यो.	28,000
हरिकंता	महा हेमवंत	महा पद्म	2 गाऊ	25 योजन	5 योजन	250 यो.	56,000
हरि सलिला	निषिध	तीगच्छ	2 गाऊ	25 योजन	5 योजन	250 यो.	56,000
सीता	निषिध	तीगच्छ	4 गाऊ	50 योजन	10 योजन	500 यो.	5,32,000
सीतोदा	नीलवंत	केसरी	4 गाऊ	50 योजन	10 योजन	500 यो.	5,32,000
नरकंता	नीलवंत	केसरी	2 गाऊ	25 योजन	5 योजन	250 यो.	56,000
नारीकंता	रूक्मी (रूप्पी)	महापुंडरीक	2 गाऊ	25 योजन	5 योजन	250 यो.	56,000
रूपकुला	रूक्मी (रूप्पी)	महापुंडरीक	1 गाऊ	12½ योजन	2½ योजन	125 यो.	28,000
सुवर्णकुला	शिखरी	पुंडरीक	1 गाऊ	12½ योजन	2½ योजन	125 यो.	28,000
रक्ता	शिखरी	पुंडरीक	½ गाऊ	6¼ योजन	1¼ योजन	62½ यो.	14,000
रक्तोदा	शिखरी	पुंडरीक	½ गाऊ	6¼ योजन	1¼ योजन	62½ यो.	14,000
विदेह की 64 नदियाँ	धरती पर	कुंडों से	½ गाऊ	6¼ योजन	1¼ योजन	62½ यो.	14,000
						78 नदियों का परिवार	14,70,000

38. नक्षत्र परिचय (जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति वक्ष. 7)

नभ चक्र में सदा एक सरीखे, अंदर से अंदर न्यूनाधिक न हो वे नक्षत्र कहलाते हैं। 28 है। प्रत्येक नक्षत्र का चंद्र के साथ 60 घड़ी का योग होता है (परंतु अभिजित् का 19 घड़ी का होता है, उससे पूर्व उत्तराषाढ़ा का 45 घड़ी का, उसमें अभिजित् की 15, तथा उसके बाद श्रवण का 56 घड़ी होने से 4 घड़ी उसमें मिला देने से, अभिजित् नक्षत्र का कोई-कोई गिनते नहीं है)। 27 नक्षत्रों में 12 राशि गिनी जाती है और प्रत्येक राशि में सवा दो नक्षत्र होते हैं।

क्रम	नाम नक्षत्र	आकार	तारा संख्या
1	अभिजित्	गाय मस्तक जैसा	3
2	श्रवण	कावड़ जैसा	3
3	धनिष्ठा	तोते के पिंजरा जैसा	5
4	शतभिषा	बिखरे फूल जैसा	100
5	पूर्वा-भाद्रपद	आधी बावड़ी जैसा	2
6	उत्तरा-भाद्रपद	आधी बावड़ी जैसा	2
7	रेवती	जहाज जैसा	32
8	अश्विनी	घोड़े के सिर जैसा	3
9	भरणी	स्त्री के मर्म स्थान जैसा	3
10	कृतिका	हजाम की थैली जैसा (नाई की पेटी)	6
11	रोहिणी	गाड़ी की धुरी जैसा	5
12	मृगशीर्ष	मृगला के शीर्ष जैसा	3

13	आर्द्रा	लोही बिंदु जैसा	1
14	पुनर्वसु	तराजू जैसा	5
15	पुष्य	ध्वजा जैसा (वर्धमान सरावला)	3
16	आश्लेषा	दो जुड़े रामपात्र जैसा (ध्वजा पताका)	6
17	मघा	टूटे किले की दीवार जैसा	7
18	पूर्वा फाल्गुनी	अर्द्ध पंलग जैसा	2
19	उत्तरा फाल्गुनी	अर्द्ध पलंग जैसा	2
20	हस्त	हाथ के पंजे जैसा	5
21	चित्रा	खीले पुष्प जैसा	1
22	स्वाति	खिले (नागफणी) जैसा	1
23	विशाखा	घोड़ा की दामणी जैसा	5
24	अनुराधा	एकावली हार जैसा	4
25	ज्येष्ठा	हाथीदाँत जैसा	3
26	मूल	बिच्छु जैसा	11
27	पूर्वाषाढ़ा	हाथी की चाल का पगला जैसा	4
28	उत्तराषाढ़ा	बैठ सिंह जैसा	4

चंद्र की गति मंद और नक्षत्र की शीघ्र होने से रोज-रोज एक नक्षत्र बदलता रहता है, इसीलिए दैनिक नक्षत्र कहलाते हैं। सूर्य की गति चंद्र से शीघ्र होने से (नक्षत्र से मंद है) चंद्र के बजाय सूर्य के साथ ज्यादा समय (अमुक दिन) रहते हैं, सूर्य नक्षत्र कहलाते हैं, ऋतु परिवर्तन इससे (सूर्य नक्षत्र) से होता है। प्रत्येक माह की पूर्णिमा को जो नक्षत्र चंद्र के साथ रातभर रहे उस नक्षत्र के नाम पर महीना का नाम होता है-कृतिका (कार्तिक) मृगशीर्ष (मगसर) अश्विन (आसोज)। ठाणांग सूत्र के 10वें ठाणे में भी 10 नक्षत्रों का ज्ञान कहा है।

39. अष्ट प्रवचन (उत्तराध्ययन अध्य. 24) पाँच समिति-(1) ईर्या समिति-मार्ग में चलने की समिति (2) भाषा समिति-बोलने की (3) एषणा समिति (गोचरी की) (4) निक्षेपणा समिति (वस्त्रपात्रादि लेने, रखने की) (5) परिठ्ठावणिया समिति (बड़ीनीत, लघुनीत, बलखा, लींट, आदि परठने की) तीन गुप्ति-सावद्य से निवृत्त-मन से, वचन से, काय से। मन गुप्ति मन का व्यापार, वचन गुप्ति वचन का व्यापार (विकथा न करना, मोन रहना, 4 प्रकार भाषा का व्यापार) काय गुप्ति (उठना, बैठना, सोना, चढ़ना, खड्डे उल्लंघन यतना पूर्वक करना)।

ईर्या समिति के भेद-आलंबन (ज्ञान दर्शन चारित्र का) काल (दिन रात), मार्ग (कुमार्ग छोड़कर), यतना द्रव्य क्षेत्र काल भाव से। 10 बोल वर्जकर परिस्थापन करे-(1) मनुष्य आते जाते न हो (2) जीवों का उपघात न हो (3) भूमि विषम न हो (4) पोली न हो (5) सचित न हो (6) संकड़ी न हो (7) दीर्घकाल की अचित न हो (8) नगर-गाँव की निकट भूमि न हो (9) लीलन फूलन युक्त न हो (10) बिल आदि न हो। **परिस्थापन की विधि** (1) उपाश्रय से निकलकर आवस्सही शब्द तीन बार बोले (2) देवेन्द्र की आज्ञा ले (3) परठते वोसिरे तीन बार बोले (4) सूख जाये ऐसा परठे, स्थानक में आते निस्सही शब्द तीन बार बोले (5) आकर ईर्यावही का कायोत्सर्ग करे ।

		द्रव्य	क्षेत्र	काल	भाव
1	ईर्या समिति	छ जीव की यतना से चले	3½ हाथ भूमि देखते से चले	दिन में देखे, रात में पूंजकर	10 बोल वर्जकर चले
2	भाषा समिति	आठ प्रकार भाषा वर्ज बोले	मार्ग में चलते न बोले	प्रहर रात बाद जोर से न बोले	राग-द्वेष युक्त न बोले
3	एषणा समिति	42+96 दोष टाल भोगे	2 कोस उपरांत का न भोगे	प्रथम प्रहर का चौथे में न भोगे	5 मांडला दोष टाल भोगे
4	आदान. निक्षेपणा समिति	उपकरण यतना से ले रखे	बिखेरे नहीं व्यवस्थित रखे गृहस्थ के घर नहीं रखे	पहले चौथे प्रहर में प्रमार्जन करे	मूर्च्छा त्याग संयम साधन मर्यादा सहित रखे, भोगे
5	परिठ्ठावणिया समिति	10 बोल वर्ज परठे	गृहस्थ के घर न परठे	दिन में देखकर, रात्रि में पूंजकर परठे	विधि से परठे
6	मन गुप्ति	आरंभ-समारंभ में मन नहीं प्रवर्तावें	समस्त लोक प्रमाण	यावज्जीवन तक	विषय, कषाय, रागद्वेष मन में नहीं प्रवर्तावे
7	वचन गुप्ति	4 प्रकार की विकथा न करे	समस्त लोक प्रमाण	यावज्जीवन तक	सावद्य विषय राग द्वेष न बोले
8	काय गुप्ति	शरीर की सेवा सुश्रुषा न करे	समस्त लोक प्रमाण	यावज्जीवन तक	पापकारी कार्य न करे

40. लेश्या छह (उत्तराध्ययन अध्य. 34)

नामाईं वण्ण रस गंध फास परिणाम लक्खणं।
ठाणं ठिईं गईं चाऊं, लेसाण तु सणेह में।।2।।

छः लेश्या के द्वार-(1) नाम (2) वर्ण (3) रस (4) गंध (5) स्पर्श (6) परिणाम (7) लक्षण (8) स्थानक (9) स्थिति (10) गति (11) च्यवन द्वार ।

1	नाम द्वार वर्ण	कृष्ण लेश्या काला	नील लेश्या नीला	कापोत लेश्या लाल+काला	तेजो लेश्या लाल	पद्म लेश्या पीला	शुक्ल लेश्या सफेद
2	(उपमा)	(1) जल सहित मेघ (2) भैंस के सींग (3) अरीठ के बीज (4) गाड़ी का खंजन (5) आँख की कीकी, इससे अनंतगुण काला	(1) अशोक वृक्ष (2) चास पक्षी का पंख (3) वैडर्य रत्न इनसे भी अनंतगुण नीला वर्ण	(1) अलसी के फूल (2) कोयल का पंख (3) कबूतर की ग्रीवा कुछ लाल कुछ काली इनसे भी अधिक लाल काला वर्ण	(1) उगता सूर्य (2) तोते की चोंच (3) दीपक शिखा इनसे भी अनंतगुणा लाल	(1) हरताल (2) हल्दी (3) सण के फूल इनसे भी अनंतगुणा पीला	(1) शंख (2) अंक रत्न (3) मोगरे का फूल (4) गाय दूध (5) चाँदी का हार से भी अनंतगुणा सफेद
3	रस (उपमा)	कड़वा (1) तुम्बा (2) नीम रस (3) कडु आरोहिणी नाम वनस्प. रस से अनंतगुणा कड़वा रस	तीखा (1) सूंठ अदरक के (2) पीपला मूल आदि के रस से भी अनंतगुणा तीखा रस	कसैला रस (1) कच्ची केरी (2) कच्ची कबीट के रस से अनंतगुणा कसैला रस	खट्टा-मीठा (1) पके आम (2) पके अबीट का रस इससे भी खट्टा-मीठा	मीठा (1) शराब (2) शहद इससे भी अनंतगुणा अधिक मीठा रस	मीठा खजूर, दाख, दूध, शक्कर से भी अनंत गुणा मीठा
4	गंध	गाय, कुत्ता, सर्पादि के मृत कलेवर से भी अनंतगुणा अप्रशस्त गंध	कृष्ण लेश्यावत्	कृष्ण लेश्यावत्	कपूर चंदनादि घोटते समय सुगंध निकले उससे अनंतगुणा अधिक प्रशस्त	तेजो लेश्यावत्	तेजो लेश्यावत्
5	स्पर्श	करवत की धार, गाय की जीभ, बाँस के पान से भी अनंतगुणा तीक्ष्ण, कर्कश स्पर्श	कृष्ण लेश्यावत्	कृष्ण लेश्यावत्	बूर नामक वनस्पति के फूल, मक्खन, मखमल से भी अनंत कोमल स्पर्श	तेजो लेश्यावत्	तेजो लेश्यावत्
6	परिणाम	5 आश्रव के सेवन करने वाले,	ईर्ष्यावंत, तपरहित, मायावी,	वक्रभाषी, वक्रकार्य करने वाला	माया रहित, चपलता रहित	क्रोधादि 4 पतले किये	आर्त्त, रौद्रध्यान से सर्वथा

7	लक्षण	पाप करने में साहसिक, अजितेन्द्रिय ये लक्षण कृष्ण लेश्या	प्रमादी, रसलोलुपी, ये लक्षण	सामने कुछ पीछे कुछ कहने वाले	कुतुहल रहित, दृढ़धर्मी प्रियधर्मी, पापभीरू	अल्पभाषी, उपशांत जीतेन्द्रिय	रहित, धर्म-शुक्ल ध्यान सहित, 10 चित्त समाधि सहित, आत्म निग्रही
8	स्थिति (समुच्चय)	ज. अंत. मु., उत्कृष्ट 33 सागर अंत. मु. साधिक	ज.अंत. मु.. उत्कृष्ट 10 सागर पल्य का असं. भाग अधिक	ज.अंत. मु., उत्कृष्ट 3 सागर पल का असं. भाग अधिक	ज.अंत. मु., उत्कृष्ट 2 सागर पल का असं. भाग अधिक	ज.अंत मु., उत्कृष्ट 10 सागर अंतर्मु. अधिक	ज.अंत मु., उत्कृष्ट 33 सागरोपम अंत. मु. अधिक
9	गति	अप्रशस्त अधर्म लेश्या है, जीव दुर्गति में जाता है।	कृष्ण लेश्यावत्	कृष्ण लेश्यावत्	प्रशस्त धर्म लेश्या है जीव सुगति में जाता है	तेजो लेश्यावत्	तेजो लेश्यावत्
10	च्यवन द्वार	सभी लेश्या में च्यवन मरण हो सकता है	कृष्ण लेश्यावत्	कृष्ण लेश्यावत्	प्रशस्त व धर्म लेश्या जीव सुगति में जाता है	तेजो लेश्यावत्	तेजो लेश्यावत्

विशेष-परिणाम, स्थानक, च्यवन, गति द्वार आगे देखें।

विशेष-परिणाम द्वार-लेश्या तीन प्रकार से परिणमती है जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट।

जघन्य का जघन्य, जघन्य का मध्यम, जघन्य का उत्कृष्ट, मध्यम का जघन्य, मध्यम का मध्यम, मध्यम का उत्कृष्ट, उत्कृष्ट जघन्य, उत्कृष्ट का मध्यम, उत्कृष्ट का उत्कृष्ट। 9 के 27, 27 के 81, 81 के 243 भेद।

स्थानक द्वार-काल से असंख्यात उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी के जितने समय होते है, तथा क्षेत्र से असंख्यात लोक के जितने आकाश प्रदेश होते है, उतने छहों लेश्या के स्थान जानना।

च्यवन द्वार-(1) जीव ने जिस स्थान (गति) में जाने योग्य जिस लेश्या में आयु बंधा हो, मृत्यु के पूर्व, उस स्थान की लेश्या आ जाती है। (2) लेश्या के प्रारंभ काल या समाप्ति काल में जीव का च्यवन नहीं होता किन्तु लेश्या आने के अंतर्मुहूर्त हो जाने के बाद तथा लेश्या

समाप्त होने के अंतर्मुहूर्त शेष हो, तब जीव परभव में जाता है।

स्थिति-चार गति के जीवों में लेश्या की स्थिति-

क्र.	जीवों की लेश्या की स्थिति	लेश्या	जघन्य	उत्कृष्ट
1	समुच्चय जीव की स्थिति	कृष्ण की	अंतर्मुहूर्त	33 सागरोपम अंतर्मुहूर्त अधिक
		नील की	अंतर्मुहूर्त	10 सागर, पल का असं. भाग अधिक
		कापोत की	अंतर्मुहूर्त	3 सागर, पल का असं. भाग अधिक
		तेजो की	अंतर्मुहूर्त	2 सागर, पल का असं. भाग अधिक
		पद्म की	अंतर्मुहूर्त	10 सागर अंतर्मुहूर्त अधिक
		शुक्ल की	अंतर्मुहूर्त	33 सागर अंतर्मुहूर्त अधिक
2	नरक की	कोपात	10 हजार वर्ष	3 सागर पल का असं. भाग अधिक
		नील	3 सागर पल का असं. भाग अधिक	10 सागर पल का असं. भाग अधिक
		कृष्ण	10 सागर पल का असं. भाग अधिक	33 अंतर्मुहूर्त अधिक
3	मनुष्य तिर्यंच की	छहों लेश्या	अंतर्मुहूर्त	अंतर्मुहूर्त
		शुक्ल की	अंतर्मुहूर्त	देशोन क्रोड़ पूर्व
4	केवल भवनपति, व्यंतर आश्री	कृष्ण	10 हजार वर्ष	पल का असंख्यातवाँ भाग
		नील	कृष्ण की उत्कृष्ट स्थिति से 1 समय अधिक	पल का असंख्यातवाँ भाग
		कापोत	नील की उत्कृष्ट स्थिति से 1 समय अधिक	पल का असंख्यातवाँ भाग
5	भवनपति	तेजो	10 हजार वर्ष	1 सागर अधिक
	व्यंतर	तेजो	10 हजार वर्ष	1 पल्य
	ज्योतिषी	तेजो	पल्य का आठवाँ भाग	1 पल्य 1 लाख वर्ष
	वैमानिक	तेजो	1 पल्य	2 सागर अधिक
	वैमानिक	पद्म	2 सागर	10 सागर
	वैमानिक	शुक्ल	10 सागर	33 सागर

41. तेतीस बोल (उत्तराध्ययन अध्य. 31, आवश्यक सूत्र) (1) **एक प्रकार**-असंयम (2) **दो प्रकार**-राग, द्वेष

(3) **तीन प्रकार**-दंड तीन (मन वचन काय) गुप्ति तीन, तीन शल्य (माया, निदान, मिथ्यादर्शन), गर्व तीन (रिद्धि, रस, साता) विराधना तीन (ज्ञान, दर्शन, चारित्र)।

(4) **चार प्रकार**-कषाय चार, संज्ञा 4, कथा चार, ध्यान चार।

(5) **पाँच प्रकार**-क्रिया पाँच (कायिकी आदि), काम गुण पाँच (वर्णादि), महाव्रत पाँच, समिति पांच, प्रमाद पाँच।

(6) **छ प्रकार**-जीव निकाय छह, लेश्या छः

(7) **सात प्रकार**-भय सात (इहलोक, परलोक, आदान, अकस्मात्, आजीविका, मरण, अपयश भय)

(8) **आठ प्रकार**-मद 8 (जाति, कुल, बल, रूप, तप, श्रुत, लाभ, ऐश्वर्य)

(9) **नौ प्रकार**-ब्रह्मचर्य गुप्ति नौ

(10) **दस प्रकार**-श्रमण धर्म 10 (खंति, मुक्ति, आर्जव, मार्दव, लाघव, सच्चे, संजमे, तवे, चियावे, (अकिंचन) बंभचेर)

दस समाचारी (अवश्य की, निषेधिकी, आपुच्छना, प्रतिपुच्छना, छंदना, इच्छाकार, मिथ्याकार, तत्थाकार, अभ्युत्थान, उपसंपदा)

(11) **ग्यारह प्रकार**-श्रावक की 11 प्रतिमा (दर्शन, व्रत, सामायिक, पौषध, नियम, ब्रह्मचर्य, सचित त्याग, अनारंभ, प्रेष्यारंभ, उदिष्ट भक्त प्रतिमा, श्रमणभूत प्रतिमा)

(12) **बारह प्रकार**-भिक्षु की 12 प्रतिमा-(1) एक मास-1 दाती आहार 1 दातीपानी (2) दूसरी एक मास 2 दाती आहार, दो दाती पानी यों उसे तक क्रमशः एक-एक दाती आहार पानी बढ़ाना सातवीं में सात-सात दाती आहार पानी, आठवीं प्रतिमा-सात दिन रात एकांतर उपवास (पानी बिना चौविहार) नवमी प्रतिमा सात दिन रात ऊपर प्रमाण उपवास (एकांतर) एक आसन। 10वीं प्रतिमा सात दिन रात एकांतर एक आसन गोदुहासन, वीरासन, आम्र कुब्जासन। 11वीं प्रतिमा एक दिन रात चौविहार छठ्ठ भक्त करे, कायोत्सर्ग गाँव बाहर करे। 12वीं प्रतिमा एक दिन रात्रि छठम भक्त एक पुद्गल दृष्टि रखे, उपसर्ग आवे तो सहन करे। बारह प्रतिमा में आठ माह लगते हैं।

(13) **तेरह प्रकार**-क्रिया स्थानक 13-अर्थदंड, अनर्थदंड, हिंसा, अकस्मात्, दृष्टि-विपर्यास, मृषावाद, अदत्तादान, अभ्यस्थ, मान, मित्र दोष, माया, लोभ, ईर्यापथिक दंड (सयोगी वीतरागी को)

(14) **चौदह प्रकार** के जीव-एकेन्द्रिय के 4, विकलेन्द्रिय के 6, असन्नी पंचेन्द्रिय के 2, सन्नी पंचेन्द्रिय के दो ये चौदह।

(15) **पन्द्रह प्रकार** परमाधामी देव-अंब, अंबरीष, श्याम, सबल, रूद्र, महारूद्र, काल, महाकाल, असिपत्र, धनुष्य, कुंभ, वालु, वैतरणी, खरस्वर, महाघोष।

(16) **सोलह**-सूत्रकृतांग के प्रथम श्रुत स्कंध के 16 अध्ययन

(17) **सत्रह**-संयम के 17 प्रकार-पाँच एकेन्द्रिय, तीन विकलेन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, अजीव काय, प्रेक्षा, उत्प्रेक्षा, प्रमार्जना, परिठावणिया, मन, वचन, काय संयम।

(18) **अठारह प्रकार** ब्रह्मचर्य औदारिक शरीर संबंधी योग मन, वचन कायx3 करण=9 यो वैक्रिय शरीर का भी।

(19) **उन्नीस**-श्रीज्ञाता धर्मकथा सूत्र के उन्नीस अध्ययन

(20) **बीस**-असमाधि के 20 स्थान

(21) **इक्कीस प्रकार**-21 शबल दोष कर्म (22) प्रकार के परिषह (23) **तेवीस** प्रकार सूत्रकृतांग के अध्यय. (24) **चौबीस** प्रकार देव (10 भवनपति 8 व्यंतर, 5 ज्योतिषी 1 वैमानिक) (25) **पच्चीस** प्रकार के महाव्रत पाँच की पाँच-पाँच भावना।

(26) **छब्बीस प्रकार**-दशाश्रुत स्कंध के 10, वृहतकल्प के 6, व्यवहार सूत्र के 10 ये 26 अध्ययन।

(27) **सत्ताइस**-27 प्रकार के अणगार के गुण (5 महाव्रत, 5 इन्द्रिय, 4 कषाय, भाव, करण, योग सत्य, क्षमा, वैराग्य, मन, वचन, काय समाधारणीया, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, वेदनीय, मरण सहिष्णुता)

(28) **अठाइस**-28 आचार कल्प (मासकल्प, एक मास के बाद 5-5 दिन जोड़कर 5 माह तक 25 भेद उपघातिक, अनुपघातिकारोपण, कृत्स्न, अकृत्स्न ये 28 भेद)

(29) **उन्तीस**-पापसूत्र 29-भूमिकंप, उत्पात, स्वप्न, अंतरीक्ष, अंग, स्वर, व्यंजन, लक्षण ये 8 इनके मूल+टीका+वार्तिक (विस्तार) ये 24, विकथानुयोग, विद्यानुयोग, मंत्रानुयोग, योग-अनुयोग अन्य तीर्थिक प्रवृत्त अनुयोग ये 29 अन्य तीर्थिक द्वारा तथा हिंसा प्रधान आचार शास्त्र।

(30) **तीस प्रकार**-30 महामोहनीय कर्म

(31) **इकतीस प्रकार**-31 प्रकार के सिद्ध के गुण-आठ कर्म प्रकृति के 31 (5+9+2+2+4+2+2+5)

(32) **बत्तीस प्रकार**-योग संग्रह 32-आलोचना, निरपलाप, दृढ़धर्मता, अनिश्चितोपधान, शिक्षा, निष्प्रतिकर्मता, अज्ञातता, अलोभ, तितिक्षा, आर्जव, शुचि, सम्यगदृष्टि, समाधि, आचारोपगत, विनयोगपगत, धृतिमति, संवेग, प्रणिधि, सुविधि, संवर, आत्मदोषोपसंहार, सर्वकामविरक्तता, प्रत्याख्यान, (मूलगुण), प्रत्याख्यान (उत्तरगुण), व्युत्सर्ग, अप्रमाद, लवालव, ध्यानस्वरूप संवरण योग, मारणांतिक उदय, संगपरिज्ञात, प्रायश्चितकरण, मारणांतिक आराधना।

(33) **तेतीस प्रकार**-आशातना 33

42. साधु समाचारी (उत्तराध्ययन अध्य. 26) साधु समाचारी 10 प्रकार की है (1) आवस्सिय (2) निसिहिय (3) आपुच्छणा (4) पडिपुच्छणा (5) छंदणा (6) इच्छाकार (7) मिच्छाकार (8) तहक्कार (9) अब्भुट्ठणा (10) उपसंपया।

दिनकृत्य-सूर्योदय पूर्व पडिलेहणा, वैयावच्च, स्वाध्याय दूसरे में ध्यान, स्वाध्याय चिंतन, तीसरे में गोचरी, चौथे में स्वाध्याय, पडिलेहणा, देवसी प्रतिक्रमण।

रात्रि कृत्य-प्रतिक्रमण बाद असज्जाय टाल स्वाध्याय, दूसरे पहर में ध्यान, स्वाध्याय चिंतन बाद निद्रा आवे तो सविधि यत्नापूर्वक संथारा संस्तारकर निद्रा ले, चौथे प्रहर में उठना, निद्रा दोष टालने कायोत्सर्ग करना, पौन प्रहर स्वाध्याय, अंतिम भाग में राइसी प्रतिक्रमण, पच्चक्खाण।

43. दिन रात की घड़ियों का यंत्र (उत्तरा. अध्य. 26)

7 श्वासोच्छवास का 1 थोक, सात थोक 1 लव, 38½ लव की 1 घड़ी (24 मिनट)। प्रतिदिन 2½ लव और 2½ थोक घटत बढ़त दिन की होती है-यंत्र इस प्रकार

मास		**दिवस की घड़ियाँ**				**रात्रिकालीन घड़ियाँ**		
	बुद सातम	बुद अमावस	सुद सातम	पूर्णिमा	बुद सातम	अमावस	सुद सातम	पूर्णिमा को
आसाढ़	34½	35	35½	36	25½	25	24½	24
श्रावण	35½	35	34½	34	24½	25	25½	26
भाद्रपद	33½	33	32½	32	26½	27	27½	28
आसोज	31½	31	30½	30	28½	29	29½	30
कार्तिक	29½	29	28½	28	30½	31	31½	32
मार्गशीर्ष	27½	27	26½	26	32½	33	33½	34
पोष	25½	25	24½	24	34½	35	35½	36
माघ	24½	25	25½	26	35½	35	34½	34
फाल्गुन	26½	27	27½	28	33½	33	32½	32
चैत्र	28½	29	29½	30	31½	31	30½	30
वैसाख	30½	31	31½	32	29½	29	28½	28
ज्येष्ठ	32½	33	33½	34	27½	27	26½	26

44. दिन प्रहर माप यंत्र (उत्तरा. अध्य. 26) दिन के प्रथम दो प्रहर में माप उत्तर तरफ तथा अंतिम दो प्रहर का माप दक्षिण तरफ मुँह करके लेना। दाहिने (जीमना) पाँव का घुटने तक छाया पड़े तो अपने कदम और अंगुली से नापना, इस प्रकार पोरसी पौन पोरसी का माप (पगला अंगुली) से पगला अंगुली (प अं) बताने वाला यंत्र-

मास		दिवस की घड़ियाँ				रात्रिकालीन घड़ियाँ		
	बुद सातम प.अं.	बुद अमावस प.अं.	सुद सातम प.अं.	पूर्णिमा प.अं.	बुद सातम	अमावस	सुद सातम	पूर्णिमा को
आसाढ़	2-3	2-2	2-1	2-0	2-9	2-8	2-7	2-6
श्रावण	2-1	2-2	2-3	2-4	2-7	2-8	2-9	2-10
भाद्रपद	2-5	2-6	2-7	2-8	3-1	3-2	3-3	3-4
आसोज	2-9	2-10	2-11	3-0	3-5	3-6	3-7	3-8
कार्तिक	3-1	3-2	3-3	3-4	3-9	3-10	3-11	4-0
मार्गशीर्ष	3-5	3-6	3-7	3-8	4-3	4-4	4-5	4-6
पोष	3-9	3-10	3-11	4-0	4-7	4-8	4-9	4-10
माघ	3-11	3-10	3-9	3-8	4-9	4-8	4-7	4-6
फाल्गुन	3-7	3-6	3-5	3-4	4-3	4-2	4-1	4-0
चैत्र	3-3	3-2	3-1	3-0	3-11	3-10	3-9	3-8
वैसाख	2-11	2-10	2-9	2-8	3-7	3-6	3-5	3-4
ज्येष्ठ	2-7	2-6	2-5	2-4	3-1	3-0	2-11	2-10

45. रात्रि प्रहर देखने की रीति (उत्तरा. अ. 26) जो-जो नक्षत्र संपूर्ण रात्रि पूर्ण करते हों, वे नक्षत्र रात्रि के चौथे प्रहर में आवे, उस वार पोरसी ऐसी जानना, रात्रि के चौथी पोरसी के अंतिम चौथे भाग (दो घड़ी) को प्रभात काल कहते हैं, सज्जाय से निवृत्त हो प्रतिक्रमण करे, नक्षत्र नीचे मुजब- **(अहोरात्रि = अ.रा.)**

श्रावण में-14 अ.रा. उत्तराषाढ़ा, 7 अ.रा. अभिजित, 8 अ.रा. श्रवण, 1 अ.रा. धनिष्ठा
भाद्रपद में-14 अ.रा. धनिष्ठा, 7 अ.रा. शतभिषा, 8 अ.रा. पूर्वाभाद्रपद, 1 अ.रा. उत्तरा भाद्रपद
आसोज में-14 अ.रा. उत्तरा भाद्रपद, 15 अ.रा. रेवती, 1 अ.रा. अश्विनी
कार्तिक में-14 अ.रा. अश्विनी, 15 अ.रा. भरणी, 1 अ.रा. कृतिका
मार्गशीर्ष में-14 अ.रा. कृतिका, 15 अ.रा. रोहिणी, 1 अ.रा. मृगसिर
पोष में-14 अ.रा. मृगसिर, 8 अ.रा. आर्द्रा, 7 अ.रा. पुनर्वसु, 1 अ.रा. पुष्य,
माह में-14 अ.रा. पुष्य, 15 अ.रा. अश्र्लेषा, 1 अ.रा. मघा
फाल्गुन में-14 अ.रा. मघा, 15 अ.रा. पूर्वा फाल्गुनी, 1 अ.रा. उत्तरा फाल्गुनी
चैत्र में- 14 अ.रा. उत्तरा फाल्गुनी, 15 अ.रा. हस्त, 1 अ.रा. चित्रा
बैसाख में-14 अ.रा. चित्रा, 15 अ.रा. स्वाति, 1 अ.रा. विसाखा
ज्येष्ठ में-14 अ.रा. विशाखा, 15 अ.रा. अनुराधा, 1 अ.रा. ज्येष्ठा
आसाढ़ में-14 अ.रा. ज्येष्ठा, 15 अ.रा. मूल, 1 अ.रा. पूर्वाषाढ़ा

अंतिम एक-एक अहोरात्रि लिखा वह नक्षत्र पूर्णिमा को होता है, वह महीने का अंतिम दिन समझें यह महीना बुद (कृष्ण पक्ष) एकम से शुरू होता है।

46. सम्यक् पराक्रम के 73 बोल (उत्तरा. अध्य. 29) (1) संवेग (2) निर्वेद (3) धर्मश्रद्धा (4) गुरु आदि की सेवा भक्ति (5) आलोचना (6) आत्म निंदा (7) आत्म गर्हा (8) सामायिक (9) चतुर्विंशतिस्तव (10) वंदना (11) प्रतिक्रमण (12) काउस्सग (13) पच्चक्खाण (14) नमोत्थुणं स्तव स्तुति मंगल (15) काल प्रतिलेखना (16) प्रायश्चितकरण (17) क्षमापना (18) स्वाध्याय (19) वांचना (20) पृच्छना (21) परियटना (22) अनुप्रेक्षा (23) धर्मकथा (24) श्रुताराधना (25) मन एकाग्रता (26) संयम (27) तप (28) व्यवदान (29) सुख शाता (30) अप्रतिबद्धता (31) विविक्त शयनासन (32) विनिवर्तना (33) संभोग पच्चक्खाण (34) उपधि पच्चक्खाण (35) आहार पच्चक्खाण (36) कषाय पच्चक्खाण (37) जोग पच्चक्खाण (38) शरीर पच्चक्खाण (39) सहाय पच्चक्खाण (40) भत्त पच्चक्खाण (41) सद्भाव पच्चक्खाण (42) प्रतिरूपता (43) वैयावच्च (44) सर्वगुण संपन्न (45) वीतरागता (46) खंति (47) मुत्ति (48) आर्जवता (49) मृदुता (50) भाव सत्य (51) करण सत्य (52) योग सत्य (53-55) मन वचन काय गुप्ति (56-58) मन वचन काय समाधारणिया (59-61) ज्ञान, दर्शन चारित्र संपन्नता (62-66) पाँच इन्द्रिय निग्रह (67-70) कषाय विजय (71) राग, द्वेष मिथ्यात्व जीते (72) तीनों योग निरोध कर शैलेषी अवस्था धारण करे (73) कर्मरहित होकर मोक्ष पहुँचे। यों आत्मा 73 बोल करके, क्रमशः मोक्ष पहुँचकर शीतल भूत होती है।

47. बावन आनाचार (दशवैकालिक अध्य. 3) (1) मुनि के लिये बनाये आहार, वस्त्र, मकान भोगे (2) मुनि के लिए खरीदे उपरोक्त ले (3) हमेशा एक घर का आहार (4) सामने लाया आहार ले (5) रात्रि भोजन (6) देश या सर्व स्नान (7) सचित अचित सुगंध (8) फूलमाला पहने (9) पंखाआदि से हवा (10) तेल, घी का आहार संग्रह (11) गृहस्थ के बरतन में भोजन (12) राज पिंड ले (13) दानशाला से ले (14) बिना कारण शरीर मर्दन करावे (15) दाँत धोवन (16) गृहस्थों की खुशामत करे साता पूछे (17) दर्पण निरखे (18) चोपाट, शतरंग जुआ सट्टा खेले (19) छत्री रखे (20) सावद्य इलाज करावे (21) पगरखा मोजा पहने

(22) अग्निकाय आरंभ, ताप ले (23) शय्यातर से गोचरी (24) गृहस्थों के पलंग] गादी तकिया पर बैठे (25) गृहस्थों के पलंग खाट पर बैठे (26) बिना कारण गृहस्थ के यहाँ बैठ कथादि करे (27) बिना कारण शरीर पीठी तेल मालिश करे (28) गृहस्थ की वैयावच्च करे (29) स्वयं की जाति कुल बता आजीविका करे (30) पूर्ण पका न हो वैसा अन्न जल ले (31) रोगादि में गृहस्थों की सहायता ले (32) सचित मूला, हरी वनस्पति (33) स. अदरक (34) गन्ना (35) कंद (36) मूल (37) फल-फूल (38) बीज आदि ले (39) सचित नमक (40) सेंधव नमक (41) सांभर नमक (42) धूल खारा नमक (43) समुद्र का नमक (44) काला नमक (संचल) ले भोगे (45) वस्त्रों को धूप आदि से सुगंधित बनावे (इत्रादि से) (46) भोजन कर वमन करे (47) बिना कारण एनीमा ले (48) बिना कारण जुलाब ले (49) आँख में काजल सुरमा अकारण लगावे (50) अकारण मंजन कर दाँत साफ करे (51) शरीर पर तेल आदि लगा सुंदर बनाये (52) शरीर सुश्रुषा के लिए बाल, नख उतारे तो अनाचार लगे। ये 52 अनाचार टालकर साधु सदा निर्मल चारित्र पाले।

48. पाँच ज्ञान (नंदीसूत्र, भगवती) ज्ञेय, ज्ञान, ज्ञानी तीन शब्द है। ज्ञेय-जानने योग्य पदार्थ। ज्ञान-जीव का लक्षण, उपयोग, जाणपणा का गुण, जिसके द्वारा ज्ञेय को जाना जाय। ज्ञानी-जो ज्ञान (जाने) जानने वाला जीव, असंख्यात प्रदेशी आत्मा। ज्ञान-जिससे वस्तु को जाने, जिस कारण से वस्तु (पदार्थ) को जाना जाय, वस्तु का जानना ज्ञान है।

ज्ञान के पाँच भेद-मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान, केवलज्ञान। अन्य प्रकार से ज्ञान दो प्रकार-प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष। प्रत्यक्ष दो प्रकार-इन्द्रिय, नो इन्द्रिय प्रत्यक्ष इन्द्रिय प्रत्यक्ष-पाँच इन्द्रिय द्वारा। नो इन्द्रिय प्रत्यक्ष-अवधि, मनःपर्यव, केवलज्ञान। परोक्ष ज्ञान-दो प्रकार मतिज्ञान, श्रुतज्ञान। सम्यग्दृष्टि को होने वाला सामान्य विशेष ज्ञान-मतिज्ञान, श्रुतज्ञान और मिथ्यादृष्टि को होने वाला यही अज्ञान कहलाता है।

1. **मतिज्ञान**-द्रव्य इन्द्रिय और द्रव्य मन से होने वाला मति ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से नियत रूप से रूपी अरूपी द्रव्यों को जानता है, आभिनिबोधिक (मतिज्ञान) कहते है। मतिज्ञान के 360 भेद होते है। मतिज्ञान के दो भेद-श्रुत निश्रित, अश्रुत निश्रित। श्रुतनिश्रित-(1) जिस मतिज्ञान का श्रुतज्ञान से संबंध हो (2) मतिज्ञान में सीखा श्रुतज्ञान काम आता है (3) मतिज्ञान पर पहले सीखे श्रुतज्ञान का प्रभाव हो, उसे

श्रुत निश्रित मतिज्ञान कहते है। 4 प्रकार है, अवग्रह, इहा, अवाय, धारणा। **अवग्रह**-इन्द्रियों का और विषयों का संबंध होना। **ईहा**-तर्कपूर्वक विचारना। **अवाय**-चिंतन पर निर्णय करना। **धारणा**-ज्ञान में धारण करना, चिरकाल तक रहे, स्मृति धारणा है। **अवग्रहादि**-अवग्रह के दो भेद-अर्थावग्रह, व्यंजनावग्रह। अर्थावग्रह इन्द्रियों और मन इन छ से होता है, **व्यंजनावग्रह**- चार इंद्रियों श्रोत्र, घ्राण, रसन, स्पर्शन से होता है। यों अवग्रह 10 से होता है और ईहा अवाय और धारणा व्यंजनावग्रह की तरह चार इन्द्रियों से होता है। यों 10+6+6+6=28 भेद हुए, इन्हें बहु, अबहु, बहुविध, अबहुविध, क्षिप्र, अक्षिप्र, निश्रित, अनिश्रित, संदिग्ध, असंदिग्ध, ध्रुव, अध्रुव, इन 12 से गुणा करने से 28x12=336 भेद होते हैं।

अश्रुत निश्रित मतिज्ञान-श्रुतज्ञान से संबंध न हो, सीखा श्रुतज्ञान के काम न आवे, मतिज्ञान पर पहले सीखे श्रुतज्ञान का असर न हो, वह अश्रुत निश्रित इसका दूसरा नाम बुद्धि है, 4 प्रकार है।

औत्पत्तिकी बुद्धि-पहले देखे सुने बिना, सोचे बिना, सहसा ग्रहण कर कार्यसिद्ध करे वह औत्पात्ति की है।

वैनेयिकी बुद्धि-वंदनीय पुरुषों के प्रति विनय, वैयावच्च आदि से क्षयोपशम होकर जो बुद्धि उत्पन्न हो।

कार्मिकी बुद्धि- शिल्पादि का निरंतर अभ्यास से ज्ञानावरण क्षयोपशम से बुद्धि उत्पन्न हो।

पारिणामिकी बुद्धि-दीर्घकालीन पर्यालोचन ज्ञानादि से क्षयोपशम से बुद्धि उत्पन्न हो। ये 336+4 अश्रुत के कुल 340 भेद तथा एगठिया आदि 20 मिलाने से 360 भेद हुए। अवग्रह का काल-एक समय से असंख्यात समय, ईहा का अंतर्मुहूर्त, अवाय का अंतर्मुहूर्त, धारणा का संख्याता असंख्याता वर्ष है। द्रव्य, क्षेत्र काल भाव से समुच्चय चार प्रकार है।

	अवग्रह	ईहा	अवाय	धारणा
श्रोत्रे. इन्द्रिय	कुछ शब्द सुनाई दिया	शंख का नहीं, धनुष का है	शंख का है, धनुष का नहीं	शंख शब्द ज्ञान धारण
चक्षु.	कुछ रूप दिखाई दिया	ठूंठ होना चाहिए पुरुष नहीं	ठूंठ है पुरुष नहीं	ठूंठ रूप का ज्ञान धारण करे
घ्राणे.	कुछ गंध सूंघने में आई	कस्तूरी की होगी, केसर नहीं	कस्तूरी की है	कस्तूरी गंध ज्ञान धारण
रसने.	कुछ रसास्वाद आया	ईख का होगा, गुड़ का नहीं	ईख का ही है,	ईख रस ज्ञान धारण करना
स्पर्शे.	कुछ स्पर्श हुआ	रस्सी का होगा, सर्प का नहीं	रस्सी का ही है	कोमल रस्सी का ज्ञान धारण
नो. इन्द्रि.	कोई स्वप्न देखा, चिंतन किया	उगते सूर्य का स्व. देखने पर उदय होते हुए	उदित सूर्य का स्वप्न देख कर यह उदय	उदय सूर्य का ज्ञान धारण कर ज्ञानधारा चलाना
काल	दोनों अवग्रह ज.1 समय उ.अं.मु.	अंतर्मुहूर्त	अंतर्मुहूर्त	संख्य असंख्य काल तक ज्ञानधारा चलना

2. श्रुतज्ञान- द्रव्य इन्द्रिय और द्रव्य मन से तथा श्रुत ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से शब्द अर्थ को जानते हैं, वह श्रुतज्ञान है। गुरू से शब्द सुनने या ग्रंथ पढ़ने से, पढ़ सुन उसमें उपयोग लगाने से जो ज्ञान होता है, वह श्रुत ज्ञान है, इसमें **श्रुत** श्रवण, सुनना मुख्य है।

श्रुतज्ञान के 14 भेद-(1) अक्षरश्रुत-शब्द श्रुत के दो भेद अक्षरश्रुत, अनक्षरश्रुत। अक्षरश्रुत के तीन भेद-संज्ञा अक्षर-''अ'' ''क'' आदि शब्द, व्यंजनाक्षर घट पट आदि लब्धि अक्षर-ग्रहण कर स्मरण कर शब्द अर्थ दोनों जानना यह छ प्रकार का होता है, पाँच इन्द्रिय और मन। इन छ से अपने विषयों से जानना मन से स्वप्न देख सूर्य जानना आदि।

(2) अनक्षरश्रुत-इसके भी अनेक भेद कहे है, छींक, उबासी, उच्छवास, निःश्वास आदि अनेक प्रकार के अनक्षरश्रुत।

(3-4) संज्ञी-असंज्ञी श्रुत-इन दोनों के तीन-तीन भेद

इन्द्रियादि	कालिकोपदेश	हेतुपदेश	दृष्टिवादोपदेश
असंज्ञी	मन बिना एके. से पंचे. तक	एकेन्द्रिय मात्र	मिथ्यात्वी एके. से पंचे. तक
संज्ञी	मन वाले पंचेन्द्रिय	बेइन्द्रियादि त्रस भी	समदृष्टि पंचेन्द्रिय संज्ञी
लक्षण	मन से दीर्घकाल तक जाने संज्ञी, अन्य असंज्ञी	अभिकंत पडिकंत हो त्रस, संज्ञी न हो असंज्ञी	समदृष्टि से मोक्ष जाने तक संज्ञी अन्य असंज्ञी
काल	तीन काल	वर्तमान काल	मोक्ष तक लंबा काल

(5) सम्यक् श्रुत-अरिहंत, तीर्थंकर केवली 12 गुण सहित, 18 दोष रहित 34 अतिशय प्रमुख अनंत गुण धारक द्वारा प्ररूपित 12 अंग सूत्र (आचारांग से दृष्टिवाद), देशोन दश पूर्वी से 14 पूर्वी द्वारा प्रकाशित श्रुत सम्यक् श्रुत है।

(6) मिथ्याश्रुत-उपर्युक्त गुण रहित, राग द्वेष सहित पुरुषों द्वारा कल्पना आदि मान्यताओं से रचित शास्त्र रामायण, महाभारत आदि 29 जाति के पापशास्त्र प्रमुख है।

(7-10) सादि, अनादि, सपर्यवसित, अपर्यवसित श्रुत-सादि सपर्यवसित-12 अंग व्यवच्छेद आश्रित, अनादि अपर्यवसित 12 अंग व्यवच्छेद न होने पर जिसकी आदि भी नहीं, व्यवच्छेद भी नहीं

द्रव्यादि से	सादि, सपर्यवसित	अनादि-अपर्यवसित
1 द्रव्य से	एक पुरुष की आश्रित आदि भी अंत भी	अनेक पुरुष आश्रित आदि भी अंत भी नहीं
2 क्षेत्र से	पाँच भरत, पाँच ऐरवत आश्रित आदि भी अंत भी	पाँच महाविदेह आश्रित आदि भी अंत भी नहीं
3 काल से	उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी आश्रित आदि भी अंत भी	नो उत्स. नो अव. आश्रित आदि भी नहीं अंत भी नहीं
4 भाव से	तीर्थंकर कथित भाव, भव्य की आश्रित आदि भी अंत भी	क्षयोपशम भाव आश्रित, अभव्य आश्रित आदि भी नहीं अंत भी नहीं

(11-14) गमिक श्रुत-12वाँ अंगदृष्टिवाद **अगमिक**-11 अंग आचारांग प्रमुख कालिक श्रुत, उत्कालिक श्रुत **अंग प्रविष्ट**-12 अंगसूत्र आचारांग से दृष्टिवाद तक **अनंग प्रविष्ट**-दो प्रकार है आवश्यक (6 आवश्यक) आवश्यक व्यतिरिक्त 2 भेद कालिक, उत्कालिक (उत्तराध्ययनादि कालिक, दशवैकालिक आदि उत्कालिक)। द्रव्य क्षेत्र काल भाव से श्रुतज्ञान 4 प्रकार का है।

3 अवधिज्ञान-द्रव्य इन्द्रियां तथा द्रव्य मन के बिना ही अवधि ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से आत्मा द्वारा रूपी पुद्‌गलों को जानना अवधिज्ञान है। अवधिज्ञान दो प्रकार का है।

भव प्रत्यय अवधिज्ञान-नारकी और देवों को जन्म से भव के अंत तक होता है।

क्षयोपशमिक अवधिज्ञान-यह संज्ञी तिर्यंच पंचेन्द्रिय को तथा संज्ञी मनुष्यों को होता है। क्षयोपशमिक (गुण प्रत्यय) छः प्रकार का है-

1 अनुगमिक-जहाँ जाये वहाँ साथ जाता है इसके दो प्रकार-**अन्तःगत**-इसके तीन प्रकार है-**पुरतःअन्तगत**- शरीर के आगे भाग में जाने देखे, **मग्गओ**-पीछे के भाग के रूपी पदार्थ जाने देखे **पासओ**-दक्षिण या वाम पार्श्व की एक दिशा के रूपी पदार्थ जाने देखे। दूसरा मध्यगत सभी चारों दिशा विदिशा के सभी रूपी पदार्थों को जाने देखे।

2 अनानुगमिक अवधिज्ञान-जहाँ अवधिज्ञान उत्पन्न हुआ वहीं देखे, अन्यत्र जाय तो न देखे। उसी स्थान से चारों दिशा में देखे, परंतु अन्यत्र जाने पर न देखे न जाने।

3 वर्द्धमान अवधिज्ञान-प्रशस्त लेश्या के अध्यवसाय से अव्रती समदृष्टि, श्रावक, साधु के अवधिज्ञान की वृद्धि होती है। जैसे उत्तरोत्तर अध्यवसाय रूप ईंधन तेल वायु के कारण ज्ञान रूप पर्यायें पूर्वकाल की अपेक्षा उत्तरोत्तर वृद्धि पाती है। जघन्य सूक्ष्म निगोद जीव तीन समय में शरीर अवगाहना क्षेत्र आदि बांधे वह जाने, उत्कृष्ट सर्व अग्नि के जीव सूक्ष्म बादर पर्याप्त अपर्याप्त एक एक आकाश प्रदेश, अलोक में लोक जितना असंख्याता खंड भरे उतना क्षेत्र सर्व दिशा, विदिशा से देखे, अनेक भेद है-द्रव्य, क्षेत्र काल भाव। काल से जानना बढ़े, शेष तीन का भी बढ़े क्षेत्र से जानपणा बढ़े तब काल की भजना द्रव्य से भाव से वृद्धि। द्रव्य बढ़े तो काल क्षेत्र की भजना भाव की वृद्धि। भाव से बढ़े तीन की भजना।

	क्षेत्र से वृद्धि	काल से वृद्धि
1-2	अंगुल का असंख्य भाग, संख्य भाग जानने वाला	आवलिका का असंख्य, संख्य भाग जानता है
3-4	1 अंगुल (भरत चक्र.), पृथक अंगुल जानने वाला	1 आवलिका न्यून, पूर्ण आवलिका जानता है
5-6	1 हाथ (24) अंगुल, 1 धनुष (96) जानने वाला	1 मुहूर्त न्यून, अनेक मुहूर्त, एक मुहूर्त से ऊपर जानता है
7-8	1 कोस (8 हजार हाथ) 1 योजन (4 कोस) जानने वाला	1 दिन के अंदर, 1 दिन के ऊपर जानता है
9-10	25 योजन जानने वाला, भरत क्षेत्र जानने वाला	1 पक्ष के अंदर, 1 पक्ष पूरा जानता है
11-12	जंबूद्वीप, मनुष्य लोक जानने वाला	1 मास अधिक, 1 वर्ष जानता है
13	रूचक (15वाँ) द्वीप जानने वाला	1 वर्ष से ऊपर (पृथकत्व) जानता है
14-15	संख्यात द्वीप समुद्र, असंख्यात द्वीप समुद्र जानने वाला	संख्यात काल, असंख्यात काल जानता है

काल आदि चार की वृद्धि हानि में नियमा/भजना-

किसमें	1 काल	2 क्षेत्र	3 द्रव्य	4 भाव (पर्यव)	नियमा
1 काल में	1 नियमा	2 नियमा	3 नियमा	4 नियमा	4 की वृद्धि
2 क्षेत्र में	भजना	1 नियमा	2 नियमा	3 नियमा	3 की वृद्धि
3 द्रव्य में	भजना	भजना	1 नियमा	2 नियमा	2 की वृद्धि
4 भाव में	भजना	भजना	भजना	1 नियमा	1 की वृद्धि
किस जैसा	100 की नोट	10 की नोट	1 रुपया	1 पैसा	

4 हीयमान अवधिज्ञान-अप्रशस्त लेश्या के परिणाम से अशुभ ध्यान से अविशुद्ध चारित्र से अवधिज्ञान की हानि होती है, वह हीयमान अवधिज्ञान है। लेश्या (तीन शुभ, तीन अशुभ) चारित्र (विशुद्ध वर्धमान, संक्लिष्ट हीयमान) अध्यवसाय (प्रशस्त शुभ,

अप्रशस्त अशुभ) कर्म (अवधि का क्षयोपशम, अवधि का आवरण) ये 4 अंतर वर्द्धमान और हीयमान में है।

5 प्रतिपाति अवधिज्ञान-जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग से लेकर उत्कृष्ट संपूर्ण लोक देखकर भी प्रतिपाति हो सकता है आया हुआ अवधिज्ञान जा सकता है। जैसे दीपक हवा के झोंके से बुझे इस प्रकार अंगुल के असंख्यातवें भाग से संपूर्ण लोक तक 39 स्थान से पतित होता है।

6 अप्रतिपाति अवधिज्ञान-आया अवधिज्ञान जाये नहीं, संपूर्ण 14 रज्जू लोक देखे, अलोक में भी एक आकाश प्रदेश मात्र क्षेत्र देखे जाने (शक्ति है असंख्यात लोक खंड अलोक में पर देखते नहीं) वहाँ रूपी पदार्थ होते तो देखते यह शक्ति है। यह ज्ञान तीर्थंकर (महापुरुषों को जन्म से होता है, केवलज्ञान के बाद अनुपयोगी हो जाता है)। अवधिज्ञान द्रव्य क्षेत्र काल भाव से 4 प्रकार है। देखने की शक्ति प्रज्ञापना पद 33 में देखे।

4 मनःपर्यवज्ञान-द्रव्य इन्द्रियाँ द्रव्य मन के बिना मनःपर्यव ज्ञानावरणीय कर्म के क्षयोपशम से। जिस ज्ञान के द्वारा मन की पर्यायें जानी जाये, वह मनः पर्यवज्ञान है। द्रव्यमन, भावमन यहाँ मन के चार भेद-**लब्धिमन**- मनःपर्याप्ति पूर्ण होने के बाद मनयोग में प्रवर्तने की शक्ति। **संज्ञामन**-मन से जीव को संज्ञी कहा जाता है। **वर्गणामन**-मनोद्रव्य का वर्गणा ग्रहण करने में आवे वे वर्गणा मन। **पर्यायमन** -मन वर्गणाओं को मनोयोग में प्रवर्ताना पर्याय मन।

चारों गति के जीवों में रहे जीवों के 4 प्रकार के संज्ञी मन होता है।

मनःपर्यवज्ञान की उपलब्धि-(1) मनुष्य को (तीन गति में नहीं) (2) गर्भज मनुष्य (सम्मुर्च्छिम नहीं) (3) कर्मभूमि के जन्मे को (अकर्मभूमि या अंतर्द्वीपज को नहीं) (4) संख्यात वर्षायु को (असंख्यात वर्ष को नहीं) (5) पर्याप्त को (अपर्याप्त को नहीं) (6) सम्यग् दृष्टि को (मिथ्यात्वी को नहीं) (7) संयत को (श्रावक, या असंयत को नहीं) (8) अप्रमत संयत को (प्रमत्त को नहीं) (9) ऋद्धि प्राप्त संयत को (अप्राप्त को नहीं) इन नौ को ही प्राप्त होता है। **प्रकार**-2 प्रकार है ऋजुमति (सामान्यपणे जाने) विपुलमति (विशेषपणे जाने) मनःपर्यवज्ञान। द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव से 4 प्रकार है।

5 केवलज्ञान-द्रव्य आत्मा से संपूर्ण सर्व द्रव्य, क्षेत्र काल भाव को जाने। ज्ञानावरणीय कर्म मल के सर्वथा क्षय से उत्पन्न हो। जिसके होने पर कोई अन्य ज्ञान सहायक न हो।

केवल यानि एक जो ज्ञान भेद रहित हो, केवलज्ञान है, अन्य अधूरे ज्ञान न रहे, संपूर्ण, शुद्ध, असहाय, एक ज्ञान है।

केवलज्ञान के भेद-दो भेद है **भवस्थ केवलज्ञान**-इसके दो भेद-सयोगी केवली, अयोगी केवली इनके 4-4 भेद प्रथम समय, अप्रथम समय, चरम समय, अचरम समय।

सिद्धकेवलज्ञान-इसमें दो भेद अनंतर सिद्ध-इसमें सिद्धों के 15 भेद (तीर्थ सिद्धा से अनेक सिद्धा) तथा परम्पर सिद्ध (अप्रथम समय सिद्ध) में अप्रथम समय से दो से दस समय संख्य, असंख्य, अंनत समय सिद्ध यो अनेक भेद हैं। द्रव्य क्षेत्र काल भाव से 4 प्रकार का है।

पाँचों ज्ञान द्रव्य क्षेत्र काल भाव से-

	ज्ञान	द्रव्य से	क्षेत्र से	काल से	भाव से
1	मतिज्ञान	आदेश से सर्व द्रव्यों को जानते है, देखते नहीं	आदेश से सभी क्षेत्रों को जानते है, देखते नहीं	आदेश से समस्त कालों को जानते है, देखते नहीं	आदेश से सभी भावों को जानते है, देखते नहीं
2	श्रुतज्ञान	उपयोग से सभी द्रव्यों को जानते देखते है, प्रत्यक्ष देख रहे हो, ऐसे देखते है	उपयोग से सभी क्षेत्रों को जानते देखते है	उपयोग से समस्त कालों को जानते देखते है।	उपयोग से सभी पर्यायों को जानते देखते है
3	अवधिज्ञान	जघन्य-अनंत रूपी द्रव्यों को जानते देखते, उत्कृष्ट सभी रूपी द्रव्यों को जानते देखते	जघन्य-अंगुल के असं. भाग जानते देखते है, उत्कृष्ट संपूर्ण लोक देखे, अलोक में लोक जितने असंख्य खंड जाने देखे	जघन्य-आवलिका का असं. भाग जानते देखते, उत्कृष्ट असं. उत्स. अव. बीती या बीतने वाली जानते देखते है	जघन्य-अनंत भावों को जाने देखे, उत्कृष्ट भी अनंत भावों को जानते देखते
4	मनःपर्यव ज्ञान ऋजुमति	जघन्य उत्कृष्ट अनंत-अनंतप्रदेशी स्कंध को जानते-देखते है	ऋजु. जघन्य अंगु. के असं. भाग/उत्कृष्ट नीचे रत्नप्रभा के प्रथम कांड के क्षुल्लक प्रतर उनके निचले तल तक/ऊपर ज्योतिषी के ऊपरी तल तक, तिर्च्छे. अढ़ाई द्वीप दो समुद्र में संज्ञी (101) पंचे. पर्याप्त के मनोगत भाव को जानते, देखते है।	जघन्य उत्कृष्ट-भी पल्योपम का असं. भाग बीता हुआ, बीतने वाला जानते देखते है	जघन्य उत्कृष्ट अनंत भावों को जानते देखते, सर्वभावों के अनंतवें भाग को जानते, देखते है

	विपुलमति	ऋजुमति जितना जाने देखे उससे अधिकतर, विपुलतर, विशुद्धतर, वितिमितर जाने देखे	अढ़ाई अंगुल तथा विपुल देखता है, जाने	उपरोक्त को अधिकतर, विशुद्धतर, विपुलतर, वितिमितर जानते देखते है	उसी को अधिकतर, विपुलतर, विशुद्धतर, वितिमितर जानते देखते है
	केवलज्ञान	सभी द्रव्यों को जानते देखते है	सभी क्षेत्रों के लोक-अलोक को जानते देखते है	सभी कालों को लोक-अलोक को जानते देखते है	सभी भावों को औदयिक आदि भावों को जानते देखते है

विशेष-आदेश-जाति स्मरणादि या प्रवचन श्रवण, शास्त्र पठन से मतिज्ञानी जानते है, देखते नहीं। उपयोग से उत्कृष्ट श्रुतज्ञानी उपयोग लगाने पर जानते है, मानों प्रत्यक्ष देख रहे हों, उत्कृष्ट श्रुतज्ञानी विशेष भी जानते देखते है।

49. श्रोता अधिकार (नंदीसूत्र)

सेलघण कुडग चालणी, परिपुण्णग हंसमहिष मेसेय।
मसग जलूग विराली, जाहग गो भेरि आभीरी।।1।।

शास्त्र में श्रोता के 14 प्रकार बताये है-इस प्रकार

	प्रकार	विशेषताएँ
1	सेलघण	पत्थर पर मेघ बरसे, भींजे नहीं कुशिष्यवत्
2	कुडग	कुंभ (घड़ा) वत् पानी सभी को शीतलता दे, प्यास बुझाये, कुछ पढ़े, कुछ भूले, गर्वादि करे
3	चालणी	पानी से भरे जरूर, परंतु उठाते ही खाली, आटा छाणे तो कचरा रखे छोड़ने योग्य
4	परिपुणग	सुधरी पक्षी के घोंसलेवत्, घी रखो तो घी निकल जाये, कचरा संग्रह करे, छोड़ने योग्य
5	हंस	दूध पानी में से चोंच में खटाश के कारण दूध पीवे, पानी छोड़े गुण ग्रहण, अवगुण छोड़े आदरणीय है
6	महिष	भेंसा पानी पीने जाय, वह मस्तक हिलाकर पानी गंदा करे, न स्वयं पीवे, न पीने दे न सुने न सुनने दे
7	मेष	बकरा पानी पीने जाय, पाँव नमाकर पानी पीवे गंदा नहीं करे, सुने सुनने दे आदरणीय है
8	मशक	(1) चमड़े की हवा भरी हो प्यास न बुझे (2) मच्छर काटे ऐसा गर्वादि करे छोड़ने योग्य
9	जलुग	जोंक गाय के स्तन पर लगे दूध नहीं खून पीवे (2) जलाजंतु घूमड़े पर रखे तो शांति उपजावे, पहला खराब दूसरा आदरणीय है।
10	बिराली	बिल्ली छींके से दूध पात्र गिराकर चाटकर पीवे, अविनय करे धारे नहीं छोड़ने योग्य
11	जाहग	सेवला (साँप का दुश्मन) माता का दूध थोड़ा पचा पचा कर पीवे, फिर सांप को मारे, पाठ पढ़े याद रखे मान (मिथ्यात्वी का) मर्दन करे आदरणीय है। (काँटे वाला जानवर सेंहला-सेवला)
12	गो	(1) गाय (दूजनी) पड़ौसी को देकर जाय दूहे पर घास चारा नहीं डाले। गाय सूख जाय अपयश हो सूत्रादि अभ्यास नहीं (2) पड़ौसी खूब खिलाये पिलाये हष्ट-पुष्ट हो कीर्ति बढ़े आदरणीय है।
13	भेरी	ढोल बजाये राजाज्ञा से उसे इनाम मिले, वह आदरणीय, राजाज्ञा न माने स्वाध्याय नहीं करे अयोग्य सिद्ध गति नहीं मिले छोड़ने योग्य।
14	आभीरी	घी बेचने स्त्री पुरुष गये बर्तन फूट गया घी बिखरा लड़ने लगे, बहुत घी खराब हो गया, कुछ बचा, बेचा पैसा लिया, रास्ते में चोरों ने लूट लिया। (2) घी बेचने गये बर्तन फूट गया तुरंत वापस पोंछकर लिया थोड़ा नुकसान हुआ विपुल धन भी मिला। दूसरा विनीत, पढ़े सुने आदरे संयम ज्ञान आराधना कर मोक्ष जाये श्रोता आदरणीय है।

50. संख्यादि 21 बोल, डाला पाला (श्री अनुयोग द्वार-प्रमाण पद) संख्या के 21 बोल है-संख्याता के तीन-जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट संख्याता
असंख्याता के 9-1 से 3 जघन्य मध्यम उत्कृष्ट परित्त असंख्याता 4 से 6 जघन्य मध्यम उत्कृष्ट युक्त असंख्याता, 7 से 9 जघन्य मध्यम उत्कृष्ट असंख्याता असंख्यात। अनंत के 9 भेद-जघन्य मध्यम उत्कृष्ट परित्तानंत 4 से 6 जघन्य मध्यम उत्कृष्ट युक्त अनंत 7, से 9 जघन्य मध्यम उत्कृष्ट अनंतानंत (कहीं 8 ही मानते हैं, उत्कृष्ट नहीं माना है)

संख्यात जघन्य संख्यात में दो अंक, मध्यम में सभी गणना योग्य संख्याएं है यानि शीर्ष पहेलिका तक संख्या तथा आगे असत् कल्पना से उपमा से बताई जाने वाली संख्या भी मध्यम संख्यात है, जब तक उत्कृष्ट संख्यात की संख्या न आवे तब तक मध्यम संख्यात है उत्कृष्ट संख्यात की उपमा इस प्रकार है-

उत्कृष्ट संख्याता-उत्कृष्ट संख्याता को 4 पल्य की कल्पना करके समझाया जाता है (1) अनवस्थित पल्य (2) शलाका पल्य (3) प्रतिशलाका पल्य (4) महाशलाका पल्य। चारों पल्य की लंबाई चौड़ाई जंबूद्वीप प्रमाण होती है, 1 लाख योजन लंबा-चौड़ा (3,16,227 यो. साधिक परिधि वाला) 1008½ योजन ऊँचा (1000 यो. गहरा, 8 योजन जगति कोट, ½ यो. वेदिका) होता है। तीन पल्य स्थित रहते हैं, अनवस्थित (पहला) पल्य की लंबाई चौड़ाई बदलती है, ऊँचाई वही रहती है।

शलाका पल्य भरना-अनवस्थित पल्य में सरसों के दाने शिखा पर्यंत भरकर, एक-एक दाना एक-एक द्वीप-समुद्र में डाले, जहाँ खाली हो वहाँ, उस द्वीप समुद्र जितना लंबा चौड़ा अनवस्थित पल्य बनावे (ऊँचाई वहीं रहेगी) और उसे भरकर आगे के द्वीप समुद्रों में एक-एक दाना डाले, खाली होने पर उस द्वीप समुद्र के बराबर अनवस्थित पल्य बनाना, जहाँ-जहाँ पल्य खाली हो उसकी साक्षी स्वरूप एक-एक दाना शलाका पल्य में डालना, जहाँ अनवस्थित पल्य खाली होवे, वहाँ एक दाना डालना शलाका पल्य में।

प्रतिशलाका पल्य भरना-जहाँ शलाका पल्य पूरा भर जाये, वहाँ अनवस्थित पल्य उतना लंबा चौड़ा बनाकर भरकर रख लेना। फिर शलाका पल्य उठाकर आगे के द्वीप समुद्रों में एक-एक दाना डालकर खाली करना, अंत में खाली होने की साक्षी रूप एक दाना प्रतिशलाका पल्य में डालना। शलाका पल्य खाली करके रख देना। अब पुनः

अनवस्थित पल्य को उठाना, आगे के नये द्वीप समुद्रों में एक-एक दाना डालना, खाली होने पर एक दाना शलाका पल्य में डालना, फिर उस द्वीप समुद्र जितना बड़ा अनवस्थित पल्य बनाना, भरना, खाली करते (एक-एक दाना) जाना, खाली होने की साक्षी रूप एक दाना शलाका पल्य में डालते जाना, यों करते हुए शलाका पल्य पूर्ण भर जाये, उसे भी अगले द्वीप समुद्रों में दाना-दाना डालते खाली कर एक अंतिम दाना फिर प्रतिशलाका में डालना, इस प्रकार प्रतिशलाका भी भर जायेगा।

महाशलाका पल्य भरना-संपूर्ण भरे प्रतिशलाका पल्य को उठाकर आगे-आगे के द्वीप समुद्रों में एक-एक दाना डालकर, खाली होने पर उसके साक्षी रूप महाशलाका में एक दाना डालना। इस प्रकार अनवस्थित से शलाका, शलाका से प्रतिशलाका और फिर एक दाना महाशलाका में डालना यों करते-करते एक समय महाशलाका पल्य भी भर जायेगा। फिर क्रमशः प्रतिशलाका और शलाका पल्य यों तीनों अवस्थित पल्य पूर्ण भर जायें, वहाँ उस द्वीप समुद्र जितना अनवस्थित पल्य को बनाकर सरसों के दानों से भर लेना। चारों पल्य में भरे हुए दाने और अभी तक द्वीप समुद्रों में डाले गये सारे दानों को मिलाने से जो संख्या बनती है, उसमें से एक कम करने से जो संख्या बने वह उत्कृष्ट संख्याता समझें। यह डाला पाला का अधिकार पूर्ण हुआ।

1 से 3-उसमें एक दाना पुनः डाल दे वह जघन्य प्रत्येक संख्याता। मध्यम परित्त असंख्याता-जघन्य परित्त असंख्यात और उत्कृष्ट परित्त असंख्यात के बीच की सभी संख्या उत्कृष्ट परित्त असंख्यात-जघन्य परित्त असंख्यात की संख्या को उसी संख्या से उतनी ही बार गुणा करे, उसमें जो संख्या आवे, उसमें से एक कम करे तो उत्कृष्ट परित्त असंख्यात जैसे (5x5x5x5x5=3125-1=3124)

4-जघन्य युक्ता असंख्याता-उत्कृष्ट परित्त असंख्याता में एक जोड़ने पर

5-मध्यम युक्ता असंख्याता-जघन्य और उत्कृष्ट युक्ता असंख्याता के बीच की सभी संख्या

6-उत्कृष्ट युक्ता असंख्याता-जघन्य युक्ता असंख्याता की संख्या को उसी संख्या से उतनी ही बार गुणा करने पर जो संख्या आवे उसमें से एक घटाने पर जो राशि आवे।

7-जघन्य असंख्याता असंख्यात-उत्कृष्ट युक्ता असंख्यात में एक जोड़ने से राशि आवे

8-मध्यम असंख्याता असंख्यात-जघन्य उत्कृष्ट असंख्याता असंख्यात के बीच की सभी राशि

9-उत्कृष्ट असंख्यात असंख्यात-जघन्य असंख्याता असंख्यात की राशि को उतनी ही राशि से उतनी ही बार गुणा करने पर जो राशि आवे उसमें से एक घटाने से प्राप्त राशि।

अनंत का प्रमाण-(1) **जघन्य परित्ता अनंत**-उत्कृष्ट असंख्याता असंख्यात से एक अधिक। इसी प्रकार अनंत के भेद भी उपरोक्त कथन से समझना अनंत का नवमां भेद नहीं होता अर्थात् लोक की अधिकतम द्रव्य गुण या पर्याय की समस्त संख्या आठवें अनंत में ही समाविष्ट हो जाती है, अतः नवमें भेद की आवश्यकता नहीं है।

51. प्रमाण-नय (अनुयोग द्वार) इन्हें 24 द्वारों से वर्णित किया है-(1) सातनय, (2) चार निक्षेप (3) द्रव्य गुण पर्याय (4) द्रव्य क्षेत्र काल भाव (5) द्रव्य-भाव (6) कार्य-कारण (7) निश्चय व्यवहार (8) उपादान-निमित्त (9) चार प्रमाण (10) सामान्य विशेष (11) गुण-गुणी (12) ज्ञेय, ज्ञान, ज्ञानी (13) उत्पाद व्यय ध्रौव्य (14) आधेय आधार (15) आविर्भाव-तिरोभाव (16) गौणता-मुख्यता (17) उत्सर्ग अपवाद (18) तीन आत्मा (19) चार ध्यान (20) चार अनुयोग (21) तीन जागृति (22) नौ व्याख्या (23) आठ पक्ष (24) सप्तभंगी।

नय-प्रत्येक पदार्थ के अनेक धर्म है, उन धर्मों नय (पदार्थों के अंश को ग्रहण करे) द्वारा जाना जा सकता है, जितने वचन मार्ग है, उतने नय (अनेक) हो सकते हैं। वस्तु अनंत धर्मात्मक है, यों नय भी अनंत संख्यात्मक है, परंतु यहाँ संक्षेप में सात नय है। नय के 2 मुख्य भेद है-**द्रव्यास्तिक के** 10 भेद-नित्य, एक, सत्, वक्तव्य, अशुद्ध अन्वय, परम, शुद्ध सत्ता, परम भाव।

पर्यायास्तिक नय के 6 भेद-द्रव्य, द्रव्यव्यंजन, गुण, गुण व्यंजन, स्वभाव, विभाव। इन दोनों के 700 भंग होते हैं। **सात नय**-नैगम, संग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरूढ़ एवंभूत नय। प्रथम चार द्रव्यास्तिक (क्रियानय) अंतिम तीन पर्यायास्तिक (ज्ञान नय) कहलाते हैं।

1 नैगमनय-न+एक+गम जिसका एक स्वभाव, विचार का एक ही तरीका न हो, वह वस्तु का अलग-अलग अनेक धर्मात्मक स्वरूप समझाये, तीन काल, निक्षेप, सामान्य विशेष धर्म समझाये (1) अंश वस्तु का अंश माने (निगोद सिद्ध समान) (2) आरोप तीन काल का आरोपण वर्तमान में करे (3) विकल्प-अध्यवसाय उत्पन्न हो 700 विकल्प हो सकते है। चारों निक्षेप स्वीकारता है।

2 संग्रहनय-वस्तु की मूल सत्ता (सामान्य धर्म) जाने, सभी जीव सिद्ध समान (एगे आया) तीन काल चार निक्षेप माने सामान्य धर्म माने, विशेष धर्म न माने सभी बर्तन बर्तन है। रंगभेद, छोटा बड़ा, गुण भेद, मूल्य भेद, भिन्नता की अपेक्षा नहीं।

3 व्यवहार नय-वस्तु का विशेषतर धर्म है, उसे स्वीकारने वाला नय है। तीन काल चार निक्षेप स्वीकारता है, यह जीव को नारकी, देव, तिर्यंच, मनुष्य रूप समझेगा, विशेष भेद से कहेगा, वर्णादि 20 बोल सत्ता में है, परन्तु जो बाह्य दिखते वही मानता है, जैसे हंस सफेद, शक्कर मीठी आदि।

4 ऋजुसूत्र नय-यह भूत भविष्य को नहीं मात्र वर्तमान मानता है, जो स्वरूप है उसे माने साधु का मन भोग में गया तो भोगी, गृहस्थ का मन त्याग में गया तो साधु माने। वर्तमान काल, भाव निक्षेप को ही मानता है। ये 4 द्रव्यास्तिक, समकित, श्रावक, साधु, भवी, अभवी में होता है, परन्तु अशुद्ध है जीव का कल्याण नहीं होता।

5 शब्द नय-काल, कारक, लिंग, वचन, संख्या, पुरुष, उपसर्ग आदि से शब्दों का जो अर्थ प्रसिद्ध हो वह स्वीकारता है, शुद्ध उपयोग माने, शक्रेन्द्र, देवेन्द्र, पुरेन्द्र, सूचिपति ये सभी को एक माने। पर्यायवाची माने।

6 समभिरूढ़नय-शब्दनय शब्द से, परन्तु यह शब्दार्थ की अपेक्षा रखता है, शब्दों के अर्थ को माने सामान्य नहीं विशेष धर्म में माने, शक्र सिंहासन पर बैठे को शक्रेन्द्र माने, एक अंश न्यून हो तो माने। विशेष, और भाव निक्षेप, वर्तमान काल को माने।

7 एवंभूत नय-एक अंशन्यून को भी नहीं, अर्थ में उपयुक्त अवस्था में हो उस वस्तु को स्वीकारे, अन्य वस्तु को अस्वीकार करे। विशेष, वर्तमान काल, भाव निक्षेप को ही माने। यह नय शब्द, अर्थ और क्रिया तीनों को देखता है। गुणधर्म में पूर्ण, प्रत्यक्ष देखने समझने में आवे, उसे ही वस्तु रूप में स्वीकार करना एवंभूत नय है। सामान्य को नहीं विशेष को स्वीकारता है। वर्तमान काल, भावनिक्षेप को। नय जो एकांत पक्ष ग्रहण करे, वह नयाभास (मिथ्यात्वी), एकांतवादी है, सभी नयों को समझने से सत्य स्वरूप, समदृष्टि कहलाता है।

2 निक्षेप द्वार-नयों की तरह निक्षेप भी अनंत हो सकते हैं, यहाँ चार निक्षेप वर्णन है-सामान्य रूप प्रत्यक्ष ज्ञान है, तत्त्व ग्रहण में अति आवश्यक है-नाम स्थापना द्रव्य, भाव निक्षेप ये 4 है।

नाम-किसी का नाम घेवर या रोटी रख दी यथार्थ, अयथार्थ नाम रखना, क्षुधापूर्ति नहीं होती।

स्थापना-जीव अजीव की सद्भाव, असद्भाव स्थिति स्थापना करनी, इससे भी क्षुधापूर्ति नहीं होती।

द्रव्य-भूत भविष्य दशा को वर्तमान में न होते भी स्वीकारना, पद भ्रष्ट राजा को राजा कहना। आटे, मेदे या पानी घोलने से रोटी या घेवर नहीं बन गये उससे भी क्षुधापूर्ति नहीं होती।

भाव-संपूर्ण गुण युक्त वस्तु स्वरूप यथार्थ मानना। घेवर को घेवर रोटी को रोटी इससे क्षुधा पूर्ति संभव है। द्रव्य का किंचित अंश, नाम स्थापना आरोपित (कल्पित) भाव निक्षेप का महत्व है।

3 द्रव्यगुण पर्याय-धर्मास्तिकायादि छ द्रव्यों के स्वभाव अलग-अलग है, उनमें उत्पाद, व्यय, धौव्य आदि परिवर्तन उनकी पर्यायें है।

4 द्रव्यक्षेत्र काल भाव द्वार-जीव, अजीव आदि द्रव्य, आकाश क्षेत्र, समय घड़ी काल चक्र काल, वर्ण गंध रस स्पर्श ये भाव, यो चारों जीव अजीव पर होते है।

5 द्रव्य-भाव द्वार-भाव को प्रकट करने में द्रव्य सहायक है, द्रव्य जीव अमर, शाश्वत है, भाव से अशाश्वत है। लोक द्रव्य से शाश्वत, भाव से अशाश्वत, द्रव्य मूल वस्तु है शाश्वत है भाव वस्तु की पर्याय है, अशाश्वत है।

6 करण-कार्य द्वार-कार्य की प्रकटता कारण है, बिना कारण कार्य नहीं होता, घड़ा बनाना मिट्टी, कुम्हार, चाक कारण अवश्य चाहिए। कारण मुख्य है।

7 निश्चय-व्यवहार द्वार-निश्चय को व्यवहार प्रकट करता है, व्यवहार बलवान है, व्यवहार से निश्चय तक जाया जाता है, निश्चय कर्म का कर्त्ता कर्म है, व्यवहार से जीव कर्मों का कर्त्ता है। निश्चय से हम चलते है, व्यवहार से गाँव आया, पाणी चूता है, परन्तु छत चू रहा है, कहते हैं।

8 उपादान-निमित्त द्वार-उपादान मूल कारण स्वयं कार्य रूप बने, घड़ा का उपादान मिट्टी, निमित्त कुम्हार चाक, पावड़ा वगैरह, शुद्ध निमित्त कारण हो तो उपादान को साधक, नहीं तो बाधक।

9 प्रमाण द्वार-जिसके द्वारा वस्तु की वस्तुता सिद्ध हो, अर्थ, पदार्थ जाना जाय वह प्रमाण है।

प्रत्यक्ष प्रमाण-इसके दो भेद इन्द्रिय प्रत्यक्ष (पाँच इन्द्रियों से होने वाला) और नो इन्द्रिय प्रत्यक्ष (इन्द्रियों सिवाय आत्मशुद्धता से) इसके दो भेद देश से-अवधि, मनःपर्यवज्ञान

सर्व से केवलज्ञान। **आगम प्रमाण**-लौकिक लोकोत्तर दो भेद सुत्तागम, अर्थागम, तदुभयागम तीन प्रकार, आत्मागम, अनंतरागम, परंपरागम से भी आगम के तीन भेद। महाभारत, रामायण यावत् चारों वेद सांगोपांग ये लौकिक आगम, 12 अंग आदि लोकोत्तर आगम है। तीर्थंकर के अर्थागम आत्मागम, गणधरों के सूत्र आत्मागम, अर्थ अनंतरागम, गणधर शिष्यों के सूत्र अनंतरागम, अर्थ परंपरागम, शेष शिष्यानुशिष्यों के सूत्र एवं अर्थ दोनों परंपरागम है।

अनुमान प्रमाण-वस्तु को अनुमान से समझने के 5 भेद (1) कारण-घड़ा का कारण मिट्टी है, मिट्टी का कारण घड़ा नहीं। (2) गुण-पुष्प में सुगंध, स्वर्ण में कोमलता, जीव में ज्ञान (3) आसरण-धूएँ से अग्नि, बिजली से बादल जानना (4) आवयवेणं-दंतशूल से हाथी, चूड़ियों से स्त्री, शासन रूचि से समकिती जाना जाय (5) दिट्ठिसामन्न-सामान्य से विशेष जाने-एक आदमी को देख देश के मनुष्यों को जाने, भला बुरा चिह्न देख तीन काल के ज्ञान की कल्पना से अनुमान। **पाँच अवयव**-साध्य, हेतु, व्याप्ति, उदाहरण, निगमन (उपसंहार)। अनुकूल प्रतिकूल दोनों होते है। एक सिक्का देख अनेक की पहचान करना, एक चावल से अनेक चावल पकने का अनुमान करना।

उपमा प्रमाण-अज्ञात वस्तु जानने ज्ञात वस्तु की उपमा, एक धर्म (गुण) से अनेक गुणधर्मों से अपेक्षित वस्तु समान हो सकती है, अनुकूल प्रतिकूल उपमा हो सकती है 4 भेद (1) यथार्थ को यथार्थ (सत्य) की उपमा (2) यथार्थ को अयथार्थ की (3) अयथार्थ को यथार्थ की (4) अयथार्थ को अयथार्थ की उपमा। सूर्य को दीपक, गाय नील गाय, काबरी गाय सफेद गाय, वायस (काला) पायस (खीर)।

10 सामान्य-विशेष द्वार-सामान्य से विशेष बलवान है, समुदाय सामान्य, विविध भेद विशेष, द्रव्य सामान्य, जीव अजीव विशेष, जीव द्रव्य सामान्य, सिद्ध संसारी विशेष।

11 गुण-गुणी द्वार-पदार्थ का स्वभाव गुण है, वस्तु को गुणी। जैसे ज्ञान गुण, जीव गुणी, सुगंध पुष्प।

12 ज्ञेय-ज्ञान-ज्ञानी द्वार-जानने योग्य सभी द्रव्य, द्रव्यों का जाणपणा ज्ञान, पदार्थों का जानकार ज्ञानी है। जैसे ध्येय, ध्यान, ध्यानी वगैरह।

13 उत्पाद व्यय ध्रौव्य द्वार-उत्पन्न होना, नाश होना, निश्चय में रहना, जन्मना, मरणा, जीवपणे होना।

14 आधेय आधार द्वार-धारण करे वह आधार, जिसके आधार रहे वह आधेय जैसे पृथ्वी आधार, घटादि पदार्थ आधेय, जीव आधार ज्ञानादि आधेय।

15 आविर्भाव तिरोभाव द्वार-जो पदार्थ दूर करे वह तिरोभाव, जो पदार्थ गुण नजदीक में है वह आविर्भाव, दूध में घी तिरोभाव, मक्खन में घी आविर्भाव।

16 गौणता-मुख्यता-अन्य विषय छोड़ मुख्य विषय पर व्याख्यान मुख्यतया, जो गुप्तपणे, अवधानपणे रही हो वह गौणता। जैसे ज्ञान से मोक्ष होता है (ज्ञान की मुख्यता) दर्शन, चारित्र, तप की गौणता।

17 उत्सर्ग-अपवाद द्वार-उत्सर्ग उत्कृष्ट मार्ग है, अपवाद रक्षक है, उत्सर्ग से पतित अपवाद का आलंबन लेकर पुनः उत्सर्ग पर जा सकता है। तीन गुप्ति से रहना उत्सर्ग, 5 समिति गुप्तियों का रक्षक सहायक अपवाद मार्ग है, जिनकल्प उत्सर्ग मार्ग है, स्थविर कल्प अपवाद मार्ग है। छ द्रव्यों में भी जानना।

18 तीन आत्मा-बहिरात्मा, अन्तरात्मा, परमात्मा। शरीर, धन, धान्य, समृद्धि, कुटुंब आदि में तल्लीन होना बहिरात्मा (मिथ्यात्वी)। बाह्य वस्तु को समझकर त्यागना चाहे, त्यागे (4 से 12 गुणस्थान वाला) अंतरात्मा। सर्वकार्यसिद्ध, कर्म मुक्त, स्व स्वरूपलीन, सिद्ध तथा केवलज्ञानी परमात्मा।

19 चार ध्यान-पदस्थ-पंच परमेष्ठि का गुणों का ध्यान करना। **पिंडस्थ** शरीर में रहे अनंतगुण युक्त चैतन्य का आध्यात्म ध्यान करना। **रूपस्थ**-अरूपी होते भी कर्म योग से आत्मा संसार में अनेक रूप धारण करती है, उससे छूटने का उपाय चिंतन, अरिहंत गुण चिंतन। **रूपातीत**-निराकार, निरंजन, अगम्य, सच्चिदानंद, सिद्धप्रभु का ध्यान, शुद्धआत्मा के गुणों का अनुभव करना।

20 चार अनुयोग-(1) **द्रव्यानुयोग**-जीव, अजीव, चैतन्य, कर्म आदि द्रव्यों के स्वरूप का वर्णन है (2) **गणितानुयोग**-क्षेत्र, पहाड़, नदी, देवलोक, नरक, ज्योतिषी आदि का गणित माप का वर्णन है। (3) **चरणकरणानुयोग**-साधु श्रावक का आचार क्रिया का वर्णन है। (4) **धर्मकथानुयोग**-साधु, श्रावक, राजा, रंक आदि के वैराग्य बोधदायक जीवन वर्णन।

21 तीन जागरणा-(1) **बुद्ध जागरिका**-तीर्थंकर, केवली की दशा (2) **अबुद्ध जागरिका**-छद्मस्थ मुनियों की (3) **सुदक्खु जागरिका**-श्रावकों की।

22 व्याख्या नव-एक-एक वस्तु की उपचार नय से 9-9 प्रकार व्याख्या-(1) द्रव्य में द्रव्य का उपचार काष्ट में वंश लोचन (2) द्रव्य में गुण का उपचार-जीव ज्ञानवंत है (3) द्रव्य में पर्याय का उपचार-जीव स्वरूपवान है (4) गुण में द्रव्य का उपचार-अज्ञानी जीव है (5) गुण में गुण का उपचार ज्ञानी होते हुए भी क्षमावंत है (6) गुण में पर्याय का उपचार-ये तपस्वी सुंदर है (7) पर्याय में द्रव्य का उपचार-यह प्राणी देवता का जीव है (8) पर्याय में गुण का उपचार-यह मनुष्य बहुत ज्ञानी है (9) पर्याय में पर्याय का उपचार-यह मनुष्य श्यामवर्णी है।

23 पक्ष आठ-एक वस्तु की अपेक्षा से अनेक व्याख्या होती है, मुख्यतः आठ पक्ष-इस प्रकार-

पक्ष	व्यवहारनय अपेक्षा	निश्चयनय अपेक्षा
नित्य	एक गति में घूमते नित्य है	ज्ञानदर्शन अपेक्षा नित्य है
अनित्य	समय-समय आयुष्य क्षय होते है, अनित्य है	अगुरु लघु आदि पर्याय से अनित्य है
एक	गति में वर्तना यह दशा में एक	चैतन्य अपेक्षा जीव एक है
अनेक	पुत्र, भाई आदि अनेक संबंध है	असंख्यात प्रदेश अपेक्षा अनेक है
सत्	स्वगति, स्वक्षेत्रापेक्षा सत् है	ज्ञानादि गुणापेक्षा सत् है
असत्	परगति, पर क्षेत्रापेक्षा असत् है	पर गुण अपेक्षा असत् है
वक्तव्य	गुणस्थान आदि की व्याख्या हो सकती है	सिद्ध के गुणों की जो व्याख्या हो सके
अवक्तव्य	जो व्याख्या केवली भी न कर सके, अनुक्रम सिवाय व्याख्या न हो सके वह	सिद्ध के सर्वगुणों की व्याख्या न हो सके वह

24 सप्तभंगी द्वार-सप्तभंगी प्रत्येक पदार्थ (द्रव्य) पर हो सकती है, इसमें स्याद्वाद का रहस्य है। एक पदार्थ को अनेक अपेक्षा से समझना सिद्धों पर सप्तभंगी इस प्रकार- **(1) स्यादअस्ति**-सिद्ध स्वगुण अपेक्षा है **(2) स्यात्नास्ति**-सिद्ध पर गुण अपेक्षा नहीं **(3) स्यात् अस्ति नास्ति**-सिद्धों में स्वगुणों की अस्ति, पर गुणों की नास्ति है। **(4) स्यात् अवक्तव्य**-अस्ति नास्ति युगपद् है फिर भी एक समय में दो नहीं कह सकते। **(5) स्यात् अस्ति अवक्तव्य**-स्वगुणों की अस्ति है, और एक समय में नहीं कह सकते। **(6) स्यात् नास्ति अवक्तव्य**-परगुणों की नास्ति है, और एक समय में नहीं कह सकते **(7) स्यात् अस्ति नास्ति अवक्तव्य**-अस्ति नास्ति दोनों है, परन्तु एक समय में नहीं कह सकते। यह स्याद्वाद स्वरूप समझकर सदा समभावी बनकर रहना, जिससे आत्म कल्याण हो।